

1891



शताब्दी रूमारिका

1991

स्टेट बैंक ऑफ इन्दौर  
की  
अनुपम बचत योजना  
इन्दौर बैंक मनीबॉक्स

में  
बैंक की किसी भी शाखा के माध्यम से धन-निवेश पर  
अधिकतम व्याज

योजना के अन्य आकर्षण

जितना चाहे उतना बचाएँ

\* न्यूनतम मासिक किश्त रु. 10/- एवं अधिकतम रु. 10,000/- तथा जिस माह में चाहें किश्त से 10 गुना राशि अथवा रु. 10,000/- जो भी कम हो जमा करें। किश्त के अतिरिक्त जमा पर भी निर्धारित दर से व्याज।

- \* छः माह से 120 माह के बीच अवधि की चयन सुविधा।
- \* अवधि अनुसार 11% से 13% प्र.व. व्याज।
- \* स्रोत पर आयकर नहीं।
- \* विलम्बित किश्तों पर कोई दण्ड नहीं।
- \* अवधि पूर्व भुगतान, जमा राशि पर ऋण सुविधा उपलब्ध।
- \* नामांकन एवं संयुक्त खाते की सुविधा।

अधिक जानकारी के लिये हमारी  
निकटस्थ शाखा से  
सम्पर्क हेतु  
आग्रह  
है।

छोटी नियमित बचत

परिपक्वता पर भारी रकम

स्टेट बैंक ऑफ इन्दौर

प्रधान कार्यालय  
5, यशवंत निवास मार्ग,  
इन्दौर।

रखौलता हूँ  
याहों को गढरो को  
तुम्हारे लिये  
इसमें से निकलेंगे  
घटमारे, तिमिग, झौर  
पुरखों को धायाहँ ।  
सम्बत् 1348, ज्येष्ठ मास, त्रिषि ?  
ढोक- ढोक कहूँ तो  
10 जून- 1891 को  
एक दुरद सम्भारना के रूप में  
इकस्मात हो नहीं हो गया था  
मेरा जन्म ।  
घटनाओं के होने के पहले का,  
निस्ता  
समकाल उसी तरह जस्तो है  
जिसे तरह प्रत्येक नर नार में  
पुराने का रोहराया जाना  
लाजिमी तौर पर शायित होता है ।  
इसोलिख, प्रारम्भ के नौ प्रारम्भ से  
प्रारम्भ करता हूँ  
प्रपनो कहानो ।





# होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर

## शताब्दी - स्मारिका

### प्रधान सम्पादक

- प्रो. महेश दुबे  
गणित एवं सांख्यिकी विभाग

### सम्पादन सहयोग

- डॉ. कु. माणिक सांवरे  
अंग्रेजी विभाग
- डॉ. भोलेश्वर दुबे  
वातस्पतिकी विभाग
- डॉ. नरेन्द्र जोशी  
भौतिकी विभाग

### परामर्श

- गोवर्धनलाल ओझा  
अध्यक्ष - 'ओहा'
- डॉ. दयाशंकर जोशी  
उपाध्यक्ष - 'ओहा'
- प्रो. प्रभाकर काले  
प्राचार्य

### ओल्ड होलकेरियन्स एसोसिएशन (ओहा) के पदाधिकारी

- |                      |   |
|----------------------|---|
| अध्यक्ष              | - गोवर्धनलाल ओझा<br>(सेवा-निवृत्त न्यायाधीश-सर्वोच्च न्यायालय)  |
| उपाध्यक्ष            | - डॉ. दयाशंकर जोशी  |
| सचिव                 | - दीपक खरे  |
| कार्यकारी - सचिव     | - डॉ. महेशचन्द्र दुबे   |
| संयुक्त सचिव         | - महेंद्र हार्डिया  |
| कार्य समिति के सदस्य | - सतीश कंसल, प्रो. बालकृष्ण निलोसे, प्रो. प्रभाकर काले,<br>प्रो. पी.डी. शर्मा, डॉ. पी.टी. मालशे, प्रो. श्रीमती एस. बोधले,<br>नरेन्द्र गोरे. |



उप-राष्ट्रपति  
भारत गणतंत्र  
VICE-PRESIDENT  
REPUBLIC OF INDIA

दिनांक 24 अक्टूबर, 1991

संदेश

हमारे महाविद्यालयों को जहाँ एक ओर युवाओं की संचित ऊर्जा को सकारात्मक दिशा में गतिशील करने का काम करना है, वहीं दूसरी ओर उनमें नैतिक एवं मानवीय मूल्यों के तत्व भी भरने हैं। तभी कहीं जाकर शिक्षा का उद्देश्य पूरा हो सकेगा और विद्यार्थी सच्चे अर्थों में स्नातक कहलाने योग्य बन सकेंगे।

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि होलकर विज्ञान महाविद्यालय ने इस वर्ष अपने शैक्षणिक जीवन के सौ वर्ष पूरे किये हैं। आशा है कि यह महाविद्यालय हमारे देश को निरंतर योग्य स्नातक देता रहेगा।

मैं आपके उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ।

शंकर दयाल शर्मा  
( डॉ. शंकर दयाल शर्मा )





मंत्री  
मानव संसाधन विकास  
भारत  
MINISTER  
HUMAN RESOURCE DEVELOPMENT  
INDIA

### संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि होतकर विज्ञान महाविद्यालय, इंदौर अपने अस्तित्व के 100 वर्ष पूर्ण कर रहा है। किसी महाविद्यालय के लिए 100 वर्ष की यात्रा अपने आप में एक जलंत सारांश है। ज्ञान के क्षेत्र में इस महाविद्यालय ने जो प्रतिभाएं पैदा की हैं और प्रदान की हैं, उन्हें मुझसे नहीं माफ़ा जा सकता। विज्ञान वास्तव में सच्चाई और प्रगति का बीज है। मैं आशा करता हूँ कि इस विद्या में महाविद्यालय निरंतर कार्यरत रहेगा। मैं सदैव समारोह की सफलता हेतु अपनी शुभकामनाएं प्रस्तुत करता हूँ।

  
इंदिरा गांधी

प्रकाश कर्ते,  
होतकर विज्ञान महाविद्यालय,  
इंदौर-452001

सुन्दरलाल पटवा  
मुख्य मंत्री



मध्यप्रदेश शासन  
भोपाल, 462004


दिनांक 15 अक्टूबर 1991

### संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि होतकर विज्ञान महाविद्यालय, इंदौर अपनी स्थापना के सौ वर्ष पूरे करने के उपलक्ष्य में एक स्मारिका का प्रकाशन करने जा रहा है।

मुझे विश्वास है कि स्मारिका संस्था के गौरवशाली ऐतिहासिक वृत्तों की रोचक श्रृंखला प्रस्तुत करेगी।

स्मारिका के प्रकाशन की सफलता के लिए शुभकामनाएं।

  
सुन्दरलाल पटवा



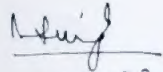
मोती सिंह,  
उच्च शिक्षा आयुक्त

उच्च शिक्षा संचालनालय, म.प्र.  
सतपुड़ा भवन, पांचवीं मंजिल, भोपाल  
भोपाल 462 004  
दिनांक 23.5.92

संदेश

हर्ष का विषय है कि शासकीय (आदर्श) स्वशासी होलकर विज्ञान महाविद्यालय ने गौरवपूर्ण उपलब्धियों के साथ सौ वर्ष पूर्ण कर लिये हैं तथा इस अवसर पर स्मारिका का प्रकाशन किया जा रहा है। संस्था की अनवरत विकास यात्रा में सहभागी हुए सम्पूर्ण महाविद्यालय परिवार के प्रति मैं हार्दिक शुभांशसा व्यक्त करता हूँ।

ज्ञान-विज्ञान की विविध शाखाओं सहित उच्च शिक्षा के समग्र क्षेत्र में निःसंदेह हमने अमूल्यपूर्ण प्रगति की है, परंतु, बौद्धिक ऊँचाईयों को अधिगत करने के बावजूद, समाज में निर्भयता, सत्य, विनय, अहिंसा, प्रेम आदि मानव जीवन के चिरन्तन एवं उदात्त मूल्यों का क्रमिक हास परिलक्षित हो रहा है। शिक्षा की वास्तविक सार्थकता इन जीवन मूल्यों को आत्मसात कराना तथा इनका सतत संवर्धन एवं परिरक्षण करना भी है। मैं कामना करता हूँ कि निकट भविष्य में यह संस्था बौद्धिक प्रगति के साथ ही उदात्त मानवीय गुणों के विकास में भी नित नये कीर्तिमान स्थापित करते हुए शिक्षा जगत में अपनी अनूठी पहचान बनायेगी।

  
(मोती सिंह) 23.5.92



## प्राचार्य की ओर से -

शताब्दी वर्षों में अपनी मातृ-संस्था होलकर विज्ञान महाविद्यालय में प्राचार्य के रूप में कार्य करने का जो अवसर मुझे मिला, यह मेरे जीवन की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। महाविद्यालय के विकास में मेरे पूर्ववर्ती प्राचार्यों के निरंतर प्रयासों एवं शताब्दी सम्बंधी प्रारंभिक कार्यों की ठोस पृष्ठभूमि मुझे विरासत में मिली। यह मेरा सौभाग्य था। मैंने उसी दिशा में चलते हुए, अपने सहकर्मियों एवं होलकर कॉलेज के वृहत् परिवार के सदस्यों के सहयोग से, इन कार्यक्रमों को मूर्त रूप देने का प्रयास किया है।

होलकर कॉलेज की अपनी एक विशेष पहचान है। इसकी उपलब्धियों ने हम सबको गौरवान्वित किया है। शैक्षणिक गुणवत्ता के इसी क्रम में आदर्श एवं स्वशासी योजनाओं की बुनोटियों को स्वीकार करते हुए, महाविद्यालय परिवार पूर्व स्थापित परम्पराओं को अक्षुण्ण बनाये रखने के प्रति दृढ़-संकल्पित है। विज्ञान के क्षेत्र में नवाचार एवं राष्ट्रीय स्तर पर हो रहे व्यापक शैक्षणिक परिवर्तनों के मुख्य प्रवाह से अपने को जोड़ते हुए इस महाविद्यालय ने भी अपने पाठ्यक्रमों को विस्तार देकर, स्नातक स्तर पर इलेक्ट्रॉनिक्स एवं सूक्ष्म जैविकी विषय प्रारंभ किये हैं। साथ ही आगामी सत्र से कम्प्यूटर विज्ञान और औषधीय रसायन के नये पाठ्यक्रम प्रारंभ किया जाना प्रस्तावित है। विज्ञान शिक्षण की प्रविधियों में निरंतर विकास के लिये भी हम प्रयत्नशील हैं। आम आदमी तक वैज्ञानिक जानकारीयों पहुँचाने तथा शालेय स्तर पर विज्ञान के शिक्षण को अधिक प्रभावी बनाने के कार्यक्रमों में भी महाविद्यालय परिवार के प्राध्यापकों की सक्रिय सहभागिता रही है। इन परिवर्तनों के परिप्रेक्ष्य में एक नयी कार्य-संस्कृति के प्रति हमारा आग्रह आने वाले वर्षों में निश्चित ही एक ठोस स्वरूप ले सकेगा - ऐसा मेरा विश्वास है।

इस शताब्दी स्मारिका में, होलकर कॉलेज के प्रारंभ से लेकर आज तक का विवरण; ऐतिहासिक संदर्भों एवं संस्मरणों के माध्यम से, उपलब्ध कराने का प्रयास किया गया है। आप इसमें अनेक दुर्लभ चित्र भी पायेंगे, जिन्हें दूर-दूर के अनेक स्थानों से प्राप्त किया गया है। कॉलेज की पुरानी पत्रिकाओं से ली गयी सामग्री पूर्व विद्यार्थियों की स्मृतियों को ताजा कर सकेगी। मेरा विश्वास है कि यह स्मारिका एक ऐतिहासिक दस्तावेज के रूप में महत्वपूर्ण होगी। बिखरे हुए सूत्रों को ढूँढकर जोड़ने के इस अथक प्रयास के लिए - सम्पादकों को मेरे साधुवाद!

स्मारिका को यह स्वरूप देने में महाविद्यालय से जुड़े आत्मीय स्वजनों व अन्य सुबुद्ध सज्जनों से प्राप्त प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष सहयोग के लिए, मैं उन सबके प्रति महाविद्यालय परिवार की ओर से आभार व्यक्त करता हूँ। एक लम्बे अंतराल के बाद आप सब महाविद्यालय



से पुनः जुड़े हैं मैं चाहूँगा कि सम्पर्कों की यह निरंतरता बनी रहे। आप अपनी रुचि एवं सामर्थ्य के अनुसार महाविद्यालय से सम्पर्क रखते हुए, इसकी गतिविधियों से सतत जुड़े रह सकते हैं। आप अपने आर्थिक स्वार्थों द्वारा -

\* अंतर्राष्ट्रीय स्तर की विशिष्ट शोध पत्रिकाओं की सदस्यता का ५ से १० वर्ष की अवधि के लिये प्रायोजन कर सकते हैं।

\* महाविद्यालय की भौतिक सुविधाओं के विस्तार के अंतर्गत प्रस्तावित सभाकक्ष के निर्माण में सहयोग दे सकते हैं।

\* प्रयोगशालाओं को आधुनिक उपकरणों से सुसज्जित करने में योगदान दे सकते हैं।

\* उद्योगों से महाविद्यालय के शैक्षणिक पाठ्यक्रमों को जोड़ने की दिशा में अवसर दे सकते हैं।

परम्पराएँ और संस्कार इसी प्रकार एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचते हैं। हम सभी का यह संवाद, अपनत्व और लगाव ही इस महाविद्यालय का संबल है, यही इस शतायु संस्था की जिजीविषा है।

- प्रो. प्रभाकर काले

## अनुक्रमणिका

1. आरम्भ	- प्रो. महेश दुबे	1
2. Sweet Reminiscences	- Dr. Y.G. Apte	15
3. Sweet Memories	- V.S. Sarwate	16
4. शतकीय भारीदारी	- बाबूराव रानडे	18
5. होलकर कॉलेज के विस्मृत क्रांतिकारी छात्र	- डॉ. विट्ठल नागेश हंडियेकर	20
6. My Association with Holkar College	- Dr. S.S. Deshpande	22
7. इंदूर की शिंदेरी	- विट्ठलराव घाटे	26
8. इन्दौर की एक उपेक्षित विमूर्ति	- डॉ. वासुदेव भागवत	34
9. जिज्ञासु पाहुणा	- प्रो. महेश दुबे	35
10. उद्या येऊ नका	- प्रो. महेश दुबे	39
11. Progress Report of Holkar College for 1921.	- P.C. Basu	41
12. हमारे प्राचार्य	- प्रो. महेश दुबे	43
13. विकास	- प्रो. महेश दुबे	47
14. Reminiscences of Holkar College	- S.K. Abhyankar	75
15. मेरा होलकर कॉलेज	- डॉ. हरिहर विवेदी	78
16. डॉ. भागवत-बकलम खुद	- डॉ. वासुदेव भागवत	81
17. किती घेगिल?	- रा.भि. जोशी	84
18. प्रेमाचा शाप	- वासुदेव गोपाल सुभेदार	88
19. Some Reminiscences	- Prof. N. Padmanabhan	89
20. Memories of My Career of Holkar College	- Prof. S.N. Dhar	91
21. My Student Days at Holkar College	- Prof. Satyavrata Ghosh	93
22. Fond Memories	- Bimalendu Dhar	95
23. अनुत्तर योषी - चाँद का मुँह टेढ़ा है	- प्रो. महेश दुबे	96
24. जाते-जाते	- वीरेन्द्र कुमार जैन	97
25. A Peep into the Past	- Mrs. Sumati Bagchi	99
26. होलकर कॉलेज : वे दिन, वे बातें	- अध्यक्ष कुमार जैन	102
27. Speech of Pt. Madan Mohan Malviya at Holkar College, Indore.		105
28. अथ कॉलेज-कथासारः प्रारंभः	- कु. कृष्णा खांडेकर	107
29. Science Congress at Indore		108
30. The Roll Call of Honour	- C.N. Desai	114
31. Dr. Basu - My Brother-in-law	- Prof. Satyavrata Ghosh	117
32. इंदूरचे दिवस	- मनोहर महादेव केळकर	119
33. Prof. Ram Prasad Kaushal (1911-1983)	- Dr. K.K. Chaturvedi	122
34. कर्म देवाय?	- एल.एन. भट्ट	123
35. The Great Virus	- Prof. Harjiban Ghosh	125
36. छः दशक पूर्व जब प्राचार्य ने ही स्नेह-सम्मेलन से बहिर्गमन किया!	- प्रो. ग.वा. कवीश्वर	127
37. My Student Days in Holkar College (1937-1941)	- G.R. Ayachit	129
38. स्वतंत्रता संग्राम और कॉलेज के वे दिन	- आनंदसिंह मेहता	130
39. होलकर महाविद्यालय के संस्मरण	- निरंजन जमींदार	133
40. Fifty Years	- Inayat Husain	135

41. My Reminiscences of Holkar College	- Lt. Col. M.V. Gole	136
42. मे दिने, मे दिने	- लखन सिंह	137
43. एक अद्वैत और इन्दी	- श्री. श्री. श्री. श्री.	138
44. My Days at Holkar College (1940-1944)	- Govind Ganesh Apte	141
45. एक दिन का	- स्वामीजी गोखले (गुपी गुप्ता)	142
46. होलकर कॉलेज की यादें	- कन्हैयालाल कुलकर्णी	145
47. Science-Savard Extraordinary	- Dr. S.K. Gupta	147
48. Reminiscences	- L.C. Gupta	150
49. Reminiscences	- S.P. Varma	153
50. My Four Years in Holkar College	- G.L. Ojha	157
51. Back to Holkar College	- Prof. Satyavrata Ghosh	160
52. एक दिन का इन्दी का	- डॉ. समरेश शर्मा	164
53. यादें	- श्रीमती मालती बिसेन	165
54. यादें अलग एक का	- श्रीमती मालती जोशी	167
55. दिन	- मालती दिने	172
56. Some Remembrances	- Arun Dale	173
57. यादें के दिन तुम्हारे	- लक्ष्मण जोशी	174
58. इन्दी का	- श्री. महेश दुबे	177
59. मे दिने, मे दिने	- डॉ. दशरथ जोशी	186
60. एक दिन का	- Dr. D.K. Manoharamani	191
61. The Almanac	- डॉ. देवीप्रसाद मिश्रा	196
62. एक दिन - एक दिन - एक दिन	- डॉ. महेश दुबे	198
63. डॉ. महेश - एक दिन	- M.R. Patwardhan	200
64. A Tribute to Prof. B.S. Gogate	- प्रहलाद तिवारी	203
65. एक दिन के दिन	- देवीप्रसाद जोशी	204
66. एक दिन का	- किशोरी पंचोली	205
67. मे दिने - एक दिन	- राजना विवेक	206
68. एक दिन का	- राजना विवेक	208
69. होलकर विद्यालय महाविद्यालय के प्रभाव	- श्री. महेश दुबे	210
70. एक दिन का	- श्री. ए. लक्ष्मण	215
71. Science and Religion	- Dr. P. Krishna	218
72. एक दिन का	- प्रभु - डॉ. मणिक साहू	224
73. एक दिन का	- प्रभु - डॉ. मणिक साहू	226
74. एक दिन का	- डॉ. नरेश जोशी	229
75. एक दिन का	- श्री. महेश दुबे	232

\*\*\*

## आरम्भ

इतिहास में इन्दी का उल्लेख मुगलकाल के फरमानों में स्पष्ट रूप से मिलता है। कुछ इतिहासकारों के अनुसार यह उन कुछ स्थानों में से एक है - जहाँ आगे से भागते हुए शिवाजी ने विश्राम किया था। 18 वीं शताब्दी में (1733) इस क्षेत्र को पेशवा द्वारा मलहार राव होलकर को प्रदान किया गया और यहीं से होलकर वंश का और इन्दी रियासत का इतिहास विधिवत प्रारंभ होता है। मराठा दरबार में होलकरों की प्रतिष्ठा लड़ाकू योद्धाओं के रूप में थी, इन्दी के आस-पास अपनी सीमाओं का विस्तार कर होलकरों ने इस रियासत को सुव्यवस्थित और समृद्ध इलाके के रूप में विकसित किया। 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के समय श्रीमंत महाराजा तुकोजीराव होलकर - द्वितीय (1835 - 1886) इन्दी की गद्दी पर थे, वे एक अत्यंत कुशल प्रशासक थे, उनका व्यक्तित्व भव्य और आकर्षक था, जहाँ एक ओर वे संस्कारों से परम्परावादी थे वहीं हृदय से उदार और सुधारवादी भी थे। वे सरल और निरामिमान थे, वैदन्त और भगवद्गीता पर वे साधुकार विवेचना करते थे और नियमित रूप से विद्वानों से चर्चा करते थे, वे एक अत्यंत प्रभावी वक्ता थे, केशवचन्द्र सैन, जस्टिस रानाडे और दादा भाई नोरोजी जैसे सुधारकों से उनकी निकटता के कारण उनके व्यक्तित्व में सुधारवादी प्रखरता थी, उनके समय में इन्दी की व्यापारिक समृद्धि और सामाजिक संस्कारों ने, इस शहर के लिये नयी प्रतिष्ठा और गौरव अर्जित किया। यदि इन्दी की सांस्कृतिक छवि का श्रेय अहिल्या बाई होलकर को है तो विकसित होते हुए समृद्ध इन्दी की पहचान का श्रेय तुकोजीराव होलकर द्वितीय को है। मराठी के एक कवि ने उनके बारे में ठीक ही लिखा था -

जेंचें इन्द्रपुरी सुर नगरी सम करून दाखविली  
सनातने प्रजांना माव अहिल्या हि आठवून दिली।

1857 के स्वतंत्रता संग्राम के समय यद्यपि प्रगट रूप से वे अंग्रेजों के मित्र बने रहे परंतु उन्होंने गुप्त रूप से देश भक्तों को अपना समर्थन दिया और अप्रत्यक्ष रूप से उनकी सहायता भी की।

धर्म शास्त्र और दर्शन के साथ-साथ शिक्षा में उनकी विशेष रुचि थी, उन्हीं की स्मृति में उनके पुत्र महाराजा शिवाजीराव होलकर ने 10, जून 1891 को होलकर कॉलेज (वर्तमान में होलकर विज्ञान महाविद्यालय) की स्थापना की।



महाराजा तुकोजीराव होलकर - द्वितीय



महाराजा शिवाजीराव होलकर



For the better encouragement of Hindi education in Central India, there shall be establishment of Indian College to be styled "The Indian College".

(1) अक्षरी वर्णिका (2) मण्डप (3) पत्थरी (4) लो-मण (5) गुहिका  
(6) पत्थरी-मण (7) पत्थरी-मण (8) लो-मण (9) गुहिका

अपना मैं अपना है अपना मैं तुम को मैं अपनी अपनी आँखों से  
तुम को मैं अपनी ही आँखों से अपनी आँखों से मैं तुम को मैं अपनी  
है अपनी अपनी ही आँखों से मैं तुम को मैं अपनी अपनी आँखों से  
मैं तुम को मैं अपनी अपनी आँखों से मैं तुम को मैं अपनी अपनी आँखों से



© 2001 Blackwell Science Ltd

सोवियत संघ की अर्थव्यवस्था की योजना को फिर बनाने में यह समझूत समझी जायेगी जिसे के दौरान को सभी मुद्दों पर का बहस होगा जून 13, जून 1989 को मुझे के विचार यह होते थे की मैं अपने घर में या तो हुआ था। यहाँ जहाँ जहाँ पैसा के बाजार में समझी है प्रत्यक्ष रूप से नहीं मैं विचारव्यवस्था में जहाँ यहाँ का समझी के जहाँ हमने की यहाँ की जहाँ यहाँ जहाँ का ही जहाँ जहाँ जहाँ जहाँ

[illegible]

विद्यार्थी के समस्त साहित्य में उनकी तबियत की अपनी निश्चित आवश्यकताओं का ध्यान होना चाहिए। प्रत्येक विद्यार्थी के अपने वैयक्तिक जीवन में वे साहित्य प्रकृति के से, समस्त सविद्यालय नहीं थे, सही अर्थों में वे एक छात्र विद्यार्थी हैं।

1980 में इन्दौर में कोलेज को प्रारंभ करने संबंधी योजना और उसका विधायी अड्डाकरण विधान सभा के विरोध महाराज गिडवाजीराव होल्करकर का निमित्त नहीं दिया। विधानसभा अन्दरही उसको उस समय विचारित के कारण नहीं, उसके बाद में वह समय कोलेज प्रारंभ करने के लिये उपयुक्त नहीं था, क्योंकि उस समय उस इन्दौर में सैदिक की परीक्षा में बहुत कम संख्या में विद्यार्थी सम्मिलित होये थे, लगभग इन्हीं वर्षों में यादवपुर में विद्यार्थियों कोलेज और उसके बाद इन्दौर में सार्वजनिक प्रारंभ किये जाने वाले थे इन्दौर में जलनवास बस स्टूडि बूक का विचार था कि इन्दौर देखी प्रगतिशील विद्यालय को इस मामले में पीछे नहीं रहना चाहिये अतियु इस दिशा में पहल करने चाहिये।

सहजी जमाने मिळे ये विष्णुपुत्र मुकाजी की सहायता से और मद्रास का काकासा विद्याविद्याजी की गोखला (Calenders) से आशुपद लखन कल का जहीरीजी मि पूरी पोखना सेवार का प्रसन्न हो, हुंजु काकरो की जीतने की असमर्थी से इसे लातु बनने में विजय हुआ, पृ. १०१।

मं हीतने के जमाना एक जय की केरतन, काकरोजी से तारी वा डोहन साकन लय से लकी, शरीरमक माहीं मे - हुंजु से नयनर एक कौनिक का नयनमि नयनर देने का दायित्व की ही मिर्छे का रोना गया था.

इस प्रकार लक्ष्मी जीवार्थन मित्रों की सक्रिय रविव और परिश्रम से कॉलेज की स्थानगत समर्थ हो सकी। उनके इस प्रारंभिक प्रयास ने आज एक विशाल कला-मंच का रूप ले लिया है जिससे स्नातकों की कई पीढ़ियाँ अनुप्राणित हुई हैं। लक्ष्मी के अवसर पर उनके कृतित्व का पालन स्मरण करते हुए हम उन्हें अपने सदा प्रणाम अर्पित करते हैं।

with the fact that the number of people living in the city of New York has increased by 100,000 in the last five years.

1881 में जिन प्राध्यापकों की नियुक्ति की गयी, वे थे - संस्कृत के श्री पी. एन. पट्टाभयन, श्री रामानुजाचार्य और श्री हरिशास्त्री महु. फारसी तथा उर्दू भाषा के श्री अलीखुर रहमान और विज्ञान के श्री मीरझफरसाद.

10. जून 1891 को कॉलेज का आरंभ करते हुए रायबहादुर के.सी. केदारकर (शिवाजी के भतीजे) ने कहा था -

I am directed by H.H. the Maharaja Hoshur to appear before you this evening personally to announce His Highness's order for the opening of a new college at Indore and to declare it open from this day. I am extremely grateful to H.H. the Maharaja for thus being allowed to take the chief part in a ceremony which is to usher into existence an important institution calculated to encourage the study of literature and science in this part of the country. This day will long be remembered as marking a new epoch in the 'History of Educational Progress' in this State. There is perhaps no department of the state on which His Highness and his government bestow so much care and look forward with so much hope as the Educational Department. Hitherto the State has maintained an efficient high school with much benefit to the state, the public service and the public at large. This new college is an onward step in furtherance of the same object. The alumni of the school are already occupying high posts in the state service. The tradition established by the school will now be perpetuated in this college by its students coming to fill similar offices of trust in this State and elsewhere in future."

શ્રી પાટનકર, ડૉ. મળ્હારકર કે યોગ્ય કિયા છે. શ્રી રામનુજાચાર્ય ન્યાય, અનંતકાં અને વેદાંત કે પારિવ્રજી વિદ્વાન છે. શ્રી શ્રી હરિનામી કે સ્વામી કાલ યાગ્યકલાધાર્ય કે સ્વમી શ્રી, શ્રી સેરવ પ્રસાદ શ્રીવાલત્ - કેરેલી સે આયે છે. કોલેજ ને શે વિજ્ઞાન અને ાવિત્ત પડાતે છે. શ્રી અંજીતુર રમણન કે પારમિયો મિશા ક્વિન્ટર ને હી હુઈ થી. કન્હીને મ્યુર સેંદલ કોલેજ, ક્વિનાહવાડ, કલકત્તા વિશ્વવિદ્યાલય સે ડાર્શન શાસ્ત્ર ને એ.એ. કિયા થી. શ્રી બેંદરકર ને અખ્યે સુપ્રાચાન - ધામ્યા ને અંજીતુર રમણન કે બારે ને કાઠા થા - "He is very energetic and can not fail to be of much use in the college. I particularly commend him for his energy. He belongs, to be remembered, to that class which is known as backward in point of education, I mean the Mohomedans. All the more honour, therefore to him to have risen to the top of the ladder in education and thus to have set an example to his caste fellows."

श्री अजीजुर रहमान (1865 - 1945) का सम्बंध इन्दौर के एक प्रतिष्ठित मुसलमान पवन परिवार से था। यह परिवार अफगानिस्तान के स्वात बुन्द के प्रसिद्ध संत अखुन बाबा की वंश - परम्परा में था और इन्दौर में इनके पूर्वजों का सम्बंध नवाब गफूर खान से था - जो महाराराज होलकर के पगड़ी बटल भाई कहलाते थे। श्री अजीजुर रहमान के पिता

का नाम अब्दुल रहमान था और वे रायबरेल के नाज़िम थे। अज़ीज़ुर रहमान इन्दौर मद्रास के विद्यार्थी थे, जहाँ लेले मास्टर ने उन्हें पढ़ाया था। उनके दोनो भाई भी उच्च शिक्षा प्राप्त थे और बार एट लॉ थे। श्री अज़ीज़ुर रहमान टैनिंस और मिलियर्ड के अच्छे खिलाड़ी थे। ऊँई और फारसी के साथ अंग्रेज़ी साहित्य में भी उनकी तपि थी। अलखिरी गोल्ट स्मिथ और शेक्सपियर उनके पिया लेखक थे। वे शैख सादी की मुल्लिसात बोस्तन तथा मौलाना रूम



શ્રી અજીજુર રહમાન

की मसलगी को प्रायः पढ़ा करते थे, उनका पहला विवाह अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के संस्थापक सार सयद अहमद खान की साहिबजादी से हुआ था, पहली पत्नी की मृत्यु के बाद उन्होंने जयरा के प्रतिष्ठित परिवार की कन्या से विवाह किया, उनके 4 पुत्र और 2 पुत्रियाँ हैं, यह भी एक संयोग ही है कि प्रो. सुशील अजी के अवकाश लेने के बाद उनके एक पुत्र महबूब रहमान प्रो. सुशील कॉलेज में फार्मसी के प्राध्यापक नियुक्त हुए।

कॉलेज में लगभग तीन वर्षों तक कार्य करने के बाद श्री अज़ीज़ुर रहमान पुलिस सेवा में जाने गये और डिप्टी इन्स्पेक्टर जनरल (डी.आय.जी.) नियुक्त हुए। वे विधि स्नातक और बार-एट.लॉ. भी थे। '30 के दशक में होलकर स्टेट की लेजिस्लेटिव कमेटी के अध्यक्ष के रूप में भी उन्होंने सफलतापूर्वक कार्य किया। उन्हें 'बकादार-ए-दौलत' की उपाधि से सम्मानित किया गया था।

यस विचारणीय भी अजीबुर रहमान के सुपुत्र भी शरीकुन् रहमान एम.ए. (Philosophy) के सौजन्य से प्राप्त जानकारी के आधार पर तैयार किया गया है। श्री शरीकुन् रहमान सुपुत्र खां की कबरीया स्थित अपने पुत्रकी मकान में अभी भी रहते हैं। श्री अजीबुर रहमान का पिता हमें जबीर से प्राप्त हुआ है, उनके प्रति मैं आधार व्यक्त करता हूँ।



प्रो. परशुराम नारायण उर्फ अण्णा साहेब पाटणकर - का जन्म 4, सितम्बर 1860 को महाराष्ट्र की मुलावाजिल तहसील के सासन गाँव में हुआ था। उनकी पारिवारिक जानकारी, उनके स्वयं के शब्दों में -

‘भाव-स-एषे आधुनिक : कवि : भीगतते संनिवेशत कुल विस्तारस्य रत्नागिरी गारस्य नरहरि भट्ट प्रपौत्रस्य माधवशर्मणः पौत्रस्य नारायणशर्मण आत्मज : परशुरामशर्मणसुतः’ - वीर धर्म दर्पण

उनके पिता नारायणराव गीत, वादन, चित्रकला, शारीरिक व्यायाम और काष्ठ शिल्प कला में निपुण थे। उनकी प्रारंभिक शिक्षा सोलापुर में हुई। उन्होंने पूना के डैक्कन कॉलेज से 1880 में बी.ए. की उपाधि प्राप्त की। वे पूना की डैक्कन एजुकेशन सोसायटी से सम्बद्ध थे। लोकमान्य तिलक से उनकी आजीवन मित्रता थी। रावजी जयार्दन मिडे की सलाह पर वे 1891 में होलकर कॉलेज में संस्कृत के प्राध्यापक के रूप में आये। तिलक से अपनी मित्रता के कारण, ब्रिटिश रेजीडेंट की अपसन्नता के फलस्वरूप महाराजा शिवाजीराव होलकर की इच्छानुसार उन्होंने 1898 में त्याग-पत्र दे दिया। कॉलेज के प्राचार्य श्री चमले ने उन्हें, उनके बारे में 1898 - 99 की अपनी वार्षिक रपट में लिखा था -

‘Prof. Patankar, who since the foundation of the college in 1891 had filled the chair of Sanskrit with eminent success, left us in December last. The thoroughness of Mr. Patankar’s teaching is ample evidence by the number of students who have taken honours in Sanskrit during the last 7 years and his devotion to the work was in itself an object lesson to his students.’

5 वर्षों तक उज्जैन के माधव कॉलेज में कार्य करने के उपरान्त, महामना मदनमोहन मालवीय के अनुरोध पर वे बनारस गये - जहाँ 1903 से 1911 तक उन्होंने सेंट्रल हिन्दू कॉलेज में अध्यापन कार्य किया। पारिवारिक कारणों से वे मालवा लौट आये। यहाँ 1912 से 1920 तक देवास में अध्यापन कार्य किया। सेवा-निवृत्ति के बाद वे इन्दौर आ गये। श्रद्धेय मालवीय जी के साथ आदरणीय डॉ. भगवानदास जी उनके निकटवर्ती मित्रों में से थे। इन लोगों के आग्रह पर वे 1925 में पुनः बनारस



प्रो. परशुराम नारायण उर्फ अण्णा साहेब पाटणकर

गये वे विश्वविद्यालय में संस्कृत के अध्यापक और धर्म प्रवचनकार नियुक्त किये गये। एक वर्ष उपरान्त ही उन्हें पक्षाघात हो गया। रूग्णवस्था में इन्दौर लाये गये। यहाँ 4 दिसम्बर 1930 को उनका निधन हुआ।

अण्णा साहेब पाटणकर एक सौम्य और शालीन व्यक्ति थे। वे गम्भीर, तेजस्वी और मितभाषी थे। श्री सेतुमाधव राव पाण्डी ने उनका स्मरण करते हुए लिखा है :

‘परशुराम नारायण उर्फ अण्णा साहेब पाटणकर यांना उपा माधवायी तर प्राचीन कालच्या काव्यनिर्वाणी छावी लागेल’.

- जीवन-सेतु

वे निर्यूह और साधु प्रभृति के थे। मूलतः वे शिक्षक थे। अध्यापन और अध्यापन ही उनका व्यसन था - ‘अध्यापनसुत्रया विविधान्देशानधिपसन्’। उनका जीवन अत्यंत सरल था। वे संस्कृत के अधिकारी विद्वान के रूप में आदर के साथ जाने जाते थे। हिन्दी, अंग्रेजी और उर्दू पर भी उनका समान अधिकार था। उनका अध्ययन और लेखन सतत चलता रहता था। जयद्रथ - वध पर आधारित - ‘वीर धर्म दर्पण’ नामक उनकी नाट्य - कृति प्रसिद्ध थी। संस्कृत में लिखे अपने इस नाटक में उन्होंने स्थान-स्थान पर संवादों और गेय-वर्दों में प्राकृत का भी उपयोग किया था। स्वच्छन्द मणि की कथा पर आधारित संगीत-नाटक भी उन्होंने मराठी में लिखा था।

उन्होंने कालिदास के रघुवंश और अभिज्ञान शकुन्तलम्, दण्डी के काव्यादर्श, भाष के विशुद्धत वध और भारवि के किरातार्जुनीयम् के अंशों का अंग्रेजी अनुवाद व्याख्या सहित किया था। मराठी शब्दों की व्युत्पत्ति पर भी उन्होंने एक पुस्तक लिखी थी। 1918 में Hinduism and Hindu Sainthood in the light of comparative theology पर उन्होंने Eternal Religion शीर्षक से एक प्रसिद्ध कृति की रचना की थी। उनके अन्य ग्रंथों में - स्तोत्र पदसंग्रह, व्रतोद्धार गाथा और मन्त्रारिज प्रशस्ति हैं। अपने जीवन के कुछ अनुभवों पर आत्मकथात्मक रूप में लिखी हुई उनकी एक कृति अभी भी अप्रकाशित है। उन्होंने व्याकरण संबंधी अनेक लेख लिखे थे। बनारस में वे धर्म संज्ञाति नाम का संस्कृत पाठिक-पत्र भी निकालते थे।

1926 में ही बनारस में उन्होंने सेतुमाधव राव पाण्डी को प्रारंभिक आश्रय दिया था। श्री पाण्डी उनके प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त करते हुए, लिखते हैं -

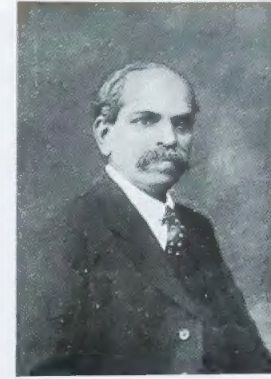
‘श्री पाटणकरजी के कारण मेरे जीवन में अक्षरशः क्रांति आई। यदि बनारस में मुझे प्रो. पाटणकरजी का आश्रय न मिलता तो प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण मेरा जीवन तिनके के समान अस्त-व्यस्त हो जाता। उन्हीं के कारण मेरे घर जमीन पर स्थिर हुए। आपत्तियों से लड़ने का कौशल प्राप्त हुआ और संस्कृत तथा मराठी साहित्य के प्रति मेरी रुचि विकसित हुई। ईश्वर की कृपा से ही मुझे उनका आशीर्वाद मिला। मैं उनकी स्मृति को कोटिशः प्रणाम करता हूँ’.

संघर्ष एवं आभार -

- (1) वीर धर्म दर्पण - परशुराम नारायण पाटणकर, कलौ 1907
- (2) जीवन-सेतु - सेतुमाधव राव पाण्डी, पूना 1967
- (3) श्री पाण्डी का दिनांक 11 जुलाई 1991 का वध
- (4) स्व. प्रो. पाटणकर के पुत्र डॉ. कृष्ण पाटणकर का दिनांक 4 अगस्त 1991 का वध
- (5) वीर धर्म दर्पण नाटकस्य समीक्षात्मक अध्ययनम् - वृत्त वाकुर द्वारा लिखित सत्यु शोध ग्रंथ - 1984

कॉलेज के लिये एक सुयोग्य प्राचार्य के चयन का दायित्व केम्प्टन फ्रेंक्स को सौंपा गया - जो अवकाश पर इंग्लैण्ड गये हुए थे। उन्होंने एक अभिजात्य परिवार के सुशिक्षित सदस्य की अनुशंसा की - और इस प्रकार श्री. ई. सी. चमले, बी.ए. बार-एल. लॉ कॉलेज के प्रथम नियमित प्राचार्य नियुक्त किये गये। वे नवम्बर - 1891 को इस पद पर आये।

श्री चमले के आने से राव बहादुर श्री मिडे का महाविद्यालय से सम्बंध लगभग समाप्त हो गया। उनके स्थान पर 1891 में गणित के प्राध्यापक के रूप में आये आर.एस. आठवले। 1892 में श्री भैरव प्रसाद के स्थान पर विज्ञान के प्राध्यापक नियुक्त हुए पी.आर. भण्डारकर, वे सर आर.जी. भण्डारकर के पुत्र थे। उन्होंने बम्बई के ग्रांट मेडिकल कॉलेज में शिक्षा प्राप्त की थी और कुछ समय तक वहाँ रासायनिक विश्लेषक के रूप में कार्य किया था। उन्होंने लगभग 6 वर्ष तक कॉलेज में कार्य किया। इन प्रारंभिक वर्षों में महाविद्यालय में विज्ञान की शैक्षणिक परम्पराओं के निर्माण में उनके योगदान को कभी मुलाया नहीं जा सकता। बाद के वर्षों



डॉ. पी.आर. भण्डारकर

में वे इन्दौर के किंग एडवर्ड अस्पताल से सम्बद्ध रहे। उन्होंने तुकोजीराव अस्पताल में शिविल सर्जन के रूप में कार्य कर - प्रतिभा और ख्याति अर्जित

1894 में एक लाख पाँच हजार रुपये की लागत से कॉलेज का मुख्य भवन, बिल्डिंग सुपर वाइजर श्री रामचन्द्र मुल्ये की देख रेख में, बनकर तैयार हुआ।

इन तीन वर्षों में कॉलेज की छात्र-संख्या 14 से बढ़कर 52 हो गयी थी। कॉलेज के प्रथम स्नातक होने का श्रेय है वाय जी. आप्टे को जिन्होंने 1894 में प्रथम श्रेणी में विज्ञान में ऑनर्स के साथ बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की और कलकत्ता विश्वविद्यालय की प्राचीण्य सूची में 5 वें स्थान प्राप्त किया। उनके ससपाठी आर.बी. दुधे ने 1898 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय का जुबली पदक विज्ञान में प्राप्त किया।

शनिवार - 17 मार्च 1894 को कॉलेज के निर्वाचित भवन का शुभारंभ हुआ। कॉलेज तब कैसा लगता था? श्री चमले के शब्दों में -

‘The buildings comprise a handsome main structure fronting on the Mhow Road, containing a Library, a Laboratory, a recreation room, an accounts office and five large lecture rooms, flanked on either side by

boarding houses for upwards of forty students. In the rear of these are cooking houses and servant’s quarters, the whole forming three sides of a quadrangle, in the centre of which are tennis - courts.’

कॉलेज के पुस्तकालय में आयोजित एक भव्य समारोह में, नगर के प्रतिष्ठित एवं गणमान्य नागरिकों की उपस्थिति में गवर्नर जनरल के प्रतिनिधि कास्थवेट ने कॉलेज भवन का उद्घाटन किया। श्री कास्थवेट ने इस अवसर पर अपने सम्बोधन में कहा -

The Maharaja Holkar has done me the honour of asking me to open this college which he has erected for the benefit of his subjects and I have gladly undertaken the task. There is at present a laudable desire on the part of the people of this country for the acquisition of knowledge and to satisfy this desire His Highness has with his usual liberality established this college and provided the funds necessary for maintaining it.

की वे रियासत के गृह-मंत्री भी थे। उन्होंने महाराजा यशवंतराव को शिक्षा देने के महत्वपूर्ण दायित्वों का भी सफलता पूर्वक निर्वह किया। उन्हें दीवान-ए-खास तथा राव बहादुर की उपाधियाँ भी मिली थीं। कॉलेज के भवन के लिये - शहर से दूर, नीलखे के सुरस्य वन-प्रान्तर के निकट सुन्दर प्राकृतिक परिवेश में - जगह चुनी गयी। श्री चमले के शब्दों में - खुले वातावरण में इस विस्तृत स्थान के चयन की पृष्ठभूमि और सच स्पष्ट होती है - ‘The site selected is a wide open space abutting upon the Mhow Road, where the students will have every opportunity, by indulging in many exercises, to cultivate the ‘Corpus Sanum’ which is the indispensable preliminary to the enjoyment of a ‘Mens Sana’.

(1) प्रो. भण्डारकर के सम्बंध में उपरोक्त विवरण तथा उनका चित्र उनकी पौखी श्रीमती सुमति बायवी के सौजन्य से प्राप्त हुआ है।

Not that Indore was unprovided with the means of education, for there was large school in the city maintained at the expense of the state and I remember when I first came to Central India in 1891, that I was much struck with the number of boys who attended the school, the large staff of masters, and the popularity and efficiency of the institution. The Maharaja Holkar wished, however, to make still further provision for the education of his people by founding a college in which they could carry on their studies beyond the standard of a school and could obtain university degrees. No time has been lost in carrying out this proposal. In the first place a Principal had to be appointed to superintend the college and control and direct the course of study. For this important office the Maharaja selected. Mr. Cholmondeley, and I must heartily congratulate His Highness on the wisdom of this





श्री. ई. सी. चमले, कॉलेज के प्रथम नियमित प्राचार्य 1891 - 1910 Mr. E.C. Cholmondeley, First Principal of the College

selection and on his good fortune in finding a gentleman so admirably qualified in every respect to superintend the establishment of the college and to guide its early progress. Already there are 50 students in the college and the number will, I have no doubt, increase. Having thus secured an efficient principal, and started the students on their educational career, the next thing was to provide them with a building in which they could pursue their studies. This building has now been completed and we have met today to declare it open. For his liberality in endowing the college, and in erecting this fine building, in which we are now assembled, the people of the Indore State and all those who complete their education here (for the college is open to the subjects of all the states) should be most grateful to His Highness the Maharaja Holkar. His Highness has desired that this college should be called the Tukoji Rao Holkar College in memory of his father the late Maharaja and with best wishes for its future prosperity I declare the college open."

इस अवसर पर बोलते हुए श्री बेदरकर ने स्त्री-शिक्षा के व्यापक महत्व को रेखांकित करते हुए कहा -

"What has been done in the cause of the male education forcibly reminds me of what has not been done in the cause of female education. I am painfully aware of the backward state of female education in this part of the country and of its great importance in the cause of progress and advancement. No educational system can be complete without the necessary complement of adequate instructions for females."

The greatest impediment to progress and rational enjoyment of life, is, in my humble opinion, want of enlightenment amongst our ladies, and until that want is adequately supplied the education of males must remain a half measure. Man and woman together form a harmonious whole and it will never do to nourish the one and neglect the other."

उन्होंने कॉलेज के विद्यार्थियों को सम्बोधित करते हुए कहा -

I exhort you, therefore, most earnestly that you set before your mental vision a high aim to achieve. Let it be such as suits your mental capacity, your physical energies, your other resources; but let it be as high as possible. Strive to achieve it, in and out of college. Do not be blinded by worldly successes. Do not go in for cramming with the sole object of passing your examination. Look upon your success at examination as a means to an end - an end high and noble. Be thorough and thoughtful in everything that you attempt to do. Slur over nothing. Avoid doing anything slovenly or hurriedly. Let not the apparent difficulty of a problem daunt you. Go at it with resolution and calmness. Enter deep and go to the bottom of it. Drink deep at the inexhaustible fountain of learning and strive to be pundits in the best sense of the term, and not quibbling pedants. If you do so, your success will be as certain as the rising of the sun tomorrow morning."

अपनी पहली वार्षिक रपट में प्राचार्य चमले ने लिखा था -

"I am confident that the interest taken in their work by the several professors must bear good fruit, and when experience has been gained as to the best method of training to suit the requirements of the university, I have no doubt that the college will be able to claim its due proportion of success."

श्री बेदरकर और श्री चमले - दोनों के ही विश्वासों को साकार किया - कॉलेज के प्राध्यापकों तथा विद्यार्थियों ने अपने प्रारंभिक वर्षों के परिश्रम के साथ यह कॉलेज सफलता के कीर्तिमान अर्जित कर शीघ्र ही सारे देश में सम्मान के साथ जाना जाने लगा

1891 में ही श्री आर.एस. आठवले गणित के प्राध्यापक नियुक्त होकर कॉलेज में आये. उनकी शिक्षा पूता के Elphinstone college में हुई थी और वे Prof. Hawthornwaite के विद्यार्थी थे अपनी प्रखर गणितीय प्रतिभा के साथ-साथ, अपने

विशद ज्ञान और भारतीय ज्योतिष सम्बंधी अपने असाधारण अधिकार के लिये वे प्रसिद्ध थे. 1909 में उनकी एक संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित और गवेषणापूर्ण पुस्तक 'श्रीत भूमि' प्रकाशित हुई थी इसकी प्रस्तावना में, उन्होंने लिखा था -

"The following pages are intended as a kind of supplement to the Arctic Home", as there in an attempt has been made to determine, with as much precision as is attainable in such abstruse inquiries, the locus of the earliest Aryan Civilisation."

15 जनवरी - 1910 को प्रो. आठवले की मृत्यु हुई

प्रो पाटनकर के स्थान पर 1899 में सीताराम दिनकर घाटे की नियुक्ति संस्कृत के प्राध्यापक के रूप में हुई. उनके पूर्वज कोंकण के मुटाट गोंय के निवासी थे. उनकी प्रारंभिक शिक्षा पूता के न्यू इंग्लिश स्कूल में हुई थी. उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा में प्रथम आकर संस्कृत के लिये जगन्नाथ शंकर शेट छात्रवृत्ति प्राप्त की थी. डेक्कन कॉलेज - पूता से उन्होंने सम्मान सहित बी.ए की परीक्षा उत्तीर्ण की और झाला देवदत्त पुरस्कार प्राप्त किया संस्कृत के विद्वान और कुशल शिक्षक के रूप में उनकी ख्याति दूर-दूर तक थी उनके विद्यार्थी आज भी उन्हें अत्यंत आदर और श्रद्धा से याद करते हैं उनकी विद्वता के लिये होलकर राज्य ने उन्हें 'पंडित-रत्न' की उपाधि से सम्मानित किया था स्व. विनायक सरवटे ने, जिन्हें इस कॉलेज में प्रो. घाटे का प्रथम विद्यार्थी कहा जा सकता है, उनका स्मरण करते हुए लिखा है

"सर्वत उपयोगी व कंटाळवाणे न होणारे लेखक होते संस्कृत के प्रो. घाटे यांचे मी कालेजांत गेलो त्याच वर्षी त्यांची प्रोफेसर म्हणून नेमणूक झाली. त्यांनी मला उत्तररामचरित शिकविले 'अग्निमीवा रोदर्यापि दलति वज्रस्य हृदयम्' ही भवभूतिची प्रतिज्ञा. आमची हृदय मेणाची नसली तरी मऊ होती वर्गात मी एकच विद्यार्थी होतो तरीही प्रोफेसर व विद्यार्थी दोघच्याही डाळ्यातून अक्षुब्ध घारा वाहू लागत. विषय इतका रंगत असे की तास केव्हा संपला ते कळत नसे"

- भास्करा जीवन प्रवाह

\* लोकमान्य तिलक की प्रसिद्ध पुस्तक - Arctic Home of the Vedas



प्रो. सी. सी. घाटे

अपने 25 वर्ष के कार्यकाल में उन्होंने छात्रों की कई पीढ़ियों को अनुपम शिक्षा परम्परागत पेशाक में - बड़ी बंडी, चूड़ीदार पायजामा और 'पुलेरी' पगड़ी पहने - प्रो. घाटे का व्यक्तित्व अत्यंत आकर्षक था वे सतत और धार्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे अपने दैनिक जीवन में वे भगवान वल्लभ के उपासक थे और उन्होंने दत्तात्रय तथा वल्लभक कृतियों की रचना की थी. संस्कृत न जानने वाले या कम जानने वाले को इस भाषा के सौन्दर्य और साहित्य से परिचित करने के लिये भी उन्होंने कुछ पुस्तकों की रचना की थी. उन्होंने महाराजा तुलसीदास - तृतीय और बालासाहब यशवंतराव होलकर को भी संस्कृत की शिक्षा दी थी

अपनी विशेषण अध्ययन शैली, भावुक संवेग और सहन तथा हृदयग्राही अभिव्यक्ति के लिये वे प्रसिद्ध थे अपने स्वराज्य, स्वातंत्र्य, स्वायत्तक व्याख्या, ललित शब्द-योजना और स्वर-माधुर्य से वे अपने विद्यार्थियों को कथा में सम्मोहित सा कर देते थे

28 नवम्बर - 1925 को उनकी मृत्यु हुई. उनकी मृत्यु पर कॉलेज के तत्कालीन प्राचार्य एफ. जी. पिरर्स ने लिखा था -

'Prof. Ghate's health had been failing for some time past, but with characteristic earnestness, he had stuck to his work in spite of considerable suffering and it was only a few weeks

प्रो. सी. सी. घाटे का चित्र और विवरण जो उनके पुत्रों - वसुधेय और विजयक घाटे के संजय से प्राप्त हुआ है संस्कृत के लिये हम भी प्रयास करते हैं भी आभारी हैं

before his death that he finally decided to retire on a well-earned pension, which unhappily, he never lived to enjoy. He had been entitled to retire several years before, but no one including himself, desired to see him leave the chair he had so long adorned. Previous Principals and myself had year after year felt justified in asking the Government to permit his services to be continued, because everyone had confidence in his ability, in spite of his age. His sudden death came as a great blow to the college and especially to his colleagues and students in the Sanskrit Department. Our heartfelt sympathy goes out to the family he leaves behind.'

- College Annual Report 1925.

1904 में कॉलेज इलाहाबाद विश्वविद्यालय से सम्बद्ध किया गया 1907 में होलकर कॉलेज के विद्यार्थी पहली बार इलाहाबाद विश्वविद्यालय की परीक्षाओं में बैठे श्री घमले के प्रयत्नों से कॉलेज में भी एस. सी. की कक्षाएं प्रारंभ हुई और 1909 में कॉलेज के तीन छात्रों ने भी एस. सी. की परीक्षा दी

इन प्रारंभिक वर्षों में कॉलेज में छात्रों की कुल संख्या और परीक्षा परिणाम इस प्रकार थे -

वर्ष	कुल छात्र संख्या	वर्ष	बी.ए.		एफ.ए.	
			बैठे	उत्तीर्ण	बैठे	उत्तीर्ण
1891-92	14	-	-	-	-	-
1892-93	28	-	-	-	-	-
1893-94	52	-	-	-	-	-
1894-95	49	1895	03	02	10	10
1895-96	58	1896	10	02	16	12
1896-97	42	1897	11	04	14	08
1897-98	56	1898	07	05	08	06
1898-99	50	1899	08	01	19	11
1899-1900	68	1900	10	06	19	13
1900-01	65	1901	06	01	26	17
1901-02	71	1902	10	02	15	11
1902-03	73	1903	13	07	18	08
1903-04	58	1904	15	04	16	09
1904-05	51	1905	13	09	12	02
1905-06	53	1906	10	03	21	09
1906-07	62	1907	04	03	22	06
1907-08	79	1908	04	02	21	18
1908-09	83	1909	04	02	27	07

श्री घमले के सेवा-काल में ही प्रो. गोखले और प्रो. देसाई कॉलेज में नियुक्त हुए. 1910 में श्री घमले की सेवा निवृत्ति से कॉलेज के 19 वर्षों के एक अध्यापक की समाप्ति हुई. यहाँ से वे इंग्लैण्ड चले गये. होलकर कॉलेज में उनकी रुचि बराबर रही. 1958 में उनकी मृत्यु हुई.



ग्रुप फोटो होलकर कॉलेज, 1901

प्रो. आटवले के बाद दो वर्षों तक P.K. Wattel ने गणित के प्रोफेसर के रूप में कार्य किया भारत सरकार के लेखा विभाग में नियुक्ति मिलने के कारण वे यहाँ से चले गये. उनके स्थान पर आये प्रो. कॉर्नेलियस 6 फुट से भी अधिक लम्बे Prof. L.J. Cornelius का व्यक्तित्व अत्यंत प्रभावी था. वे एक सैनिक अधिकारी के पुत्र थे और अनुशासन का पाठ उन्हें अपनी पारिवारिक शिक्षा में मिला था. उनका जन्म रायपुर (म.प्र.) में हुआ था. उनकी शिक्षा नागपुर में हुई. कुछ समय तक उन्होंने हरदा के मिशन स्कूल में प्रधानाध्यापक के रूप में कार्य किया. उसके बाद वे आगरा के सेंट जोस कॉलेज में गणित के प्रोफेसर नियुक्त हुए वहाँ से वे इन्दौर के केनोडियन मिशन कॉलेज (जिसे अब क्रिश्चियन कॉलेज कहा जाता है) में आये होलकर कॉलेज में उन्होंने 1912 से 1934 तक कार्य किया दर्शन, मैथेमटिक्स और रोबोले - प्रो. कॉर्नेलियस सख्त अनुशासन प्रिय होने के साथ-साथ साहित्यानुरागी और प्रकृति प्रेमी भी थे शेक्सपियर के नाटकों में उनकी विशेष रुचि थी. उन्हें पशु-पक्षियों की पालने का भी शौक था अपने छात्रों में स्वयं अध्ययन करने की प्रवृत्ति विकसित करना, उनकी शिक्षण-पद्धति की प्रमुख विशेषता थी वे कभी भी अपनी कक्षाओं में spoon feeding teaching नहीं करते थे. वे अपने विद्यार्थियों को स्वयं पढ़ने, समझने और प्रश्नों को हल करने के लिये प्रोत्साहित करते थे. अपने विद्यार्थियों में गणितीय अनुशासन और आत्म-विश्वास विकसित करने में उन्हें अमूल्य सफलता मिली उनके नाम पर Cornelius Memorial Maths Prize स्थापित किया गया था. 1938 में यह पुरस्कार श्रीकृष्ण नारायण जोशी को और 1937 में गजानन रामचन्द्र लातू को प्राप्त हुआ था.

प्रो. कॉर्नेलियस के चित्र और प्रारंभिक जानकारी के लिये हम उनकी पत्नी कुमारी विवेका कॉर्नेलियस के आभारी हैं



प्रो. आर. जे. कॉर्नेलियस



# बाबा कॉर्नलियस

डॉ वा वि भागवत

बी.एससी कक्षाओं में हमें जो कॉर्नलियस गणित पढ़ाते थे उन्हें हम 'बाबा' कहते थे उनसे हम पड़े कम लेकिन सीखें बहुत गणित पढ़ाया नहीं जाता, खुद करना पड़ता है, वह बात हमें उनकी कक्षाओं में मालूम हुई हम लोगों के गणित के लगातार ट.पी.टी.एस. होते थे इन काल-खंडों में वे हमें, 'I have lost this world and I do not want to loose the next' कहकर कई विषयों पर व्याख्यान देते फिर पाठरी की कथा सुनाने लगते मुन्दा की व्याख्या में सगम रखना जिसका संदेश था वो कहानी इस प्रकार थी एक पाठरी साहब खाना खाने के लिये बैठे बाबावीं ने मुनी का शोरबा परोसा पाठरी ने पूछ - 'मुनी कहीं से लाये?' बाबावीं बोला - 'पड़ोस के है' पाठरी जी अड़ गये कि मैं खोरी का माल नहीं खायेगे बाबावीं ने कहा - 'साहब! हमने खोरी नहीं की मुनी खुद चक्कर हमारे आँगन में आई थी' ऐसा क्या? पाठरी ने कहा, फिर बोले - 'एक बड़ी बाल्टी में शोरबा लेकर उम्पर से उसे उल्टा करो जो शोरबा सच्य गिरना वही हम खायेगे' अर्थात् बाल्टी उल्टा करने से क्या कम रहने वाला था? ऐसे किस्से सुनाने में दो पीरियड खत्म हो जाते और घड़ी बजती वे हडबडा कर खड़े होते और कहते - 'क्या समय निकल जाता है?' अभी तो statics है, Dynamics है, Hydrostatics है फिर कहते -

-Boys, Hydrostatics Chapter so and so 25 उदाहरण करना, Dynamics के इतने और statics के इतने प्रश्न करके लगना तब तक दूसरी घड़ी होती और हम सब निकल पड़ते दूसरे दिन आते हैं पूछते 'उदाहरण किये? नहीं तो घरवाले पर खड़े हो जाओ' उदाहरण करके ही हम लोगों को जाना पड़ता हमारे बर्बो को वे कभी-कभी कक्षा में बैठ पर खड़ा कर देते यह कॉलेज में था

समय के थे बहुत पाबंद थे स्वयं कभी घड़ी के बाद नहीं आये देर से आने वाली को दरवाजे पर खड़े रहना पड़ता थे कहते नियम यान नियम! नियम है न, प्रिंसिपल का, कि समय के बाद आने

वाले छात्रों को क्लास के अंदर नहीं लेना कोई बहाना उनके सामने नहीं चलता फिर हमारे सिर तरफ देखें और कहते - 'ओ! ओपी जहाँ है? उट्टे के अन्दर! पानी से टोपी गीली हो जाती! Your cap is more valuable than your head.'

ऐसे गुरुजनों से पढ़कर गणित अच्छा क्यों नहीं होता? स्वयं पढ़ते, 80 प्रतिशत अंक भी एससी में आते उनके अंदर सुन्दर मोती समावे थे हमारी कठिनाई हल करते समय वे पद्य बोलते नहीं थे रीन बोर्ड थे उन पर step by step उदाहरण हल करते डॉ. देशपांडे वाइस प्रिंसिपल थे ऊपर जहाँ कॉर्नलियस बल्लास लेते उससे नीचे कैमिस्ट्री विभाग था वे डॉ. देशपांडे को आवाज लगाते - 'शक्ता' है रजिस्टर देवावर उनमें संस्कृत और मराठी आती थी उनकी आवाज सुनकर डॉ. देशपांडे आते और नम्रता से उनसे रजिस्टर लेकर रखते बड़ी बह सिखा दी जो हमें मिली अपने गुरुजनों का आदर करने की हमारी भाषा में जो सुस्तुरापन है वो हमने हमारे गुरुजनों से पाया है 'बाबा' कॉर्नलियस अपने जीवन, कला और व्याख्यात्मक टिप्पणियों के लिये भी प्रसिद्ध थे मुहम्मद अली कहेस के नेता थे लंदन में उनकी गुरु का समाचार सुनकर कॉर्नलियस जी ने तुरंत कहा - 'Thanks to the climatic condition of England that one 'Goonda' is dead!'

वे सच्चे पिता थे बच्चों को खेल आदि दिखाने को समय से जाते उनकी पढ़ाई पर भी सख्त नजर रखते उनका सबसे बड़ा पुत्र (आई सी एस.) हुआ उसने इंटर तक होलकर कॉलेज में शिक्षा प्राप्त की थी वो पाकिस्तान चला गया वहाँ दो उच्चतम न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश बना यह गौरव था होलकर कॉलेज का और ऐसे थे मेरे गुरु बाबा कॉर्नलियस

लगभग इसी समय - 12 नवम्बर 1911 में होलकर कॉलेज और शिवाजीराव हाईस्कूल में अंग्रेजी पढ़ाने के लिये W.E. Kirby की नियुक्ति हुई केम्ब्रिज से ट्रेनिंग प्राप्त करने के बाद उन्होंने पेरिस (फ्रांस) में अध्ययन किया था यहाँ आने के पूर्व वे लॉरेटो (स्कॉटलैण्ड) में एक प्रतिष्ठित शिक्षण संस्था में कार्यरत थे वे एक अत्युत्तम व्यक्ति थे अपने माहक और प्रगढ़ी व्यक्ति, खिलाडी प्रवृत्ति अनुशासनप्रियता तथा रौनिक संघर्षों के कारण वे विद्यार्थियों में अत्यंत लोकप्रिय थे प्रथम विश्व-युद्ध के दौरान वे सेना में अती हो गये वे 15 वीं लुयियाना मित्र कम्पनी से सम्बद्ध थे

वे 1915 में फ्रांस के मोरें पर लड़ते हुए मारे गये अपने विद्यार्थियों में साहित्यिक रुचियों को विकसित करने में उनकी विशेष रुचि थी, एक लम्बे समय तक कॉलेज में उनकी अनुपस्थिति अनुभव की जाती रही उनके विद्यार्थियों ने हमेशा ही अपनी स्मृतियों में उन्हें जीवित बनाये रखा

'साहबी सातवींमध्मे एक इंग्रजाने मला इंग्रजी शिकविले, त्याचें नांव कर्बी मोठा उमदा तरुण होता तो. बालताना पावलो पावली त्याचें पौरुष प्रतीत व्हायचें. डोक्यांतून त्याचें भावुक जीवन टपकायचें आमच्या बरोबर तो खूप फुटबॉल खेळाया आणि बगलत्यावर जाऊन शेती किवा कीटस मध्ये गूणू जायचा. त्याने नुकतेच ऑक्सफर्ड सोडले होते. शिकवितांना इंग्रजी ही आमची मातृभाषा नाही हें तो विसरून जायचा आणि आम्हीही विसरायचो कर्बीने माझा हात घेऊन मला इंग्रजी वाग्याच्या दालनांत नेले. डिकन्स वाचायला लावला थोडा थर्करे वाचून घेतला.

कर्बीने माझ्याकडून शेक्सपिअरची एक-दोन नाटके वाचून घेतली. मला फॉलस्टाफचा अभिनय शिकविला माझ्या बरोबर गेल्याचं ट्रेझरी वाली

कॉलेजमध्ये पहिल्या वर्षी कर्बीनच इंग्रजी शिकविले इतक्यात महायुद्ध, सुरू झाले कर्बीने तबडतोब नोकरी सोडली आणि फौजेत नाव दिलें फ्रांसला गेला आणि त्या रणयज्ञात त्याची आहुति पडली कर्बीच्या आठवणी फार गोड, फार स्फूर्तिदायक आहेत स्वातंत्र्याचा लढा चालू असतां मला इंग्रजाने रागावता आले नाही याचें कारण कर्बीं साखरी माझ्या जीवनांत ओकावून गेलेलीं काही इंग्रज माणसे '

- दिवस असे होते - विठ्ठलराव घाटे

कॉलेज के स्नातक - एम.एच. संवत्सर और की बी. देवघर को 1911 में स्नातकोत्तर अध्ययन के लिये छात्रवृत्तियों प्रदान की गयीं. इस प्रकार की छात्रवृत्ति पाने वाले थे पहले छात्र थे श्री संवत्सर को मॉरिस कॉलेज नागपुर में संस्कृत और श्री देवघर की म्योर कॉलेज - इलाहाबाद में उच्चअध्ययन के लिये ये सहायता दी गयी थी. बाद में श्री देवघर ने कुछ समय तक कॉलेज में अध्यापन कार्य भी किया. 1911 में ही इलाहाबाद में पढ़ रहे कॉलेज के पूर्व छात्र हबीबुर रहमान ने - 'Advantages of British Rule in India' विषय पर उर्दू में लिखे अपने निबंध पर स्वर्ण-पदक और प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया.

1912 में कॉलेज के पूर्व विद्यार्थी मेजर आर बी. दुबे ने महाराजा शिवाजीराव की स्मृति को चिर-स्थायी करने के लिये 'शिवाजीराव पदक' की घोषणा की यह सम्मान कॉलेज के Best all Rounder को दिया जाता था इस पदक को सर्वप्रथम प्राप्त करने का श्रेय है - स्व. विश्वनाथ गोपाल गोले को - जिन्होंने इसे 1913 में प्राप्त किया यह भी एक संयोग है कि श्री गोले के पुत्र श्री एम.बी. गोले ने इस पदक को 1944 में प्राप्त किया यह पदक प्राप्त करना अत्यंत गौरव का विषय था. यह प्रतिवर्ष नहीं दिया जाता था. कॉलेज के जीवन से यह 'पदक' कब और कैसे लुप्त हो गया, नहीं मालूम! इसे अर्जित करने वाले छात्रों की पूरी सूची भी आज उपलब्ध नहीं है, जो जानकारी मुझे मिली है, उसके अनुसार इसे प्राप्त करने वाले कुछ छात्रों के नाम इस प्रकार हैं :-

वर्ष नाम

- 1913 विश्वनाथ गोपाल गोले
- 1918 नारायण गोविन्द खासगीवाले, मनमोहन दामोदर कीर्तने
- 1919 सोमकांत भाटे
- 1921 बलवंत साकल्ले
- 1933 एल.सी. गुप्ता
- 1942 कु. इन्दु पाटकर, दिवाकर आल्वाराम
- 1943 माटवडेकर
- 1944 एम.बी. गोले, पी.डी. शर्मा (1943-44)

कुमारी पाटकर इस पदक को प्राप्त करने वाली प्रथम (और शायद अंतिम) छात्रा थीं छात्राओं को शिवाजीराव पदक दिये जाने के संबंध में - 07 फरवरी 1942 के 'The Holkar College Times' में कु. सुशीला तारे, प्रथम वर्ष (कला) का सम्पादक के नाम एक पत्र निम्नानुसार प्रकाशित हुआ था -

'The most coveted distinction for a student of Holkar College is the Shivajirao Medal for all-round proficiency. In former years a special board was hung up in the college hall with the names of all the previous winners recorded on it. Although it is no longer there, the Medal still continues to be equally coveted, and its winner decided after a careful scrutiny of all deserving dams. One thing however, ought to be considered in this connection in the light of changed conditions. The games qualifications laid down in the rules for the award of this medal practically exclude the lady students from being eligible. We have had (and still have) lady students who were very good in their studies, and who contributed substantially to the social and cultural life in the college, but as they were not "members of the first team in any one of the team games, nor a court players in Tennis, nor among the first six in Gymnasticum" they were not eligible for this distinction. In my opinion, this is hardly fair to fair sex. They should not be judged by the same standard as men. Either the rules for the award ought to be revised, or if this contrary to the wishes of the donor, a new medal called "all-round Proficiency Medal for Lady Students" should be instituted. The Jubilee year is the fittest time to take this fair step.'



1914 में P. Tennyson कोले द्वारा बनाया गया शीतल तुलसीदास द्वितीय का भव्य शीतल चित्र महाविद्यालय में लगाया गया. यह आकर्षक चित्र आज भी महाविद्यालय के पुस्तकालय में लगा हुआ है.

21 फरवरी के 'द होलकर कॉलेज टाइम्स' में टिप्पणी करते हुए प्रिचर्डसन ने लिखा था -

'One of the girl students has recently raised the question of giving the Maharaja Shivajirao Medal for all-round proficiency to a member of her own sex. Her argument runs that just because a girl is prevented by her sex from becoming outstanding in the sporting field this is no reason why she should be disqualified from receiving the most coveted of all college prizes. she also pointed out that when the award was initiated there was no idea of girls being students of the college, so that it was taken for granted that the winner of the prize should excel at sports as well as in the studies and general qualities of leadership; but that this precedent should not disqualify the members of the fairer sex.'

With this point of view we heartily agree. However, there is no reason why girl students should not excel at the sports open to them, which at present are chiefly tennis and badminton. It is not necessary for them to compete with boys in these games, but rather to show that they have attained a very high standard with the equipment with which nature has endowed them. 'Our male correspondent agrees that if a girl student is outstanding she should not be debarrd on account of not being good sports woman'

1913 में प्रो. बी.डी. श्रीखंडे कॉलेज में दर्शन शास्त्र के प्राध्यापक होकर आये 1939 में वे सेवा-निवृत्त हुए 1913 में बी.एस. ताटके और इतर देशपांडे ने उच्च अध्ययन के लिये छात्रवृत्तियाँ प्रदान की गयीं बी.डी. ताटके ने क्वीन्स कॉलेज, बनारस में संस्कृत तथा बी.देशपांडे ने म्योर कॉलेज, इलाहाबाद में रसायन शास्त्र का स्नातकोत्तर अध्ययन प्राप्त किया

1911 की इम्पेरीयलिस्टिक (कला) की परीक्षा में संस्कृत विषय के लिये विश्वविद्यालय की Lumsden Scholarship वास्तुदेव राजभाऊ माटे ने प्राप्त की इस प्रतिभापूर्ण छात्रवृत्ति को पाने वाले वे कॉलेज के पहले छात्र



Central India Winners of Football Cup 1913 Holkar College Team

०. बाद के वर्षों में (1923-27) श्री हरिहर त्रिवेदी ने इस छात्रवृत्ति के साथ - हेमागिनी - भुवनेश्वरी पुरस्कार तथा नदी पदक प्राप्त कर महाविद्यालय के गौरव को बढ़ाया श्री त्रिवेदी को उ.प्र. सरकार की - स्वामी माधवानंद के गौरव को बढ़ाया श्री त्रिवेदी ने खेल - कूद में भी भारती छात्रवृत्ति भी प्राप्त हुई थी इन वर्षों में कॉलेज ने खेल - कूद में भी नाम कमाया देशी खेलों और जिम्नेशियम के साथ टेनिस, क्रिकेट और हॉकी भी लोकप्रिय थे. विभिन्न खेलों में कीर्तिमान स्थापित करने वाले कुछ छात्रों के नाम इस प्रकार हैं - अब्दुल रशीद खान - (हॉकी - 1910), छात्रों के नाम इस प्रकार हैं - अब्दुल रशीद खान - (हॉकी - 1910), यशवंत रानाडे (क्रिकेट - 1910) मुल्ये (हॉकी - 1911), थोम्परे, विष्णु अनंत (हॉकी - 1912), आर. बोबले (हॉकी, फुटबाल - 1913), यशवंत अनेत (हॉकी - 1915), श्रीकृष्ण जोशी (टेनिस - 1918, क्रिकेट कुल्कर्णी (हॉकी - 1919), संकर गंगधर पाटणकर (क्रिकेट - 1918), गोपाल निवसरकर (हॉकी - 1919), करीमदाद खान (क्रिकेट - 1920), चन्द्रसेन मटकर (हॉकी - 1920), सुनेर सिंह बोंडाने (टेनिस - 1920).

प्रथम विश्व युद्ध के समय 1914 में कॉलेज के छात्रों ने नाटक मंचित कर घन एकत्र किया और Indian Imperial Relief Fund में योगदान दिया कॉलेज से - जर्मनी में भारतीय युद्ध बंदियों के लिये भी Indian Soldier's Fund को सहायता भेजी गयी

1915 में ही प्रो. एस.एस. देशपांडे कॉलेज में रसायन शास्त्र के सहायक



Holkar College Hockey Team - 1913

प्राध्यापक नियुक्त हुए, वे एक लगनशील एवम् लोकप्रिय अध्यापक के साथ उच्चकोटि के शोधार्थी भी थे. उनके शोधकार्यों से महाविद्यालय को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठा मिली. 1920 में वे तीन वर्ष का अवकाश लेकर उच्च अध्ययन के लिये लंदन गये. उनके रिक्त स्थान पर कुछ वर्षों तक प्रो. ज्ञानेन्द्रनाथ सेन ने कॉलेज में कार्य किया वे सर फ्रुल्लेचन्द्र राय के शिष्य थे और अमेरिका तथा ब्रिटेन के रसायनवेत्ताओं ने उनके शोधकार्यों को मान्यता दी थी. 1923 में विदेश से लौटकर डॉ. देशपांडे पुनः कॉलेज में अध्यापन, अध्यापन और शोधकार्य से जुड़ गये. 31 दिसम्बर 1923 को भेजी गयी अपनी वार्षिक रिपोर्ट में कॉलेज के प्राचार्य ने लिखा था -

'Doctor S.S. Deshpande who had been on three years leave taking a post graduate course in London after securing his degree of Ph.D. in Chemistry - rejoined us at the end of July and is one of the most brilliant addition to our staff We look forward to the fruit of his labour with every confidence'

शीघ्र ही डॉ. देशपांडे का श्रम सार्थक हुआ उनके द्वारा किये गये शोधकार्य की महत्ता को देश-विदेश के विद्वानों ने स्वीकार किया. डॉ. देशपांडे ने अपने व्यक्तित्व के सात्विक प्रभावपण्डल से वर्षों तक इस कॉलेज को आलोकित किया और यहाँ के रसायन विभाग को राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठित किया.

सयोग से 1991 का वर्ष डॉ. देशपांडे का भी जन्म शताब्दी वर्ष है

इसी क्रम में प्रो. गोले की चर्चा प्रासंगिक होगी - क्योंकि यह उनका भी जन्म-शताब्दी वर्ष है. प्रो. विश्वनाथ गोपाल गोले के पूर्वज सतारा से इन्दौर में आकर बस गये थे. उनके पिता श्री गोपाल गोले रियासत की न्यायिक सेवा में थे और सत्र-न्यायाधीश के पद से सेवा-निवृत्त हुए थे विश्वनाथ का जन्म 1891 में इन्दौर में हुआ था. उन्होंने महाराजा शिवाजीराव हाई स्कूल से मैट्रिक तथा होलकर कॉलेज से 1915 में बी.एससी. की परीक्षा उत्तीर्ण की.

1917 में उन्होंने अलीगढ़ विश्वविद्यालय से गणित में एम.एससी के साथ एल.एल.बी. की परीक्षा उत्तीर्ण की. वे बकालत करने का विचार कर रहे थे कि महाराजा शिवाजीराव होलकर ने उन्हें कॉलेज में गणित पढ़ाने के लिये कहा और इस प्रकार वे 1917 में कॉलेज में नियुक्त हुए - जहाँ उन्होंने 1947 तक कार्य किया. प्रारंभ से ही वे अत्यंत मेधावी थे. अध्ययन के साथ खेल-कूद में भी उनकी रुचि थी. वे फुटबाल और टेनिस के अच्छे खिलाड़ी थे. 1913 में उन्होंने कॉलेज में महाराजा शिवाजीराव पदक प्राप्त

प्रो. गोले का चित्र और विवरण - उनके पुत्र - एम्.बी. गोले (पुणे) के सौजन्य से हमें प्राप्त हुआ है.





डॉ. कोले

किया था। इन्हें प्राप्त करने वाले थे पहले छात्र थे। गणित के साथ ज्योतिष में उनकी गहरी रुचि थी और वे इन्दौर में पंचांग-सुधार समिति से सम्बद्ध थे। वे एक सख्द, सात्विक और अध्ययनशील व्यक्ति थे। अपने विद्यार्थियों को वे सदा ही मार्ग-दर्शन के लिये उपलब्ध रहते थे। सेवा-निष्ठता के बाद भी उन्होंने भारतीय दर्शन के परिप्रेक्ष्य में आधुनिक विज्ञान के अपने अध्ययन को जारी रखा और 'Relativity and Quantum Theories Reviewed against the Background of Traditional Indian Thoughts' - शीर्षक से एक महत्वपूर्ण शोध-पत्र - 1954 में प्रकाशित किया। 1963 में वे पूना अपने पुत्रों के पास स्थायी रूप से रहने चले गये जहाँ 1977 में उनकी मृत्यु हुई। अपने यशस्वी पिता की भाँति ही उनके पुत्रों ने भी कॉलेज की कीर्ति को आगे बढ़ाया है। उनके एक पुत्र एम.टी. गोले ने 1944 में शिवाजीराय पदक प्राप्त किया था। उनके दूसरे पुत्र सन्तु गोले को मातृ-पाक युद्ध में असाधारण वीरता के लिये 'अति विशिष्ट सेवा पदक' से सम्मानित किया जा चुका है।

इस शताब्दी के प्रारम्भ से ही इन्दौर में राष्ट्रीय चेतना, सामाजिक सुधार और नव-धार्मिक आंदोलनों के प्रभावों के संकेत दिखाई देने लगे थे। फलस्वरूप कुछ ही वर्षों में - इन्दौर में क्रांतिकारी संपन्न के सुत्रों, राष्ट्रीय आंदोलन की सहभागिता एवम् उदारवादी आंदोलनों के प्रवाह ने एक सुसम्बद्ध रूप ले लिया था। नगर की इन गतिविधियों से कॉलेज का परिसर भी अछूता नहीं रह सका। इन सबका व्यापक प्रभाव कॉलेज पर पड़ा।

यहाँ शिष्टोत्तमिकता, सोसायटी तथा ब्रह्म समाज की इकाइयों सक्रिय थी। इन्हीं वर्षों में कॉलेज में पो. शास्त्राचार्य देसाई, पो. सुबल्लणकर, पो. पद्मनाभन शर्मा और एक जी. धियारस थे जो इन विचारधाराओं से जुड़े थे। इन प्रारंभिक वर्षों में राष्ट्रीय चेतना की मुख्य धारा के साथ दो रागमगान्तर प्रवाहों का प्रभाव कॉलेज पर देखा जा सकता है। एक तो था सनातन संस्कारों का प्रभाव जल्लेज पर देखा जा सकता है। एक तो था नव उदारवादी विचार-प्रवाह। यही परम्परावादी दृष्टिकोण और दूसरा था नव उदारवादी विचार-प्रवाह। यही नतीजा था कि कॉलेज से और नगर से निकट का सम्पर्क रहा है। डॉ. भण्डारकर के पुत्र इस कॉलेज में विज्ञान के प्रोफेसर थे। बाद के वर्षों में उनकी नातिन अहिल्या - अहिल्याश्रम की प्रमुख थी। दामोदर कोशाम्बी का डॉ. सुखलणकर के परिवार से अल्मूय परिवार था और उनकी बहन माणिक ताई भी अहिल्याश्रम से सम्बद्ध थी। इन व्यक्तित्वों ने प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कॉलेज के शैक्षणिक वातावरण को प्रभावित किया।

1920-21 के वर्षों में ही बलवंत भाऊ नगरकर भी होलकर कॉलेज में अंग्रेजी पढ़ाते थे। यह उल्लेखनीय है कि श्री नगरकर 1893 में प्रतापचन्द्र भट्टसदर के साथ शिकागो में आयोजित विश्व धर्म संसद में ब्रह्म समाज के प्रतिनिधि के रूप में शामिल हुए थे।

□ □

## एक संस्मरण

मैं होलकर कॉलेज में पढ़ता था, तब श्री पद्मनाभन प्राचार्य थे, उनका कॉलेज के छात्र तथा प्राध्यापक दोनों पर सत्तान नियंत्रण था। एक समय छात्रसंघ के पदाधिकारियों ने प्रसिद्ध नटसम्राट् पृथ्वीराज कपूर को निर्मंत्रित किया था। परंतु उस के लिये प्राचार्य की अनुमति नहीं ली थी, निर्मंत्रित अतिथि आने के पूर्व यशवंत हॉल खचाखच भर गया था, तब प्राचार्य पद्मनाभन ने हॉल में प्रवेश किया, और विद्यार्थियों को कहा कि यह सभा उनकी अनुमति के बिना मुलाई गई है अतः वे तुरन्त हॉल खाली करें। उनका छात्रों पर किन्ता प्रभाव था इस का प्रात्यक्षिक तभी सामने आया, पांच मिनटों में पूरा हॉल निर्मुक्त हो गया। बाद में छात्रों के प्रतिनिधि उनसे उनके कक्ष में मिले और माफी माग कर उनसे यथोचित अनुमति प्राप्त की, इतना ही नहीं उन्होंने प्राचार्यजी को सभा का अध्यक्ष पद स्वीकार करने की धिन्ती की। प्राचार्य ने भी पूर्व घटना भूल कर सहर्ष सम्मति प्रदान की और वे पृथ्वीराज कपूर के साथ हॉल में उपस्थित हुए। उसके बाद प्राचार्य द्वारा नटसम्राट् का स्वागत, अतिथि का भाषण तथा शेक्सपीयर के नाटकों के कुछ संवादों का प्रात्यक्षिक इत्यादि मिलाकर दो घंटे का आनन्दपूर्ण कार्यक्रम अत्यंत सफलता से सम्पन्न हुआ।

- कृष्णा दामोदर अय्यंगर (विद्यार्थी 1945-1949)

(श्री प्रधान मंत्री के अनुसार उस समय तक फिल्म 'सिकन्दर' में अपनी प्रभावी भूमिका के कारण श्री पृथ्वीराज कपूर अत्यंत प्रसिद्ध थे। संचार के प्रति अपनी पक्षी प्रतिबद्धता के कारण ही उन्होंने, छात्रों द्वारा फिल्म के संवाद प्रस्तुत करने के अनुरोध को विनम्रता से अस्वीकार करते हुए अपने 'नाटकों' में से (विशेषकर मर्चेंट ऑफ वेनिस के शायलोक के) संवाद - सम्पूर्ण नाटकीय प्रभाव के साथ प्रस्तुत कर हम सबको मन-मुगध कर दिया था)

# Sweet Reminiscences

□ Dr. Y.G. Apte, B.A., L.M.S.

"We are indeed very happy to republish the article, which was specially written for and appeared in the Holkar College Times dt. 10.01.1957 and 28.01.1957. Dr. Apte was a brilliant student of this college and was one of the first graduates as he took his B.A. degree in 1894."

It may appear paradoxical that I never read in the present building of the Holkar College. On passing the Entrance examination (in First Class) of the Calcutta University from the English Madrasa at Indore in 1890, R.J. Bhide Saheb (later Rao Bahadur) who was then Superintendent of Education, awarded me a scholarship of Rs. 7 per month for my College education. I had to join the Christian College for F.A. as the Holkar College had not then come into being. I could leave the Christian College after passing the F.A. to join the Holkar College, but not in its present premises. Our College classes were then held in the upper rooms of the then High School, which was named Maharaja Shivaji Rao High School, before it shifted to its new building.

I had taken the Mathematics and Science course. We were only two students in that course, myself and Mr R.B. Dube. Both of us took Honours Courses in both Mathematics and Science. For Mathematics, we had Prof Athavale M.A. from Baroda and for Science (Physics & Chemistry); Prof. Bhandarkar B.A.L.M.S. from the Grant Medical College of Bombay, where he worked for sometime as Assistant to the Chemical Analyser. After a year's struggle with Analytical Conic sections and the Differential Calculus, I left the Honours course in Mathematics, but kept it up in Science.

The Honours Course in Chemistry included Qualitative Chemical analysis and it required a separate room for us two experimenters, which was provided on the ground floor. The Chemical tests required a free use of Sulphuretted

Hydrogen, which spread its stink, whenever there was a slight breeze of wind from our room to the other classes on that side of the quadrangle. Our presence in the room was thus immediately impressed on the olfactory nerves of the students in adjoining classes. Little wonder, we were considered a nuisance by them!

For the practical examination in Chemistry, we had to go to Calcutta, as the Holkar College was then affiliated to the Calcutta University. We visited the Science Laboratory of the Presidency College and were surprised to find no stink emanating from the Chemical Analysis rooms. The Laboratory had an exhaust fan in its high ceiling, which sucked up all foul vapours!



Dr. Y.G. Apte

I passed out with First Class Honour in Science and got fifth (Last place in the University). Principal Cholomondeley taunted me in a light vein for being last in First Class. I did not like it but could only submit that even

the last place in the First Class was better than the First place in Second Class. As it was, no one passed with First Class Honours in Science for several years after that.

The Calcutta University offered me a Scholarship to continue my Science Study, and I was planning to go to Calcutta, when a later communication cancelled the scholarship, as it was only meant for a student from Bengal! My subsequent life would have been altogether different if I had gone to Calcutta with that Scholarship. I would probably have returned to the Holkar College as a Professor of Physics or Chemistry. I did however, return to the Holkar College later on, in a different capacity.

Instead of Calcutta, I was able to go to Bombay on a Scholarship from the Holkar State to study Medicine. With that Scholarship and others secured every year in the Grant Medical College of Bombay, I was able to complete my entire medical course without any help from home. My B.A. education enabled me to complete the medical course in four years only. In the final examination I secured the Charles Morehead Prize in medicine and a Gold medal in medical Jurisprudence and Hygiene.

After a short period of plague duty I was offered a fellowship at the Grant Medical College for study for M.D. degree in Medicine, but preferred State Hospital at Gwalior, which offered great scope for surgical work. While in the Grant Medical College I started the Grant Medical College Magazine and continued to contribute to it after I went

to Gwalior. My medical career at Gwalior was however interrupted by transfers to various new posts specially created for urgent special work in the interests of the Gwalior State.

After retiring from Gwalior service I went to Indore and when the post of State Surgeon got vacant I was appointed to it and in that capacity I contacted the Holkar College students as Medical Adviser. In my visits to the College, I found that some bright but poor students, when they got seriously ill and had to stay at home did not recover the health sufficiently early to want of proper medical help or medicines. To help such students, I deposited a sum of money Rupees Five Hundred with the Principal of the College and instituted a 'Poor Students Health Recovery Fund' in 1939. Out of the interest of that fund small amounts were handed to poor students who needed such help when they grieved. The whole amount of Scholarship which had been received from the Holkar College for two years was returned more than doubled with interest.

At my request, I get a report from the Principal of the College about the interest accruing from the Fund and the amounts of interest to one or more students every year.

The number of students of the college has increased very considerably and the amount available from the interest of the Fund must be found very inadequate for the number of students who may require help from it. I would therefore appeal to Old Boys, who may have received scholarships while at College and may now be in a well-to-do position, to send some of their earnings to the Health Recovery Fund, thus to increase its usefulness.

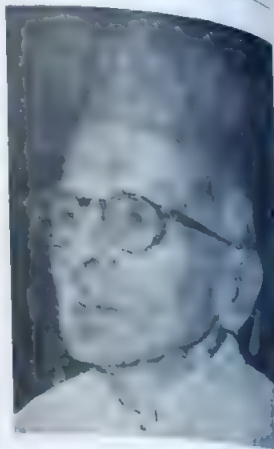
# Sweet Memories

By V.S. Sarwate, B.A., LL.B.

[A Veerana freedom fighter, dedicated social worker, prolific writer and educationalist Vinayak Sitaram Sarwate 'Tara' (1884-1972) was an old student of this college. He joined this institution in 1900 and passed his B.A. in the year 1904. He was a member of Rajya Sabha. Besides other works, he has written a comprehensive history of Marathi Literature in four volumes. He was the inspiration behind the Bal Niketan Sangh - a reputed educational institution of Indore. He wrote this article in 1955 for the Holkar College Times.]

It is indeed very pleasant to go back for a while over several decades and take one's mind to the period when I was a student in Holkar College during the years 1900 to 1904. Thank the Editor of Holkar College Times for having given this opportunity to me to indulge in happy reminiscences of that time. In those days we students used to manage the social and extracurricular activities of the College. The sanctioned budget was at the disposal of the Managing Committee. The Committee was in charge of Gymnasium, Sports, Reading Room and Gardens. I was elected the first secretary of the Debating Club which was started in 1902. Debates were held every Saturday. Principal Cholimondeley took a keen interest in these debates and used often to be personally present and participate. He gave us very useful hints as to how debates were conducted in the Oxford College.

I resided in the hostel during all the four years of my college career. There was then a code of conduct, unwritten of course which used to be almost religiously observed by all hostellers. It was pervaded by a spirit of comradeship character, a rather keen regard for physical fitness and mental cleanliness. New-comers who sometimes committed a breach, were exposed to such ridicule that a second breach seldom occurred. Smoking was strictly banned under this code. So was any lax talk about women. Every one was expected to leave the work in hand, and immediately to rescue whenever



a cry of serpent or thief was raised. Cries on account of the former were then almost a daily occurrence. More than normal attention used to be given to the morning gymnasium classes. Absence from them was noticed personally by the Principal Mr. Cholimondeley more severely than missing a lecture. As a result the normal physical fitness level, specially body development, stood at a high level in the Hostel.

Swimming was required to be learnt by everyone in the hostel. New comers, who did not know it, were trained in the spacious well in a garden nearby the use of which for the purpose was kindly permitted by the owner. That well was our swimming pool then.

Much of the credit for this healthy tone of living, went to the Principal, who took keen interest in every thing pertaining the hostel; and next to him to Prof. Gokhale, who was the then Dean. The latter, who then professed Physics and Chemistry, was a genius; versatile both in scientific as well as literary subjects. He mixed with us very freely and was fond of discussions almost to a fault. In his behaviour with students he was helpful and trusting. He used to keep all his cash in a tin box without a lock, in a drawer of his writing-table. Whenever any of us was in need of money and went to him for a loan, he directed us to take the necessary sum from the tin box in the drawer, and put a note to that effect in it. When the money came to be returned, reverse was the process, the money to be put in, and the note concerned to be taken away. So far as I knew the Professor never cared to ask much less to count either the sum taken away, or put in. Later (I believe in 1908) on the

advice of the British Government of India, the Holkar Government terminated his services for taking part in political activities. He then went to the U.S.A., obtained a job in the well known General Electric Company and eventually rose, by sheer dint of his work and ability, to be the head of a research section in the Company's Research Laboratory. Another professor, whom I remember with reverence and gratitude, was Prof. Desai. He was a true philosopher, conscientious to a degree in his duties and equally unmindful of practical things. He devoted the later years of his life to the study of the oriental philosophy, specially the works of Shankaracharya and Marathi saints; and published at considerable monetary sacrifice a Marathi quarterly devoted to those subjects.

Prof. Athawale was another genius, whom Holkar College was then fortunate to have as its Professor of

Mathematics. He was also fond of conversation with students; and when for some time he came to stay in the hostel, the discussions between him and Prof. Gokhale were intellectual treats to us. His talk had a sparkling wit often pungent and piercing.

Prof. Ghate was Professor of Sanskrit; a good scholar, and a better teacher, who taught us to appreciate the beauty and grandeur of Sanskrit literature. I still clearly remember how during his lectures on Uttara-Rama, both the Professor and pupils lost the sense of time, and went on from verse to verse, with tears rolling down the eyes and watering the pages of our text!

Oh, old memories, made sweeter by time: I am probably one of the very few now left to indulge in them!

Kho de Kuvrenith S. Brah. 19/4 s/o. Sakharam  
Kalubhai Saraf Khargon C.K.S. All. Mat  
III 1917 - one team flag football I.A.(II) 1919 Football  
capt and Head capt 1920. Free. Seems to have some sense  
Good steady fellow. Well behaved.

1920.

Marathe Prabhakar Vinayak 29/11 Brah. s/o Vinayak  
Narayan. Gwa; N.A. Bander. All. Mat. III 1916, Naith H.S.  
Failed I.Sc. (? 1918, 19), 1920, Morris U.N. Nagpur, Marathe  
1920 2nd year. (Mistake in admitting). Obscure &  
impertinent. Expelled from English Class for that. Fined  
Rs 5/- and warned. Ran away to Nagpur Non-Cooperation  
Conf. Very poor work. Detained. Minded and belated to  
Univ. Behaved extremely badly.

From the Scholars' Register



# शतकीय भागीदारी

बाबूराव रानडे

'मैंने 1906 में बाबूराव से वैदिक की परीक्षा पास की थी। उसी की मुझे नामुर के किले की कैंपेन में सरलता से प्रवेश मिल गया। उस समय इन्टर का होलकर कैंपेन - एक बड़े शिक्षक लक्ष्मी के साथ मैं जाया जाता था और वहीं मैं छात्रावासों का भी नाम प्रस्ताव से लिया जाता था। वो संभवतः गोखले होलकर कैंपेन में ही होकर ही वैदिक की परीक्षा पास की।

और विद्वान की कक्षा में पूरा तक की गयी। 1906 में होलकर कैंपेन में प्रवेश मिले। और कैंपेन के ही छात्रावास में रहने का एक छात्र छात्रावास में ही रहकर कैंपेन में ही गयी। 1906 में 24 विद्यार्थी थे और वहीं के ही कैंपेन के छात्रावास में विद्वान छात्र थे।



उस समय का देखते हुए कॉलेज की लाइब्रेरी बहुत अच्छी थी। पढ़ाते समय शिक्षक स्टप ग्रुप की सूची और गुरु संख्या की जानकारी दते थे। हमारा कक्षा का एक विद्यार्थी जा मन वष की परीक्षा में अनुपस्थित था - जानबूझकर शराबत से दिवंगत।

कॉलेज के साथ साथ ही शहरी की ओर आकर्षण होने लगा। बाबूराव उर्फ यशवंत बालकृष्ण रानडे (1890-1960) ने भारतीय प्रदर्शन में अपने जीवन के संस्मरणों में लेखक कॉलेज का समय उल्लेख किया है - जहाँ के 1906 से 1911 तक विद्यार्थी थे। शहरी में प्रकाशित हुआ पुरस्कार के विभिन्न प्रकार के हैं। जो के संयोजित संस्मरणों का अंशों का हिन्दी अनुवाद कर और स्व. रानडे का ही नहीं। इन संस्मरणों को एक आलेख के रूप में ही विद्वान नगेश हांडीकर ने प्रस्तुत किया है। जो हिन्दी में ही प्रकाशित है। और महाविद्यालय के पूर्व विद्यार्थी हैं। अनुवाद की इति में अन्तर्गत जीवन और जीवन के मूल स्वरूप को यथासम्भव सुरक्षित रखने का प्रयास किया गया है।

जब भी कोई व्यक्ति रानडे के जीने के जीवन से 'भारतीय परिवर्तन' की प्रति उपलब्ध हुई, इस आलेख के साथ संयोजित कि वे उनकी से बात हुई। कोणी परंपरा - मुझे मैं निवास करती हैं और स्व. रानडे की एक है।

- यशवंत

के संदर्भित गुरु कहे जाते हैं। ताकि अन्य छात्रों को उसका लाभ न मिल सके, वह एक अच्छे संचालन से सम्बंधित था।

एक ही गोखले का नाम अभी भी याद है। वे एक अच्छे शिक्षक थे और विद्यार्थियों में अत्यंत लोकप्रिय थे। उनके पास एक सुबह की इसी सुबह से इन्टर के होलकर महाराजा गोखले की शिक्षा के छात्रावास में पूरा करने के लिए थे। गोखले की विद्वता से होलकर महाराजा प्रभावित थे। जो रानडे के छात्रावास में पूरा करने के लिए थे। 1908 में गोखले के उनके दिये गये माफ़स आदर की भावना थी।



कॉलेज के  
गुरु छात्रों का  
समूह चित्र  
वर्ष 1908  
चित्र में हैं  
गुरुजी  
समय  
गुरु  
मनान  
बाबूराव रानडे

छात्रों का विभाग बन गये थे। उनके विद्यार्थियों ने इसका लाभ उठाते हुए उन्हें इन्टर छोड़ने को मजबूर किया। यहाँ से वे पूर्वी बंगाल चले गये थे। प्राप्त जल्दी ही, पंटी बजाते ही हमें शारीरिक व्यायाम के लिये जाना पड़ता था। साथ ही हमें तेरना, फ़िटेड, हॉकी, टेनिस आदि खेलों की भी सुविधा थी। जिसका हम विद्यार्थी लाभ उठाते रहे। खेल स्पर्धा भी होती रहती थी।

"उस समय कॉलेज में छात्रों का एक गुप्त संगठन था जो क्रांतिकारी विचारों से प्रेरित था। खुदीराम बोस जैसे प्रसिद्ध क्रांतिकारियों के संदेश होस्टल में आते रहते थे। प्रायः नोटिस-बोर्ड पर कोई चुपचाप 'युगांतर' संरिखे राष्ट्रवादी-पत्र लगा दिया करता था। यही हमें गुप्त रूप से अखिबत घोष का 'वंदे मातरम्', रामानंद चटर्जी का 'माडर्न रियू', शिलक का 'केसरी', युगांतर व अन्य राष्ट्रवादी पत्र-पत्रिकाएँ पढ़ने को मिलती थीं। इनसे हमें क्रांतिकारियों के साहसपूर्ण कार्यों की जानकारी के साथ-साथ विलायती माल के बहिष्कार और विलायती कपड़ों की होली जलाये जाने के समाचार भी मिलते थे। होस्टल के विद्यार्थियों में लाल-बाल-पाल के प्रति आदर की भावना थी।"



Prof. M.R. Khan

Prof. M.R. Khan writes from Quetta, Pakistan in his letter dated 8.5.91 about the hostels of Holkar College -

Prof. S. Saghir Ali was the Dean of the Hostels at that time. There was no satisfactory arrangement for daily baths for the boarders. We had to take bath from the tap water, which flowed from the college well to the small college garden. It was a pleasure to sit on a stone under the 6" tap and the eyes of the passers by had become familiar with this scene.

Prof. Saghir Ali was known for his witty remarks on the fields and off the fields. He was regarded as the best Hockey referee. He refereed the Annual Hockey Matches of the Central India Schools Tournaments. He was recognised by his turkish red cap, sherrani and white pajama.

"मुझे याद है बस बनाने सम्बंधी एक पत्र भी छात्रों में गुप्त रूप से वितरित हुआ था। इसमें पित्रिक एरिड की साहायता से बन तैयार करने सम्बंधी सूचनाएँ थीं। इस प्रकार के पत्र मोड़ी लिपि में होते थे और पूरा या नामपुर से आते थे। ऐसे पत्रों को पढ़कर - सुरक्षा की दृष्टि से जला दिया जाता था। होस्टल पर पुलिस की सख्त नजर थी। इसलिये सभी को बहुत सतर्क और चौकस रहना पड़ता था।"

"1908 का समय इन्टर के इतिहास में एक क्रांतिकारी समय था। खुदीराम बोस को दी गयी फौरी और शिलक को कठोर कारावास की सजा दिये जाने के कारण सारा वातावरण तप्त था। उस वर्ष का इन्टर का गणेशोत्सव राष्ट्रीय एवं क्रांतिकारी विचार धाराओं से ओत-प्रोत था।"

"क्रांतिकारी विद्यार्थियों में से कुछ के नाम मुझे आज भी याद हैं। ये थे शेवडे, नांदेडकर, पंत देव, दुरफे आदि। इन्हें कॉलेज से निकाल दिया गया था। नांदेडकर होस्टल में ही रहता था। उसका कमरा हमेशा बद रहता था और दरवाजे पर 'Do Not Disturb Me' की तख्ती लटकी रहती थी।

रात के समय वह अन्य छात्रों से गुप्त मंत्रणा किया करता था। कॉलेज से निकाले जाने के बाद शेवडे और नांदेडकर अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिये अमेरिका चले गये थे। बाद में मुझे मालूम हुआ कि नांदेडकर वहीं अमेरिका में ही रहने लगा है।"

"बी.एससी. करने के बाद मैं एम.एससी. के लिये इलाहाबाद चला गया। मुझे अपने छात्र जीवन के इन्टर के होलकर कॉलेज में धिताये गये वर्ष आज भी याद हैं। मुझे गर्व है कि मैं इस कॉलेज का विद्यार्थी रहा।"

स्व. रानडे एम.एससी. (फिजिक्स) करने के बाद म.प्र. सरकार की सेवा में आ गये थे। वे जबलपुर के ट्रेनिंग कॉलेज के प्राचार्य थे। एक सफल शिक्षक और कुशल प्रशासक के रूप में उनका नाम आज भी आदरपूर्वक लिया जाता है। अपनी इस सफलता का श्रेय वे होलकर कॉलेज में पायी हुई अपनी शिक्षा को देते हैं - जिसके कारण वे अनुशासन और ज्ञान ग्रहण करने की वृत्ति को अपने जीवन में विकसित कर सके।

# होलकर कॉलेज के विस्मृत क्रांतिकारी छात्र

- डॉ. विठ्ठल नोगरे हॉस्पेयर

श्रीमती लालाजी के प्रतिभा और वे प्रभाव, भारत और महानुभाव के रहे लक्ष्य उन जागरण और सामाजिक सुधार के कार्यक्रमों के माध्यम से। इन्दौर के छात्र जगत पर वर्ष 1907 के दशक के दिन दौलत बाते उपकरण के परभाव 22 जुलाई 1908 को लोकमान्य तिलक के माध्यम से। इन्दौर के छात्र जगत पर वर्ष 1907 के दशक के दिन दौलत बाते उपकरण के परभाव 22 जुलाई 1908 को लोकमान्य तिलक के माध्यम से। इन्दौर के छात्र जगत पर वर्ष 1907 के दशक के दिन दौलत बाते उपकरण के परभाव 22 जुलाई 1908 को लोकमान्य तिलक के माध्यम से।

महाराजा राजा लालाजी के छात्र जगत पर वर्ष 1907 के दशक के दिन दौलत बाते उपकरण के परभाव 22 जुलाई 1908 को लोकमान्य तिलक के माध्यम से। इन्दौर के छात्र जगत पर वर्ष 1907 के दशक के दिन दौलत बाते उपकरण के परभाव 22 जुलाई 1908 को लोकमान्य तिलक के माध्यम से।

श्रीमती लालाजी के छात्र जगत पर वर्ष 1907 के दशक के दिन दौलत बाते उपकरण के परभाव 22 जुलाई 1908 को लोकमान्य तिलक के माध्यम से। इन्दौर के छात्र जगत पर वर्ष 1907 के दशक के दिन दौलत बाते उपकरण के परभाव 22 जुलाई 1908 को लोकमान्य तिलक के माध्यम से।

में विश्वयुद्ध फिड़ते ही बर्लिन कमेटी की स्थापना की गई बर्लिन कमेटी का जो प्रतिनिधि मंडल रॉनफैन्सिस्को से बर्लिन के लिये रवाना हुआ उसमें नान्देकर सम्मिलित थे यह मंडल अपने कार्य में सफल न हो सका इसलिए उसे वापस जाना पड़ा

शेवडे और नान्देकर तथा उनकी अमेरिका में चल रही गुप्त गतिविधियों की खबरें भारत सरकार को निमित्त रूप से प्राप्त होती थीं। शिमला के रेकार्ड में इस संबंध में संयुक्त मिलता है, यही कारण है कि जब शेवडे दि 5 डिसेम्बर 1914 को रॉनफैन्सिस्को से भारत के लिये रवाना हुए उसी समय देश के पुलिस अधिकारियों को इराकी सूचना दी गई दि 11 मार्च 1915 को शेवडे को मद्रास पहुँचने पर गिरफ्तार किया गया, उन्हें ट्रेन से बम्बई ले जाया गया मार्ग में रायपुर स्टेशन पर उनके एक परिचित श्री बाबुराव देसाई ने उन्हें देखा तुरंत ही उन्होंने तार द्वारा शेवडे के बहिर्नोई पूरा के वागन दागोदर तनयनकर को सूचित किया साथ ही कहा गया कि इन्दौर के श्री पंतवीध वकील, शेवडे के मामा श्री पराङकर एवं भांजे श्री पुरोहित को भी तार द्वारा सूचित किया जाय श्री शेवडे को इन्दौर लाया गया होलकर रियासत के नगरिक होने के नाते उन्हें होलकर दरबार को ताँपा गया महाराजा तुमोजीराज होलकर ने उनकी अमानत दी और अपने नौ वरिष्ठ इन्जिनियर नियुक्त किया श्री शेवडे पर पाबंदी लगाई गई कि वे महाराजा की बिना अनुमति के इन्दौर नहीं छोड़ सकते तथा स्वतंत्रता सश्रम की गतिविधियों में भाग नहीं ले सकते फलस्वरूप इस क्रांतिकारी का कार्य आगे न बढ़ सका राज्य की थर्मल पेंचरी और पालिया रैपर मिल का निर्माण उनकी देखरेख में हुआ वीक केमिकल इन्जिनियर के मद से वे नियुक्त हुए उनके परिचितों का कहना था कि वे उत्पन्न बने रहे महाराजा तुमोजीराज अस्पताल में 1953 में उनका स्वर्णवास हुआ श्री नान्देकर कमी नान्देकर कमी शर्मा आदि जाती नाम धारण करते हुए अपने कार्य में जुट गये, किन्तु अमेरिका प्रथम विश्वयुद्ध के समय ब्रिटन का मित्र बन गया और अमेरिका में ब्रिटन विरोधी कार्यकर्ताओं के साथ उसने कुटिलता का व्यवहार किया इसका प्रमाण है 1918 का सैनफ्रिस्को का मुकदमा जिसमें भारतीयों पर तटस्थता भंग करने के आरोप में कारावास की सजा दी गई इसमें श्री नान्देकर को 3 माह का कठोर कारावास का दंड सुनाया गया 1918 से 1974 तक की उनकी जीवनी सबधी जानकारी नहीं मिलती हॉमिंगवैपकी डॉक्टर और योग विद्या



नान्देकर

के प्रशिक्षक के रूप में वे जीवन के अंतिम क्षणों तक अमेरिका में डेट्राइट में कार्यरत रहे, वहाँ उनका निधन 1974 में हुआ इन्दौर के तीसरे क्रांतिकारी श्री मुकुंद पांडुरंग मोघे थे नासिक के जैक्सन की हत्या के बाद वे उत्त प्रदेश में सम्मिलित सम्पन्न गये, बड़ी यातनाएँ उन्हें दी गई, अतः दोस सम्पन्न



शेवडे

न मिलने के कारण मुक्त किया गया फिर भी इन्दौर न छोड़ने का आदेश दिया गया राजकुमार मील से वीरिंह मास्टर के रूप में सेवानिवृत्त हुए, दस वर्ष पूर्व ही उनका निधन हुआ यहाँ यह बतलाना आवश्यक है कि मध्यभारत क्षेत्र खासतौर पर इन्दौर क्रांतिकारियों के लिए सुरक्षित केन्द्र समझा गया यही कारण है कि प्रसिद्ध क्रांतिकारी सेनापति बापट अपने साढ़े चार वर्ष के अज्ञातवास के समय बडवानी, धार, देवास और इन्दौर में रहे, हालाँकि उन्हें इन्दौर में ही दि. 18.12.1912 को पकड़ा गया था

इसलिये स्वाधीनता संग्राम के प्रारम्भिक दिनों में विशेषरूप से 1903 से 1912 तक इन्दौर में किये गये आन्दोलन ने राष्ट्रवादी जागृति में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखा है राष्ट्रीय परिदृश्य में उसे देखने पर स्पष्ट होता है कि लोकमान्य तिलक और उनके गम-दल का प्रभाव इन्दौर के नागरिकों पर गहरा पड़ा था इसी कारण वे क्रांतिकारी कार्यों से संलग्न रहे स्वतंत्रता प्राप्ति के लिये इन्दौर रियासत के नागरिक भी कोशिश के नेतृत्व में प्रजामंडल की स्थापना कर आगे बढ़े इन्दौर का इस सन्दर्भ में महत्वपूर्ण योगदान रहा

(1) गुणे के श्री शम्भूक वासन तलवतकर के अनुसार - श्री विनायक शेवडे साठव अमेरिकी जाने वाले एक जहाज पर अमेरिका के रूप में कार्य करते हुए अमेरिकी पुलिस बिना पासपोर्ट के वे मेक्सिको होते हुए इटलीया पहुँचे श्री विनायक शेवडे रिपोर्ट में अमेरिकी पुलिस के माध्यम से भारत लौटे थे श्री शम्भूक वासन तलवतकर के अनुसार - श्री विनायक शेवडे रिपोर्ट में अमेरिकी पुलिस के माध्यम से भारत लौटे थे श्री शम्भूक वासन तलवतकर के अनुसार - श्री विनायक शेवडे रिपोर्ट में अमेरिकी पुलिस के माध्यम से भारत लौटे थे

(2) विनायक शेवडे ने 42 वर्ष की आयु में 1929 में एंग्लन भी के लिये गुप्त होलकर कॉलेज में प्रवेश लिया था - परंतु उन्होंने, वरीषा में बेतुकी के अनुमति न मिलने से कॉलेज छोड़ दिया उनके पुत्र स्वाधीनता भी होलकर कॉलेज के 1930 - 1935 के वर्ष में छात्र थे

(3) महादेव नान्देकर का जन्म हातोरी में राक संवत् 1808 - अर्थात् मार, भारत के दिन हुआ था वे एकत्र विर और अध्ययन में रुचि रखने वाले छात्र थे वे नियमित रूप से अमेरिकी पुलिस के माध्यम से भारत लौटे थे श्री शम्भूक वासन तलवतकर के अनुसार - श्री विनायक शेवडे रिपोर्ट में अमेरिकी पुलिस के माध्यम से भारत लौटे थे श्री शम्भूक वासन तलवतकर के अनुसार - श्री विनायक शेवडे रिपोर्ट में अमेरिकी पुलिस के माध्यम से भारत लौटे थे

अमेरिका में रहते हुए उन्होंने कर्नल विश्वविद्यालय में परामर्शदाता नियुक्त का अध्ययन किया देश के विभाजन का भी उन्होंने भारत में स्वीकार नहीं किया था अपना स्व जीवन व्यतीत अमेरिका में बिता के प्रचार में और प्रचारकों में लेख लिखकर व्यतीत किया - महाराज गुणे



# My Association with Holkar College

- Dr. S.S. Deshpande

1909-1922  
The period of  
pursuit, knowledge  
&  
of "Playing the Game"

In May 1909, passed matriculation examination from "the Indore English Madresa" which in course of year grew into Maharaja Shri Chhatrapati High School. I walked to Holkar College, saw Mr Barwe the College secretary in the college office and gave him my particulars. I told him that I wanted admission to the junior intermediate section of the college. Mr. Barwe noted my particulars in his register and said "yes, you are admitted". There were no forms to fill and there was only a nominal fee of two rupees which I paid. I was also given a room in the East block of the college hostel. Again no forms and no room rent.

There were about eighty students on the College roll. Most of them lived in the college hostel with accommodation for seventy. The rest came from the city, walking. There were very few bicycles then.

The teaching in the college was upto B.A. and B.Sc. standard. The subjects taught were English, Persian, Sanskrit, History, Logic, Philosophy, Mathematics, Physics and Chemistry. The classes taught were (i) junior and senior Intermediate Arts, (ii) junior and senior Intermediate Science, (iii) junior and senior B.A. (iv) junior and senior B.Sc.

The head of the institution was Principal E.C. Cholmondeley. The teaching staff comprised six professors including the principal. There were six assistant professors or lecturers. The principal taught English which was compulsory to all the classes including the science classes. The allocation of teaching in other subjects was as follows:

Sanskrit and English Composition-Professor of Sanskrit, Persian and History-Professor of History, Logic and Philosophy-Professor of Philosophy, Mathematics-Professor of Mathematics, Physics and Chemistry-Professor of Science

There was only one college building-the main building. A new science block and a gas room facing it were constructed in 1906. A few lectures were given in this building also.

Cholmondeley was a tall fine Englishman and a sportsman. He made games compulsory to all the hostellers. Day scholars were also provided with games if they wished. The football and hockey fields, the cricket pitch and the tennis courts were all active every day from 5 P.M. till dusk. Cholmondeley himself supervised the games and would see that every hosteller was playing one of them. It was necessary to play the game. His teaching was "If you learn to play the game on the field that is to say to play according to the code of conduct, then this code of conduct and fairness will be reflected in your behaviour in the society and in all your actions in life".

Morning gymnastic and drill were compulsory. A special army officer used to come to teach gymnastic, and another to teach drill. Cholmondeley riding on horse back would visit the gymnasium shed every morning.

Although a disciplinarian, Cholmondeley was not a dictator or a bully. Rather he had respect for the dignity of soul in every individual. He was proud of his college proud of its greatness. He held his principles strongly. Once Mr. Waterfield,

the Inspector general of police of Central India wanted to visit the college to interrogate some of the college students who had taken part in the Swadeshi movement. Cholmondeley did not allow Waterfield to enter the college premises for this purpose. He told him that they were his students, under his discipline and they could not be approached by an outsider directly.

Gokhale was the professor of science. He ranked first in M.Sc. Physics and again in M.Sc. Chemistry of Calcutta University. He lived in his own house which he built on the college premises, and except for the necessary stay at home, he would always be in the laboratory. He taught with the aim of imparting a thorough and sound knowledge. Pursuit of knowledge was the aim in life. Passing examination had only a secondary place.

Gokhale had leanings towards the "independence struggle" and came into troubles on account of his public speeches in the Swadeshi movement. Cholmondeley told him that his teaching profession and his political views would not go together and therefore he would have to abandon one of them. Gokhale chose to abandon the former. He left the college and went to America where on account of academic merit and industry he rose to the rank of an important officer in the General Electric Company of New York.

Gokuldas succeeded Gokhale as the professor of science. He was aware of the academic eminence of his predecessor and therefore strove hard to maintain the standard of teaching established in the past. He was an M.Sc. in one subject only-I think Chemistry-but he studied intensely and ensured that his teaching was up to the mark both in Physics and Chemistry up to the B.Sc. stage. Besides teaching all the science classes he had to look after the practical work of the B.Sc. classes in physics as well as chemistry. Practicals were not introduced at the intermediate stage then. The only assistance he received

was from one laboratory assistant cum demonstrator.

Mathematics was taught by Pyare Kisshan Wattel- a tall and fair man with a smiling face. He was a scholar. I still see before my eyes the professor carrying every day half a dozen books from the college library for study at home. In the college he would never waste his time, and when not teaching he would be found doing mathematics on sheets of paper. It is not surprising that on account of his scholarly habits he rose to the rank of the Accountant General of the then Bombay presidency.

Logic and philosophy were taught by Desai. He was lean, short and grave and in these respects was a contrast to Wattel. But Desai was as much a scholar as Wattel, even more than him. He had no interest in life except study of his subject. He, like Gokhale, built his house on the college premises, and would be found either, teaching at the college or reading at home. He scarcely moved in the society. With bent neck and engrossed in thought he would be walking in the evening on the Bombay Agra road running by the side of the college. On Sundays he used to give lectures on religion. These were open to all.

Besides doing his duties as the professor of philosophy Desai performed also the duties of the Dean (Warden) of the college hostel. Punctually at eight in the evening he would leave his house to go round the hostel. He would visit every room and satisfy himself that every one is at study.

Cholmondeley retired from service at the end of 1909 and left for England. In his last address to his students he said that he expected them to follow his teaching. "Play the game"

G. Gardner Brown took over as the principal. He was a scholar of history and taught History and English. He too was interested in games like his predecessor, particularly in hockey

which he played on the college fields. Besides hockey, football, cricket and tennis were as active as before. He arranged hockey league matches which were played on the college grounds and in which renowned hockey teams, including that of the local Daily college-a close rival of Holkar College in this game-participated.

Gardner Brown died in 1917. He had donated to the college his rare and personal library of History.

It took some time to find a befitting successor to Gardner Brown. The choice was ultimately made in favour of W. Osten Smith.

Osten Smith was not interested in games, but was inclined to religion. Not long after he had taken charge of the college he came into trouble. He felt that some of the day scholars coming from the city were inspired by some irresponsible section of Indore public, and he expressed this impression on the college notice board. There was a resentment from Indore public to this and a mild hint from the Government also. He therefore, in self respect, handed over the charge of the college to the Government and left.

The period 1919-1922 was a period of indecisiveness in regard to the filling of the post of the principal. C. Dobson, then headmaster of Maharaja Shrivajirao high school officiated as principal for some time. Guru Dutt Sondhi, who had just been appointed as professor, followed Dobson, again as a temporary measure.

Sondhi was a sportsman, and the college sport activity regained its former level. Sondhi had won honours' degree at Cambridge and while he was officiating as principal his appointment in the Indian Education Service (I.E.S.) on the basis of his educational attainment was announced. He therefore left the college to take his I.E.S. appointment at Government college Lahore where he got full scope for his sports activity.

Sondhi came into international prominence on account of his founding the Asian Games Federation whose object was unification of Asian countries through games.

At the suggestion of some past students of the college, who were about this time high officers of Holkar State government, the latter decided to offer the post of the principal to Gokhale former science professor, who had settled down in America. Gokhale accepted the offer and took over as principal in 1921. This appointment also, like the previous one, did not last long. Gokhale found the political atmosphere not conducive to the growth of his thought about freedom. He therefore left the college in 1922 and went back to America to pursue his occupation which he had just left.

#### 1922-1944 (The period of expansion)

Gokhale was succeeded by Sukhtankar. The latter's specialisation was in philosophy. He studied in Germany and held the doctorate degree in philosophy. By this time the teaching staff of the college had grown to some extent. Physics and Chemistry had one professor each. So also for Persian and History. There was also a professor of economics. The teaching staff in English was increased. Although there were no assistant professors in subjects other than English. Physics and Chemistry were given one demonstrator each.

About 1924 F.G. Pearce succeeded Sukhtankar. Although an Englishman Pearce mixed freely and intimately in Indian society and adopted Indian manners in his home. He could be approached by almost anybody. His interest lay in moulding the character of a student at the formative stage. He would listen patiently to whatever his student wanted to say and would then give him proper advice. He however found that a student entering junior intermediate class had already passed the formative stage of character and it was not easy to mould it in the desired

direction at that stage. He therefore after having occupied the principal's chair for two years resigned job to become the head master of Kayasiba Pathashala at Allahabad in order to experiment on the character moulding at a tender age.

Pearce was succeeded by P. Basu who held the doctorate degree in economics of Calcutta university and who was already at the college as professor of economics. From this period onward for several successive years the chair of the principal remained firmly occupied by one individual. This steadiness brought in its wake the expansion of the college. The process was stimulated by the election of Basu as the Vice Chancellor of Agra University which was founded in 1927. With this position of vantage he occupied he could quickly bring to the college a number of benefits which ordinarily would have taken long to come. Post graduate teaching was started in English, Economics, Chemistry, History and Law. Commerce, Political science, Marathi, and Hindi were introduced as new subjects. Due to these expansions and consequently a considerable increase in the number of students on the college roll the teaching staff had to be strengthened proportionately.

To provide teaching space for the rapidly growing numbers and for the increased practical work of the science students additional buildings were constructed. These additions comprised a new Physics block, a new Chemistry laboratory. The hostel accommodation was increased by construction of Gambhir Block.

The college became one of the top ranking institutions affiliated to Agra University.

Basu occupied the principals' chair for sixteen years and retired in 1940. He was succeeded by H.B. Richardson, a young Englishman. The second world war had broken out in 1940, and it was

a difficult task to keep the college students away from the national freedom movement which was gaining strength in the country. Young Richardson found it difficult to keep the students within the frame work of the college discipline. This resulted in Richardsons' handing over the charge of the college to J.B. Raju in 1942 and himself becoming the minister of education in the state government.

Raju was a scholar of philosophy and was reputed on account of his eloquence. He had his training in England. The tremendous responsibility of keeping the college students within the frame of college discipline fell on Raju's shoulders. But with his remarkable skill Raju proved that he was equal to the task. He could make his students feel that he was sympathetic to them in their leaning towards the national freedom movement. He could also make the government, particularly his boss Richardson, feel that he was keeping the students under discipline. Raju retired in 1944.

#### 1944-1964 The period of reaching post Graduate levels.

The principals who followed Raju's succession were :-

S.S. Deshpande	1944-1945
N. Padmanabhan	1945-1950
H. Ghosh	1950-1954
Dr. W.V. Bhagwat	1954-1964

This was the period in which all the science subjects and some arts subjects reached the maximum level of post graduate, Biology upto Intermediate stage was separated into Botany and Zoology. Each was raised to B.Sc. stage and finally M.Sc. stage. Post graduate teaching in Physics started in 1951, and in Mathematics in 1950. Statistics was started as an additional subject. Philosophy and commerce also attained M.A. and M.Com. stage respectively. Thus all the science subjects namely Mathematics, Physics, chemistry, Botany and Zoology attained the post graduate level of teaching.

A remarkable feature of this period is the enrichment of the science library. Every possible source of money was utilised for this purpose by Principal Bhagwat. The important science journals were subscribed with the object

of making references available to those who are engaged in research. Indeed the science library has become a great stimulus for research. It would not be an exaggeration to say that the science library of Holkar College, in particular the

Chemistry, is not only equal to but even superior to the science libraries of the universities in Madhya Pradesh.

Shri Narayan Singh took over as principal in 1964. □□

## OUR SPECIAL COLUMN.

We congratulate Dr. P. Basu on his re-election as the Dean of the Faculty of Arts of the Agra University, and we wish him with all our heart a higher and still higher distinction.

We congratulate Prof. Dhariwal M.A. LL.B. on his nomination by His Excellency the Governor of U.P. who is also the Chancellor of the Agra University - as a member of the Executive Council of the University. He represents there colleges of Central India and Gwalior.

We welcome Mr. M.G. Karnikar, M.A., as a lecturer in English and History for the newly opened section of the Senior B.A. Class.

Our College Library has distinctly improved in course of the past year, for which special thanks are due to Prof. S.N. Dhar M.A., who was in charge of the Library for the year under review.

We thank Prof. Saghir Ali M.A., the Dean of the Hostel for the great personal interest that he has all along been taking in the well-fare of the boarders.

We thank Mr. Akolekar the Gymnasium Instructor, for the pains that he has taken to improve the Physical Culture Department of the college. We are glad that his efforts are on the way to success. His activities in games are also praiseworthy.

- From the Holkar College Magazine March - 1940

[A QUIZ FOR THE OLD STUDENTS]

## OUR COLLEGE WHO'S WHO

By Shamkant K. Gokhale. (Senior B.A.)

- (1) Work is play and play is life.
- (2) Laboratory a paradise, world a chaos.
- (3) Professor of Romance.
- (4) Martial strides and Hitler talk.
- (5) Love is the highest morality.
- (6) Love is truth and truth love, that is all. Ye know and ye need to know on earth.
- (7) Sleepless lies the head that wears the thought.
- (8) An economist is one who never economizes.
- (9) Grand structure with a grand heart.
- (10) Rigorism a boon, sensibility a curse.
- (11) Late Latif.
- (12) Well Mr. I Look here!  
"Morality is the greatest virtue."
- (13) "Remove touchability and help the nation."

- From the Holkar College Magazine March - 1940



# इंदूरची शिंदोरी

श्री विठ्ठलराय घाटे

मी ने पाहिले नाही मला ते आता पाहवणार नाही होळकर कॉलेज फार मोठे झाले आहे, असे ऐकतो दीड हजार मुलांच्या डोळ्यांत ज्ञान कोंबणारी ही भिक्वी बनली आहे असे ऐकतो माझ्या जमान्यांत ते फार लहान होते, पण मुलाने फार मोठे होते आता मला ते कॉलेज पाहवणार नाही मला कधी कोठे केले तर त्या मिडल वर्गीसच्या पहिल्या नंबरच्या माझ्या गॅलरीत काही काळी चित्रे भिंतीवर अरलील मला ते खपणार नाही वर्डरयर्थी घाते बघीये आकर्मण म्हणजे हे एक भास होता कल्पनेचा खेळ होता प्रत्यक्ष भेटीत तो बुडबुडा पुटला माझे उलटो आहे माझी 'यारी' - माझे होळकर कॉलेज - मी पाहिले आहे, अनुभवले आहे, त्या - माझ्या अनुभवास विरंगल असे नवे अनुभव मला नको आहेत 'यारी रीहजिटेड' मला नको आहे

मी तसा हक्या नाही विचार टेंग माझ्यावर, परंतु होळकर कॉलेजचे नाव निघाल्यावर, त्या साऱ्या आठवणी आठवल्यावर मागेचे सारे डोळ्यासमोर उभे राहते होळकर कॉलेजने मला काय दिले? साणणे कठीण आहे तेथे पडतो ते बहुतेक गेले ते विसरायचेच असते आणि तसे म्हटले तर होळकर कॉलेजने मला विशेष ज्ञान दिले, असे म्हणता येणार नाही ते त्या आडवाड, खेळ आणि खेळार घेऊनच मुठी घ्यायच नव्हते आपण जे जे नाही शिकलो, वाचले, पाठ केले, ते सारे वाहून गेल्यावर तळाशी जे शिक्कें राहते आणि जन्मभर साथ देते त्याला मी ज्ञान म्हणतो कदाचित त्या शिकिताला शहाळपण म्हणजे योग्य होईल कदाचित माझे हे चुकत असेल कारण ज्ञानसुद्धा म्हणजेच सुखीन ज्ञानाचे अस्तित्व - बरेचसे ज्ञानापेक्षाही अधिक महत्वाची ज्ञानाचे मला होळकर कॉलेजने दिली

त्या देणगीला काय नाव देऊ? पुष्कळ नावे, विशेषण आणि क्रियापदे त्याला देऊन देऊन होऊन मनाला आणि शरीराला काही सवयी लावल्या होळकर कॉलेज ने स्वाभिमान दिला, झुपत दिली, कणखरपणा दिले, म्हणजेच आपण ज्ञान आणि चरित्रां दिली चरित्रांचा असे सामान कठीण आहे चरित्रां म्हणजे 'कन्सर्न फॉर अदर्स' (इतरांचा विचार), असे एक

ज्ञान म्हणतो मला ते पाहिले होळकर कॉलेजला ज्ञान देत होते अनेक प्रसंग होतात विषय घ्यायचा असतो आणि मन ताडकून काढून टाकून सांगत, जे होळकर कॉलेजला भाडोरी नुं परोक्षतः कागद नो ह आणत्या परसरेच्या विरुद्ध आहे हा टोह कागदा नाही आणि मी होळकर कॉलेजची आज्ञा पाळतो लहानसहान, क्षुब्ध, मामुली मोठी असतात; पण त्या निघते साधारणतः लगेचच कारण मी होळकर कॉलेजचा आहे माझ्याशी कोणी पाहत नसतानासुद्धा मी दैनिस कोट ओलांडणार नाही, किन्हेट पिच ओलांडणार नाही भासत होळकर कॉलेजच्या विद्याभ्यासा ते निशिद्ध आहे विद्याभ्यास निघाले आणि बरोबर एकदोन पिच असले तर त्याच्या पायांना पाय जुळवून मी चाकरी लेपत म्हणते लेपत राईट म्हणते राईट त्याची चूक होईल माझी होणार नाही मी होळकर कॉलेजचा आहे

होळकर कॉलेजने इतराशी पाय जुळवायला शिकविले इतरांचा विचार करावला शिकविले होळकर कॉलेजने मेळावला शिकविले आणि मेळावला सैजडू राहणारा शिकविले मी खेळाची नाही, पण जीवनात खेळाडू राहिली जीवनात क्रिकेटची शिस्त व नियम कदाहने पाळले

आम्ही तिघेचोचे गरीब होतो सहरात राहणारे आणि पाचराचा कोट आम्हा एकादशाना तर एकच कोट हाता चौघाची मिळून जस्ताची एक टूट होती टूटले चौघाचे कपडे आणि चौघाचे पैसे गरज लागेल त्यांना कपडे उचलवाये पैसे उचलवाये, विद्यागुप्त नाही हिशेब नाही होळकर कॉलेजने हिशेबीपणा शिकविला नाही द्यायला शिकविले, घ्यायला शिकविले नाही 'वन हार्ट, वन पर्स' हे आमचे ब्रीद होते आम्ही त्याला जागले

आमचे कॉलेज म्हणजे ईटन, हेरी यासारख्या इंग्लिश पब्लिक स्कूलची व्हिडी आवृत्ति होती फक्त ते गरिबांचे पब्लिक स्कूल होते श्रीमतांचा तेथे बडेजाय नव्हता कोणत्या पायात बूट नसत कुणी बूट घालून आला, कुणी केस जळवून भांग पाडला की सारे हसत दुसऱ्या दिवशी तो पाय जुळवून घेई आमचे कॉलेज लहान होते सध्या देशा विद्यार्थी अतरीत नसतील मुली नव्हत्या, त्या काळात फारशा मुली शिकत नव्हत्या ज्या दोनचार शिकण्याच्या त्या भिशन कॉलेजमध्ये जायच्या आमचे कॉलेज दूर, शिवाय रांगडे त्यांना ते परवडत नसे आम्हालाही त्या परवडत नव्हत्या होळकर कॉलेजमध्ये मुली येणे ही कल्पनाच आम्हाला असाड झाली असली होळकर कॉलेजचे वातावरण, परंपरा, श्रद्धा आणि पथ्ये त्या मुलींना मानवली नसली पुष्कळ मुलांना सुद्धा ते सारे मानवले नाही, झेपले नाही साहजिकच अशी मुले होळकर कॉलेज मधून शिकून कोरडी टणटणीत बाहेर पडली

आम्ही तसे नव्हतो एखाद्या मुलाने पछाडावे त्याप्रमाणे त्या अमूर्त अलिखित परंपरा नव्यापन्नाला पछाडीत असत त्याचा कवचा घेत असत 'अरेबियन नाइट्स' मधल्या लोहचुंबकाच्या डोंगराप्रमाणे त्या परंपरा, त्या श्रद्धा, नव्या विद्यार्थ्यांना आपल्याकडे आणून भरत युनिव्हर्सिटीच्या कायद्यांनुसार, प्रिन्सिपलच्या हुकूमामुळे, किंबहुना आई - बापांच्या आज्ञेमुळे आणि प्रेमापेक्षा कॉलेजच्या परंपराना प्राम्ही अधिक किंमत दिली

परंपरांना फार मोल आहे परंपरा राष्ट्राच्या, समाजाच्या, संस्थांच्या असतात परंपरा म्हणजे समाजाच्या, संस्थांच्या अनुभवाचा अर्क समाजाचे किंवा संस्थेचे सामुदायिक महागणन-किंवा वेडेपण व्यक्तीच्या जीवनात सयरींना जे स्थान असते तेच स्थान समाजाच्या किंवा संस्थांच्या जीवनात परंपराना असते परंपरा म्हणजे समाजाच्या सवयी

आमच्यात शिस्त होती, लष्करी शिस्त होती सिंगल बार, डबल बार

- करतांना फूक झाली, राईट टर्न,
- लेफ्ट टर्न करतांना पाय बुकला, तर
- तो अडकणी अशिक्षित राईट शिडी
- हासडवाचा आणि दुगाबावर वेलाची
- छत्री मारायचा धमच्यात
- म्यामस्तता होती कॉलेजचा
- अध्ययन - अध्यापना व्यतिरिक्त
- सारा कारभार आम्ही विद्यार्थी
- चालवीत होतो पॅन्सपोलंला,
- डीनला किंवा कोणा प्रोफेसरला
- आमच्या कारभारात लुडबुड
- ऊर्यावारी परंपरांनी नव्हते प्राम्ही
- फक्त घमेल्यापेक्षांनी आणि शास्त्रात
- अन्न देगावामी घातून घेईल्ला
- परंपरा आणत होत शिस्सारा
- मानीत होती आम्ही फक्त त्या
- परंपराची जोगासना करणाऱ्या
- त्यांची अमलबजावणी करणाऱ्या
- चौथ्या वर्षातील सीनियर
- विद्यार्थ्यांचे हुकूम मानीत होतो
- सीनियर विद्यार्थ्यांनी राज्य करवे,
- हुकूम सोडवते, किंवा घालून द्यावा
- अणि जूनिअर विद्यार्थ्यांनी तो
- इमानडतवार शिरवारा हो एक

आमची परंपरा होती मारामारीचा परग आला कोणी जूनिअर विद्यार्थ्यावर हात टाकयला घाजला, तर सीनियर विद्यार्थी ज्युनियरला पाटीणी घेई, पाव आपल्या छातीवर घेई आणि माग दोघे मिळून हातांतल्या हांकी रिटकरने त्या अडवाडाचा समाचार घेत होळकर कॉलेजने कधी हार खाली नाही सीनियर विद्यार्थी जागरूक होते सीनियर विद्यार्थी कारभारी मंडळाचा अध्यक्ष होई, चर्चा-समितीचा अध्यक्ष होऊन प्लेटफॉर्मवर खुर्चीवर बसे प्रिन्सिपल आणि प्रोफेसर खाली बसत, चर्चेचा भाग घेत, अध्यक्षीय हुकूम मानत कॉलेजच्या स्नेहसमेलनासाठी कधीकधी महाराज येत कधी मुख्य पाहुणे म्हणून कोणी बडे गृहस्थ येत सीनियर विद्यार्थ्यांमधला प्रमुख या पाहुण्याचे स्वागत करी



श्री विठ्ठलराय घाटे







गतापलं  
ध्वलकम  
आमर  
चार फ  
जवकर  
आणि  
त्याची  
आवड  
रामोर  
रोखुन  
होई ;  
रात्री  
तीड  
भार ।  
मैडि  
लकर

र  
पाख  
अस  
राह  
चोड  
हल

पर  
त

भा

ते  
ही  
पा  
दी  
य  
ब  
ह

मी परत असे केलं नाही घुका झाल्या अशीतल परंतु त्या जाणूनपुन  
झाल्या नाहीत राहने पडिच्यावेरीज सरास बोलतो नाही. लिहिते नाही  
पुराव्याने साधे दिली तैधपरीतच जाणव्या आणि तैधच धोब्याच्या  
झमानेव्हावर पयल केला पमेनात शिवात समजली नाही झिहालाच्या  
नावाखाली कोरी भरसण बोलू-लिहू लागला म्हणजे माझे पूरच अपाथ  
मला आल्यतात आणि मी मनात म्हणते  
" Thou shouldst be living at this hour "

माईन-बाहल अस्तंत हेंज होले कमी बोलयचे भावना त्यांच्यात तेवयचे  
प्रेम मनांत ठेवयचे नसे माझ्याकर पेम होले पण ते जिवंत असताना दाखविले  
नाही ते त्या मरुपुत्रात । त्या दिव्यात - दिवून आले साबे एणएकी  
बादले जळत घरेच केरी नव्हते चात पोण्याच पसंग आला देवनाच्या  
खणतने कणात तपसखात आले त्या कणातत दोन पामावे माझ्यावळचे  
दिवा होले माझ्या घात वरिच्या कामगिरीचा त्यात आढाव होला औतुच  
केले होते मी ई ए पण झाले म्हणजे माझ्यासाठी कलेजकरचे फेलेची  
जगा (आमच्या कलेजनात तोवरी फेलेची जगाच नव्हती) निर्माण करावी  
अशी सूचन देऊन साबे गेले

होकर कलेजनेत जाण्यापुर्वीच मी बाहसमाजात जाऊन लागली होती  
झुजकी पोचविले गेले त्या सुमारास मनात बदल होऊ लागले मन जमिनीवर  
पाय रोवू लागलं दत्तमिहिरतल्या कथाकिर्तनात गोंडी बाहेगीच झाली अन्वी  
बादले सुतर गोंडी वाढताना कुमणपरीच जमईत हसू देईन मीम आणि  
बकसुस चव्या देवपुत्राचे शिवाजीमहाल आणि अर्धजमनाच घांते  
वसुदेव दूध धंधिच पमाई दूध लागने हरदामकु कीर्तन लेकच्या  
आपटलेवळी रामपुत्र पंचास सीतामाईचा त्यान केला अशी तामची  
बडेवळी सगु लागले म्हणजे मनात उक्ताच परिणाम होई आणि ते त्या  
धमून सोडून सीतामाईवरकण उठोने वनवासत जाई

एकमिहिरतल्या वेपराच कमी झाल्या-थबल्या नरी प्रमनूमयची तहान  
होतीच आणि आता तर धर्मविज्ञास जाणूत झाली होती शिने मला  
बाहसमाजात नेले तेथील शात आणि सौम्य वातावरण मला आवडतं पण  
मला मनात मला निवडक थंडीच मणजे होनी आणि मध्यकर होनी  
घायेनसंगीत तील असं, पदे आणि आस्त्रा मला आवडल्या तहानमोही  
ह्या आवडल्या होत्या परंतु आताही जावड केळी होती 'तार मी जमनाचा,  
बकली देवियाचा माया, एकर मी वसरीत' या ऐकत असलीतील धर्मीचा  
उमाराच इतरांचा उपाय शरारती मला जाणवत एकादिहिरतल्या  
तुलाबाचे असं ऐकते होते परंतु आख्यानाची प्रसादना एवढेच त्याचा तेथे  
स्थान होले बाहसमाजात त्या अन्भार प्रवचने जावहाली जात  
प्रवचनलेख्या धर्मानेत त्या अन्भारले विषय आणि शब्द तेथे केळी परत  
तो असं माहला जाई आणि त्याच मर्म मनात ठरे!

इंग्र्या बाहसमाजात वाविर उक्ताच माझा धाटान होत  
मुझे केलच मलाच अत जाणवतच जायकारत पण त्याची जाणवने आणि प्रवचन  
मलाच एव काहीच मजमनात असे असंभार त्याच काळत हाई थंडीच वरी  
होई मर आणिच मलाच हाई लाहलपडकण आणिच मलाच मुकुमदाच नावाचे  
एक बुद्ध, प्रेमळ झाली मिगरीची नेहमी येत त्याचा तर वट परिचय झाला  
पत्रव्यवहारही झाला इंग्र्याच्या उत्सवासाठी डॉ. सर रामकृष्णत माझकर

नेहमी येत त्याची कीर्तीने होत-डोकरसराहेच थकल्यावर त्यांचे माथे लिहने  
आणि आमच्या इंदुरचे शिखिल सर्जन डॉ. प्रभाकरपंत यांनी करव बाजू  
त्याची जगा घेतली कीर्तीने हें माथ्या जुनेच होतं परंतु बाहसमाजात त्याच  
मध्ये नया आशय, नवे विचार ओतले

सर नारायण बंदावरकर संस्थानचे दिवाण म्हणून एका संस्थाकाळी इंदुराच  
स्टेशना वर उतरले त्यांच्या स्वागताराची लवाजमा तयार होता मोटर सवारी  
होती सरराहेच उतरले ते थेट घालत बाहसमाजात आले कोणी उभे राहिले  
नाही तें देखीच घर होतं देणव्या घरात फक्त देवापुरेच उभे राहायचे असे  
सरराहेच नवपणाने बाजूस बसले मान खाली घालून, डोळे मिटून घांतेच  
सामीत झाले. हळुहळु टाळ्या वाजून आमच्याबरोबर आले मिटून घांतेच  
आगळी म्हणजे, 'घालीन लोटोमण, वंदीन चरण डोळ्यांनी पाहीन म्हा  
तुझे "

दुसऱ्याच दिवशी टाऊन हॉलमध्ये सरराहेबांचे इंग्रजीत व्याख्यान झाले  
विषय 'ईशवास्योपनिषद्' हा होता त्यांचे ते भाषाप्रमुल्य, तो घनगंभीर आशय,  
रक्ताला ओलावा, त्यांतली लय या गुणांनी आम्ही भारवयली सरराहेबांनी  
उचवून, एक हात करून उच आणि आत देवापुरेच उभिनघांतील एक  
वचनात 'Oh Sun, uncover thy disk' असा अनुवाद केला आणि सूर्याला  
आवाहन केले, तेव्हा आमच्या पुढे उगवत्या सूर्यासमोर शतदूध्या कळकर  
अर्ध देणव्या वैदिक ऋचीची मूर्ती उभी राहिली. तो प्रसंग आणि तो अनुभव  
अदिसरणीय होता सरराहेच इंदुराच फार दिवस लाभले नाहीत, परंतु होले  
तोपरीत मधूममून उपारना चालवायचे, नवीन विचार घायचे कधी कधी  
भाबड्या मकीने 'ऐसे भाय कधी लाता होईन' म्हणत म्हणत सर्वात  
कायचे आमचीही तीच स्थिती व्हायची

एक दिवस इंदुरच्या स्टेशनावर अण्णा उतरले, बरोबर सामान बेताले  
बरोबर ममा होत्या त्या इंग्रज बाईना आम्ही पुढे ममा म्हणू लागलो. काय  
त्या आमच्या ममा झाल्या. अण्णांच्या स्वागतासाठी लवाजमा आला नव्हता  
मोटर उभी नव्हती. अण्णांची कारमारी हुजरेपाजरे अन्वीने उभे नव्हते  
साहजिकच आहे अहल्याभ्रमासारखी गुलीची शाळा काढायला सव्यावडीस  
पाजारवर आलेला तो साधा माणूस शुध धोतर, शुध रमाल, शुध कोट,  
शुध वर्ण, हस्तमुख, डोळ्यातून प्रेम साडत होता - अण्णासुद्धा तसेच पयी  
समाजात आले उपासना घालविली विषय होता - 'मेरोज फॉन द हिमालयाच'  
काण अण्णा हिमालयातूनच आले होते. अस्खलित इंग्रजीत बोलले.  
उनिषदातील अनेक वचने एकामागून एक सांगून अण्णांनी एक वेगळेच मंल  
व पवित्र वातावरण उत्पन्न केले. अण्णांचे नुसते साहित्य म्हणजेच मांगल्याचा  
साक्षात्कार असे अण्णा नुसते हसले म्हणजे पुरे असे, त्याचे डोळे म्हणजे  
लोण्याच गोडे होते फार स्निग्ध, फार मवाळ. अण्णाच्याकडे पाहिले म्हणजे  
'थिदी पाहताच निवर्वा' असे होत असे

अण्णा-डोकर सुखटणकर-माझे गुरू मी अनेक गुरू केले आहेत आजून  
करीत आहे थाबलं नाही वत्तानी बत्तीस गुरू केले होते, असे म्हणतात  
माझ गुरू मी मोजले नाहीत पुष्कळ आहेत. मोजणं करीण आहे. माझ्या  
काही गुरूंना त्याचें गुरुपद माहीतसुद्धा नसेल. मोठी गंमत आहे ती. गुरूला  
मुलुख माहीत नसते ते त्याला शोयतं, पण शिष्याला ते पटविले असतं.

अण्णांचीच गोष्ट घ्या पय्या पुण्यास आले होते वय ऐशीच्या वर होते  
कीर्तीने जगात जमलेली नरी जगने ने नेने गना व्रताना' झाला नानाजून  
शब्द निघेनात पय्यां पडली करावया म्हणाली, "अण्णा, तुम्ही माझे गुरू,"  
पण अण्णांना एकू नेले नाही आता कमी एकू येतं पण तेच हरातमुख तेच  
हसरे डोळे आणि हसारे ओठ डोळ्यांतून तसेच अमृत ओसडात होते अण्णांनी  
निघारे, "जग मण्णातच?" ती कणाची लणगी ओसडली, "अण्णा,  
तुम्ही माझे गुरू" अण्णा खुलासोवार हसले डोळ्यांत पाणी आले जुनीच  
समय आहे ती. म्हणाले, "अरेच्या, खरेच की काय? तें कसे काय बुवा?"  
अता तुम्हीच सांगा. तें कसे काय बुवा, हें कसे काय बुवा सांगू? माझे हृदय  
साक्ष आहे, माझे सारे जीवन साक्ष आहे एका बाजूने होकरकर कॉलेजने  
अणि दुसऱ्या बाजूने अण्णांनी मला घडविले मी कृतज्ञ आहे

आणाना आम्ही कृतेमजात नवानीन खोल्याची ललमगी बाकी पाहून  
हिती नारायणमणेचे जीन-साधे होते ममा रमेपत असयाच्या धुणूध्याच्या  
लागली सामलायच्या (अण्णा आम्हाला सामलायचे) अण्णा कपडे घालू  
लागले की वरने शोभून दाराच्या लावायच्या, अण्णांना वरने गरह्या सापडून  
नसत. त्यांच्या जर्मन प्रोफेसरप्रमाणे अण्णांचे मन दैनंदिन कार्यात नेहमी  
गिहजर असायचें आम्ही रोज संस्थाकाळी जाऊन लागलो पयाशी बसू लागली  
अण्णांना गप्पा आवडत नसत आम्ही गेलो की अण्णा एखादे पुस्तक उघडायचे  
कधी वर्ल्ड हिस्ट्रीसमधला वर्डस्वर्थ, कधी बाउनिंग, तरे कधी टेनिसन  
काही नाही तर मोल्डन देवरी खरीच कविता वाचायचे, तिच्यातील मर्म  
सांगायचे. कधी वर्डस्वर्थची 'ओड ऑन इटिमेन ऑफ इमॉर्टलिटि' तर  
कधी टेनिसनचा 'लॉकस्ले हॉल'; कधी एखादी सॉनेट घ्यायचे (The world  
is too much with us, (late and soon) आणि घोलूनघोलून म्हणायचे  
डोळे मिटायचे आणि तळीन व्हायचे

त्यांतल्या त्यांत अण्णाची आवडती कविता वर्डस्वर्थने टिटन अंभे पाहून  
लिहिलेल्या ओळी 'Lines written a few miles above Tintern Abbey'  
वर्डस्वर्थही सौम्य, शांत, निःशब्द आहोत पाहून तेही लागली, गूढ विचार  
सुबले गूढ भावना जाणूत झाल्या

Five years have past; five summers, with the length Of  
five long winters! and again I hear these waters, rolling from  
their mountain springs With a soft inland murmur....

And connect the landscape with the quiet of the sky  
for nature then

To me was all in all. The sounding cataracts  
Haunted me like a passion: The tall rock,  
The mountain, and the deep and gloomy wood,  
Their colours and their forms, were then to me  
An appetite, a feeling and a love.  
for I have learned

To look on nature, not as in the hour  
Of thoughtless youth; but hearing often times  
The still sad music of humanity

आणि मम निसर्गाच्या संदेहांतून जीवनाचें माध्य मिळायचें टिटन अंभे  
म्हणजे अण्णांनी आपल्या आपल्याची कथा- होनी मी कविता वाचून  
मायमनात अण्णांना मिष्टिर येत असे प्रवाजान कोवडीक येत असे

अण्णांच्या प्रोत्साहनाने आम्ही स्टूडंट्स ब्रदरहुड काढले अण्णा अच्यह,  
मी धितणीस आम्ही घावना-गिस जण हातान आमचा अभ्यासवर्ग दर गवेवारी  
ब्राह्म समाजाच्या मरिजनात गुमरी चाले अण्णाच वर्ग चालवायचे त्यांना दुसरे  
काम असले तर ममा वर्ग घ्यायच्या कधीमी सरसाहेब घायचे आणि वर्डस्वर्थ  
घ्यायचे कधी डॉ. प्रभाकरपंत मांडावर घायचे आणि आपल्या कोरड्या,  
मणमणीत प्रवाजात गुरून शिस्तवायचे आम्ही त्यांना आपल्यामध्ये भाडूकाका  
म्हणायचे

अण्णांनी स्टूडंट्स ब्रदरहुडमध्ये आम्हाला इन मेमोरियम शिक्किले  
नवीन जीवन बुध्दिलि. मन चौकस आणि चिकित्सक केले वाढमयाची  
सखोल अमिरुचि निर्माण केली आणि वाढमय हा कर्मणुकीचा खेळ नाही,  
बुद्धीची आणि कल्पनाची कसरत नाही, आत्मबाजी नाही, वाढमय ही  
जीवनाची साधना आहे. माध्य आहे, ही जाणीव दिली इंग्रजी कविता मला  
पूर्वीच आवडत होती. आता त्या नीट कळू लागल्या शब्द आणि कल्पना  
याना बाजूस सारून मी तकाशी मिळणारी रत्ने हडकू लागली

माझ्या विद्यार्थिवशेत पुण, मुंबई, इंदूर अशा गहरात स्टूडंट्स ब्रदरहुडस  
फार चांगली चालत. मुंबईस सर नारायण बंदावरकर आणि प्रा. एन जी  
वेलिंगकर शिकवीत निवडक विद्यार्थी मोटव्या श्रद्धेने येत आणि चालले मक्कराच  
घेऊन जात. इतर अनेक चालत्या गोष्टीप्रमाणे 1920 नंतर ही प्रथा बंद  
पडली फार वाईट झाले

बापूसाहेब आणि अण्णा, दत्तमंदिर आणि ब्राह्मसमाज आय ई एम आणि  
होकर कॉलेज, रहाकर आणि बारपुते, आणखी कुणी आणखी कुणी  
शिंदोरी बांधून दिली मी ती घेऊन म्याल्हेरीची वाट धरली. संसाराला सुकवात  
केली

□□



[१] डॉ. वा.वि. भागवत

35

37



पार्वती बाई आठवले को उन्होंने अमेरिका में जो मदद की वह कभी भुलाई नहीं जा सकती। पार्वती बाई आठवले (१८७०-१९५५) का नाम भारतीय महिला समाज सुधारकों में अत्यंत आदर से लिया जाता है। उन्होंने भारत में विधवाओं की दयनीय स्थिति को सुधारने के लिए अथक परिश्रम किया। इसी सिद्धांत में वे जब अमेरिका गयीं तो वहाँ जहाँ से बड़ी आत्मीयता से प्रो. गोखले ने उनकी जो मदद की उसे पार्वती बाई ने बड़ी आत्मीयता से अपनी आत्मकथा 'माझी कहानी' में स्मरण किया है। वे लिखती हैं

'Prof. Gokhale was living at Schenectady, New York. It would take six days of railway journey to go to him. The ticket alone would cost about 150 dollars or about 450 rupees. I did not possess that amount of money. I wrote and told this to prof. Gokhale. By good fortune I received a letter from him inviting me to come and sending me the money necessary for the journey. I shall never forget the kindness he showed me.'

- My Story (Engl. Tr. by Justin E. Abbott)

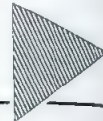
अपनी कहानी के १९ वें अध्याय में पार्वती बाई ने जो लिखते, उनकी कम्पनी और लक्षियों की चर्चा करते हुए लिखा है :-

फरवरी १९ वर्षों से कॉलेज में मेरी कक्षा में प्रो. गोखले का फिर टप है। इन तमाम वर्षों से मैं भारतीय समाज को उनके दार्शनिक की उन्नतता की निरंतर अनुमति करता रहा है। उनके बारे में मैं विचार करता हूँ। उनका नाम उनके प्रति श्रद्धा से भरता था। मेरे इस लेख का शीर्षक भी प्रो. गोखले के नाम पर 'गुरु' है। मैं प्रशंसित लेख का ही शीर्षक है।

प्रो. गोखले के बारे में विवरण मुझे आठवीं वर्ष तक वास्तविकता (पुनः) के जीवन से प्राप्त हुआ है। उनके सहयोग को मैं कृपाशाला के छात्रों की सीमा में सीमा नहीं मानता। यह सच है कि यदि वे थे तो उनका विवरण मुझे उपलब्ध न करता तो मैं लेख इस रूप में कदापि नहीं लिखता। या संभव था कि मैं कदापि प्रो. एल. बी. टेलर के ने प्रो. गोखले से कुछ जानकारी नहीं ले पाता। प्रो. गोखले का फिर भी यह प्रमाण और

'The general electric company has a great plant here for the generation of the electricity. 26,000 men are employed in this plant. Prof. Gokhale is employed here as an electric engineer. His spare time he devotes to the upliftment of the working man. He is the author of a book on unemployment published in America.'

महाविद्यालय के जीवन के प्रारंभिक वर्षों में जिन मनीषियों ने इसी शैक्षणिक गतिविधियों को सुदृढ़ आधार दिया और इसकी तरफ़ाई को अपनी आस्थाओं और सकल्यों के रंगों से सँवारा उनमें प्रो. शंकर गोखले का नाम सदा ही आदर और कृतज्ञता के साथ लिया जायेगा, उनका स्मरण सदा ही हमें निरंतर उत्कृष्टता की तलाश के लिये प्रेरणा देता है। शताब्दी के अन्तर पर प्रो. गोखले को हमारे विनम्र प्रणाम।



स्व. प्रो. सुशीलदेव नारायण के प्रशस्ती से उपलब्ध है।

पार्वतीबाई आठवले से सदीभर विवरण मुझे SPAN पत्रिका के सौजन्य से मिला है। विशेष रूप से वरिष्ठ सम्पादक श्रीमती अरुणा दासगुप्ता का आभारी हूँ।

मेरी बहुत इच्छा थी कि शताब्दी के अन्तर पर प्रो. गोखले के परिवार को कॉलेज से पुनः जोड़ा जाये। उनके ज्येष्ठ पुत्र मधुसूदन ने भी १९२१ में कॉलेज में प्रवेश लिया था। हमारे तमाम प्रशस्ती के बाद भी हम उसे सम्पर्क करने में सफल नहीं हुए। उनका वर्तमान पता हमें ज्ञात नहीं हो सका। इसका हमें खेद है।

#### FROM THE COLLEGE ANNUAL REPORT 1921 :

There is nothing to report with reference to Hostel. In spite of the leaky roofs and wet floors, the general health during the rainy season was fairly good. The students seem to be making good progress in studies and in athletics. This year the Gymkhana has been reorganized giving more of the management in the hands of the students, in consequence of which the students taking more interest in the work.

S. L. Gokhale

Principal,  
Holkar College, Indore.

## उद्या येऊ नका -

प्रो. महेश दुबे

एक कृशकाय शरीर विस्तर पर लेटा है। बिलकुल अस्थि-पंजर अशक्त उठने-बैठने तक की ताकत नहीं। अध्ययन में रुचि इतनी कि भारी मरकम ग्रंथों को हाथ में न पकड़ सकने की असहायता के कारण पन्ने-पन्ने फाड़कर, उसे पुस्तक को पढ़ते हुए देखा जा सकता है। लग रहा है शरीर मृत्यु से लड़ रहा है - परन्तु बुद्धि और विवेक दोनों ही स्थिर और निर्मल बिजुलियों के पास पड़ी कुर्सियों पर बैठे हैं - तरल मनस - विद्यार्थी धीरे-धीरे वेदना से निकलते हुए शब्दों के साथ उतर रही है गम्भीर दार्शनिक व्याख्याओं की मदाकिनी। यह केवल एक दिन की बात नहीं है। पिछले एक साल से ऐसी ही दिनचर्या चल रही है। उपनिषदों की पुनः रचना का महारास!

४ मार्च १९१४ विद्यार्थी जा रहे हैं। लगता है विस्तर पर लेटे हुए शरीर ने निकट आती हुई मृत्यु की पदचप सुनी है। उसके अश्रुय संवेदों को पढ़ लिया है। काल की ज्यामिति का एक पृष्ठ पूरा हो गया है। कल से नये घाट की ओर, नये तीर्थों की तलाश में जीवात्मा को निकलना है।

दूर नदी पर नौका सुंदर दीखी मुकुंदर बहती ज्यों स्वर  
वहाँ स्नेह की प्रतनु देह की  
बिना गैह की बैठी नूतन

- निराला

पितरलोक से राग-बिरंगी नौकाएँ जा रही हैं। जाना ही होगा विद्यार्थियों से कहा 'उद्या येऊ नका'

और ५ मार्च को जीर्ण वस्त्रों को तट पर डालकर प्रो. शांताराम अनंत देसाई ने अपने संकल्प प्रधान जीवन के ४८ वें वर्ष को पूरा किया।

उनकी मृत्यु पर कॉलेज के प्राचार्य गार्डनर ब्राउन ने लिखा :-

'Early in the year 1914 the death of Prof. S.A. Deasi who had retired a year previously took place. It had been hoped that the cessation of his active work in the college might lead to a prolongation of his life and usefulness in other spheres, but the disease to which he succumbed had taken too firm a hold. The very general grief which his death caused among the students of the college showed what an impression his life and character had left.'

वर-असल - सूक्ष्म दार्शनिक अन्तर्दृष्टि, सुव्यवस्थित विचार, सबल तार्किक निष्कर्ष, सरलता, यादगिरि तथा भौतिक सुविधाओं के प्रति निरपेक्ष उदासीनता का नाम था - प्रो. शांताराम अनंत देसाई

उनका जन्म महाराष्ट्र के रत्नगिरि जिले के एक गाँव कुंमवडे में सन् १८६६ में हुआ था। देसाई परिवार उस इलाके का राजस्व वसूलता था और खीत कहलाता था। उन्होंने १८९३ में पुणे से दर्शन-शास्त्र में एम.ए. किया। १८९५ में वे इन्दौर के होल्कर कॉलेज में दर्शन-शास्त्र के प्राध्यापक नियुक्त होकर जाये और जीवन पर्वत इसी संस्था से जुड़े रहे।

वे पूरी तरह से अध्ययन और अध्यापन को समर्पित थे। दर्शन-शास्त्र के अलावा अंग्रेजी साहित्य, राजनैतिक प्रवृत्तियों की मीमांसा और भारतीय संस्कृति संबंधी उनका सतत अध्ययन निरंतर और व्यापक था। अध्ययन के प्रति उनकी रुचि और पुस्तकों के साथ उनके साहचर्य को, निम्न पंक्तियाँ सार्थक अभिव्यक्ति प्रदान करती हैं :-

My never failing friends are they  
with whom I converse day by day

ब्राह्म समाज के वे नियमित और सक्रिय सदस्य थे। सत्य की खोज की यही व्यास उनके द्वारा लिखे हुए अनेक ग्रंथों के माध्यम से प्रगट होती है, जिनमें मुख्य हैं -



प्रो. शांताराम अनंत देसाई

A Study of Indian Philosophy  
Vedanta of Shankar - Expanded and Vindicated

वैदिक तत्त्व मीमांसा  
श्रीमन्त तत्त्व मीमांसा  
रामनिबन्दातील उचनाचा संग्रह

अपनी पुस्तक 'तुकारामाचार्य आराम' रत्नाचे स्तर में उन्होंने तुकाराम और बाजुगि की तुलनात्मक व्याख्या प्रस्तुत की थी उनके विरले हुए अनेक दार्शनिक लेखों को विदेशों में मान्यता मिली। बहि-तुल्य उनका जीवन था - सरलता और सादगी से भरा हुआ उनको देखने से ही उनके प्रति श्रद्धा रखने का मन हो उठता था जो भी सामने मिल गया उसे पहन लिया के प्रति वे बिलकुल लापरवाह थे जो भी सामने मिल गया उसे पहन लिया एक बार कोलेज में कोई विरिष्ट अतिथि आने वाले थे पाचार्य महोदय को देसाई की कपड़ी के प्रति उदासीनता से परिचित थे सो उस दिन उन्होंने प्रो. देसाई से जरा दूरी के कपड़े पहनकर आने का अनुरोध कर दिया देसाई साहब तो देसाई साहब उहरे और वो भी किल्लोसरी के प्रोफेसर! उन्होंने अपने घर से एक सेंडूक में अपने तमाम अच्छे कपड़े रखकर - उसे डिस्पैल के पास पहुँचा दिया - साथ में लिखा दिया - You want good clothes only not man! ऐसे थे प्रो. देसाई! कोलेज के प्रारंभिक वर्षों में उनके योगदान को भुलाया नहीं जा सकता! तभी तो उनकी मृत्यु के कुछ पूर्व जब वे अवकाश पर थे, कोलेज के पुस्तकार विरलच सनारोह ने, उनके बारे में बोलते हुए महाराजा तुकोजीराव में कहा था -

The resources of the college both as regards finance and accommodation are at the present time strained almost to the breaking point. When the college buildings were erected and the present recurring grants allocated, they were on a scale that was generous and handsome for a college of 80 students: now that the college has increased to a good deal more than double that number, both have become somewhat exiguous in spite of the ingenuity expended on finding accommodation for classes and an economy that borders on cheese-paring. The proverb "It is a pity to spoil the ship for a haporth of tar" is a sound one, and where as the State has often in the past been responsive to suggestions that made for the improvement of the college, it is to be hoped that such an attitude will continue in the future: that the college will not be required to take in more students than it can control or teach and that increased grants - when necessary - will be made to enable the college to progress along the most desirable lines.

In conclusion the thanks of the Principal are due for the sympathy and support accorded to the college during the past year by Rai Bahadur S.M. Bapna, B.A., B.Sc., LL.B., the Home Minister and Rai Bahadur Major R.B. Dube, M.A., B.Sc., LL.B., the Chief Minister and himself an old student of the college.

G. Gaudetirani

Principal, Holkar College, Indore.

"And here I am reminded to the loss to the college caused by the retirement of Prof. Deasi. His illness has deprived the college of his services, but while we all deeply regret his retirement we can not forget that he has left the fragrance of his simple, pious and philosophical life to serve as a healthy example to professors and pupils alike."

१३ मार्च १९१४ को प्रकाशित होल्कर स्टेट के गजट में उनकी मृत्यु पर लिखा गया था -

"His Highness Maharaja Holkar much regrets to hear, the death on 5th instant of Prof. Shantaram Anant Deasi M.A., LL.B., Professor of Philosophy Holkar college for 19 years and on leave pending retirement, a man of wide learning and of the highest personal character with the mind of a scholar and grasp of a disciplinarian, never allowing physical pain to interfere with his sense of duty."

उनके व्यक्तित्व और कृतित्व की गंध से आज भी महाविद्यालय का परिसर महक रहा है उनको हमारा प्रणाम, उनकी स्मृतियों को हमारा कृतज्ञ प्रणाम

स्वर्ग एव अमर -

(१) प्रो. शान्तराम अनंत देसाई, बहिर् आभि जीवन कार्य - वास्तुदेव दामन दशरु १९१६

## Progress Report of Holkar College for 1921.

by Prof. P.C. Basu

35/1 Hanaybosh Street  
Calcutta  
May 7, 1921.

Sir,

In response to your favouring letter no 198 of May 26, I beg to send you the following report. The balance may be filled from the Office record.

I have the honour to be,  
Sir,  
your most obedient servant.

P. C. Basu.

Progress Report of Holkar College during  
for the quarter ending on 31st March, 1921

In January, after a staff meeting in which the merits of the senior boys were discussed and individual, the following numbers were sent up for university examination held in March:

Sr.	Total number	Number sent
1. A.		
2. Sc.		
3. B. A.		
4. Sc.		

In February Mr. J. G. Gaudetirani joined the College as Professor of Chemistry during the absence of Mr. S. L. Deshpande who left for Singapore in August last.

The movement popularly known as non-cooperation affected the students of Indore in February. Some persons from outside Indore came here and harangued the boys in the city over the heads of their guardians and teachers. For a time it seemed that the boys would be wholly carried away. The behaviour of our boys was admirable. They held frequent meetings just outside the College compound in the open field. I held several informal meetings with the boys, and argued with them. This was done unofficially as I thought that any official





तुलनाक वंश पर किये अपने मौलिक कामों पर प्रकाश की भी योग्यता है। सामाजिक परिवर्तन के कारणों की विवेचना करते हुए उन्होंने इस विषय का इलाका 1980-81 में जो कि से मीमांसा करते हुए लगे संलग्न करवाया। सामाजिक परिवर्तन का मानचित्र रूप से प्रस्तुत करने में भी वे महत्वपूर्ण भूमिका निभाए। उन्होंने 1981-82 में 'सामाजिक परिवर्तन' के विषय पर एक पुस्तिका भी लिखी।



लैट मर. चस. ए. डबसन

श्री डबसन ने कॉलेज के विद्यार्थियों की रोजगार की समस्या की जानकारी और मदद के लिये कॉलेज में 'Students Employment Register' रखे जाने की व्यवस्था प्रारम्भ की। 1992 की अपनी वार्षिक रिपोर्ट में उन्होंने जानकारी दी कि - 'रजिस्टर में दर्ज 32 विद्यार्थियों में से -

14 have obtained employment through the Register, 02 have obtained employment through other means 12 are still pursuing their studies, 04 are at present unemployed

सामाजिक परिवर्तन अपने सेवाकाल में लगातार - शिक्षकों की संख्या में वृद्धि, छात्रावास में सुविधाओं के विकास, कॉलेज भवन में विस्तार और कॉलेज में एक संगठन की आवश्यकताओं पर जोर देते रहे। उनके ही प्रयत्नों एवं रुचि से महत्वपूर्ण रूप से वैयक्तिक विषय के रूप में इतिहास का अध्ययन प्रारम्भ किया गया और 1994 में महाविद्यालय की पत्रिका का पहला अंक निकल सका। वे कॉलेज के निकट ही प्राध्यापकों की आवासीय व्यवस्था के लिए भी प्रयत्नरत रहे। कॉलेज की संविधानिक कार्यवाही में वे 'प्रैक्टिस सर्वेयिंग और प्रैक्टिसिंग' विभाग की जानकारी दे जाते थे। प्रारम्भिक चरणों के बाद में प्रशासकीय विद्यार्थियों को St. John's Ambulance Certificate दिया जाता था। उनके कार्यकाल में कॉलेज की

स्थापना के बाद से पहली बार - अक्टूबर 1994 से प्राध्यापकों के वेतन में वृद्धि हुई और नये वेतनमान प्रभावी हो गए। उनके समय में भी प्रतिवर्ष - प्लेग के कारण कॉलेज बंद किया जाता रहा कई बार विद्यार्थियों को तबूओं में रखा जाता था। 1997 में उनका अग्रामयिक निधन हुआ।

गार्डन बाउन के बाद कुछ समय तक प्रो. गुरुदत्त सौधी ने प्राचार्य के रूप में कार्य किया। प्रो. सौधी का जन्म जालंधर में 90 दिसम्बर 1929 को हुआ था। 1999 में उन्होंने गवर्नमेंट कॉलेज लाहौर से अर्थशास्त्र में एम.ए. की उपाधि प्राप्त की। उच्च अध्ययन के लिये उन्होंने केम्ब्रिज विश्वविद्यालय के ट्रिनिटी कॉलेज में प्रवेश लिया (1999-93) और 1998 में लिंकन इनन से विधि में स्नातक की उपाधि प्राप्त की।

1994 में वे होलकर कॉलेज में अर्थशास्त्र के पहले प्राध्यापक नियुक्त हुए। यहाँ उन्होंने 1997 तक कार्य किया। 1997 में वे गवर्नमेंट कॉलेज, लाहौर चले गये। 1998 से 1998 तक वे इस कॉलेज के प्राचार्य रहे। गवर्नमेंट कॉलेज लाहौर के प्रथम भारतीय प्राचार्य होने का श्रेय प्रो. सौधी को है। सेवा-निवृत्ति के बाद वे कुछ वर्षों तक स्वास्थ्य - मंत्रालय से सम्बद्ध रहे। स्वतंत्रता के बाद युवा महोत्सव और युवक कल्याण कार्यक्रमों के प्रमोश के रूप में उन्होंने शिक्षा-मंत्रालय में कार्य किया। खेल-कूद में उनकी रुचि प्रारम्भ से ही थी। वे स्वयं भी एक अच्छे खिलाड़ी थे और अपने विद्यार्थी जीवन में उन्होंने ग्रास-कैटरी दौड़ का एक नया कीर्तिमान स्थापित किया। वे एक कुशल खेल प्रशासक और सफल संगठनकर्ता के रूप में सदा ही याद किये जायेंगे। लॉस-एंजेलस (1932) और बर्लिन (1936) में मेजी गयी भारतीय ओलम्पिक टीम के वे व्यवस्थापक थे। वे अंतर्राष्ट्रीय ओलम्पिक संघ से (1932 से 1966) तक भी सम्बद्ध थे। उन्होंने एशियाई खेलों के लिये पहल की। उन्हें एशियाई खेलों के जनक के रूप में भी जाना जाता रहा। भारत में खेल-सुविधाओं के विकास के लिये वे सदा ही समर्पित रहे। उनकी मृत्यु 20 नवम्बर 1996 को हुई। खेल-प्रेमी होने के साथ-साथ वे एक सुविधपूर्ण कला मर्मज्ञ भी थे। रंगमंच और साहित्य में उनकी गहरी रुचि थी। उन्होंने पंजाबी पुष्पमूर्ति को ध्यान में रखते हुए मवीय दृष्टि से शैक्षणिक के कई नाटकों का उर्दू अनुवाद किया। उन्होंने एशियाई उपमहाद्वीप में खुले रंगमंच की स्थापना की। यह हमारे लिये गौरव की बात है कि प्रो. सौधी जैसा व्यक्ति इस कॉलेज से सम्बद्ध था। परंतु यह दुःख की बात है कि कॉलेज ने उनसे कोई सम्पर्क नहीं रखा। अन्यथा राष्ट्रीय स्तर पर खेल-कूद के क्षेत्र में यहाँ की स्थिति कुछ अलग ही होती।

होलकर कॉलेज के लगभग दो वर्ष के अपने सेवा-काल में प्रो. सौधी यहाँ क्रीड़ा के प्रमोशने प्राध्यापक रहे। उनके प्रयत्नों एवं रुचि से होलकर कॉलेज की हॉकी टीम लाहौर गयी। उन्होंने टेनिस-कोर्ट और क्रिकेट के मैदान में सुधार और सावधानी पूर्वक उनके रख-रखाव की योजनाएँ बनायीं।

प्रो. सौधी के पश्चात् कुछ समय तक Chas. A. Dobson ने प्राचार्य के रूप में काम किया। वे आगरा कॉलेज से इन्टर आये थे। होलकर कॉलेज में नियुक्ति के पूर्व वे बरसात तक महाराजा शिवाजीराव हाई स्कूल में हेड मास्टर थे और उन्होंने इससेक्टर ऑफ स्कूल के रूप में भी कार्य किया था। उनका शासकीय निवास आज भी डाबसन कोठी के नाम से प्रसिद्ध है।

प्रो. सौधी के बारे में जानकारी के लिये हम उनकी पुत्री श्रीमती रहमान खान, लाहौर प्राध्यापक के आभारी हैं।

है। 1938 में वे कॉलेज में Professor Emeritus बनाये गये। डाबसन साहब का व्यक्तित्व अत्यंत प्रभावी था। वे एक कुशल शिक्षक और सहायक इंसान के रूप में आज भी याद किये जाते हैं। कॉलेज में वे अंग्रेजी साहित्य के प्राध्यापक थे। कविताओं में उनकी विशेष रुचि थी। वे स्वयं भी कविताएँ लिखते थे। एक बार कॉलेज की परीक्षा में उन्होंने किसी विषय पर अपने विद्यार्थियों को Verse की पंक्तियाँ लिखने का प्रश्न दिया था। एक छात्र ने लिखा -

Dobson Baba Mercy take Verses I, can not make.

वे एक जीवत व्यक्ति थे। सरस, सहायक और हर्षणा मदद करने को तत्पर विद्यार्थियों के मनोविज्ञान के वे अच्छे ज्ञाता थे। मृत्युपर्यंत वे होलकर कॉलेज के शैक्षणिक और सांस्कृतिक जीवन से जुड़े रहे। उनके विद्यार्थी आज भी उन्हें आदर और श्रद्धा से कृतज्ञता पूर्वक याद करते हैं।

1997 में W. Owston Smith कॉलेज के प्राचार्य नियुक्त होकर आये। वे मई - 1997 तक इस पद पर थे। इतने कम समय में भी उनके कार्यकाल की कुछ महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ रही - जिन्का उल्लेख यहाँ प्रासंगिक होगा। उन्होंने 1997 में सैनिक प्रशिक्षण की कक्षाएँ प्रारम्भ कीं। 1999 में उन्होंने कॉलेज में Guardian Tutor scheme प्रारम्भ की। इस व्यवस्था में विभिन्न कक्षाओं के विद्यार्थियों को 9 समूह में बाँटा गया था। समूह के 20 विद्यार्थी अलग-अलग कक्षाओं के होते थे और प्रत्येक समूह एक प्राध्यापक के जिम्मे था। इसी वर्ष क्रीड़ा के क्षेत्र की दो उल्लेखनीय सफलताएँ भी महत्वपूर्ण हैं। कॉलेज ने पहली बार Central India Cricket Tournament की Daly Shield पर अधिकार प्राप्त किया और कॉलेज ने Central India Tennis Tournament में भाग लिया। अपनी कार्यात्मक शैली में सित्तरी 1997 की कॉलेज की रिपोर्ट को लेकर वे विवादस्पद भी बने। इस रिपोर्ट में उन्होंने कॉलेज की आवश्यकताओं की और प्रशासन तथा महाराजा का ध्यान आकर्षित करते हुए लिखा था -

"For the last few years it seems that the attention of His Highness' Government has been directed chiefly to school education, and the fine building which has arisen on the north side of the town is but one proof of this. We rejoice in the establishment of the Maharaja Shivajirao High School, and do not grudge the rays of princely favour which fall upon it. But we feel that the sun should be able to shine in all directions at once, and that we are left too much in darkness. Sometimes an ugly shadow is cast upon a landscape by vulture flying across the face of the sun. Whatever it may be that shuts off the light from us, We hope that our period of partial eclipse will soon be over. It is hard to work with good will when our requests for adequate funds fall on deaf ears, and sometimes we are not quite sure whether our work is noticed and appreciated. Now that the great war is over, we hope that better times are in store for us and that we may look forward to a successful future."

रियासत के गृह सचिव ने अपने पत्र क्रमांक 92/C/3/1999 दिनांक 19 सितम्बर 1999 द्वारा, यह प्रतिवेदन वापस कर उन्हें आपत्तिजनक अंश निकालकर वार्षिक प्रतिवेदन पुनः प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया। श्री सिन्ध ने विनम्र बुद्धता से इसे नकारते हुए लिखा -

"I think there can be no doubt about the facts contained in the Report. There may be some objections to the opinion expressed or to the expression of those opinions in a Report or to the style in which the matter is clothed



A group photo of students and staff members of the College taken in 1959, with Late Mr. Chas. A. Dobson, the European Principal.



I thought that I ought to place my opinion before you and I did so. Nothing can undo that fact. I still hold the same opinion and still think that you ought to know them. I think that it is useless to change anything after so many months. However, if you think it necessary, I venture to suggest that you should delete anything to which objection is taken. After the Report has left my office, I have no power over it.

But we feel that the sun should be able to shine in all directions at once, and that we are left too much in darkness. Some times an ugly shadow is cast upon a landscape by a ~~satellite~~ vulture flying across the face of the sun. Whatever it may be that shuts off the light from us, we hope that our period of partial eclipse will soon be over. It is hard to work with good will when our requests for adequate funds fall on deaf ears, and some times we are not quite sure whether our work is noticed and appreciated. Now that the great war is over, we hope that better times are in store for us and that we may look forward to a successful future.

Schuman 20 1919

February 20 1919  
W. Oestlund  
Principal,  
Holkar College, Indore.

- FROM THE COLLEGE ANNUAL REPORT - 1919

इससे उनकी वार्षिक वृद्धता और अपने पक्ष को समर्थन तथा सहारा देने वालों के गुण स्पष्ट होते हैं।

[illegible]

His life was gentle, and the elements  
so mixed in him that Nature might stand up  
And say to all the world "This was a man".

प्रो. गोखले का प्राचार्य का कार्यकाल अत्यंत संक्षिप्त रहा १९२२ में वे यहाँ से अमेरिका चले गये

डॉ

डी. भाग्यदेव अन्तर्गत मुख्यतः की नियुक्ति के साथ ही कॉलेज के इतिहास का एक नया अध्याय प्रारम्भ होता है। इन तीस वर्षों में कॉलेज ने एक लम्बा सफर तय किया। इन तमाम वर्षों में जहाँ कॉलेज ने अपनी एक विशेष पहचान बनाई वहीं बढ़ती हुई छात्र-छात्राओं और नयी नैसर्गिक आवश्यकताओं के संदर्भ में अपने अपने समर्थ और सहयोगों से रुबारू होते हुए 1921 में प्रवेश किया।

दरअसल, डॉ. सुखटणकर ने अत्यंत विषम एवम् अस्ता-व्यस्ता परिस्थितियों में कॉलेज का कार्य-भार समाला था ये प्रो. गोखले के बाद कॉलेज में आये थे जिन अग्रिम परिस्थितियों में प्रो. गोखले को त्याग-भ्रम देना पड़ा था, उससे विद्यार्थियों में आक्रोश था। रियासत के प्रशासन के साथ प्रो. गोखले के संबंध भुलुर नहीं थे उनकी **Directive Method** से लेकर भी कॉलेज के प्राध्यापकों के साथ उनका मतभेद था फलस्वरूप प्रो. गोखले का एक वर्ष का कार्यकाल संकष्ट-कर्तृ-कर्तरे ही समाप्त हो गया। इन सबका निफलत प्रभाव कॉलेज पर पड़ा। साथ ही पिछले वर्ष में कॉलेज में स्थायी प्राचार्य नियुक्ति न होने से, प्राध्यापी नियंत्रण के अभाव में-खराब परीक्षा परिणाम और अनेक समस्याओं ने जन्म लिया।

1922 की परीक्षाओं के परिणाम, कॉलेज के इतिहास में पिछले वर्षों की तुलना में सबसे खराब थे -

परीक्षा	बैठे	प्रथम	द्वितीय	तृतीय	कुल
बी ए	20	-	02	01	03
बी एससी	05	-	01	01	02
इण्टर-आर्ट्स	42	-	04	14	18
इण्टर-साइन्स	23	-	-	10	10

लगभग 30 प्रतिशत परीक्षा परिणाम और प्रथम श्रेणी में किसी भी कक्षा में एक भी छात्र नहीं, जुलाई - 1922 में कॉलेज की कुल छात्र-संख्या भी पिछले वर्षों की तुलना में कम थी -

सत्र	कक्षा	विज्ञान	कला	कुल	कुल छात्र संख्या
1916	IV	05	25	30	172
	III	04	17	21	
	II	21	49	70	
	I	17	34	51	
1917	IV	08	33	41	184
	III	05	22	27	
	II	17	46	63	
	I	17	36	53	

वर्ष	कक्षा	विज्ञान	कला	कुल	कुल छात्र संख्या
1919	IV	09	32	41	175
	III	03	25	28	
	I	15	31	46	
	II	21	39	60	
1920	IV	07	31	38	198
	III	06	19	25	
	II	25	32	57	
	I	20	58	78	
1922	IV	06	22	28	159
	III	06	07	15	
	II	30	36	66	
	I	24	26	50	

समय-समय पर कॉलेज के पूर्व प्राचार्यों द्वारा समस्याओं, कठिनाईयों, आवश्यकताओं और अभावों की ओर ध्यान आकर्षित किया जाता रहा वर्ष १९२१ में इन सब पर सभा का एक वैश्विक संदर्भ में विचार कर प्रशासन का ध्यान आकर्षित करने का सकारण प्रयास किया गया इस समय कॉलेज के प्राचार्यों का दायित्व अस्थायी रूप से डॉ. बसु सेभाल रहे थे उन्होंने १९२१ के वार्षिक प्रतिवेदन में उनकी वर्षों की जिन बिन्दुओं पर विस्तार से लिखा गया, है निम्नानुसार हैं -

(१) कॉलेज में आर्थिक रूप से कमजोर छात्रों की अधिकता का उल्लेख करते हुए डॉ. बसु ने लिखा था - "Another feature which has attracted the attention of several Principals is that the Community from which the majority of our boys come is very poor. One who has not worked as the head of a college here can not perhaps realise the poverty with which the majority of our boys put up a manly fight. But the obstacles are so great and the circumstances are so depressing that our best efforts have not been rewarded with complete success."

कुल १९८ विद्यार्थियों में से ५० को शुल्क से मुक्ति दी गयी थी. ०८ छात्रों को सामान्य, ०५ को जर्मीरमरी और ०५ अन्य को विशेष छात्रवृत्तियाँ स्वीकृत की गयी थी इसके साथ - गार्डन हाउस लॉनफ़ोर्ड और निर्धन छात्र पुस्तकालय से भी सहायता उपलब्ध करायी जाती थी

२) प्राध्यापकों के लिये आवास व्यवस्था की कमी करते हुए, डॉ. बसु ने लिखा - "The most important question in connection with the staff is that of providing them with quarters in the vicinity of the college. Now influence of Professor out side the class room is almost nothing and the general tone of college life is proportionately low."

इसके पूर्व गार्डन हाउस ने भी प्राध्यापकों के लिये आवास की आवश्यकता पर जोर देते हुए एक योजना प्रस्तुत की थी यद्यपि जनवरी १९१६ में प्रशासन

ने इसे मंजूर कर लिया था परंतु आर्थिक कारणों के कारण इसका क्रियान्वयन रुका रहा १९१७ और १९१८ में पुनः इन और प्रयास किए गये पर कोई प्रगति नहीं हुई डॉ. बसु ने कॉलेज के निकट प्राध्यापकों को आवास उपलब्ध कराये जाने की पुनर्जोर वकालत करते हुए लिखा था - "I take this opportunity to urge upon the attention of the Government the need of staff quarters in the vicinity of the college, without which we can never hope to secure the fuller development of college life."

(३) भवन व्याख्यान कक्षा की आवश्यकता को स्पष्ट करते हुए डॉ. बसु ने लिखा था - "We have no central hall which can accommodate all our students. We require more lecture rooms." इसी क्रम में अन्य समस्याओं का उल्लेख करते हुए, रपट में कहा गया था - "The Deans quarters were declared uninhabitable in 1931, and they have not been touched yet. The boarders are compelled to bathe in the open near the well, as only a few rooms can be utilized for that purpose. If conservation of physical energy plays any part in one's life, this means a huge waste among our boys. As a result a large number of our boys keep ailing throughout the cold season, without actually falling ill. The latrines require to be extended. For the staff and day students there is no arrangement either for drinking water or for water closets. The result is that we can not utilise the services of some members of the staff, who are willing to go in the college life outside their lecture rooms."

महाविद्यालय में छात्रों की बढ़ती हुई संख्या के संदर्भ में नीतिक सुविधाओं के अभावों की ओर राज्य प्रशासन का ध्यान आकर्षित करने के प्रयास, पूर्व में भी प्राचार्यों द्वारा किये जाते रहे थे. १९१७ में प्रो. ऑस्टन लिख ने लिखा था - "The resources of the college both as regards finance and accommodation are at present time strained almost to the breaking point. When the college buildings were erected and the present recurring grants allocated, they were on a scale that was generous and handsome for a college of 80 students; now that the college has increased to a good deal more than double that number, both have become some what exiguous, in spite of the ingenuity expended on finding accommodation for classes and an economy bordering on cheese - paring" ऐसा प्रतीत होता है कि प्रशासन द्वारा इन समस्याओं के निराकरण के लिये कोई भी प्रयास नहीं किया गया.

(४) अनुशासन-किसी भी शिक्षण संस्था के सर्वांगीण विकास का प्रमुख आधार वहाँ का अनुशासन है. इस कॉलेज में प्रारंभ से ही विद्यार्थियों में अनुशासित जीवन का पाठ पढ़ाया जाता रहा है. शायद इसीलिये प्राथमिक वर्षों में अनुशासन-क्षेत्रता जैसी कोई विशेष समस्या कभी नहीं रही. वर्ष १९२१ तक आते-आते इस समस्या ने वार्षिक प्रतिवेदनों में उल्लेख किया जाने लायक कुख्यात आकार ग्रहण कर लिया था. डॉ. बसु ने लिखा - "It is important to note that discipline has been growing lax for some time in the past. Our number has increased from year

to year, while our hostel accommodation has remained the same. The result is a continually growing proportion of day students and now they are more than double the number of boarders. Inevitably, our control over the boys ceases beyond the class room. The lax discipline that follows has its reflex on hostel discipline, and the end of this drift along the inclined plane is difficult to realise." डॉ. बसु के इन शब्दों में भविष्य की भयावह स्थिति के संकेत स्पष्ट सुनाई पड़ते हैं

[क्या ये समस्याएँ आज भी मूल रूप में वही की वही नहीं हैं? सिर्फ उनका आकार बढ़ गया है. गत ७०-८० वर्षों से कॉलेज इन समस्याओं से जूझ रहा है और निदान के अभाव में अंदर ही अंदर जबरन होता चला जा रहा है]

(५) परीक्षा परिणाम - महाविद्यालय की शैक्षणिक उपलब्धियों एवं गुणवत्ता के मापदण्ड परीक्षा परिणाम ही माने जाते रहे हैं. इस भ्रांति को स्पष्ट करते हुए डॉ. बसु ने लिखा - "I may be permitted to point out, the popular error which identifies the quality of teaching with the number of passed. The number of-passed is a function of many variables, of which good teaching is only one." परंतु, परीक्षा परिणाम निश्चित ही व्यापक रूप से हमें, शिक्षण पद्धति, विद्यार्थी की मानसिक प्रवृत्तियों एवं उसके द्वारा प्रयोग में लाये जाने वाले और बहुलता से बाजार में उपलब्ध साधनों तथा सम्पूर्ण शैक्षणिक परिदृश्य पर विचार करने को बाध्य करते हैं. नोट्स, गाइड-पुस्तकें और मानक संदर्भ ग्रंथों आज बढ़ती जा रही है. स्तरीय पाठ्य-पुस्तकें और मानक संदर्भ ग्रंथों में विद्यार्थियों की रुचि कम हो रही है. उस समय (१९२१ में) इस प्रकार के सरल उपाय प्रारंभ ही हुए होंगे उस समय डॉ. बसु ने चेतवनी के स्वर में जो लिखा था - वो उनकी गम्भीर एवं अन्वेषक दृष्टि का परिचायक है उन्होंने कहा था - "I do not suggest that the examinations are easy to pass; the large percentage of failures is sufficient evidence that they are not. But the large number of failures also proves that a wide syllabus of prescribed subjects, with an external examination as the test of the information acquired, inevitably tends to uneducational methods of work, and that far too many of the candidates are only 'having a shot at it', because there is a fair chance of scraping through a rather indiscriminating test with a minimum amount of knowledge and a turn of good luck. The work can be more effectively and more easily prepared by means that are not really educational"

The university attempts to maintain a standard among the large number of institutions affiliated to it, by the device of a common syllabus which has become more and more detailed in recent years. The effect upon the students and the teachers is disastrous. To quote the royal commission on university education, London, 'the students have the ordeal of the examination hanging over them and must prepare themselves for it or fail to get the degree. Thus the degree

comes first and the education a bad second. They cannot help thinking of what will pay; they lose theoretic interest in the subject of study, and with it the freedom, the thought, the reflection, the spirit of inquiry, which are the atmosphere of university work. They can not pursue knowledge both for its own sake and also for the sake of passing the test of an examination. And the teacher's powers are restricted by the syllabus, their freedom in dealing with their subject in their own way is limited; and they must direct their teaching to preparation for the examination; or else lose the interest and attention of their students."

Thus there is a disposition among both candidates and teachers to make a show of results in examinations by mechanical aids or tricks, or by so called shortcuts which have no cultural value or perhaps only a negative one

The first and most urgent educational reform we stand in need of today is the sweeping away to the dustbin of the crabs and cram books, the notebooks with which the student arms himself for the fateful encounter of the examination hall. The teacher finds himself powerless to punish these 'dictators' of the class-room."

डॉ. बसु की इन पंक्तियों में उनकी गहरी शैक्षणिक प्रतिबद्धता और स्वायत्तता के प्रति ललक के संकेत स्पष्ट दिखाई पड़ते हैं. इन्हीं अवधारणाओं और संकल्पों के साथ डॉ. बसु ने १९२६ से १९४० तक कॉलेज को सुदृढ़ नेतृत्व प्रदान किया और इसके विकास को नये आयाम दिये. नि संदेह उनके कार्यकाल को कॉलेज का स्वर्ण युग कहा जा सकता है. आज का शैक्षणिक वातावरण भी कभी-बेश इन्हीं बीमारियों से दुषित है-इसलिये आज से लगभग ७० वर्ष पूर्व व्यक्त डॉ. बसु के ये विचार आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं जितने ये तब थे

(६) खेल-कूद-डॉ. बसु की मान्यता थी कि - "It is not for health only but for the wider influences on character that games should be encouraged, and, if possible, made compulsory for all those who are physically fit for them"

अनेक पुरानी समस्याओं के साथ डॉ. सुखटणकर का कार्यकाल प्रारंभ हुआ. शीघ्र ही वे कॉलेज में स्थिरता स्थापित करने में सफल हुए. उन्होंने कॉलेज की शैक्षणिक व्यवस्था को सुचारु रूप दिया. १९२३ की परीक्षाओं के परिणाम, उनके परिश्रम और प्रयत्नों के द्योतक है. इस वर्ष के परिणाम थे -

बी. ए. - 58%  
बी.एससी - 67%  
इण्टर-कला - 27%  
इण्टर-साइंस - 48%



C. 4







श्री. राधाकृष्णन जी का महाभारत का प्रारम्भ कार्यक्रम में प्रो. पद्मनाभन



श्री. राधाकृष्णन जी का महाभारत का प्रारम्भ कार्यक्रम में प्रो. पद्मनाभन

उनकी उपस्थिति ने बरसों तक कॉलेज के शैक्षणिक जीवन को अनुप्राणित किया। उनसे बात करने का अर्थ, इस शताब्दी की भूली-बिसरी यादों की गहरी को खोलने जैसा है। धीरे-धीरे बोले गये उनके शब्दों में कॉलेज का अतीत साकार होने लगता है और -

भाषा में  
लीटो है  
शब्दों में गुम हो गये  
प्राचीन शब्द.

- अशोक वाजपेयी : कहीं नहीं वहीं  
उनका आशीर्वाद हमें सतत मिलता रहे - यही प्रार्थना है



कॉलेज में डॉ. राधाकृष्णन के साथ प्रो. पद्मनाभन

कॉलेज में टेनिस अत्यंत लोकप्रिय था। कॉलेज के छात्र श्री बुन्नीलाल टेनिस के अच्छे खिलाड़ी थे और वे Central India Tennis Tournament के Gentlemen's Singles Championship विजेता थे। फुटबाल में कॉलेज की टीम सालारजंग स्पर्धाओं में भाग लेने अलीगढ़ गयी थी। बेडमिंटन और वॉलीबाल नये-नये प्रारंभ हुए थे। बेडमिंटन को प्रारंभ करने का श्रेय प्रो. डबसन को है जिन्होंने स्वयं के व्यय से इसकी सारी व्यवस्था की थी। हॉकी में विद्यार्थियों की रुचि बढ़ रही थी। बाला साहब-मशवताराव होलकर-स्वयं कॉलेज के विद्यार्थियों के साथ हॉकी का अभ्यास करने आते

थे। दो वर्षों के अंतराल के बाद कॉलेज का २४ वीं वार्षिक स्नेह सम्मेलन - १९२५ में उत्साह से आयोजित किया गया। इस अवसर पर आयोजित सांस्कृतिक कार्यक्रमों की सफलता से प्रेरणा लेकर - प्रो. गोले ने निर्धन विद्यार्थियों की सहायताार्थ बेडयांचा बाजार नामक मराठी नाटक तैयार कर प्रदर्शित किया। इस नाटक से छात्रों ने ६०० रुपये की घनराशि एकत्र की। उस समय की दृष्टि से यह एक सराहनीय प्रयास था। शैक्षणिक गतिविधियों के अंतर्गत कॉलेज में - Historical Association और Economic Seminars सक्रिय थे।

विकास की सुखद सम्भावनाओं के संकेतों के साथ १९२६ का सत्र प्रारंभ हुआ। जून १९२६ में श्री पिर्स ने अपने पद से त्याग-पत्र दिया। उनके स्थान पर डॉ. बसु ने कार्य संभाला - जिनकी प्राचार्य के रूप में स्थायी नियुक्ति दिसम्बर १९२६ में हुई। नये सत्र के साथ ही कॉलेज की समस्याओं के विधान एवं शैक्षणिक सुधारों के लिये प्रारंभिक और प्रभावी कदम उठाये गये, कॉलेज में -

- अंग्रेजी और अर्थ-शास्त्र में दो सहायक प्राध्यापकों के नये पद स्वीकृत किये गये
- Physical Culture के प्रशिक्षक का पद निर्मित हुआ
- दो प्रयोगशाला सहायक के पदों को स्वीकृति प्रदान की गयी
- लिपिकों, डिमान्स्ट्रेटर्स के वेतन में वृद्धि हुई
- छात्रवृत्ति की संख्या एवं राशि बढ़ाई गई
- वाचनालय की अनुदान-राशि अधिक स्वीकृत की गयी
- छात्रावासों की मरम्मत का कार्य पूरा हुआ
- नया फर्नीचर लिया गया
- बृहत मंस-प्लान्ट को लगाये जाने के प्रावधान को स्वीकृति मिली

इन कार्यक्रमों और कुल २७१ की छात्र-संख्या के साथ १९२६ का सत्र प्रारंभ हुआ। इस वर्ष - प्रवेश संख्या निम्नानुसार थी -

इण्टर कला - १२२  
विज्ञान - ७२  
बी.ए. - ६०  
बी.एससी. - १७

वर्ष १९२६ का परीक्षा परिणाम भी सतोषप्रद था -

परीक्षा	बेदे	उत्तीर्ण	प्रतिशत
बी.ए.	१५	०९	६०
बी.एससी.	१६	१४	८७.५
इण्टर-कला	४७	२४	५१
इण्टर-विज्ञान	३१	०६	१९

इण्टर विज्ञान का प्रतिशत यद्यपि कम था, परंतु यशस्वी भी था। इसीलिये, प्राचार्य ने इस पर टिप्पणी करते हुए लिखा था -  
'One student passed in I division and obtained distinction in Physics an honour which the college has secured for the first time in its career'



डॉ. प्रमोदचन्द्र बसु

१९२६ में ही - संस्कृत और हिन्दी के प्राध्यापक के रूप में डॉ. श्रीनिवास धर्तुर्वेदी और संस्कृत तथा मराठी के लिये प्रो. वामनराव ऊर्ध्वसे की नियुक्ति हुई। श्रीनिवास धर्तुर्वेदी संस्कृत के साथ-साथ हिन्दी के प्रखर विद्वान और वैदिक साहित्य तथा भारतीय संस्कृति के ज्ञाता थे। उनका जन्म १८९१ में आगरा के चन्द्रपुर नामक गाँव में हुआ था। उनके पिता इन्दौर में 'अमीन' थे। उनकी प्रारंभिक शिक्षा चन्द्रपुर में हुई। उन्होंने इन्दौर के मिशन स्कूल से तर्कशास्त्र, संस्कृत और इतिहास लेकर इण्टर मीजिएट की परीक्षा उत्तीर्ण की। उन्होंने आगरा विद्यापीठ से बी.ए. और बनारस से एम.ए. की उपाधि प्राप्त की। प्रारंभ में कुछ वर्षों तक उन्होंने इन्दौर के तिलोक चन्द जैन हाई स्कूल में प्रधानाध्यापक के रूप में कार्य किया। लगभग ५ वर्षों तक मेरठ के नानकचन्द हाईस्कूल में प्रधानाध्यापक रहने के उपरान्त वे १९२६ में होलकर कॉलेज में आये। उन्हें ज्योतिष और आयुर्वेद का भी अच्छा ज्ञान



प. श्रीनिवास धर्तुर्वेदी

था। सुप्रसिद्ध इतिहासज्ञ डॉ. बेनिंस के साथ उन्होंने अशोक कालीन शिलालेखों का अध्ययन किया था। वे अत्यंत तीक्ष्ण बुद्धि वाले, नम्र स्वभाव के मिलनसार व्यक्ति थे। उनका जीवन सादा और सगुणिक था। वे एक कुशल और आदर्श शिक्षक के रूप में अपने छात्रों में लोकप्रिय थे। उनके विद्यार्थी आज भी उन्हें आदरपूर्वक स्मरण करते हैं। अपने पूर्ववर्ती प्राध्यापकों - (स्व. पाटणकर और स्व. घाटे) द्वारा निर्मित संस्कृत के अध्ययन - अध्यापन की परम्पराओं

को उन्होंने न केवल कायम रखा अपितु अपने प्रयत्नों से उन्हें और अधिक कीर्ति प्रदान की। वे हिन्दी के प्रबल पक्षधर थे और होलकर कॉलेज में हिन्दी के प्रथम प्राध्यापक के रूप में सर्वोच्च वाद किये जाते रहें। इन्दौर की मध्य भारत हिन्दी साहित्य समिति से वे आजीवन सम्बद्ध रहे। २१ नवम्बर १९४१ ई. उनके मृत्यु हुई। २० दिसम्बर १९५१ ई. The Holkar College Times में उनके धर्मचरित्र पर 'प्रतिभे स्वर्ण' का प्रमुख लेख और 'प्रधानाध्यापक ने उनके चरित्रधर्म, साहित्य और ज्ञान में अमूल्य योगदान किया'। 'He was an eloquent speaker in Hindi, Sanskrit and English and a great devotee of Indian culture. With all this scholarship and merit he was quite free from vanity and took great delight in coming in contact with the down-trodden poor brethren for whom he cherished unbounded sympathy'.

- KBM

१९२६ से १९४० तक का समय कॉलेज के सर्वांगीण विकास का था। शैक्षणिक कीर्तिमानों की उपलब्धियों के साथ इस अवधि में कीडा व अन्य शैक्षणिक गतिविधियाँ तथा भौतिक सुविधाओं में शान्ति, शान्ति, वृद्धि की सफलताएँ भी उल्लेखनीय हैं। इन १४ वर्षों का इतिहास - कॉलेज की प्रगति और इसके लिये किये गये डॉ. बसु के प्रयासों की महाकाव्यात्मक गाथा है। कॉलेज में स्नातकोत्तर स्तर पर अंग्रेजी, अर्थ-शास्त्र, रसायन-शास्त्र और इतिहास की कक्षाएँ प्रारंभ हुई। कॉलेज के पाठ्यक्रमों में विधि और वाणिज्य संकाय शामिल हुए। स्नातक स्तर और इण्टर की कक्षाओं में हिन्दी और मराठी विषय प्रारंभ किये गये।

इन वर्षों में कॉलेज की छात्र संख्या, इस प्रकार थी -

वर्ष	छात्र संख्या	विशेष
१९२६	२७१	
१९२७	३६८	अर्थ-शास्त्र, अंग्रेजी में एम.ए., बी.ए. में हिन्दी विषय
१९२८	४३७	विधि की कक्षाएँ, इण्टर में हिन्दी और मराठी
१९२९	५१८	
१९३०	६२०	रसायन-शास्त्र में एम.एससी
१९३१	५९७	
१९३२	६२२	
१९३३	५७९	
१९३४	६२८	
१९३५	६६९	
१९३६	६६८	
१९३७	७०५	इतिहास में एम.ए.
१९३८	७१५	
१९३९	७०२	वाणिज्य विषय
१९४०	६९५	

कॉलेज के छात्रावास में उपलब्ध सीमित स्थानों के कारण, बाहर से आये अनेक विद्यार्थियों को अपनी वैयक्तिक व्यवस्था करना पड़ती थी। डॉ. बसु के प्रयत्नों से १९२७ में Inspector General of Police ने







Winners of Football Tournament - 1932

इस वर्ष के मसूमे में 100 छात्रों का एक टूर्नामेंट 1932 में मीराल आगरा में एक विश्वस्त खिलाड़ी थे। उन्होंने भारत की राष्ट्रीय क्रिकेट चयन समिति में भी कार्य किया कॉलेज में खालीबाल और फुटबाल भी लोकप्रिय था। 'Prof. S.S. Deshpande's researches on the synthesis of hetero cyclia compounds were published in the Journal of Indian Chemical Society. Dr. Deshpande has been working on this subject for a long time and his achievements constitute a real contribution to organic chemistry.'

श्रीस के दशक के प्रारम्भिक वर्षों में पर्याप्त सुविधाओं और धन के अभाव के कारण कॉलेज में क्रिकेट बहुत लोकप्रिय नहीं था -  
Cricket has not been very popular in the college. The main reason is the bad ground. The black cotton soil is too bad to be kept in good conditions except at a cost which is too high for our purse

- College Annual Report, 1926

इस वर्ष के प्रथम से क्रिकेट के लिये आवश्यक सुविधाएँ जुटाई गयीं और अगले वर्ष प्रतियोगिताएँ शुरू की गयीं। 'Prof. S.S. Deshpande's researches on the synthesis of hetero cyclia compounds were published in the Journal of Indian Chemical Society. Dr. Deshpande has been working on this subject for a long time and his achievements constitute a real contribution to organic chemistry.'

जाने थे, क्रिकेट में राष्ट्रीय स्तर की ख्याति अर्जित की। वे होलकर टीम के एक विश्वस्त खिलाड़ी थे। उन्होंने भारत की राष्ट्रीय क्रिकेट चयन समिति में भी कार्य किया कॉलेज में खालीबाल और फुटबाल भी लोकप्रिय था। 'Prof. S.S. Deshpande's researches on the synthesis of hetero cyclia compounds were published in the Journal of Indian Chemical Society. Dr. Deshpande has been working on this subject for a long time and his achievements constitute a real contribution to organic chemistry.'

प्रो डाबसन के प्रयत्नों से कॉलेज में बेडमिंटन का खेल प्रारंभ हुआ था यद्यपि कॉलेज की बेडमिंटन टीम बहुत सशक्त नहीं थी - परंतु प्रारम्भिक वर्षों में इसका प्रदर्शन सतोषप्रद कहा जा सकता है। कैलाश प्रसाद भार्गव और माधो नारायण सिंघल ने बेडमिंटन में ख्याति प्राप्त की थी

इन खेलों के साथ-साथ 'इनडोर गेम्स' में ब्रिज और कैम्स लोकप्रिय थे शक्तिराम ऐयन ब्रिज के, सतोष कुमार मुखर्जी तथा सुने-कैम्स के कुशल खिलाड़ी के रूप में जाने जाते थे श्रीधर कोठारी और वासुदेव मोघे ने अनेक वर्षों तक आद्या-पाद्या के खेल में महाविद्यालय को प्रतिनिधित्व दिया इन वर्षों में कॉलेज में आगरा विश्वविद्यालय की क्रीडा प्रतियोगिताओं में भाग लिया और 1930-31 में द्वितीय, 1932 में तृतीय तथा 1934 में द्वितीय स्थान प्राप्त किया, विभिन्न प्रतियोगिताओं में कॉलेज का प्रतिनिधित्व के बहाल, डी पी पाठक, हाजिक अली, खार, आर.के. कौल, मोहम्मद हुसैन, कक्कर और आर एस राठीर ने किया था



Winners of Agra University Sports 1937-38, Holkar College - Indore

प्रो देशपांडे के शोध-कार्यों के फलस्वरूप - महाविद्यालय राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर जाना जाने लगा था डॉ बसु ने लिखा था - 'Prof. S.S. Deshpande's researches on the synthesis of hetero cyclia compounds were published in the Journal of Indian Chemical Society. Dr. Deshpande has been working on this subject for a long time and his achievements constitute a real contribution to organic chemistry.'

- College Annual Report : 1932

प्रो श्रीखण्डे ने - 'The relation of Moral to spiritual Excellence' शीर्षक से अपना शोध-आलेख Indian Philosophical Congress - 1929 में प्रस्तुत किया प्रो धर की कई रचनाएँ देश की लब्धप्रतिष्ठित पत्रिकाओं में प्रकाशित हुईं - उन्होंने पूना में आयोजित छत्रपति शिवाजी के जन्म के त्रि-शताब्दी महोत्सव में भाग लिया और अपना लेख प्रस्तुत किया प्रो बोरोपिकर का पहला नाटक 'The Image Breakers' (1938) में प्रकाशित हुआ बाद के वर्षों में उनकी कई नाट्य - कृतियाँ प्रकाशित हुईं हेमलेंट के कथानक पर आधारित Ophelia शीर्षक से उनका नाटक विशेष रूप

से प्रसिद्ध हुआ, राज्य ने प्रो सागिर अली (1934) और प्रो श्रीखण्डे (1936) को 'मृतजिम-बहादुर' की उपाधि से सम्मानित किया डॉ बसु ने Extension Lectures की शुरुआत की, इस व्याख्यान माला का शुभारंभ हुआ था 1938 में सुप्रसिद्ध इतिहासज्ञ एवं भारतीय संस्कृति के अप्रतिम विद्वान डॉ. राधा कर्मल मुखर्जी के व्याख्यान से, बाद के वर्षों में अनेक ख्याति प्राप्त प्राध्यापक व्याख्यान के लिये आमंत्रित किये गये

सांस्कृतिक गतिविधियों के अतर्गत - पारम्परिक रूप से अहिल्यास्त्व, गणेशोत्सव प्रतिवर्ष आयोजित किये जाते थे 1930 में पहली बार प्रो डाबसन की अध्यक्षता में महात्मा गाँधी के जन्म दिन पर कार्यक्रम आयोजित किया गया - जो बाद के वर्षों में नियमित गतिविधि के रूप में मनाया जाने लगा था इसी वर्ष से हरजत मोहम्मद साहब के जन्म दिन पर भी कार्यक्रम आयोजित किया जाने लगा था उन्हें में बच्चे-अदब और हिन्दी, मराठी तथा अंग्रेजी में साहित्य समितियाँ सक्रिय थीं इन वर्षों में अनेक सफल नाट्य प्रस्तुतियाँ भी की गयीं

1936 का वर्ष कॉलेज के लिये विशेष रूप से शौरवपूर्ण है, इस वर्ष



१. अजय तथै मराठी साहित्य और कवित्व के प्रति  
२. अजय तथै मराठी साहित्य और कवित्व के प्रति  
३. अजय तथै मराठी साहित्य और कवित्व के प्रति

[illegible]

प्रो. हरिजीवन घोष

जहाँ एक बांसीवीकर के अध्यापन में कलात्मकता थी वहीं पद्म हस्तिजीवन  
एक के अध्यापन में एक रागमयन लय थी उसमें संगीत था - बंगाल  
के प्रभु का लेखापान था १९२७ से १९४४ तक घोष पण्डित इस कॉलेज  
के अध्यापक हुआं इनके बाद श्री श्रीमती श्री अश्वती गायिका थी और  
हमजब के सामुदायिक कार्यक्रमों में अपने पति के साथ उनकी भूमिका भी  
महत्वपूर्ण होती थी अपनी सांस्कृतिक अभिरुचियों के लिये पद्म अपने  
पति और छात्रों में अध्यापन कार्यप्रणालि



प्रो. बोरगांवकर

प्रो. डी.एम. बोरयांगकर उस पीढ़ी के एक प्रतिनिधि थे कि जिसने उन मूल्यों एवं परिचायकों की स्थापना की कि जिनके फलस्वरूप इन्दिरा नाराज का वर्तमान रूप और वातावरण बना है। एक सौख्य व्यक्ति, जिन्होंने ऐसी तथैव्य तथा अध्यापन के पवित्र कार्य के प्रति अतीव निष्ठा उनका ऐसी विश्वासार्थ थी कि उनके सम्पर्क में होने वाले किसी व्यक्ति के लिये संभव ही नहीं था कि वह प्रभावित न हो। उनके द्वारा जिन विद्यार्थियों की व्यक्तिता का निर्माण हुआ उनमें से अनेकों ने नगर, प्रदेश एवं अन्तर्गत भी जिनके पद सम्भाले हैं तथा बदलती परिस्थितियों के साथ समझौता करने को मजबूर होने पर भी मानवी मूल्यों को बनाये रखने की भसक कोशिश की है।

भोरगांवकर 'सरयू' का व्यक्तिगत अन्य कई प्रकारों से भी साक्ष्य रहा है।  
खेतों में उनकी 'सरयू' रीथि थी। साहस्यर चुनन के क्षेत्र में भी उनके प्रयास  
उल्लेखनीय हैं। नगर के नाट्यमंच में भी वे संचालित रहे हैं और इन सारी  
परिस्थितियों से संलग्न होते हुए भी उनके सार विकासकार्यों में व्यस्तथा का  
सिंलसिमा अदृष्ट रहता रहा है। कैंसी भी परिस्थिति क्यों न हो, काम का  
बुरा किनना ही। अधिक क्यों न हो पर भोरगांवकर साहब कभी झल्लाते  
नहीं, और न आपसे से बाहर हुए ऐसे प्रनाही ही परास्त में रवानाकन  
स्थायी होते हैं।

जमाने के साथ चलते हुए भी उसके अवांछनीय दबावों के सामने वे कभी झुके नहीं, यह उनकी विशेषता उनके परिचितों से छिपी नहीं है। उनके स्नेहपूर्ण आशीर्वाद प्राण होते रहें हैं और हमें हम अपना बड़ा योग्यता मानते हैं जिसके व्यक्ति की एक अवधि होती है जिसके पश्चात् उसे दुनिया के मूच से हटना ही होता है। किन्तु जो दूसरों की स्मृति में ही नहीं, उनके राक्षिय मूल्यों में स्थान बना लेते हैं वे अपनी भौतिक अवधि भी जमाने पर भी बने रहते हैं। प्रो. बोरोगावत ऐसे ही हैं।

- नई दुनिया, ०९ नवम्बर १९६५

1926 में अर्थ-शास्त्र विभाग में सहायक प्राध्यापक नियुक्त हुए थे श्री एल सी. घासीवाल; वे डॉ० बसु के विश्वस्त सहयोगी थे और वर्षों तक वे आगरा विश्वविद्यालय की कार्यकारी समिति के सदस्य थे। 1927 में श्री एस वी. चितले - भीतीकी में और परमसुख माथुर - रसायन-शास्त्र में डिपार्टमेंटरी नियुक्त हुए थे, ये दोनों ही एक लम्बे समय तक कॉलेज में



प कमलाशंकर मिश्र

तथा साहित्यिक सेवाओं के प्रति उनकी रुचि थी 1942 में वे हिन्दी के प्राध्यापक बने प्रो मिश्र का स्मरण करते हुए डॉ शिवमंगल सिंह ने लिखा था -

“पहले साक्षात्कार में तो मैं बहुत प्रभावित नहीं हुआ क्योंकि आचार्यजी की शैशुभाषा अथवा वाचप्या में ऐसी कोई बात नहीं थी, जो किसी का सम्मोहित करती परंतु जितना-जितना मैं उनके सम्पर्क में आता गया उसना-उतना श्रद्धा से भरने होता था और आज तो मुझे इस बात का गर्व है कि मैं उनके प्रीति-भाजन में से से एक हूँ मैंने अपनी जीवन में इतना सरल, निरभिमान, निश्चल और आदर्शग्राही जीवन व्यतीत नहीं देखा हिन्दी साहित्य में बहुत सोचने के बाद केवल एक और नाम स्व. शिवपूजन साहायजी का याद आता है दोनों अपने-अपने क्षेत्रों में अन्तर्ग हैं”

— योगी ४१/४९२

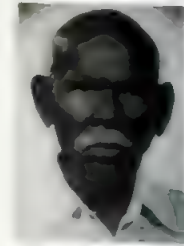
हिन्दी के इस मूक और तपोनिष्ठ सावक की आदरणीय स्मृतियाँ आज भी अनेकों के पास सुरक्षित हैं

इन्हीं वर्षों में - सी.एन. देसाई (1933), पी.सी. जोशी (1937) एल.बी. देशपांडे (1938) अंग्रेजी विभाग से जुड़े भी देसाई 'चिन्म' के नाम से जाने जाते थे। इसी कॉलेज के प्रतिभाशाली विद्यार्थी थे। पी. जोशी अपने ही अस्तित्व पर खुद मोहित एक रोचक व्यक्ति थे जो भागवत को उनके बहुत से विषयों का आधार थे। पी. देशपांडे एक सीधे और सज्जन प्राध्यापक के रूप में याद किये जायेंगे। 1938 में ही कु. डेजी लाकड़वाला अंग्रेजी विभाग में नियुक्त हुईं सौम्य और सुललित - कु. डेजी इसी कॉलेज की छात्रा थीं। दुर्भाग्य से ससिम्हक की बीमारी के कारण 1940 में उनका असामयिक निधन हो गया। कु. सुमति भण्डारकर और कु. डेजी लाकड़वाला की नियुक्ति से महिला प्राध्यापकों की जो परम्परा बनी वो समय के साथ समृद्ध होती गयी। वर्तमान में महाविद्यालय में 40 से भी अधिक महिला प्राध्यापिकाएँ कार्य कर रही हैं। गणित के प्रोफेसर पूरुषोत्तम गंगराडे (23-08-1905 - 5-11-1989) की याद बहुतों को होती है। इसी कॉलेज के विद्यार्थी थे उन्होंने प्रथम बेणी में बी.एससी. की परीक्षा उत्तीर्ण की और इलाहाबाद के Applied Mathematics में एम.एससी. प्रथम बेणी में पास की। इलाहाबाद में उन दिनों की सेतुमधुकराव पण्डी भी अध्ययन कर रहे थे। श्री गंगराडे की याद बनते हुए, मैं लिखते हूँ।

1931 मधु इन्द्राव आण्डी एक विद्यार्थी आम्हया बरीबर राहण्वास आला व्याधे नाल फूलचन्द गंगराडे हा अतिशय हुस्वर, संजजन पण अदील असा मुलगा होत।

- जीवन सेतु

श्री गंगराडे 1932 में डिप्लोमा में डिप्लोमाट्रेटर के पद पर नियुक्त हुए। शीघ्र ही वे गणित के सहायक प्राध्यापक के रूप में पदोन्नत हुए। वे गणित विभाग के अध्यक्ष के रूप में सेवा-निष्ठ हुए।



प्रा. पूरुषोत्तम गंगराडे

वे बहुत सरल स्वभाव के थे। आज भी उनके बहुत से विद्यार्थी जीवन्त हैं - जो बताते हैं कि किस तरह परीक्षा के पूर्व - बरकदाश में या परीक्षा के दिनों में प्रा. गंगराडे - विद्यार्थियों के घर-घर जाकर उनके अध्ययन की जासूसी कर-कर उनकी कॉपीमाइंडें हल करते थे। वे 'त्रुस्तमय विद्यार्थियों' का अपने नाम से कॉलेज लाइब्रेरी की पुस्तक उपनयन कराने

उनमें से कई पुस्तकें वापस नहीं आतीं और पति-वर्ष प्रा. गंगराडे एक भारी-गो-कॉलेज में जमा करते। पर इन्होंने विद्यार्थियों को मदद करने के उनके सत्कर्त में न तो कोई बाधा पहुँची और न ही उन्होंने पुस्तकें देना बंद किया। उनके घर के दरवाजे विद्यार्थियों के लिये हमेशा खुले रहते थे।

एक लगनशील और परिश्रमी प्राध्यापक के रूप में प्रा. जी. डम्न्यू, कवीराम का उल्लेख सदा ही आदर के साथ किया जायेगा। वे दर्शन-शास्त्र के प्राध्यापक थे। 1937 में वे इस कॉलेज में नियुक्त हुए। उन्होंने वर्षों तक होलकर कॉलेज टाईम्स का सम्पादन कर विद्यार्थियों की रुजनात्मक क्षमताओं को प्रोत्साहित किया। महाभारत के युद्ध की तिथि निर्धारण तथा उसके अनेक प्रसंगों की सीमांसा, पर केन्द्रित उनके लेख और पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं और बचि

होलकर कॉलेज के इतिहास का कोई भी पन्ना मरहूम प्रा. सागिर अली के चिह्न के बिना मुकामिल नहीं हो सकता। वे फारसी के उस्ताद की हस्तिगत से 1909 में कॉलेज में दाखिल हुए और तत्कालीन 30-39 बरस तक इसकी जिम्मेदारी से पूरी शिद्दत के साथ वायस्ता रहे। हर दिल उज्ज्वल प्रा. सागिर अली निहायत ही खुश - मिजाज और शाइस्ता इंसान थे। बल्लुगानियों और तल्लिखियों से वे कौनों दूर थे। अलीगढ़ी पापजमा, कलौ अचकन और लाल तुर्की टोपी में - प्रा. सागिर अली हिन्दुस्तानी अरब और तहजीब के जीते-जागते नुमाइन्दे थे। फारसी के साथ कॉलेज में वे अंग्रेजी भी पढ़ाते थे। बरसों तक वे कॉलेज हॉस्टल के डीन रहे, अपने तल्लिखे-इल्मी की खुशी और गम में बराबर के शरीक रहने वाले प्रा. सागिर अली सही मायनों में उनके रहबर और दोस्त थे। टेनिस और हॉकी के वे अच्छे खिलाड़ी थे। हिकमतों और तिकड़मों से दूर वे सिर्फ तक्कीरे-तक्कुर पर यकी रखने वाले इंसान थे। इन्दौर के रियासती माहौल में अपनी शैर-ज्ञानिबजारी के बावजूद भी वे जराइते-इज़हार और खामोश अकलत के लिये हमेशा याद किये जायेंगे। वे सुखन-शानास और शाइशाना तल्लिख के थे। उनकी याद खुशबुओं का एक ऐसा सफर है - जिसे तल्लिखों में बोल नहीं किया जा सकता। हाँ, इतना जरूर कहा जा सकता है -

'दुनिया में ऐसे लोग बहुत कम हैं दोस्त'

- अहमद फजल

वे 94 नवम्बर 1940 को रीटायर हुए और इन्दौर से फरीदाबाद का गये जहाँ के वे रहने वाले थे। बस, इसके बाद उनके बारे में कोई जानकारी नहीं मिल सकी है। उनका पुत्र बुद्धन और पुत्री बुधिया - इन दोनों पाकिस्तान में हैं। वे वही बस गये हैं। अपनी तमाम कोशिशों के बावजूद भी हम उनके पता मालूम नहीं कर सके।

1940 में रीटायरमेंट में हुए प्रशासकीय परिवर्तन का प्रभाव कॉलेज पर भी पड़ा। श्री बापना के स्थान पर कर्नल दोनानाथ - राज्य के प्राथमिक शिक्षा नियुक्त हुए। उनके आते ही प्रा. बसु को सेवा-निवृत्त कर दिया गया। प्रा. बसु की विदाई के साथ ही कॉलेज के जीवन के दूसरे महत्वपूर्ण अध्याय का पटाक्षेप हो गया। वह समय आज भी अनेकों की स्मृति में जीवित है। डॉ. बसु 9 अगस्त 1940 को सेवा-निवृत्त हुए।

1940 से 1948 तक का समय व्यापक परिवर्तनों का था। इस दौरान विश्व ने दूसरे महायुद्ध की विमोक्षिका को भोगा और जन-तान्त्रिक मुहूर्त

## होलकर कॉलेज प्राध्यापक परिवार - 1940.



होलकर कॉलेज प्राध्यापक परिवार - 1940

बायें से दायें -

कुर्सी पर - प्रा. संवत्सर, प्रा. अय्यर, प्रा. धर, प्रा. धारीवाल, डॉ. देशपांडे, डॉ. बसु (प्राचार्य), प्रा. सागिर अली, प्रा. घोष, प्रा. पद्मनाभन, प्रा. गोले, प्रा. चतुर्वेदी

खड़े हुए प्रथम पंक्ति -

प्रा. यादव, प्रा. उधयेश्वर, श्री अकोलेकर, प्रा. शर्मा, प्रा. आर.के. यादव, प्रा. बोर्दिया, प्रा. वर्मा, प्रा. जोशी, प्रा. कोशल, प्रा. अनिरुद्ध

प्रा. चितले, प्रा. सिधल

द्वितीय पंक्ति -

श्री खरगोनकर, प्रा. देसाई, प्रा. गंगराडे, डॉ. अडवाणी, प्रा. माधुर, प्रा. पॉल, प्रा. बोरागोकर, प्रा. मिश्रा, प्रा. कवीरवर

नीचे बैठे हुए -

सर्वे श्री तारे, सुभेदार, काफिडें, देशपांडे, रस्से, एम.वी. तारे

की विजय के साथ ही महत्वपूर्ण राजनैतिक बदलावों को भी देखा। इन सबका प्रभाव स्थानीय स्तर पर होलकर कॉलेज पर भी पड़ा। देश के राजनैतिक परिदृश्य पर जो घटनाएँ घट रही थीं - कॉलेज उनसे अप्रभावित नहीं था। इन तमाम वर्षों की कहानी - राष्ट्रीय आंदोलन में कॉलेज के छात्रों की सक्रिय सहभागिता की कहानी है - जिसमें 'वन्देमातरम्' का लेकर उभरा अधिय विवाद भी शामिल है। इन्हीं वर्षों में कॉलेज ने यशवत हॉल और स्वीमिंग पूल को पाया था और इन्हीं वर्षों में प. माखनलाल चतुर्वेदी, राहुल सांकृत्यायन, सर सी.वी. रमन, राजकुमारी अम्बुलकर, चक्रवर्ती राजगोपालाचारी और बीरबल साहनी जैसे व्यक्तित्वों ने कॉलेज में आकर विद्यार्थियों को सम्मोहित किया।

उल्लेखनीय है कि ऐसे अस्त-व्यस्त और उथल-पुथल से भरे समय में भी कॉलेज ने शैक्षणिक और शैक्षणिक कीर्तिमानों को बनाये रखा। डॉ. प्रफुल्लचन्द बसु के बाद H.B. Richardson कॉलेज के नये प्राचार्य नियुक्त हुए। वे अंग्रेजी के प्राध्यापक थे। 1940-49 के सत्र की शैक्षणिक उपलब्धियों का परिचय, विभिन्न परीक्षाओं की प्रावीण्य सूची में कॉलेज को प्राप्त स्थानों से लग सकता है - जो निम्नानुसार थे :-

बी.ए. - 90 वाँ स्थान

ए.एससी - पहला, तीसरा और चौथा स्थान

इंटर - दूसरा, तीसरा और नौवाँ स्थान



एक एक बी - ६ का स्थान  
इसके साथ ही एक - ओजी, अर्थ-साथ और एक एकसी (रसा)  
के परिणाम एक प्रतिफल के

[illegible]

का पदार्थन पेशेसनीय था. इसा प्रतिसंघर्षा में हमारि कुछ प्रमुख उपलब्धिया  
इसा प्रकार थी

- (१) मिर्जा मोहसिन अला बाग - १०० मीटर (प्रथम) समय - ११ सेकंड  
२०० मीटर (प्रथम) समय  
२३ सेकंड
- (२) वही एस मेनन - पोल गॉल्ट (प्रथम) ऊँचाई - १० फुट  
४५ इंच
- (३) आर के कौल - हेमर थो (प्रथम) दूरी - ७९ फुट  
४५ इंच
- (४) आर एच. वर्मा - ५००० मीटर (प्रथम) समय १८ मि  
२६ सेकंड
- (५) होलकर कौन्सेज दल - ४४२५०० मी क्रॉस-कट्टी (प्रथम)  
समय ३३ मि २७ सेकंड - ४४४००  
मी रिले (प्रथम) समय ५२६ सेकंड

१९४१ में तेलंगन की स्थापना के ५० वर्ष पूरे हो चुके थे स्वर्ण-जयंती समारोह अत्यंत उत्साह और उल्लास के साथ मनाया गया था तीन दिन तक (२६, २७, २८ नवम्बर - १९४१) चलने वाले इस प्रथम और अत्यंत समारोह की स्थितियाँ आज भी उन अनेक विद्यार्थियों को हैं जिन्होंने इसमें भाग लिया था। इस समारोह में खेल-कूद प्रतियोगिताओं के अतिरिक्त - हिन्दी, मातृदी और अंग्रेजी एकांकी, पूँछ छात्रों द्वारा नाट्य प्रस्तुतियाँ, सीरीय विभिन्न छात्रमण्डल, मातृदी और हिन्दी कवि-सम्मेलन, मुशायरा, नृत्य और पुराने छात्रों के संस्मरण अन्य आकर्षण थे। इस समारोह के पहले दिन ही मंगलाना जयंतीदिन ने नवमिर्माण समारोह का उद्घाटन किया - जो यशवंत हॉल के नाम से जाना जाता है इस समारोह के निर्माण से वर्तमान का ५० वर्ष पुराना बज्जान पूरा हुआ और इसी कार्यक्रम में महाराणी ने स्विमिंग पूल के निर्माण के लिये ५,००० रुपये की राशि देने की घोषणा की, स्विमिंग पूल का निर्माण दो वर्षों में पूरा हुआ, दिसम्बर १९४३ की The Holkar College Magazine में अपने Editorial Notes में संपादक ने लिखा था -

'The Swimming pool is at last getting ready. Swimming costumes and soaps should be ordered for.'

लगभग २०-२५ वर्षों तक यह तरुण-पुष्कर कालेज की ही नहीं अपितु पूरे नगर की युवा गतिविधियों का केन्द्र रहा। यहाँ अनेकों कीर्तिमान रचे गये। कृत तक जो युवा-हृदयों की धड़कन था, जहाँ पानी पर खिलती रेखाओं के साथ कालेज ने नये इतिहास की रचना की - आज वही सुनसान, उजड़ आश्रम पड़ा है। दुष्प्रस कुमार ने एक स्थान पर लिखा है -

अब किसी को भी नजर आती नहीं कोई दरार  
पर की हर दीवार पर चिपके हैं इतने इतिहास।

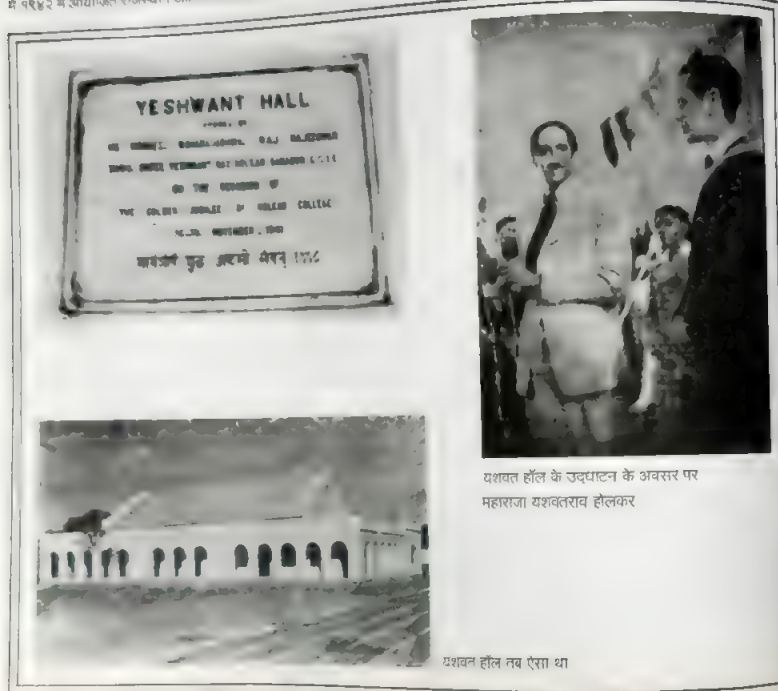
प्रसन्नता हो रही है। साथ ही जुबली के अवसर पर लिखी प्रो. रिचर्डसन की रचना भी पुनः प्रकाशित की जा रही है।

Mr. Mudre, retired Asst. Headmaster, M.S. High School, Indore, is a good artist and at this ripe age his paintings have been markedly influenced by the recent visit of Roerich. He and also Mr. S.K. Gandhi, retired Headmaster, M.S.H.S., supplied information about the staff and the students with great accuracy.

Our College was affiliated to the Calcutta University and the total strength was about eighty in all. Principal Chotomondley was assigned a 'non-conducting' room, with a wooden floor, the present room number 4, for then the whole atmosphere was strictly orthodox. Even some of his colleagues would take a bath if he entered their rooms. Philosophy and Logic were with Prof. Desai, who was so voracious a reader that he would never be found without a book even in his evening walks or while going up the staircase Prof. Patankar, and later on Prof. Ghate, were the Sanskrit Pundits. Krishna Shastri Parasker, who gave coaching in 'Kaumudi' for B.A. (Hons) was so learned a scholar that he could even lecture on while doing Mathematics, including astronomy, was in the ablest hands of Prof. Athawale. Prof. Ahmed, the Dean, was entrusted with both Persian and Ancient History of Greece and Rome.

In 1900, a good number of students resided in the hostels. There were no complaints about cycle-nuisance, as cyclists were very few. All the present outdoor games were in vogue even then and the Principal took special interest in Cricket, football and gymnasium. Mr. Gandhe, a good scholar, remarked that the College was more noted for its games. The annual gathering and occasional debating were the only social activities. Once the Marathi adaptation of Moliere's drama, "Doctor in spite of himself", was staged in the gathering. Prof. Desai had started a Holkar College Reading Club, to encourage extra reading among students. It should be interesting to note that in the Gymnasium-shed students used to perform their Shrivani or the annual thrush renewal ceremony. The two Maharashtra and the Shivaji messes, which existed in their time, will be very soon completing their fifty not out.

The Principal was a man of Principles and made strict rules, and would himself rigorously observe them first. A notice was put up in the Library 'Noise above whisper strictly forbidden', and the Principal would himself warn the defaulters only in whispers. That inveterate smoker had prohibited smoking for his students as well as for himself in the College premises. He would daily go for his morning ride with some dogs, and appeared like a typical hunter in that dress.



अतीत के तमाम कीर्तिमानों के इशतहार भी आज इस स्विमिंग पूल की दीवारों की दरारों को ढक नहीं पायेंगे

इसके पहले कि समय के साथ हम आगे चलें, यह जानना सुखद होगा कि स्वर्ण-जयंती (Golden Jubilee) के अवसर पर पूर्व छात्रों ने किन्हीं शब्दों और भावनाओं के साथ कॉलेज को स्मरण किया था। The Holkar College Times के Special Jubilee Number - २६ नवम्बर - १९४९ से भी विनयाक सखटे, श्री मुंदू और मुसाहिबे खास बहादुर राय बहादुर एल.वी कानुनगो के संस्मरणों के अंशों को उद्धृत करते हुए हमें ज्ञात

Mr. Mudre gave a vivid appreciation of the Professor of Science, S.L. Gokhale (nicknamed by students 'solid liquid gas' from his initials), whose whole life was simplicity incarnate. He was the ideal of plain living and high thinking.

Mr. V.S. Sarwate

Prof. Gokhale, who is now in America, was a popular conversationalist. This scientist was always on a little higher level than the rest. He was impersonal and could never think in terms of personality. That is why his humour was like a cool shady, verdure agreeable to all while the intellectual dazzling wit of Prof. Athawale was charming like the lightning but also at times damaging. Mr. Gokhale was so simple and trusting that he would keep all his pay in an unlocked drawer and whenever any student was in need of money, he had only to take it and keep a chit of his own name and when returning, take back the chit and replace the amount. Does it not remind us of the good old days at the time of Ashoka, when every one was honest and trustworthy?

Raj Bahadur S.V. Kanungo

Lord Hardinge was equally impressed when as Viceroy of India he visited the college in 1912. The great advantage which the college then enjoyed was that the students were mostly residential; students and the institution enjoyed practically all the advantages of a residential college. The natural result was good regard and traditions of the college, good discipline, good understanding between students and the staff, great solidarity among the students themselves and an altogether cordial and harmonious atmosphere.

Hockey enjoyed the foremost place in the games due largely to the lead given to this game throughout Central India by the then Principal Gardner Brown. Sturdy games like Hockey and Football must necessarily be encouraged in a college.

Fortunately we had a remarkably good cook who used to feed us very well so that we could stand the stress and strain of this game with abundance of energy. It may be a coincidence but it was a fact that all the best players in Hockey including our Prinpapa were good eaters. I do not know whether it was because no good eaters were left that the famous cook afterwards left the college and settled down in the city as the future proprietor of the leading Hindu hotels in Indore.

## Hymn of Jubilee

In fifty years the world grows old,  
If old age counts the passing day.  
In fifty years the world grows young  
As youth looks forth, new lives unfold  
They see no darkness on their way,  
They heed the song so often sung,  
Nor heed the sorrow, his woes untold.  
Of man's travail, his woes untold.  
As from life's all-healing ray  
They turn unseeing eyes away

While age hangs back, youth presses on;  
Till worn quite thin by man's cruel law  
It wits and lets its visions fade  
So young men see the battle won,  
But mirage-like that which they saw Moves ever back, as though afraid,

When young the old pressed 'twards the Light  
That gem-like glows without a flaw  
And filled their eager souls with awe

Now old they sit with tarnished sight  
And preach to those who burn with zeal,  
As once they burned. They warn them clear  
Of how they learnt to know the might  
Of worldly power, of how its wheel  
Turns slow and strong, propelled by fear  
Yet youth must ever seek to fight  
For all those things it knows are real,  
Bowing to justice while they kneel,  
Acclaiming Truth, sweet Beauty's zeal

So let us look at days long past  
When first these noble halls were raised  
That youth might drink from fountains pure  
The wine of wisdom, rich repast  
That turns men's minds to pains unblazed,  
And leads them on to knowledge sure  
Beyond the stars; till at the last  
They come to know, with soul amazed  
Eternal Love and Life unscathed.

In times gone by our fathers sought  
For God in these same hallowed halls,  
So search we too in different guise  
As newer powers, fiercely wrought,  
Impel us on. We answer calls

To them unknown, we seek a prize  
Whose outer form our fancy's caught.  
Yet deep inside the same voice calls  
That called to them with gentle sighs,  
The voice that bids men to be taught  
By love that God alone instals  
With ageless hands, eternal walls.

- H.B.R.

जून - १९४१ में सोवियत संघ पर नाज़ी जर्मनी के आक्रमण ने और मार्च - १९४२ में बर्मा पर जापानी हमले ने युद्ध के स्वरूप को पूरी तरह बदल दिया था। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने भी अपनी नीतियों में परिवर्तन कर संघर्ष को और अधिक सक्रिय करने का निश्चय किया। अप्रैल - १९४२ में महात्मा गांधी ने अपने एक लेख में 'मातल छोड़ो' का नारा दिया। अगस्त में महात्मा गांधी समेत अनेक राष्ट्रीय स्तर के नेताओं की गिरफ्तारी से सारे देश में स्वतः प्रेरणा से ब्रिटिश विरोधी प्रदर्शनों और हड़तालों का सिलसिला व्यापक पैमाने पर प्रारंभ हो गया। इस कालेज पर भी इस आंदोलन का प्रभाव पड़ा। छात्रों की ब्रिटिश हुकूमत विरोधी गतिविधियाँ अनेक प्रकार से - सक्रिय रूपों में संबालित होती थीं। उन सबका स्मरण आज हमें रोमांचित कर देता है। अपने संस्मरणों में कॉलेज के पूर्व छात्रों ने इन दिनों का चित्र प्रस्तुत किया है। इसी क्रम में 'वंदेमातरम्' को लेकर हुए विवाद की चर्चा प्रारंभिक होंगी। बंकिम बाबू का यह गीत सारे देश में राष्ट्रीय-मान के रूप में गाया जाता था। गीत की औजस्वी शब्दावली और संगीतमय ललित पदावली जन-जन में देशभक्ति के अद्भुत मावों का संचार करती थी। प्रिन्सिपल रिचर्डसन के समय इस गीत को लेकर उपजा विवाद एक लम्बे समय तक चला।

कॉलेज में इस गीत पर प्रतिबंध था और छात्रों का आग्रह था कि वे इसे गाये। इसी को लेकर विवाद था। सम्भवतया छात्रों के एक वर्ग द्वारा भी इस गीत को गाये जाने का विरोध किया था। विरोध स्वल्प रूपों में कॉलेज में आयोजित अनेक कार्यक्रमों का बाह्यकार किया। कॉलेज से प्रकाशित The Holkar College Times में भी इस विवाद पर चर्चा हुई। श्री प्रभाकर ऊर्ध्वरे लिखते हैं -

'या सामाहिकता त्वावर्षी' एक राजसी वादये प्रकरणही खूब गाजले हा बाद होता 'वंदे मातरम्' है राष्ट्रीय गीत गाण्याच्या हक्काबदल, या गीतावर त्यावेळी इश्याचा फार रोष होता व इंग्रजांच्या ताटाखातची माजारे असलेल्या संस्थानिकांची राजनिष्ठा तर राजहत्तरी अधिक जाणवत (More Loyal than the King) होती! युद्ध सुरू असल्यामुळे हे घोरण अधिकच कडक झाले. भ्रष्टाचार आपली विद्यापीठे प्रकरणेन जोडलेला तर माध्यम म्हणण्याचा हक्क मिळालाच पाहिजे असा हट्ट धरला व त्यासाठी आंदोलन सुरू केले। प्रिन्सिपल रिचर्डसन विद्यार्थ्यांच्या लोकशाहीच्या बाजूचे असले तरी 'वंदे मातरम्' प्रस्ताबात त्यांना संस्थानी सरकारचे व इंग्रज सरकारचे घोरण अमलात आणणे कसप्राम होते। त्यामुळे त्यांनी अर्थातच 'वंदे मातरम्' ला परवानगी नाकारणे मग आपली मोर्चा निरगुने गोर चढाव सुरू झाले। म्हणून आम्ही खुशीत होतो पण दोन-चार दिवसांनी बळबळीचा जोर ओसळ लागला सभा भिरवजुळीत सामील होणाऱ्यांची संख्या रोखवली रिचर्डसन साहेबांनी आम्ही काही 'पुढारी' विद्यार्थ्यांना बोलावून घेतल व समजावण्याचा प्रयत्न केला। विद्यार्थ्यांना 'वंदे मातरम्' म्हणण्याचा व राखीय चळवळ चढवण्याबाबत हाक आणे हे मी व्यक्तिगत मानतो। आमच्या देशात विद्यार्थी राजकीय चळवळ करतात, राजकीय पक्षांचे समर्थन होऊन विद्यार्थीठात त्यांच्या शाखा चालवतात हे सगळ मी पाहिलेले आहे त्यात मागही घेतलेला आहे पण इथे हिंदुस्थानातल्या इंग्रज सरकारला व संस्थानी राजवटीला ते मान्य नाही त्यामुळे माझा, माझाज आम्ही तुम्ही ही चळवळ बंद केली नाहीत तर मला तुमच्यापैकी काहीना तरी कांतेजातून काढून लाकण भाग पडेन।'

'ती चळवळ तत्काळ थंडावली काजेजच्या आचारमागरे वंदेमातरम् म्हणण्याचा हक्क बजावून आम्ही विद्यार्थ्या व एकजूटच्या घोषणा दिल्या व ते प्रकरण संपलं.'

- सोबल-विद्यार्थी अंक १९८३

३१ जनवरी १९४२ के The Holkar College Times में प्रकाशित Hostel Notes की प्रारंभिक पंक्तियाँ कहती हैं -

"The 'Hostel Day' was celebrated on the 24th and 25th of January. The celebrations began on each day with the singing of Vande Mataran."

इससे स्पष्ट है कि होस्टल में - "वंदे मातरम्" - गाया जाता था और उत्कल्लेखनीय यह है कि इस विवादोपसृद्ध और प्रतिबंधित 'राष्ट्रीय-गीत' के गाये जाने का समाचार प्रकाशित हुआ।

दिसम्बर - १९४३ (Vol. XXX, No.1) की कॉलेज पत्रिका में Editorial Notes में हमें टिप्पणी पढ़ने को मिलती है, कि-

The issue of "Vande Mataran" still remains undecided इस टिप्पणी के नीचे सम्पादक ने निम्न काव्य पंक्तियों को उद्धृत किया

"Tis best to grant me cinnna what I crave,

And next best cinnna is refusal straight

Givers I like; refusal I can brave

But you don't give, you only hesitate."

सम्भवतया ये पंक्तियाँ तत्कालीन प्रशासन की मनोवृत्ति को लक्ष्य करके उद्धृत की गयी होंगी। ठीक इसके बाद बहाई धर्म पर डॉ. एच.एस. मातो (बम्बई) के व्याख्यान का समाचार देते हुए, लिखा है - "Vande Mataran was allowed and no unpleasant scene on consequences followed."

यह कार्यक्रम - यशवंत हॉल में आयोजित किया गया था। रिचर्डसन के उत्तराधिकारी श्री राजू के कार्यकाल में भी यह विवाद था - परन्तु ऐसा लगता है कि - कॉलेज के बाहर इसको गाये जाने और फिर छात्रावास के कार्यक्रमों में इसके उपयोग से यह कटुता अपने आप समाप्त हो गयी होगी। लगभग दो वर्षों तक कॉलेज के पस्तर में वंदे मातरम् को लेकर हलचल थी। कॉलेज के इतिहास में इस प्रसंग का एक ऐतिहासिक महत्त्व है।

श्री रिचर्डसन एक उदारवादी अखंड तर्क थे। छात्रों की सृजनमय क्षमताओं को विकसित करने के उद्देश्य से और अनेक विवादोपसृद्ध मुद्दों पर वैचारिक चर्चा के लिये एक फोरम तैयार करने की दृष्टि से उन्होंने The Holkar College Times नाम से एक साप्ताहिक पत्र प्रारंभ किया था। यह कॉलेज के सत्र में प्रति शनिवार को प्रकाशित किया जाता था। इसका वार्षिक शुल्क दो रुपये था। निश्चित ही यह एक उत्कल्लेखनीय पहल थी और शैक्षणिक तथा पत्रकारिता की दृष्टि से इसका प्रकाशन एक महत्वपूर्ण घटना थी।

'होलकर कॉलेज टाइम्स' में कॉलेज की गतिविधियों के समाचार, विविध टिप्पणियाँ, सम्पादक के नाम पर और पुस्तक समीक्षाओं के माध्यम से विविध सामग्री उपलब्ध कराई जाती थी। इसमें विज्ञापन भी होते थे। सम्पादकीय के रूप में श्री रिचर्डसन का लेख होता था। जिन विविध विषयों पर रिचर्डसन महोदय ने अपनी कलम से लिखा है एक प्रतिक्रियावादी अखंड नीकरशाह की परिधि के बाहर के होते थे। ३१ जनवरी १९४२ के अंक में अपने लेख के प्रारंभ में उन्होंने गोरखले की पंक्ति spiritualize politics उद्धृत करते हुए भारत के सामाजिक उत्थान की दिशा में महादेव गोविन्द रानाडे के योगदान की प्रशंसा करते हुए विस्तार से उनके व्यक्तित्व की चर्चा की। इसी लेख के अंतिम पेरिशाफ में उनकी निम्न पंक्तियाँ पढ़ने पर सहसा



'टाइम्स' में समय-समय पर पूर्ण छात्रों के संदेश भी प्रकाशित किये जाते थे. २० दिसम्बर १९४१ के अंक में भऊ साहब कोतवाल और पी.बी.

His Highness Sir Tukoji Rao Holkar's  
Generous Gift

His Highness Sir Takoll Rao  
Generous Gift

**GHODE DEBATE.**—The Ghode Debate was held on Saturday, the 31st in the sixth, seventh and eighth periods. Eight competitors took part in the debate. The judges, Dr. Deshpande, Mr. Ghosh and Mr. Dhar recommended N. L. Jann for the first prize.

for Shrinivasa Chaturvedi - Tributes.

**INDORE LIMITED**

Professor Shrinivasa Chaturvedi

**THE BANK OF INDORE LIMITED**

INDORE.

1st of His H: SA  
'olker Sta

THE BANK OF INDIA  
INDORE.  
Under the Patronage of the Government of His Highness the Maharaja Holkar Jagmohan.  
H. MEN—Mr. E  
15 pm. E  
T  
tion

under the Patronage of  
Maharaja Holkar, Indore.

Franchise  
SALON

CLASS FOR WOMEN.—Mr. C. H. Ghosh was present at 2-15 Pm. On the day the 4th February when the garden admission for women is opened in the quarters, Miss Zanne, Miss Kher and Miss Chak who have volunteered to teach the old Dean's system of Hindo Domains and sister of other faculty.

A Boon to  
CHITRABALI  
( Hair  
CHITRABALI-For  
BRAHMI.—For F  
BJARADANI-TOOT

HOLKAR COLLEGE CAPTAINS, 1941-1942.

कबीरधर के पत्र प्रकाशित हुए थे. श्री कबीरधर के परिचय में कहा गया था -

Mr Kaveeshwer is nationalistic in outlook.

भाऊ सावेष्टर कोतवाल (१८९४ में कॉलेज के छात्र) का संदेश था -

"My brother students of the Holkar College. Be a sportsman; be a gentleman, stand united and be devoted in the service of the Indore state and mother India. Our college has a tradition of its own to uphold, which every student of the college has to try his level best to uphold"

कॉलेज की विभिन्न समस्याओं एवं गतिविधियों को लेकर छात्र-छात्राओं के लिखे पत्रों को भी प्रमुक्तता से प्रकाशित किया जाता था २० दिसम्बर १९४८ के अंक में लिखे अपने पत्र में छात्र शशिकांत भोरास्कर ने कॉलेज के कार्यालय में अनुशासन और व्यवस्था के लिये बुलाये गये पुलिस दल की उपस्थिती की निन्दा की थी

SRIMAT  
Rajkumar  
Holkar THE POOR STUDENTS'  
LIBRARY

[illegible]

### GUARDIAN TUTOR GROUPS

On Friday and Saturday, the 12th and 13th December, the guardian tutors met the members of their respective batches with a view to devising, among other

**PANCHOLI ART'S**  
Starring the Star of "AULAD"  
"ravishing Rati"

Starring the Star of "AULAD" & "QUAIDI"  
 ravishing RAMOLA with M. ESMILE & MANORAMA  
 in Folio MISS REGAL THEATRE

R. P. instructors:— We heartily congratulate Dr Karandikar, Dr Bhagwat, Prof. 'dia and Prof. Gangrade on having passed the A R P. instructors' examination. These four instructors in our midst hope to begin **Games (Hu-Tu-Tu)** soon.

NONE SHOULD AFFORD TO MISS.



## HOSTEL NOTES

**GENERAL** Meeting of the hostel was held on Saturday, 23rd of August at 8.30 p.m. when Dr. S. C. Deshpande gave a short talk on "Science

## Book Reviews

S. S. Deshpande  
Professor S. M. Mate of,  
College, Poona

हमारे महाविद्यालय में एन. एन. सी की सभी सुविधा उपलब्ध है। योजनारूढ़ तरीके से कार्यरत है जिनमें महाविद्यालय के मूल मूल्य सभी छात्र-छात्राएँ ट्रेनिंग ले रहे हैं। इस विभाग की संपूर्ण जानकारी हमारे

Letters to the Editor

**The COLLEGE TIMES**

every Saturday during the College Year

Subscription: Rs. 2 per Annum.

NO. 1, JANUARY, 17, 1907

**SPORTS**

**NOTES AND**

Recently in the...

Professor W. G. ...

examined the...

WANTED

**LAKAR COLLEGE**

Published every Saturday during the  
Subscription: Rs. 2 per Annum.

NOTE:

Recently Mr.  
Professor Lata  
napped th  
exam

**SPORTS NOTES AND SERIES.**

Recently in Essex, England, it was testified that  
Professor W. G. Fisher, one of the members of the  
Society, won't evolve itself  
It was said that the society evolved itself  
and deleted or selected the material it  
retains. The

President

Month: January

It is a well known law  
cold comes. But we  
that our college, like  
cold season is, fact

Some say, that ever  
Wherein our Saviour's birth is celebrated  
This bird of dooming singeth all night  
And then, they say, no spirit can be  
No fangs, teeth, nor with hair  
hallowed and so

**A THOUGHT FOR THE WEEK**

That ever gained that season comes  
birth is celebrated  
all night  
no spirit can be  
No fangs, teeth, nor with hair  
hallowed and so

January 31, 18  
ADDRESS TO Dr A Q  
25.

The Balmukund Medal for Tennis has been won by S. S. Khandekar (IV Arts).

Printed at the Holkar Government Press  
GOKHAL.

यह पत्र बंद हुआ, यह तो निश्चित ज्ञात नहीं हो सका है, हाँ, बाद के वर्षों में डॉ. भागवत ने अपने कार्यकाल में इसे पुनः जीवित किया था, कॉलेज के 'अर्थ-कथानक' के रूप में होलकर कॉलेज टाइम्स का प्रकाशन हमेशा ही महत्वपूर्ण बना रहना और इसका श्रेय निश्चित ही एच बी रिचर्डसन को है

१९४१ में प्रो. वासनारवाह ऊर्ध्वारे के निधन से कॉलेज का एक समर्पित व्यक्तित्व हमारे बीच से उठ गया, वे इसी कॉलेज के विद्यार्थी थे १९२६ में संस्कृत और मराठी पढ़ाने के लिये नियुक्त प्रो. ऊर्ध्वारे परम्परा और अध्ययनशील व्यक्ति थे उनकी मृत्यु पर श्री रिचर्डसन ने लिखा था -

'In Prof. Urdhwarese we have lost a very sincere and popular teacher and a man who was responsible for bringing to the fore the co-operative movement in the state.'

इसी वर्ष कॉलेज में अर्थ-शास्त्र विभाग में सी.ए. पालविया की नियुक्ति हुई वे होलकर कॉलेज के ही विद्यार्थी थे कॉलेज में उन्होंने १९४८ तक कार्य किया इस अवधि में अर्थ-शास्त्र के साथ वाणिज्य-संकाय की शैक्षणिक गतिविधियों में भी उनका सक्रिय सहयोग रहा १९५३ में उन्होंने जेन टिनबर्गन के मार्गदर्शन में नीदरलैण्ड से डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की प्रो. टिनबर्गन अर्थ-शास्त्र के प्रथम नोबल पुरस्कार विजेता थे डॉ. पालविया ने अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न विश्वविद्यालयों और संयुक्त राष्ट्र सच की गतिविधियों से सम्बद्ध रह कर ख्याति अर्जित की उन्होंने Indian Institute of Public Administration में Associate Project Director और योजना आयोग के सलाहकार जैसे महत्वपूर्ण पदों पर भी सफलता पूर्वक कार्य किया, वे अपनी उपलब्धियों का श्रेय होलकर कॉलेज को देते हुए कहते हैं, कि 'मेरी जड़ें यहीं हैं'

१९४३ में प्रो. बोर्डिया - उदयपुर और प्रो. एस.पी. वर्मा - मेरठ में नयी नियुक्तियों पर मये १९२७ में विद्यार्थी के रूप में दाखिल शांति प्रसाद वर्मा ने लगभग १० वर्षों तक (१९३४-१९४३) यहाँ इतिहास विभाग में अध्यापन कार्य किया गाँधीवादी विचार दर्शन के पक्ष पर प्रो. वर्मा ने इस अवधि में अपने विद्यार्थियों को अहिंसक जीवन शैली और आदर्शवादी मान्यताओं के प्रति प्रेरित किया इन दिनों जयपुर में रह रहे प्रो. वर्मा अंतर्राष्ट्रीय स्तर के राजनीतिशास्त्र के विद्वान माने जाते हैं अपने संस्मरणों में उन्होंने १९३७ से १९४३ तक कॉलेज में बिताये अपने समय को याद किया है

१९४३ में डॉ. भागवत पदोन्नत किये गये कम वेतन और निम्न पद पर बरसों से कार्य कर रहे डॉ. भागवत ने असतुर्प होकर जेलर के पद के लिये आवेदन दिया था, वे चुन भी लिये गये थे, यह संयोग ही था कि

We congratulate Mr. G.K. Yarday on his recent promotion to the position of Head Clerk in the office of the Minister of Education. His long association with the College and his able supervision made him almost indispensable to our College and the staff and students miss him very much, but at the same time they hope that the new sphere of work will give him greater opportunities for showing his ability.

The Staff Club gave a farewell party at Piplia Pala to Mr. G.K. Yarday, and wished him success and prosperity in his new field of activity

From the Holkar College Magazine - January 1943.

वे जेलर के पद पर जा नहीं सके कॉलेज की पत्रिका में उन्हें पदोन्नति पर बधाई देते हुए, सम्पादक ने लिखा :

'We are told that he narrowly escaped from going to the State Central Jail as superintendent. We congratulate him on his fortunate escape and on his promotion.'

डॉ. देशपांडे १९४४-४५ के सत्र में प्राचार्य थे अपनी शैक्षणिक रुचियों और शोधकार्य के कारण उन्होंने इस प्रशासकीय दायित्व से शीघ्र ही मुक्त होना उचित समझा, उनके स्थान पर प्रो. पद्मनाभन प्राचार्य नियुक्त किये गये प्रो. देशपांडे के कार्यकाल में सर सी.बी. रमन स्नेह सम्मेलन अतिथि होकर कॉलेज आये थे

१५ अगस्त १९४७ को जब देश आजाद हुआ तब कॉलेज प्राणभू में स्वतंत्र भारत का तिरंगा फहराने का गौरव प्रो. पद्मनाभन को प्राप्त हुआ,

रियासतों के विलीनीकरण के फलस्वरूप मध्यभारत - प्रांत अस्तित्व में आया इसके साथ ही प्राध्यापकों की संस्था से दीर्घ सम्पर्कों की भूखला लगभग समाप्त हो गयी स्थानान्तरण के कारण प्रांत के दूरतरे भागों से प्राध्यापकों की पदस्थापनाएँ इस कॉलेज में हुईं तो यहाँ से भी प्राध्यापक अन्यत्र भेजे गये नयी व्यवस्थाएँ, नया प्रशासन - प्रारंभ हुआ पुरानी परम्पराएँ टूट गयीं, १९४७ तक कॉलेज पूरी तरह स्थापित हो गया था, फलस्वरूप प्रो. पद्मनाभन, उनके बाद प्रो. घोष और फिर डॉ. भागवत का कार्यकाल निरंतर और गतिशील रहा, १९५७ में पुनः प्रांतों के नये सिरे से विलीनीकरण के पश्चात मध्यप्रदेश बना और इस प्रकार शैक्षणिक सम्पर्कों का दायरा और विस्तृत हो गया, इन तमाम वर्षों की झलक संस्मरणों में है

कॉलेज की छात्र-संख्या में निरंतर वृद्धि हो रही थी, विज्ञान, कला, वाणिज्य एवं विधि संकायों की कक्षाओं का शिक्षण कॉलेज में हो रहा था महाविद्यालय अपने आकार में इतना विस्तृत हो गया था कि व्यवस्था की दृष्टि से इसे दो भागों में विभक्त करने का निर्णय लिया गया, ३ नवम्बर १९५८ को भारत के प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने महाविद्यालय के कला और विधि संकाय के नये भवन का शिलान्यास किया भवन के तैयार होने पर १९६१ में इसमें स्वतंत्र इकाई के रूप में शासकीय कला एव वाणिज्य महाविद्यालय अस्तित्व में आया, विज्ञान संकाय के साथ पुराने भवन में, पुराने नाम के साथ पुरानी परम्पराओं के गौरव से सम्पन्न होलकर विज्ञान महाविद्यालय अस्तित्व में बना हुआ है, □□



सर सी.बी. रमन अतिथि



काश.स.

बैठे हुए : शर्मा इन्दु व्यास, डॉ. देशपांडे, हक्सर और दिनकर साठे  
खड़े हुए : प्रभाकर घाटे, कापसे, मोर, ?



## फैंसी ड्रेस हॉकी मैच वर्ष 1945



आजादी से पूर्व के वर्षों में होल्कर कॉलेज का वातावरण जैसा था, उसकी आज कल्पना करके ही रोमांच हो उठता है. कितनी पारिवारिकता थी. उस समय उन वर्षों में एक परचम थी छात्रों और छात्राओं का विलक्षण हॉकी मैच. इस मैच की खासियत यह थी कि इसमें खेलने वाले सभी छात्र महिलाओं के वस्त्र पहनते और छात्राएँ पुरुषों के. १९४५ में आयोजित ऐसे ही एक फैंसी ड्रेस हॉकी मैच की टीम के खिलाड़ी पहली कतार - कु के सिंह, एफ. अकलसरिया, पाजारे, एस. गुला, ए. गोदरेज, एफ. अकलसरिया जूनियर, जेड. अकलसरिया, एस. कालेवार

दूसरी कतार - सी.एस. ठाकर, अखतार हुसैन (ऑलिम्पिक खिलाड़ी), 'एन. रशीद, के.जी. मानके, एस.एस. चौहान, एस.एन. भंडारे, एन.पी. शर्मा (कप्तान) तीसरी कतार - एस.पी. लाम्बा, एस. हाफिज, एन. अमीन चौधरी कतार - पी.बी. जाधव, एन.के.जी. देशमुख

## REMINISCENCES OF HOLKAR COLLEGE

This college is my Alma Mater. She created in me love of learning. I was there for Inter Science from 1918 to 1920 and for B.Sc. from 1920 - 1923. It was affiliated to the University of Allahabad.

### Principals of the College :

For 1918 - 1920 W. Owston Smith was the Principal. He was a scholar in History. He read with us some portions from Macaulay's History of England.

Prof. P. Basu, a scholar in Economics officiated as Principal for 1920-21.

During 1921-22 Prof. S.L. Gokhale was the Principal. He was called from America for one year. He was a scientist.

Total number of students was about 150 which rose to 200 in 1923. Teachers including the Principal were fourteen and they managed to teach ten subjects English, Sanskrit, Persian, Logic, Philosophy, Economics, History, Mathematics, Physics and Chemistry. Five of the teachers may be called Holkarians.

(1) The professor of Chemistry was S.G. Deshpande. He was a true salt of the soil, who worked in the college till the end, after a sojourn at Agra and Gwalior. He can be called the Father of Chemistry for this region. His father was an Amin in the Holkar State. He was a devotee of Chemistry with no ill-will at all. Oh! if all were like him.



Prof. S.K. Abhyankar (1904-1985) studied in this college in the years 1918 to 1923. After completing his graduation from Holkar College, he did his M.Sc. from Nagpur in the year 1928. He served as Lecturer and Professor of Mathematics at Ujjain, Gwalior and finally retired in 1959 as Principal.

His erudition in Ancient Indian Mathematics was remarkable. He has several articles to his credit on the Mathematics of Bharhagupta and Bhaskara. He also translated Bhaskaracharya's Bījānita in English and Marathi.

As our request he wrote this article in 1984.

of the calibre of J.C. Bose. He tried to inspire us for self study in the opening address he described the Directive Method. He said, "The true work of a teacher is to make the student independent of the teacher." His plan was to make the college an independent one i.e. a sort of university for the Holkar State. The state administration was not ready for this bold step and so Gokhale went back to U.S.A. He told me that the Directive Method was based on the Upanishadic method known as Bhargavi Varuni Vidya. In his final talk he told us that he was turned away as a Professor called back as a Principal after twelve years, and wished to be in India after retirement.

During 1922-23 Dr. Sukhtankar was the Principal. He was a Ph.D. from Germany. He was kind hearted and allowed me to read his Times of India.

(2) Prof. D.B. Deodhar of Physics was here for eight years 1913-21. He was a student of Prof. S.L. Gokhale at this very college. He left us in 1921 to join the Lucknow University. As the vacancy was not filled for a long time, we had to suffer. There was a group photo of the science students with Gokhale and Deodhar. It is there at his home in Lucknow called Anand Vilas. Prof. Deodhar inspired me to study Physics.

(3) Prof. V.G. Gole was the Asstt. Professor of Mathematics. He was also demonstrator for Physics. He taught us Chemistry also when Deshpande went on study leave. My latent love for Mathematics was nurtured under his guidance. He was a true scientist. He gave us the fundamentals of Mathematics. When I was a Professor in the Gwalior state he was a guide to me. His home Pawan Vila was a training Centre for me. He had a silent helping hand to all who came.

to him. His father was a judge in the Holkar State. Nana Deshpande and Tatyasaheb Gole lived like brothers. They were neighbours. Their friendship started from their high school and lasted till the end.

(4) Mr. W.G. Urdhresh was a fellow for Sanskrit. I had met him in 1914.

(5) Mr. M.G. Kekre was demonstrator for Chemistry for some time. Mr. M.D. Gharpure and Mr. G.R. Mahammedpurkar were also demonstrators. For Chemistry, Shrinth Y.R. demonstrator physics joined in 1921.

Now we come to non-Holkarians -

Professor R.V. Pai, of English was from Bombay. He was transferred in 1921 to other jobs in the State. We had to suffer by Prof. Pai's transfer. There was one Prof. Naik who was M.A. in History. He taught General English also. Mrs. Naik an M.A. was inspector of schools. Both of them left Indore for Allahabad. They had come from Bombay. One Prof. Nagarkar of Bombay and another Prof. Karamchand of Punjab had taken our General English class when we were in the B.Sc. D.B. Randade of the education deptt. of the state was also a professor of English at the college for sometimes.

Prof. Ghate was for Sanskrit. He was a very old man, He may have come from Bombay University.

Prof. Saghir Ali was for Persian. He came from Aligarh college. He was in charge of the Hostel. They called him Dean Sahab, I thought Dean was his family name. He spoke in Broken English, usually without verbs.

Prof. W. Shrikhande was for logic and philosophy. He was a scholar from Bombay University. For the Intermediate he used to teach translation from Marathi to English once a week.

Prof. I.J. Cornelius was for mathematics. When he took his M.A. of the Allahabad University perhaps he was a teacher in the Christian Collegiate high school in Indore Camp. He made us study regularly by giving occasional tests. He was good at Analytica. Geometry and at solving problems in the Calculus. He condemned books on Algebra which contained too many solved examples. That was an inspiration to me to compile STUDENTS' Elementary ALGEBRA and ALGEBRA for INTERMEDIATE classes.

Prof. N. Padmanabhan joined in 1922 to fill up the vacancy in Physics. He was from Madras University. He was kind to me. He lent me books from the departmental library.

Prof. J.N. Sen came to fill up the leave vacancy created by Prof. S.S. Deshpande's going to England on Study leave. He was from Calcutta University, a student of Prof. P.C. Ray. Prof. Sen wished that I should score about 75 per cent. He insisted on regular study and gave us tests.

#### Games :

The college was renowned for good play grounds. Day students had parade for two days a week. Hockey, Football, Tennis and Cricket were played. Prof. Saghir Ali was always present at the parade. His "Forty Five" meant the angle made by the feet should be 45°. There was a cadet corps-visit to the Gymnasium and parade was a must for the Hostellers. Prof. Padmanabhan played Tennis. Prof. Gole took interest in Football.

#### Hostel :

There were three wings for the Hostel, we had to use kerosene Lamps. The kerosene oil was provided by the College.

#### General :

Every teacher knew almost every student of the college. Day students walked the distance from the city to the college. Some used bicycles. Surendra Nath Dubey used his Tonga. Professors used cycles. Prof. Sen walked from the Camp to the college. Sometimes we were with him. In 1918 there was only one clerk Mr. Gandhi in the Office. One Mr. S.R. Bhale assisted him for library work.

In the central Hall, names of distinguished students mostly first divisioners were exhibited on the wall. That was an inspiration to us. In 1911 there were four first classes at the Intermediate S.S. Deshpande V.G. Gole, P.S. Sharangpani and H.N. Wanchoo. After a gap of 10 years appeared the name of D.M. Borgaonkar in 1921.

For an all round boy during four years, there was a Shivajee Rao Gold Medal. One Mr. M.D. Kirtane was awarded the medal perhaps in 1921. He was a science student. In the B.Sc. class there were 5 or 6 boys only.

After I left Indore in 1923, I retained happy memories of all the HOLKARIANS, boys and teachers.

#### Difficulties :

I would like to point out difficulties that were experienced by us. Some well to do parents sent their boys to Bombay, Pune or Allahabad even for undergraduate courses that were available at Indore. Prof. Cornelius sent his son A.R. Cornelius to Allahabad in 1921 after the Intermediate. He was a brilliant boy and was selected for I.C.S.. He migrated to Pakistan and became Chief Justice. D.S. Jog went to Allahabad with a special scholarship after the Inter Science in Holkar College in 1923. This shows that the State Government did not put sufficient effort to improve the college and bring it to the level of colleges in Allahabad, Bombay, Pune or Agra during those days.

Post-graduate departments were non-existent in the college.

ge in 1923. And even regular merit scholarships were not available to the best students who wanted to go outside for M.A. or M.Sc. or Engineering. I was in the M.Sc. previous class of Allahabad for about five months in 1923. For want of a scholarship, I left Allahabad and took a teachers job in Central Provinces. In 1927 I joined the college at Nagpur and got the M.Sc. degree in 1928. Thus it took 5 years instead of 2 to get the post graduate degree for want of a scholarship. I was a merit scholarship holder in Holkar college for standing first in almost all six monthly and annual examinations, and

even then I had to discontinue studies. I have retired as the Principal of the Govt. College at Gwalior. Even during my stay in Gwalior and Ujjain Professors at the Alma Mater treated me as their own.

Alma Mater is a temple for learning. Those who regard her as such are sure to have their life's aim fulfilled. Let her be healthy and healthier and pure after the centenary is my earnest prayer at the Lord's feet.



It was a hellish night. The storm had just ceased. The darkness grew thicker and thicker, the horizon was illumined in a deep blue radiance. The universe was clothed in a seeping garb of silence. An old huge Neem Tree, a hideous and ghastly object, waving his myriad long dark branches languidly looked like a giant on his nighty haunt. The barren fields lay dead. The occasional hissing breeze trumpeted the judgment day. Heavens poured darker and darker. The distant spire of the village-church shone dimly all night. My silent steps led me to the demon tree.

"But what's that yonder?"

My heart sunk deep. A black tottering thin figure, clothed in a white garment, supported on a cross. I vacantly gazed. The image arose.

"Oh! My Lord!!"

We were one - embraced and kissed with a choking throat. But all vanished disappeared. A fancy or a dream! What is that? A starving poor blind beggar leaning on a staff.

'But My Lord, where art thou gone?' I fondly uttered. My eyes asleep, but heart awoke-the fanning breeze rang in my ears, 'KNOW ME, I'M HE'.

S.N. Bajpai,  
Senior B.A. Class

- From the college Magazine, 1936



# मेरा होलकर कॉलेज

डॉ. हरिहर त्रिवेदी

पुरा ऋतु झोत पुनिमपुनमा तत्र सरिता  
विषवासि वातो धनविरल भाव इतिनिहासः।  
बहोर्दे कालादपरमिह भवते बहवर्षे  
जिविते। शैलाका सदितिवि बुद्धि दृढजति।।

- भवभूति : उत्तरसप्तचरित - II, 27

रामचन्द्र जब दूसरी बार दण्डक वन में गये तब उन्हें उस स्थल की अपनी पहली यात्रा का स्मरण हो आया उनके थे ही उदार इस श्लोक में है वे कहते हैं - 'पहले जहाँ नाते बहते थे, अब वहाँ सूखी रेत है। घने जनों में अब बिरले वृक्ष हैं और बिरले घने इस वन की कन्या पलट हो गयी, पहचान नहीं हो पाती, फिर भी पर्वतों की यथावत् स्थिति से ज्ञात होता है कि यह निश्चित ही वही वन है।' होलकर कॉलेज को देखकर मेरा भी यही हाल होता है मुझे कल्पना भी नहीं थी किन्तु सुबल पक्ष की एक राखि में मेरे भिन्न जब उस क्षेत्र से मेरे साथ अपनी मोटर से गुजर रहे थे मैं सहज कर चिल्ला उठा - 'झाड़वर गाड़ी रोके' बाहर आकर मैं बीचका सा लोकर चारों ओर और आँखें घुमाने लगा मेरे भिन्न बाहर के निवासी थे वे आश्चर्य से मेरी ओर देखने लगे झुहर मैं माव-विमोर हो चुका था निश्चय नहीं कर पाया कि यह वही कॉलेज है जिसका मैं छात्र था उस परिसर में नई इमारतें थी, सड़के बन गयी थी, कुआँ पाट दिया गया और उसका रहल अलग कर दिया गया था, जहाँ छोटा-सा दवाखाना था वहाँ बगीचा हो गया और आस-पास के बिरले जंगल में घनी बस्ती हो गयी किन्तु कॉलेज का प्रमुख भवन, उसके पीछे के टेनिस-कोर्ट और होस्टल को देखकर मैं जान सका कि यह वही कॉलेज है जहाँ मैं १९२३ से १९२७ तक शिक्षा पाई और साथ ही मित्रता, स्नेह, पारस्परिक सद्भाव और नियमितता का पाठ सीखा था।

होलकर कॉलेज का मैं आभारी हूँ, इसने मेरे जीवन की रूपरेखा अंकित की, सुविराता का पाठ पढ़ाया और जीवन के अंतिम क्षण तक नियमपूर्वक अध्ययन और लेखन की प्रवृत्ति का श्रीगणेश किया इसकी छाप मिट नहीं सकती यह भवितव्य की प्रत्येक शिरा में इसके रूप-रंग का संसार सदैव बना रहता है किन्तु, प्रसंगवश जब यह स्मृति मस्तिष्क के सर्वोच्च शिखर पर पहुँच जाती है, तब मेरी स्थिति क्या होती है यह मैं ही जानता हूँ।

महाविद्यालय की मेरी स्मृतिजि और मेरे विचार आज के विद्यार्थियों के लिये कितने प्रासंगिक होंगे यह तो मैं नहीं जानता, परन्तु अपनी इस मातृ-संस्था

जो मैं जब भी देखता हूँ तब मुझे ये पत्तियाँ याद आ जाती हैं -  
जिर्जन वन में शोल भवन यह कड़ा हुआ है  
मानो बनुधा माप - दण्ड यह बड़ा हुआ है।  
बारों और कहीं भी इसके शोर नहीं हैं  
शिर का लघु रूप अलखन-लोगवही है।

आज, कॉलेज की वही इमारत है, वही परिसर है और वही खेल का मैदान भी - परन्तु वह नीरवता और एकांत कहीं, जो अध्ययन के लिये आवश्यक है और जो हमारे समय में था, सन १९२३ से १९२७ तक मैं इस कॉलेज का छात्र रहा, तब भी ए. तक अध्ययन होता था, कुल छात्र संख्या थी लगभग ५०-६० और अध्यापक केवल सात। वे सात - ससिंह के समान थे अपने विषय में पारंगत तथा यदा-कदा अन्य विषय भी पढ़ाने के योग्य डॉक्टर - केवल दो ही थे- डॉ. प्रभुलालचन्द्र बसु - (इतिहास और अर्थशास्त्र के प्राध्यापक और बाद में प्राचार्य) और डॉ. शंकर श्रीधर देसाय (रसायन शास्त्र), संस्कृत विभाग के प्राध्यापक केवल बी.ए. उत्तीर्ण थे किन्तु योग्यता से परिपूर्ण, उनकी बी.ई.ई. चुनौती का एक उदाहरण प्रसिद्ध है जब संस्कृत में एम.ए. की कक्षा प्रारंभ होने की बात चली, उस समय प्रयाग विश्वविद्यालय से डॉ. अमरनाथ झा यहाँ की स्थिति देखने आये उन्होंने प्रो. घाटे से कहा - "आप एक दो वर्षों में एम.ए. उत्तीर्ण हो जायें तभी नियमानुसार इस कक्षा को पढ़ाने योग्य हो सकेंगे" घाटे साहब ने तत्काल उत्तर दिया - "इस वर्ष परीक्षा के आवेदन की तिथि निकल चुकी है आप मेरा आवेदन स्वीकृत करवा दीजिये और मैं एक दो नहीं, इसी आने वाले मास में परीक्षा में सम्मिलित होता हूँ, यदि उत्तीर्ण छात्रों में सर्वप्रथम न आऊँ तो मुझे यहाँ से भी निकाल देना।" झा साहब घुम। प्रो. घाटे का तोहा सारे प्रयाग विश्वविद्यालय में माना जाता था, वे संस्कृत विषय को इसी भाषा में पढ़ाते थे - अंग्रेजी या मातृभाषा का उपयोग बहुत ही कम, आवश्यकतानुसार करते थे, पढ़ाने समय में हमारी अंग्रेजी कैसे सुधारे थे - इसका भी एक उदाहरण देने योग्य है कालिदास के शाकुन्तल में आश्र-शाखा व लम्बिते" आया है प्रो. घाटे ने एक छात्र से इसका अंग्रेजी अनुवाद पूछा उसने कहा - 'Hanging from a mango branch'. घाटेजी ने उसे सुधारते हुए कहा - 'suspended from a mango bough'. नाटक पढ़ाते समय अपनी वाणी द्वारा उसका दृश्य सामने उपस्थित कर वे छात्रों को रस-विमोर कर देते थे, मनोरंजन द्वारा पढ़ाने में ये सिद्धहस्त थे, ऐसे प्रादर्श अध्यापक आज कम ही हैं।

घाटे साहब मुझे पुनर्वत स्नेह करते थे, इण्टर और बी.ए. की परीक्षाओं में संस्कृत में सर्वोच्च अंक लाने के लिये मुझे जहाँ छात्रवृत्ति और पदक मिले उसके पीछे मूलतः उनकी ही प्रेरणा थी।

दूसरे वदनीय प्राध्यापक थे चार्ल्स ए. डाबसन। बड़ा ही स्नेहित व्यक्तित्व था उनका अध्यापन में निपुण और ज्ञान से परिपूर्ण डाबसन साहब का स्मरण आते ही कालिदास की ये पत्तियाँ याद आने लगती हैं -

विना किय कन्य विद्याम संरक्षा।  
रक्षान्तिरन्तर्य विधेयकुला।  
वसोभवं सागु स शिक्षाकामा।  
पुमि प्रविष्टावपिस्त्व एव।।

- धालविकाग्रिमित्र

विषय का गहन ज्ञान और उसे छात्रों में वितरित करने में सिद्धहस्त। ऐसे

थे जो डाबसन थे छात्रों के चरित्र-निर्माण में भी कुशल थे 'उपस्थिति अंकित करो समय ये पूछो' - 'Were you present yesterday?' छात्र के 'हाँ' या 'नहीं' कहने को मान लेते, उनके इस प्रकार के व्यवहार से हम सब को महत्व देने लगे।

इसके विपरीत डॉ. बसु का व्यवहार था किन्तु उससे हमने नियमितता और समय पर काम करना सीखा उस समय दो घंटियाँ बजती थीं एक पीरियड के समाप्ति की और दूसरी घंटी अगले पीरियड के प्रारंभ होने की डॉ. बसु अपना पहला पीरियड समाप्त होते ही कक्षा में प्रवेश करते, तत्काल सबके नाम पुकार कर उपस्थिति अंकित कर लेते और किसी छात्र का एक पीप भी दूसरी घंटी के समय कक्षा में होता तो उसे उपस्थित मानते अन्यथा नहीं।

परिचयन के प्रोफेसर साहिएर अली साहब अंग्रेजी भी पढ़ाते थे दिया हुआ कार्य (Homework) करके न लाने वाले छात्रों को वे जंगली से बाहर जाने का इशारा करते, नियम से अभ्यास करने के लिये वे कक्षा में व्याख्यान देते थे, यही व्यवहार अन्य गुरुजनों का भी था, उन सभी को, वाहे उन्होंने हमें पढ़ाया ही था नहीं - हम गुरु मानते हैं, उन सभी ने हमारे चरित्र को प्रभावित किया है हम उन सबके आभारी हैं।

हमारे समय में स्नेह-सम्मेलन का संस्कार अन्य ही प्रकार का था, दूसरे कार्यक्रमों के साथ उसमें विद्वानों के व्याख्यान भी होते, एक बार तो सैक्सपियर का नाटक ऑथेलो भी हमने यहीं देखा था कॉलेज में कवि सम्मेलन भी आयोजित होते थे जिनमें हास्य का पुट अधिक रहता था, उस समय होली के अवसर पर लिखी हुई मेरी एक कविता मुझे आज भी याद है -

'ढाते, पीते, मोतीवाते, रेसिमवाते, तेले  
नवते, आढते और अकोते के साथ बहेते।  
कौई रुंदावर बने हैं कौई रे कोलवात  
कौई दपरी, प्रवात तो कौई अनोखेलात।

छात्रों के निवास के लिये होस्टल की तीन इमारतें थीं - West, East और Middle Block, छात्र अपने जाने-पीने की व्यवस्था स्वयं करते जैसे बाहर से सामान लाना, रसोइयों की देख-रेख आदि शहर से आने वाले अधिकतर छात्र पैदल ही आते साइकिलें कम ही थीं, विनासा या स्कूटर तो हम लोगों में देखा भी नहीं था प्रसंगवश कभी मोटर महाविद्यालय के परिसर में आजाती - तो हम उसे देखने दौड़ पड़ते यह थी उस समय की स्थिति। जिसके बाद आज लगभग ६५ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं इतना लम्बा समय बीत जाने के बाद भी कॉलेज की याद आते ही मेरी स्थिति कितने के समान हो जाती है, जो Nightingale का गाना सुनकर कहता है,

डिना का-गर्ग-मयुर यह गाबा।  
अग-अंग पुलकिं कर देता,  
नहिं रस्ता कुछ भाजा।  
अहिं खग-रव यह; नभ देवी का  
प्रसुत कण्ड-विताबा।  
मैं भूलत पर यह नभ में है;  
डेसे सन्निधि पाऊँ?  
भौतिक साधन सभी बिरहक, डैने

श्रीहरिहर त्रिवेदी - १९२३ से १९२७ तक महाविद्यालय के विद्यार्थी थे और इस अवधि में उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से सम्पूर्ण के लिये प्रतिष्ठित Lumsden Scholarship, हेमगिरी भुवनेश्वरी पुस्तक पुरस्कार और नदी पदक प्राप्त किया पुरातत्व विभाग के अपने यशस्वी संयोजक में उन्होंने उज्जैन, विदिशा, महेश्वर और दासपुर के ऐतिहासिक रूप से प्रामाणिक विवरण लिखे और भीभीसार बंध के निम्न स्थलों का पुरातत्वीय सर्वेक्षण कर इन्द्रावट, आसरा और मनोटी में उत्खनन किया, उनके प्रकाशित शोध-पत्र राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विद्वतजनों द्वारा समाहृत हुए हैं।



कार्पस इस्क्रिप्टनस इंडिकास' उनकी महत्वपूर्ण कृति है उन्होंने नाम-मुद्राओं पर भी उत्त्लेखनीय कार्य किया है संस्कृत और हिन्दी में उन्होंने नाट्य कृतियों की रचना की है और बईसवर्ण, कीटस, शैले, बायरन की कविताओं का संस्कृत अनुवाद किया है, अनेक पुरस्कारों से सम्मानित डॉ. त्रिवेदी आज भी अपने अध्ययन और लेखन में सक्रिय हैं, आत्मीय रूप से लिखे हुए उनके इस लेख को प्रकाशित करते हुए हमें अत्यंत प्रसन्नता हो रही है।

सन्निधि पाऊँ?

नई कल्पना मम में लाकर इसकी स्तुति  
जब गाऊँ,  
कव्य पंख पर बढ़ का इनके पास पहुँच मैं जाऊँ,

वही हाल आज मेरा है जिस महाविद्यालय में मैं प्रतिदिन नियमपूर्वक आता जाता था, यह अब केवल स्मृति में ही रह गया है उस समय के अपने मित्रों का स्मरण करते हुए मुझे चालर्स लेम्ब की निम्न पत्तियाँ याद आ जाती हैं -

I have had playmates, I have had companions  
In my days of childhood, in my joyful school-days,  
All, all are gone, the old familiar faces.

I have been laughing, I have been carousing  
Drinking lale, sitting late, with my bosom-comies;  
All, all are gone, the old familiar faces

Ghost-like I paced round the haunts of my childhood  
Earth seemed a desert, I was bound to traverse  
seeking to find the old familiar faces

81





डॉ. आरामदास

आरामदास उन दिनों शिक्षा-मंत्री थे। मेरे साथ किसी ने न्याय नहीं किया - उन्हें मुझे घनावन में भी दी गयी।

१९४०-४१ में भागना साहब के हटते ही डॉ. बसु सेवा-निवृत्त कर दिये गये रिचर्डसन - प्राचार्य बन कर आये थे एक अत्यन्तवादी अंग्रेज तरलण थे। मैंने डॉ. देशपांडे से कहा - 'आपकी वरिष्ठता क्यों नजर अंदाज कर दी गयी?' वे तो मेरे से भी जूनियर हैं - और केवल एन.ए. है - बस - रिचर्डसन को कर्नल दिनामांक का सरकाब था। मैंने रिचर्डसन से सारी बातें बर्बाद - उन्होंने मेरा वेतन १५० रुपये का करवाया। नी साल - वार्षिक वेतन वृद्धि मिलती - तब भी १५० रुपये मिलते थे, परंतु कैबिनेट मुझे नहीं मिला।

दो वर्ष के भीतर ही श्री रिचर्डसन - शिक्षा-मंत्री बनाये गये उनके स्थान पर डॉ. राजू आये। राजू ने Military Training शुरू की। उन्होंने मुझे प्रशिक्षण के लिये मील-कोर में भेजा। मैंने Weapon Training भी दी। युद्ध के समय मुझे Air, tank, signals और नौ-सैनिक केंद्रों को देखने के लिये अगला, फिरोजपुर, महु, जलालपुर और बम्बई भेजा गया। बम्बई में मैंने Rescue Training भी लिया।

इसी समय जेलर के पद के लिये विज्ञापन निकला। वेतनमान प्रोफेसर के समतुल्य था। मैंने आवेदन कर दिया। लोक सेवा आयोग द्वारा मैं चुन लिया गया। प्रवर्तन पर मंत्री-महल में विचार के समय कानून-मंत्री (जस्टिस) सी.लाल ने रिचर्डसन से पूछा - 'इनाqualified आरम्भी कॉलेज से क्यों जाना चाहता है, साइंस में नालायक है क्या?' रिचर्डसन ने कहा - 'नहीं झगड़ालु है।' सी.लाल ने कहा - 'झगड़ालु नहीं तो क्या करेगा? तुम इनका कम वेतन जो दे रहे हो उसे जेलर की ग्रुड कॉलेज में दो। उसके बाद झगड़ालु तो निकाल देगा।' इस प्रकार मुझे प्रोफेसर का पद और वेतन मिलना निश्चित हुआ। कहानी यही खत्म नहीं हुई। अनेकों को ये अछा नहीं लगा।

वही बातानी से एक प्रोफेसर की जगह दो सहायक प्राध्यापक के पद मौज्जा की उन लोगों की बाल सफल हो ही जाती। परंतु इस बार मेरा भाग्य औरतर था।

काफी पालन और संघर्ष के बाद मैं - एम.एस.सी. (उत्तराखंड) में Physical Chemistry पारम कर पाया। अच्छे और परिश्रमी विद्यार्थी मिलते थे - फलस्वरूप परीक्षा - परिणाम भी अच्छा रहता था। मेरी मान्यता रही है कि परिणाम - विद्यार्थियों पर निर्भर करता है, हाँ श्रेय शिक्षकों को मिलता है।

डॉ. राजू के बाद डॉ. देशपांडे - प्राचार्य बने। शिक्षा-मंत्री से युद्ध-सेवा में जाते-जाते प्रो. रिचर्डसन एक महत्वपूर्ण परिवर्तन करवा गये। अभी तक कॉलेज सीधे शिक्षा-मंत्री के अधीन हुआ करता था। नयी व्यवस्था में इसे Director of School Education से सम्बद्ध कर दिया गया। श्री अनुकुलम इस पद पर थे। प्रो. पद्मनाभन से उनकी मित्रता थी। उन्होंने ऐसी परिस्थिति निर्मित की, कि विचार होकर डॉ. देशपांडे ने सेवा-निवृत्ति ले ली। अब, प्रो. पद्मनाभन - प्राचार्य बने। सबसे पहले उन्होंने एन.सी.सी. बंद की और मुझे मिलने वाला Allowance बंद करवाया। इसी समय रामपुरा में खुले वाले कॉलेज के लिये प्रिन्सिपल के पद के लिये मैंने आवेदन दिया। आयोग में डंडा, एनाकुलम और मसुक्कुली खान ने साक्षात्कार लिया। श्री डंडा ने मुझे प्रशासकीय अनुभव के बारे में पूछा। मैंने बताया कि स्नातकोत्तर विभाग का अध्यक्ष हूँ, सैनिक प्रशिक्षण प्राप्त हूँ और एन.सी.सी. में हूँ, वे बोले, 'ये भी कोई प्रशासकीय अनुभव है क्या?' मैं तुरंत समझ गया कि अपना घयन होना नहीं है - इसलिये उरना किस्तिलो! मैंने भी कहा - 'Sir, When you selected Mr. Padmanabhan as a Principal of a post graduate college, he was only a degree head.' फिर मैंने श्री एनाकुलम की ओर इशारा करते हुए कहा, 'And, excuse me sir, there sits the Head Master of Malharashram who has been made Director. He was below me till yesterday - now he sits on my head - and you want an experienced man for an intermediate college which is non-existent.' वे हँस पड़े। उन्होंने कहा Dr. Bhagwat! I don't mean it! मैंने भी कहा - 'Sir, I also didn't mean it.' श्री डंडा ने एनाकुलम से कहा - 'कि यदि वे कुछ पूछना चाहते हैं तो पूछें वे क्या पूछें?' मैं चुन लिया गया। प्रकरण कैबिनेट में गया। वहाँ प्रजापंडा के लोग थे। मुझे बुलाया गया। वहाँ मुझे जाने का कारण पूछा गया। मैंने कहा वेतन ज्यादा है, वेतनमान भी अच्छा है। 'तुम्हारे Science career और विचार का क्या होगा?' मैंने कहा 'आज तक किसी ने उसकी कीमत नहीं की।' तब श्री मंगलान ने कहा कि वे इसी वेतनमान में अधिकतम देख भी मुझे होलकर कॉलेज में ही रखना चाहें। मैंने स्वीकृति दे दी।

१९५४ में प्रो. घोष सेवा-निवृत्त हुए। उनके सेवाकाल में वृद्धि नहीं की गयी - जबकि वॉलियर के प्रिन्सिपल को extension दिया गया। छात्रों ने आंदोलन किया - जो उग्र होता गया - पुलिस और प्रशासन ने मोर्चा बलारकर आंदोलन को दबाया। मुझे इसी पृष्ठभूमि में प्राचार्य का कार्यभार सौंपा जाने को मिला। गोली-कांड की जाँच के लिये वायु आयोग विधायक इसी बीच में दो बार लोक सेवा आयोग द्वारा प्राचार्य के लिये अस्वीकृत किया गया। प्रो. पद्मनाभन उन दिनों आयोग के सदस्य थे। १९५५ में म.ग. के गठन के साथ ही - लोक सेवा आयोग ने मुझे प्राचार्य पद के लिये

चयनित विभाग कॉलेज में १९६४ तक रहा। फिर विक्रम विश्वविद्यालय, उत्तराखंड के रसयन विभाग में १९७१ तक कार्य किया। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की योजना के अंतर्गत १९७१ से १९७४ तक होलकर विज्ञान महाविद्यालय में कार्य किया। इसके बाद मैं १९८३ तक इन्दौर विश्वविद्यालय से सम्बद्ध रहा। वहाँ के मेरे अनुभव सुखद नहीं हैं।

हमारे समय में देशभक्ति यह स्वाभाविक बात थी। हम इस विचारधारा में ही पले। हमारा एक शिवाजी क्लब था। इसमें हम १५०-२०० विद्यार्थी थे। खेल प्रतियोगिताओं के साथ शिवाजी-जयंती, बाजीराव-महाराव उत्सव आगोजित करते। लोन-पाटी में तो बाहर जाकर - (बडीदा, पूना) हम लोगों ने चम्पियनशिप जीती। खुद के खर्च से साथ में दाल, चावल, आटा लेकर जाते। गणपति उत्सव, प्रताप जयंती आदि भी हम लोग मनाते। हम सब मरीब या मध्यमवर्ग के थे, लाठी, तलवार चलाना और कुश्ती सीखते। रियासत होने से कोई रोक नहीं थी।

१९२७ से १९३३ तक मैं बाहर रहा पढ़ने के लिये। वहाँ भी हम मिल-जुल कर ये गतिविधियाँ चलाते। कॉग्रेस के आंदोलनों में अन्य विद्यार्थियों के साथ भाग लिया। परंतु इससे अधिक सक्रिय होने का शायद साहस नहीं था। मध्यवर्गीय परिवार की आर्थिक विवशताएँ, माँ और परिवार की जिम्मेदारी आड़े आ पड़ीं हैं, मेरा छोटा भाई इसमें कूद पड़ा। वो चार डेकेती कैस में था। इलाहाबाद में पंडित मोतीलाल नेहरू के शव को कब्जा दिया। अलफ्रेड पार्क में बन्दशेखर आजाद के मृत शरीर के पाँव छूने वाले पहले व्यक्ति थे। आनंद-मनन जाते। वहाँ कृष्णा नेहरू से झड़्ड हुई, जवाहरलाल जी से धक्का खाया। हृदयनाथ कुंजरू के 'हिन्दुस्तान-स्काउट्स' के कार्यक्रमों में - कुश्ती, मलखंब आदि के परदर्शन में भाग लेते थे। आज, इन सब बातों का कोई अर्थ नहीं है - केवल स्मृतियाँ हैं। सार्वजनिक कार्यों में भाग लेना - यह हमने बचपन से सीखा था। १९३३ में कॉग्रेस की गतिविधियाँ प्रतिबंधित थीं। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ में भाग लिया। कार्यवाह रहा। हेडक्वार्टर से मिला। वैचारिक मतभेदों के कारण - हम इस संस्था से अलग हो गये।

मैं विचार स्वातंत्र्य का पक्षधर हूँ। मैंने देखा हर पक्ष अपनी ही धारणा

पर अटल है - परंतु यह मेरा स्थायी गुण नहीं था। मैं किसी भी पक्ष में नहीं मिला। सबसे मित्रता थी और सबसे झगड़ता रहा। वैसे बचपन से ही मैं उग्रपंड प्रकृति का था। ९ वीं कक्षा तक अध्यापकों की मार खा-खा कर ही यह शरीर मजबूत हुआ है। उत्तर को प्रत्युत्तर देते और मार खाते पर शिक्षकों ने स्नेह भी बहुत दिया।

मेरे तरुण पुत्र के हृदयाघात से हुए असामयिक निधन ने मुझे बहुत तोड़ दिया। वैसे भी अब आयु के साथ वो पहले जैसी उग्रता नहीं रही। अपने गुरुजनों से मैं लड़ा - पर उनका विश्वस्त भी था। कॉलेज के लिये काम करता। डॉ. देशपांडे मुझे से कस कर काम लेते। ना-खुश भी रहते। पर अपने टिफिन में से साथ खाना खिलाना कभी नहीं भूलते। उनके लिये घर से आया हुआ दूध मैं ही पीता। डॉ. बसु से मेरी बनी नहीं - पर कॉलेज के अनेक कार्यों में वे मुझे अपने साथ अधिकार से लेते। बाद में, जब मैं होलकर कॉलेज का प्रिन्सिपल बना, तब मैंने डॉ. बसु को इन्दौर आमंत्रित किया था। कॉलेज के निरंतर बढ़ते हुए स्वरूप को देखकर वे बहुत प्रसन्न हुए थे। प्रो. पद्मनाभन का भी मैं विद्यार्थी रहा हूँ। अध्यापक होने के नाते वे मेरे वदनीय हैं, इसीलिये मैंने २६ जनवरी, १९९१ को 'स्मरण होलकर कॉलेज कार्यक्रम में उनके चरण स्पर्श कर न केवल अपनी आज तक की भूलों के लिये अपितु शेष जीवन में मुझसे होने वाली गलतियों के लिये भी क्षमा माँगी।

इन तमाम वर्षों में मुझे मेरे मित्रों का भरपूर स्नेह, सहयोगी प्राध्यापकों का पूरा-पूरा सहयोग और छात्रों से आदर ही आदर मिला। मैं अपने आपको बहुत मायाशाली मानता हूँ, इन सबके प्रति मैं, आत्मीय भाव से अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ, आयु के ९० वंशक में जब मैं पीछे देखता हूँ - तो अनेकों विविध चित्र, खट्टी-मीठी यादें ही पता हूँ। इस कॉलेज के प्रति मैं अत्यंत सवेदन-शील हूँ। ये मेरी कर्म-भूमि है। वहाँ मैंने अपनी तरलणाई के सपने देखे और यहीं मेरे अनुभवों में परिपक्वता पाई। यह कॉलेज यशस्वी हो यही कामना है। हमारा क्या? अब क्या सुख-दुःख, समेकृता! हम इस जगत में नहीं हैं। सब मिल चुका। राह देख रहे हैं। □□

## आसान नहीं है!

- विश्वप्रकाश विजयवर्धिया  
एम एससी उत्तरार्ध

जी सकना आसान नहीं है।  
मरने का अधिकार नहीं है।

कितने सुंदर सपने प्यारे,  
निष्ठुर जग ने तोड़े सारे।  
कहने का अधिकार नहीं है,  
साह सकना आसान नहीं है।

जी सकना आसान नहीं है।  
मरने का अधिकार नहीं है।

चोट हृदय की राहते रहना,

केवल मन से कहते रहना।  
क़दम का अधिकार नहीं है,  
हैस सकना आसान नहीं है।

जी सकना आसान नहीं है।  
मरने का अधिकार नहीं है।

स्नेह प्राण का चुकला जाता  
दीपक मानो झुलता जाता।  
बुझने का अधिकार नहीं है,  
जल सकना आसान नहीं है।

जी सकना आसान नहीं है।  
मरने का अधिकार नहीं है।

मैं दुरस्तर पथ का हूँ राही,  
घासों और घटाएँ छाई।  
रुक जाऊँ, अधिकार नहीं है,  
बढ़ जाऊँ, आसान नहीं है।

जी सकना आसान नहीं है।  
मरने का अधिकार नहीं है।

होलकर कॉलेज टाइम्स १६ सित '१९५७ से

# किती घशिल

प्रो. आर.बी. जोशी

मराठी के स्थानि पण लेखक स्व. प्रो. रामचंद्र मिखाजी जोशी ने 'साठवर्षी' मे - १९२३ से १९२४ तक इस कालखंड के अपने विद्यार्थी जीवन के बारे में लिखा है उनकी इसी पुस्तक का कालखंड से सम्बंधित अध्याय - 'किती घशिल - ७' प्रकाशित किया जा रहा है.

मे ठेक ठेक हीरी की च्या अफिरात नोकी केरी पण कोलेजात जायची इच्छा करतना तेनी की उबलेली नो फिया नाहीरी झाली मली पण मुळ्या अडका पेशची होरी मने मुनीच्या सरकारी हयानुत्तात शिकत होरी विश्व भिन्न की माफ होती शिवाय स्कॉलरशिप होरी माझ्या पगारपत्तु राहोवत मने मे कोलेजे होले पण माझा कोलेज शिक्षणाला मेरे कुठून आणायट? दपली थोडे मेरे ठेकते होते पण ते इतरांबद्दल को-अपरेटिव सोसायट्यात मनेच्या ठेकी मरत ठेकत होते ते मिळण्यासारखे नव्हते शिवाय ते मेरे ठेकती मनीच्या कपड्यात म्हणून ठेकते होते त्यामुळे ते मिळण्यासारखे असत तरी मला त्यांना हात लावत आला नसत म्हणून मला स्वतःचा पेशाची सोय करायला हवी होती माझ्या दोन वर्षांच्या पगारपत्तु मी काही मेरे शिक्षक ठाकले होते पण तेव्हाच्या बागाण्यासारखे नव्हते रवीन्द्राच्या टांगीतच्या आठवणीचे 'जीनसमूही' ह्या नावाने बाबत करणारे बी.स. गोखले हायस्कूललात माझे शिक्षक होते त्यांचे माझ्याकडे तबब असे माझी इच्छा आणि अडचण त्यांना ठाऊक होती ते काही तेजकडक माझ्याबद्दल बोलले असवेत एक दिवस मीमसासमूह पुढा सधे छान्नी मला त्यांच्या घरी बोलावून घेतले ते त्या वेळी अमरावतीत गिकली करीत होते पण लेखकरी होते आणि लेखक म्हणून मला त्यांच्याबद्दल आकर्षण होते आणि आदरही होता मी मधून-मधून त्यांच्याकडे जात असे तसेच कोलेजात जायला मदतीची आवश्यकता आहे हे कळण्यावर काही वेळेकरी मला मदत करायचे कळून केले अशा रीतीने अकरे थोडीबहुत पेशाची सोय करून मी इंदूरला गेलो आणि होळकर कोलेजात दाखल झालो मी कोलेजात आलो ह्या गोष्टीचा मला आनंद झाला होता कारण अशक्य वाटत होते ते शक्य झाले होते अन्यास करायचा आणि कोलेजात जास्तीत जास्त फायदा कळून घ्यायचा. हा एवढा विचार माझ्या मनात होता कोलेजात एखादी स्कॉलरशिप मिळेल असे आधी वाटत होते पण मंतर कळले की, मला म्हणून स्कॉलरशिप मिळत नाही पण टर्मिनल आणि वार्षिक परीक्षा

पहिला नंबर आला तर इंदूरच्या वार्षिक दरमहा पाच रुपये आणि बी.ए.चा वार्षिक दरमहा सात रुपये स्कॉलरशिप मिळते. अर्थात प्रत्येक टर्मच्या परीक्षा पहिला आलो तरच ती चारही वर्षे मिळायची

त्या वेळी इंदूरची फी दरमहा तीन रुपये होती आणि बी.ए.ची पाच रूप. म्हणजे प्रत्येक परीक्षेनंतर स्कॉलरशिप मिळाली, तरी फी दित्यानंतर हप्त्या दोनच रुपये राहणार म्हणजे स्कॉलरशिप मिळणे हाचा अर्थ फी सुटणे एवढा होता पण त्यात मान होता आणि मला ते दोन रुपये देखील मलाच हे तसा इंदूरला कॉलेजाचा खर्चही त्या वेळी कमीच होता हॉस्टेलला माझे नव्हते तीन वसभे होते हॉस्टेलमध्ये राहून क्लबात जेवायचे, तर जेवणाचा खर्च महिना बारा ते कंवार रुपये येत असे काही विद्यार्थी कोलेजापासून ह्या अंतरावर कॉलेजिस घेतलेल्या होत्या त्यात राहत आणि हातांनी म्हायण करीत त्यांना जेवणखर्च महिना सात-आठ रुपयेच येत असे हातांनी म्हायण करणाऱ्या वेळ घालायचा नाही, असे मी ठरवले आणि हॉस्टेलमध्येच राहिल हॉस्टेलच्या ईस्ट ब्लॉकमध्ये मला खोली मिळाली आणि मी शेवटपर्यंत त्या खोलीत राहिलो

मी कोलेजात गेल्यावर आरंभी आरंभी मला विद्यार्थी विचारीत, 'जोशी, तुम्ही उपरावतीतून आलात, मीरोपंत जोशी, नाम्नाई जोशी ह्याच तुमच का असंलच'

'मीरोपंत जोशी माझे कोणी नाहीत, नाम्नाई जोश्यांना मी फोटोच पाहिल आहे सुंदर आहेत पण त्यांचं गोत्रसुद्धा मला ठाऊक नाही आणि त्या माझं नातं होतं इथं इंदूरला काशाला आलो असतो? पुण्याला ठेक कोलेजातच गेलो असतो''

असे जो विचारीत त्याला सांगायचा मला कंटाळा येऊ लागला पुढे असेल ११ वर झाले

मी इंदूरला ऐनिशेग विषय राखून 'बॉलिक आणि इतिहास अग घेतले होते संस्कृत मला कधी कठीण वाटले नाही उलट सोपे वाटले संस्कृतच्या बाबतीत कॉलेजात मला विवेदी नावाचा एक विद्यार्थी प्रतिस्पर्धी होता तो कॉलेजात घेण्यासाठी 'कायथोथी' झालेला होता 'पण इतिहास विषयात आणि इंग्रजी लिहिण्यात तो कमी पडे इंदूरच्या पहिल्या टर्मिनल परीक्षेत मी पहिला आलो आणि मला स्कॉलरशिप मिळू लागली. त्यामुळे मला तर आनंद झालाच, पण ज्यानी मला पेशाची क्िया इतर रीतीने मदत केली होती त्यांनाही त्यामुळे आनंद होणार होता. मला ह्या परीक्षेत चांगले यश मिळाल्यामुळे माझा आत्मविश्वासही वाढला कारण मॅट्रिकनंतर मध्ये दोन वर्षांचा खंड पडला होता पुढे इंदूरच्या युनिव्हर्सिटीच्या परीक्षेत आर्ट्सच्या बाजूला मी पहिला आलो नंतर ज्युनियर बी.ए.च्या वर्गातही टर्मिनल आणि वार्षिक परीक्षात मी पहिला येऊन मला स्कॉलरशिप मिळत राहिले

इंदूरच्या पहिल्या वर्षात असतानाच मी कलकत्ता संस्कृत असासिपेशनच्या 'प्रथम' आणि 'मध्यम' ह्या परीक्षा दिल्या आणि ज्युनियर बी.ए.च्या वर्षात असताना 'कायथोथी' झालो आमचे संस्कृतचे प्रोफसर बा.गो. ऊन्नावेचे साच्या उत्तेजनामुळे आणि प्रेरणेमुळेच हे झाले ह्या परीक्षांच्या अभ्यासामुळे संस्कृतचा पाया अधिक पक्का आणि व्यापक झाला त्या निमित्ताने संस्कृतचे वाचनही अधिक झाले

बी.ए.ला मी संस्कृत आणि फिलॉसफी असे ऐच्छिक विषय घेतले इतिहासाची मला आवड होती, पण त्यातल्या तारखाना, तपशिलाना मी कंटाळतो होतो म्हणून बी.ए.ला इतिहास घेतला नाही

१९२३ से १९२४ आणि चार वर्षे मी होळकर कोलेजात होतो त्या वेळी कॉलेजात विद्यार्थ्यांची संख्या अगदी कमी होती मला वाटते, संबंध कोलेजात आर्ट्स आणि सायन्स मिळून अडीचशे किंवा फार तर तीनशे विद्यार्थी असतील त्यातले जवळजवळ सत्तर विद्यार्थी कॉलेजच्या आवारातल्या वसतिगृहात आणि पचवीस तीस कॉलेजिसमध्ये राहत असत म्हणजे अडीचशे-तीनशेची शंभरएक विद्यार्थी हॉस्टेललाच होते असे म्हणता येईल त्यातले काही खेदेरस म्हणजे मुरलेले विद्यार्थी होते 'ऐक्या परीक्षेला चार-चार, पाच-पाच वेळा बसलेले हे एक प्रकार कोलेजचे आणि हॉस्टेलचे 'दावा' व होते मात्र वाईट अर्थाने नव्ह. कारण ते कोणालाही दमदाटी करीत नसत किंवा त्रास देत नसत. तर एक प्रकारे ते नवीन विद्यार्थ्यांचे मार्गदर्शक आणि कोलेजच्या परंपरांचे संरक्षक होते अर्थात त्यांच्या मुख्यपेणाणी त्यांच्या पाठीमागं चेष्टा होत असे, पण तोंडावर कोणी त्यांचा अपमान करीत नसे

विद्यार्थ्यांची संख्या अगदी लहान असल्यामुळे, आणि त्यातलेही बरेच हॉस्टेलमध्ये राहत असल्यामुळे, जवळजवळ सगळेच विद्यार्थी एकेकना ओळखीत आणि प्रोफेसरही बहुतेक विद्यार्थ्यांना ओळखीत आपापल्या आवडीप्रमाणे कोणालाही कोणत्याही अभ्यासेतर उपक्रमात भाग घ्यायला मुभा असे आणि संधीही मिळत असे कोलेजच्या मागच्या बाजूला हॉस्टेलच्या दोन ब्लॉकच्या मध्ये जिमनेशियम शेड होती तिथे पेरलत आणि हॉर्सशूटल बार, रोमन रिंग, चडण्यासाठी दोर, उडी मारण्यासाठी घोडा असे सर्व व्यायामाचे साहित्य होते आमचे जिमनेस्टिक इन्स्ट्रक्टर अकेलेच हे इंदूरचे व्हॅटेरन होते त्यांच्या मार्गदर्शनेने रोज सकाळी तिथे व्यायाम होत असत त्याबरोबर टॅनिस, हॉकी, फुटबॉल आणि क्रिकेट हे खेळही मी मधून मधून खेळत असे. पण ह्या खेळात प्रावीण्य मिळवण्यासाठी जितका वेळ द्यावा

तामी तितका देणे मला परवडण्यासारखे नव्हते आणि मात्र नवीन शैव इच्छाही नव्हती

आमच्या ईस्ट ब्लॉकला लागून एक आखाडा होता तिथे कुस्तीसाठी मात्र, सत्र मलाही होता आणि व्यायामासाठी मला 'मुद्राभ्यास' महाभारतकथा जोड्या वगैरे साहित्य होते तिथे मात्र मी नेमाने जॉर, बेदका, आणि मुद्रालंजीडी किंवा मला व्यायाम करीत असे हे व्यायाम मुद्रांशी म्युझिक आणि आपल्या इच्छेनुसार आणि वेळेनुसार करता येत असे

वर्नार मल्लिकार्जुन फिजिकल कल्चर', नसेच 'हेथ्य ग्रँड स्पोर्ट्स' हेथ्य अँड एफिशन्सी' ही आमची आवडती नियतकालिक होती त्यांतले अर्ले ई लीडरमन, लायनेल स्ट्रीमफर्ट हे आमचे हीरो होते आपल्याकडल्या वॉटिल पहिलवानांपेक्षा ग्रीक पुतळ्यांसारखे पिळदार आणि प्रमाणबद्ध शरीराचे हे परदेशी व्यायामवीर आमहला अधिक आवडत. आम्ही त्यांची चित्रे कापून भितीवर लावीत असू, पण पुढे-पुढे असे वादू लागले की, त्या व्यायामवीरांनी जन्मभरात शरीरे क्मावणाखेरीज काहीच केले नाही आणि शरीर क्मावणे हा आपला धंदवा केला होता आमहला शरीरबाह्यर व्हायचे नव्हते

तेवढ्यात केव्हातरी शॉची एक मुलाखत प्रसिद्ध झाली 'शरीर क्मावण्याबद्दल तुमचे काय मत आहे?' 'असे त्याला कोणीतरी विचारले तेव्हा त्याने म्हटले, 'माझी छाती हा हत्तीचा नृत्यमंच आहे अस मी मानीत नाही जगप्रसिद्ध व्यायामवीर सॅडी बायनरच्या वीही हुदयक्रिया देव पडून मरण पावला आणि सत्तराच्या वर्षी माझ्या अगात पचवीस वर्षांच्या तरुणाचा चपळपण आणि उत्साह आहे.' आणि ते खरेच होते व्यायामाला महत्त्व नव्हते असे नव्हे स्वतः शॉखील लोकरे फोडणे, पोहणे, असा व्यायाम त्या वयात करीत असे मात्र त्याच्या बोलण्यातून तारामय कळले

कोलेजात असताना मी स्काउट टुपमध्येही होतो स्काउटिंग ही त्या काळी एक अत्यंत बंदनाम झालेली चळवळ होती लोकरे स्काउटचा जवळजवळ लिस्कार करीत ती मुलींनी चळवळ आहे असाही म्हणत पण कणजपणा, चपळपणा स्वावलंबन टापीटप, इतगबगेबर मित्राभिराहून काम करण असचण्याच्या प्रसंगेत सावध आणि शीत राहून मार्ग काढणे, आरोग्य, स्वच्छता, त्याबरोबरच ज्ञाना कृतज्ञता, झाडपुडणत खावावर कानून हिडण्याची काम करण्याची तयारी ह्या गोष्टी त्या चळवळीत भाग घेतल्याने अनी वाणतात, असा मला अनुभव आला, डॉनर-दया, नचा-नाते, झाडे-जंगले ह्यातून राहल करणे, पणी किंवा सायकलने लव्हान - मोठे प्रवास करणे, रानात रात्रीचे मुक्काम करणे ह्याची आवड स्काउटिंगमुळेच मला लागली

असाच एकदा पाताळपण्याला आमचा वेंस होता त्या कंपमध्ये आणि तिथून केलेल्या ब्रह्मकुंड, मंदीकुंड वगैरे सहलीत दामोदर धर्मनंद ऊर्फ बाबा कोसंबी हे आमच्याबरोबर होते ते अमेरिकेत शिकायला असत त्याची मांडी बहीण माणकताई अहल्याभ्रमात शिबिका होती. सुटीचे काही दिवस त्यांच्याकडे राहण्यासाठी ते इंदूरला आलेले होते त्यांचे वय त्या वेळी सोळासतरा वर्षांचे असले पण ते आगने पंजवत आणि पिळदार शरीराचे होते सगळे राहणे त्या म्हाकुरपणाने म्या मारीत होते म्हाव्याच्या त्यामुळे चांगला भरदार आकार घेण्यासाठी कोणता व्यायाम करावा ते त्यानी आमहला सांगितले त्यांचा देह जसा पिळदार होता तसे ते 'बुद्धिमात वरिष्ठ' देखील होते हे त्याच्या पुढल्या आयुष्यात दिसून आलेच



मी गेलो तेव्हा कोंतेजाग एकही मुली नव्हती. खिन्न कोंतेजाग अधिक जळजळ होते तिथे मुली जात नाही म्हणायला मध्येच एक मुली आली. ती मराठी भाषाविराट किचकी मुली आणि तसेच एक च्येठ वकील घराबरावा भाडारकर हाची मुली पीरियड नसला हा दोनच दोन मुली कोंतेजाग्या अगिस्तच्या गावाच्या बाजूच्या दरवाजा कावाकर उदासवाण्या (असे अम्हाला वाटे) बसून राहत असतील याची कधी प्रसंगच दोन नसे. एखाद्याकालीना बाकासून व

बाकावर आणि जमीनतला बाकावरून व्हाईटतल्या बाकावर अशी त्याची  
बाकापारून बाकापर्यंत ठरलेली घाल अरो

एका मंगळीनसारी लेख माणवत्वाच्या लक्षात घ्यायला येईल. अशा  
 आणि मला वाटते, किष्कांच्या मुलीने हो-ना करून लेख दिला तिची जणू  
 री कमलाबाई विवेक हा त्या काजी एक प्रयत्नात लेखिका आणि तज्ज्ञ  
 होण्या मुली म्हणून लावण्याची बोलतांना मला धरपडवल्यासारखे  
 बुजल्यासारखे मुलीच वाटते नाही! (वाङ्मयाबद्दल रोमान्स ओगू शक्ती हाणी  
 त्या वेळी कवना नसल्यामुळे असेल) इतक्या मर्यादांच्या आणि  
 सामाजिककट्ट्यांच्या बऱ्याच उचीवरच्या मुलीही बोलतायचे म्हणून मात्र थोड्या  
 संकेचे वाटला.

मैथिलीच्या कामांपणेच मी डिव्हेट्यामध्येही भाग घेत असं हेवराबादला फिरत  
जमावणीतील शाळेत असताना फारतर दोनचारदा रमागत बोललो असून तेव्हा  
डिव्हेटीची हाकती नियमित डिबेट होत नसं होल्करचे कॉलेजात मात्र विद्यार्थ्या  
वेळी हाकत्या विद्यार्थ्यांसाठी आणि शनिवारी रात्री हॉन्समेंटपासून  
विद्यार्थ्यांसाठी नियमितपणे डिबेट होता हा डिबेटिंग प्रोफेसर आणि डिप्टी  
बहुधा हुजर राहत सारींच्या डिबेटला तसे पत्सियल आणि व्हॉडास धिनीया  
हटवून हुजर राहत काँग्रेस कॉलेजाच्या शेजारीच दोन बाजूला एका अवाज  
एकचा आणि दुसऱ्यात दुसऱ्याचा असे बालते होते डिबेटसाठी वेळे असं  
श्रीते यांना करून आणायें लागत नसत आणि मैथिलीभाषापणेच वाढी बालते  
प्रोफेसरला काहीही करावं लगत नसत डिबेटिंग सोसायटीच दिवशी विद्यार्थ्यांना  
विषय देवी आणि वर्कशापी येथे मागे द्यावी

माझा आवाज वक्तृत्वाला अनुकूल विचार आणि माझ्या अ  
समाप्तीपर्यंतही नवला (पुढल्या आयुष्यात काही लोकांची मना  
एकचमकून, बऱ्याच वक्त्यांजवळ एवढ्याच जेना गोष्टी असतात आणि त्या  
त्यांना पुरेसे वाटते असे मला दिसत आले ते वेगळे!) आपल्या त्या अ  
जाणते लोक श्रवणात आहेत-असतील-ह विचार माझा मनात राहणो ज  
करीत असत पण शांतत असल्यापामुनच अभ्यासखेरीज इतत विषयमा  
मला अस्थ्या बांदू लागली होती आणि आपण त्यासंबंधी जागवे कि  
व्याचा, बोलावे, लिहावे, असं बांदू लागले होते म्हणून जी कॉलेज  
लेखक्यांनी भाग घेतू लागली

आमच्या कॉलेजचे काही विद्यार्थी चांगले वक्ते होते. मी पहिल्या क्रमांकावर होते. मेळा जून आणि सप्टेंबर या वर्षात पार होई. पागे नावाचे अकेलवादी विद्यार्थी होते. अतिशय पदार्थवादी विचार असल्यास अभ्यास करणारे गंभीर स्वभाववाचे आणि पदार्थवादी विद्यार्थी असलेल्या कॉलेजला लढाई होती. ते पुढे वडा-ड. जे. ए. ई. सी. नेमले गेले ते एक चांगले वक्ते होते. पूर्ववादी उत्तरीय भाषणे ते वाचता कीर्तत. मला उत्तरीय भाषणे करणे किंवा उत्तरीय भाषणे करणे आवडत असे. हळूहळू मला बोलण्याचा-आणि वादाल बोलण्याचा-मनसावा झाला. आणि प्रत्येक डिव्हटमध्ये पागे आणि मी अरूच आणि एकमेकांच्या विरुद्ध भाषणा एवढ्या इट्ट्याच्या सिध्दी कॉलेज होती. त्यावेळी काही वेळा आमच्या कॉलेजच्या दिमागला ही होती.

प्रत्येक परीक्षे में स्कॉलरशिप मित्र विभागा, खेल, स्काउटिंग, डिबेट व अन्य विषयों में प्रतियोगिताएं आयोजित करती हैं।  
आस्थेन और चयापन प्रकार के मांस के पौष्टिक विद्यार्थी अध्ययन प्रोफेसरों द्वारा, माइक्रोबियल कृत्रिम निर्माण होते हैं। थोड़े से पौष्टिक लाभ देने वाले खाद्य में मनुष्य के लिए बड़े वास्तव में पण विशेष रूप से

आचारविधान मंडळाच्या कारभारावर माझ्या वागण्यावर लक्षही ठेवण्यात येत  
नाले. एकदा कॉलेजच्या हॉलमध्ये डिबेट चालू असताना मी आपल्या  
खोलीतच बसून लेतो. नेवड्यात सॅटनेटचे डीन पो रमीर अन्नी विद्या हेड  
आचार्या स्त्रीगंगाशी आले आणि मी खोलीतच असलेला पाहून दाराशी बसून  
राहून म्हाणाले.

“जोशी, तू गैला नाहीस डिबेटला?”  
मी म्हटले, “नाही, सर.”

“तुझ्यासारखे विद्यार्थी जर असं वागू लागले तर इतरांना आम्ही काय सांगाव?”

हे त्याचे वाक्य माझ्या मनात फारखोल गेले

“आय अँम सॉरी, सर” असो म्हणून लगेच कपडे बदलून मी हॉलमध्ये गेलो आणि डिबेटमध्ये भागही घेतला.

उमरावरीला हव्हाय सुकुलता इंग्रजी सहायीत असताना सहागाही प्रसीकते मला मिळतात फार कमी मार्क मिळाले आणि मी नाजारा झाला पावडीच्या तार्षिक प्रसीकते मी चवथा आलो होतो गोखले सर हे आमचे प्रमुख टीचर होते आणि आमच्या मागितली शिकवीत माझा रिझल्ट पाहून त्यांनी मला शेतातून घेवढे, घराच्या प्रसिध्दितेलाचणी एकदोन प्रश्न विचारले, आणि ऐकून शेतातून एवढेच म्हटले, 'हे घर का?'

तीनच शब्द, पण त्याचा माझ्या मनावर फारच परिणाम झाला. पुढे वार्षिक परीक्षेत मी पहिला आलो त्यांचे ते तीन शब्द माझ्या मनात कायमचे ठसले तसेच प्रो. सगीर अलीचेही दोघांच्याही शब्दांनी मला माझ्या जबाबदारीची एक वेगळीच जाणीव करून दिली

कोलेरातय्यप्राणप्रणाल्य कोलेरावाहेरी काही गंधी भी करीते होते आम्ही काही मित्रांनी मिळून 'शारदोपासक मंडळ' नावाचा एक मंडळ काढले होते त्यात निचयचवान अचिर घ्यात होते असे भी निवासघा वृत्तान्त असताना विद्युत्सव घाटे झडूला आलेले होते ते होक्कर कॉलेजचे मास्त्री पिछार्थी होते त्यांना काही 'शारदोपासक मंडळ' त बॅलावाले त्यांनी त्या-दोन तसे मोठकड्या मनाचे अचिर मोठकड्या मंडळात 'रेडिफिकर मंडळ' त्या कविता म्हळ्यो त्यांच्या स्वतःच्या 'आलांत ते फांशाल', 'उपड जड, माझ्या फुला 'दवा हिन्दी जन्म मजला', ' अळवैनी पावसरी' अचिर माधव 'नृदियमय्या 'तेथे चल गरी', 'कचनी', 'मिरीश्या शास्त्रस्थान' ह्या कवितांनी मनाची निवास आगच्या मनाचा अगदी कळका घेतला होता।

केदारधर स्वरू द्वा नावाचे आमचे एक सहपाठीही होते खरे तर वय आणि पोतपणा द्वा इष्टींनी ते 'गृहस्थ' च होते त्यांनी एकत्र असून विचार मांडून की, 'सुसूद्ध' कर नाशायण काव्यवस्वर वरिरे स्फुटतः ब्रह्मसूत्रांचे इंग्रजी कविता शिकवती असत तेथे आपण का कृत नये! आपण काही नेहने नाही, पण काम घालत आहो ' ' मय काही दिवस कृष्णपूर घुलाजवळ ए. व्ही. स्कूलच्या जमोती आदी लोकांनी हायस्कूलच्या विद्यार्थ्यांना इंग्रजी कविता शिकवल्या जाताना मीही एक वाचक शिकवताना

तशात चवथ्या वर्षात आम्हाला संस्कृत शिकवायला घतुवेदी नावाचे एक

‘काव्यतीर्थ’ इत्यात्मामुळे ते अधिक बांगले झाले होते. पण प्रो. चवुबेई नेहमी मला माझा जुना प्रतिस्पर्धी जो त्रिवेदी त्याच्यापेक्षा कमी मार्क देत अशा अनेक कारणांनी माझे मन व्यग्र झाले होते त्यामुळे सीनियर बी.ए. च्या

टर्मिनल परीक्षेत माजा पहिला नंबर हुकला. स्कॉलरशिप गेली ती वर्षीत घडले नव्हते ते आता घडले. साहजिकच मला फार वाईट वाटले पण माझा राही दोष होता असे स्पष्ट नाही.

होकर कौलेयच्या रत्नांकुषा विद्याथ्यांना शब्दतन्मा ध्वनने शोभितकरच्या वृषी माणसा शिवाजीवर फक्त मिळत असे ते मिळणे हा कौलेय-जीवनातला सर्वात मोठा मान असे चारही वर्षे सतत अभ्यासात अभागी अपाग्या, खेळ, खिंबट यांनी अभ्यासकर यामुळे अभ्यास सवणीन रस घेणाऱ्या, वाणुकीने चालत्या असलेल्या आणि सर्वांही मिळत नसलेल्या वाणारा वाढत्या वयाच्या प्राणि प्रोफेसरने असे दोघांची ज्याच्याकड चालीने मत आहे असा विद्याथ्याला ते पडत असे

षडव्या वर्षात मी आलो तेव्हापासूनच 'शिवाजीराव मेडल' मला मिळणार असे विद्यार्थी बोलू लागले. त्याला अर्थात अर्थ नव्हता कारण निर्णय प्रोफेसरजी समिती घेत असे दुसरे सुरु झाली होती उत्सुकता आणि बोलणी यादू लागली एक दिवस ऑफिसच्या हॅन्डकार्डने मला गुपगुप सांगितले, "जोशी, मेडल तुम्हांला मिळालं आहे" साहजिकच मी उत्तेजित झालो मला खूप आनंद वाटला पण गुपगुप होती कोणाजवळ बोलतो नाही पहिल्या वाणीपार मध्येवाचून आस्था वाळणार असे गमकतच प्रोफेसर या. ऊंचेधरचेर यानी नसत काही दिवसांनी मला मेडल मिळाल्याचे अधिकृतपणे सांगितले रासकृतेच नाही, पण इंग्लिश आणि फिजिऑलॉजी या 'मन निषटत' पहिला आल्यामुळे या विषयाची थडिसे मला मिळाली आणि 'फक्त'च्याच निष्पत्त्याबद्दल पुढेच मिळाले कॉलेजात आल्यानंतर सर्वोच्च नसत मुख्य म्हणजे ज्यांनी मला मदत केली होती, प्रोत्साहन दिले होते, त्याच्या मी उपेक्षामा केला नाही. दर्शनमत्तच पहिला न आल्याचे गलबोट लागले नसते तर वेर झाले असते, असे मात्र साहजिकच वाटते

परीक्षा झाली मी उमरावतीला परत येऊन माझ्या नोकरीवर रुजू झालो आणि परीक्षेच्या निकालाची वाट पाहत काम करू लागलो.

अखेर एक दिवस 'लीडर' कडे निकालराही तारेचे पैसे भरले होते त्याप्रमाणे तार आली. मी पहिल्या वर्गात पास झालो होते, आणि आमच्या कॉलेजात पहिला आलो होते। इंग्रजी, इतिहास, साहाय्यक भाषे। 'हार्दक' आणि 'मनपूर्वक' अभिनंदन करू लागले तारानी. पत्नी प्रत्यक्ष भेटून पण हा आनंदाच्या भरत माझ्या मनात एक दुःख बोधत होते ते म्हणजे हा आनंद पाहिल्या माझे घरचे, जालंवे कोणीही नव्हते दादा वहा वहीचोई मेलं होतं. त्याच्यामागून ज्या आमच्या वर्गानी आम्हा (संभाळ केला होता मी) कॉलेजात जायच्या आधीच एक वरं गेलं होते. (त्यांचा जरी माझ्यावर राग झाला असला तरी माझे यश पाहून त्यांना आनंदच झाला असता.) माझी फुलली एक बहीणही त्या वेळी उमरावतीत नव्हती आणि हे मनातलं दुःख मला कोणजयळ उघड करता येत नव्हतं, त्याचं सगळ्यात अधिक दुःख होते होते

पण एकदशी होळकर कोलंजातलं चार वर्षीचं जीवन प्रवाणत एक स्फटिका सारख्या स्वच्छ पाण्याचा उबळता-उफाळता झरा होता. त्याचे पाणी स्पर्शाला शीतल आणि अंतःकरणाची तुषा तुर करणारे होते. त्यातून उडणाऱ्या तुमारात कणोहणी उमटणारी आणि मिटणारी लहानमोठी समग्री इन्द्रधनुषां डाळनांना आणि मनालाही उत्कृष्टित करणारी होती. त्याच्या म्हाणेत दुबण, खेळणे, जीवनेसाह प्रयविणारे होते. “फिली घेसिल दो करंनी” असे विचारणारे होते. त्या चार वर्षीही आठवण आज इतक्या वर्षीनीसुद्धा मला उत्तेजित करते.

## प्रेमाचा शाप

बासुदेव गोपाल सुभेदार

तें हृष्य हृदयी नम विल्लो  
दुःखाचें परि मोहिल्लो।  
आनंदें अशु गळालो  
अतिदु खें तेंच निघालो॥१॥

अहिनी पौर्णिमा रम्या  
जनतेचें चित्त हलव्या।  
रमणीय हृष्य तें दावी।  
जनतेची हृदये विखरी॥२॥

नवयुवक सुधाकर खेळे  
प्रभाचे गमनी चाळे।  
ही धरणी बाला नटली।  
निजप्रेमा राविण्या सजली॥३॥

बस शुभ शोभा देई  
निरर्प रूप तें खुलवी।  
मा घेई कवी ती माला।  
निजनाथा अर्पवता॥४॥

युवक तें पाहणी हंसे।  
रमणीय अधिक तें मारो।  
पाहणी सुस्थिति हसलो।  
विनयाने लज्जित झालो॥५॥

प्रेमानें बद्ध करण्या।  
प्राची गमत वघण्या।  
तो दूर तिर्यच्या जाई।  
परि त्याला यश ना येई॥६॥

माग लगे दगाच्या मागे  
हुडकाची सखि तें लागो।  
नेमश्या छाया परतः।  
सखि आके वदना पदरी॥७॥

पाहणी खिन्न बहु तिजला।  
बाहेर शशी तो आला।  
सुदरी फुला मग हसली।  
विनयाने लज्जित झाली॥८॥

बहकल कीडा चालो  
आनंदें अशु गळालो।  
प्रणयिनी काय मग पाहो।  
जे हृष्य स्वप्नि ना साहो।  
निजप्रियाजवळि नवतरुणी।  
तिजकडे पाहते हसुनी॥९॥

रोहणी शुभयणा ती।  
सुदरी योग्य शशिला ती।  
ती तथा टाकि मोहनी  
तो जात तिच्या भागेनी॥१०॥

चचला वृत्ति पाहोनी।  
प्रणयिनी मान विरारोनी।  
मानसी कोप अति भरला।  
तें शाप तयांना दिवला॥११॥

निर्व्याज शुद्ध प्रेमाला।  
पुनरिदिते घातला घाला।  
तें प्रेम पुन्हाचें शायो  
"पाशाल नाश रशि ताय"॥१२॥

शशि रमणीसह त्या मैला।  
पुनरुची कदा नच दिसला।  
बासलें होक बहु केला।  
तो हलवी या धिचाला॥१३॥  
दवस्से अशु गळालो  
अतिदु खें तेंच निघालो।

- होलकर कॉलेज पत्रिका : जनवरी - १९२५ ते

When I joined the Holkar College in 1922 as the Professor of Physics, the institution was a small one having about 200 students. The college offered courses only in a few subjects in the faculties of Arts and Science, upto the degree level. The science classes had only a few students. There were about 40 students in Interscience classes and about 12 students doing B.Sc. I was the only teacher in Physics and took all the theory classes and the B.Sc. practicals. Mr. Shintre was a demonstrator who assisted me and used to take the Interscience practical classes. The college was then affiliated to the Allahabad University as the Agra University did not come into existence till 1928. As the numbers were small the teachers got into close personal touch with students and lasting relationships often developed. The college was maintained by the Holkar State of which Maharaja Tukoji Rao was then the ruler. Life in the college was generally uneventful except for the annual functions. The Principal of the College was Dr. Sukhtankar.

One day there was a prize-distribution ceremony in the college and Maharaja Tukoji Rao was invited to give away the prizes. After the function was over the Maharaja called some

Agra University of which Dr. Basu became the Honorary Vice-Chancellor for at least 2 terms. At that time the college enjoyed a high status in the university. Dr. Basu's principalship was unfortunately terminated abruptly for certain political reasons and a young Englishman named Mr. Richardson was appointed in his place. After two years Mr. Richardson became education minister and he appointed Mr. J.B. Raju as the Principal in 1942.

Mr. Raju was an eloquent speaker and had a great reputation as a debater. He was known for convincingly arguing on both sides of the topic in a debate. He was extremely democratic in his behaviour and would address all members of the staff including the clerks as 'Sir'. He was a devout Christian (Catholic) and on Christmas day he and his family used to invite all their domestic servants including the sweeper for the Christmas party. They were all treated as equals and he would sit with them in the same row in the grass lawn of the Principal's bungalow for the party. He also had deep sympathy for the students. In 1942 during the Quit India Movement the students went on strike for a prolonged period. In order that they may not fall short of 75%

## Some Reminiscences

- Prof. N. Padmanabhan

students aside and inquired if they were happy or had any grievances. The students told him that their request to participate in a Football tournament outside the state had been declined by the minister as there was no budgetary provision. The Maharaja immediately ordered that the team should be sent and sanctioned the necessary funds for it.

Another incident of this kind involved two poor but bright students who were awarded prizes in their school. The Maharaja was to distribute the prizes but was unable to come for the function. These two boys refused to receive the prize from anyone other than the Maharaja. When the Maharaja came to know about this, he called them to the palace and inquired why they had declined the prize. When he was told that they wanted to receive it only from his hands, he was so touched that he ordered the cost of the entire education of the boys to be borne by the state.

Dr. Sukhtankar was succeeded by Mr. F.G. Pearce who stayed as the Principal for only a few years. He was succeeded in turn by Dr. P. Basu who stayed as Principal for nearly 14 years upto 1940. During this period the college expanded very considerably and the number of students, teachers and subjects all increased. The college was then affiliated to the

attendance he would collect all the attendance registers and marked everybody present. When the British minister made inquiries about the situation in the college he reported that everything was normal.

Mr. Raju also left after a short stay of 2 years, handing over charge to Dr. S.S. Deshpande. Dr. Deshpande's main interest in life was his work in the chemistry laboratory. He used to be in the laboratory from early in the morning till late in the evening. He was uncomfortable in the post of Principal as the work was almost entirely administrative. He therefore gave it up after 1 year and became a Professor again in Agra college. Dr. Deshpande succeeded Dr. Deshpande in 1945 and remained as the Principal till his retirement in 1952 to take up the Membership of the Madhya Bharat Public Service Commission.

During my service of over 30 years in the Holkar College I had several interesting experiences a few of which I would like to narrate. When I was the Principal, Mr. P.C. Gangrade Professor of Mathematics, fell seriously ill and was unable to attend to his duties to his full satisfaction. His assistants offered to take up the additional burden of his work so that he may not have to take sick leave on half-pay. The time-table





14th College, being appointed to the  
 position of the Head of the Department to be the  
 teacher of English at the India Medical Research  
 Commission. I had to leave the position  
 at the time of the Partition of India. I was  
 appointed to the position of the Professor  
 of English at the College.

In 1950, I was appointed Secretary,  
 Board of Secondary Education and left  
 the College and Indore for good.

اللہ اکبر کی حمد و ثناء

پیشکش: شکرستین قہار

مترجم: شکرستین قہار

## نقوش

آہ! وہ ماسی کے گشتِ لایم  
 جو تہمت ہے اور تعاقب میں اٹھان کا لنگہ!  
 کیا وہ پابستہ دن بھی روشن کیے گئے؟  
 جب یہ تہمتیں ہیں  
 اور مگر تہمت کو کھل جانے کے  
 جہیز کے اشتباہات  
 اور احوال کے تضاد  
 یہ سناور کیست و شبستیں  
 تعلیم سلامت ہے یا تو کرب کا گما؟  
 کہیں یہ ایک ہی منزل کے دو سفر

ایک ہی راہ اختیار کر گئے؟  
 راہِ خطر ہے اور شریکِ دوہ  
 ہر دور میں کسی سیرِ باہکا اپنے کچھ  
 گوں راہ و رنگانِ صفت شکر  
 کیوں، عباس ہیں!  
 کیوں سر آج ہے وہ یکسوئی کے تیر  
 دل کے قریب اور اس کے قریب!  
 فریب کی صفا ہے۔  
 فریب کی جست کی ازراستہ!  
 جو تہمت ہے اور تعاقب میں اٹھان کا لنگہ!  
 آہ! وہ ماسی کے گشتِ لایم

It was almost exactly two years that I spent at the Holkar College, Indore, way back in early thirties. To be exact, I entered the city on the 22nd January 1932 in the evening and left on a date easier to remember if written in figure, 1-2-34, also in the evening. Actually, I had to leave under police instructions. There was no formal order. This was done in deference to the position and status that my brother-in-law enjoyed at Indore.

I joined my classes two days later. I was a student of Science-Physics, Chemistry and Mathematics. Physics was taught by Prof. N. Padmanabhan, Chemistry by Dr. S.S. Deshpande and Mathematics by Prof. V.G. Gole. There was, however, another professor of Mathematics, Mr. G.E. Cornelius.

My first impression at the college is difficult to describe. The earlier life was of extremist in politics of Bengal in the years between 1929 and 1931. Life of those who belonged to the revolutionary group was always on the palm of their hands, to be just sacrificed at a moment's notice. Some of my very close friends did it. We were inspired.

In far off Indore, an Indian state (called native state those days), though otherwise progressive, it was politically very different. Indore was almost a non-political city by our definition. I was, however, an object of all round curiosity. The brother-in-law of Principal Basu, a pucca Westerner in his habits and manners, I was a typical Bengali Babu though just attired in western clothes stitched over night. The only thing which helped me get along in an otherwise unusual environment was my power to converse in a common language, English. Even in this I suffered from an initial handicap. We had hardly any common topic. I had been brought up differently in a far off East Bengal town of Bansal and as a young revolutionary.

Very soon I developed some thing common with some. It was Tennis. Dr. Basu was very fond of it and very regular to attend the Tennis Court. We tried just to imitate. There were some 'Tennis stars' in the college, notably, the kaul brothers, M.K. and J.K. Though I could never come near them, in the game I learnt a great lesson from a book suggested by Jaggi (as J.K. Kaul was affectionately called). It was a book on Tennis by Tilden, the world champion of his times. Among other things, the aspirants for good Tennis were advised to keep their body-weight under control. He explained the matter almost arithmetically, as to how many extra ounces of energy one has to spend to carry a pound of extra weight in a normal set of the game. I learnt the lesson for life and am mobile even at 77 much to the marvel of many. It is only recently that modern 'experts' like Rekha are advocating the 'body line' theory and youngsters follow them blindly.

I could not achieve much success in Tennis and tried my talents at Cycle polo. It was a plebeian edition of the princely polo and had suddenly become very popular at Indore. It got

## My Student Days at College

-Prof. Satyavrata Ghosh

Born at Bansal (now in Bangladesh) on the 31st of May 1914, Satyavrata Ghosh was ex-termed from Bengal because of his revolutionary activities. He joined Holkar College in 1932 and passed his Intermediate Examination in 1934. After which he was forced to move to Banaras where he did his B.A. and M.A. Here he gives an account of two years of his college life.

me two friends who were not students of the college but used to play the game with us. One was the famous all round cricketer, Mushiaque Ali and the other not so famous, was Bala Saheb Jagdale who later married Vinita of the Kaul family.

As a compensation for my inability to make a mark in outdoor games, I acquired a name in Carrom, a very popular indoor pass-time at Indore. Youngsters, both boys and girls, used to pine to be my partners, for, a first prize was sure. Prior to my appearance in the Carrom scene, one Sule was the reigning hero. A.S. Patwardhan (later Speaker of the Assembly) was a good player and became a good friend.

From game to the class room, I do not have much to record. As I joined my class very late and in an entirely strange environment, I could not much concentrate on what I was actually sent for to do at Indore, to carry on studies in Science. I somehow managed to scrape through and qualify for the next step. I had already discovered the science was not my cup of tea. I would take up Arts.

But there was something quite unexpected in store for me. I had to suddenly leave Indore. The state police gradually found that I was a liability for them. To look after me was a thankless job, a risky one also. If I did something politically wrong in the eyes of British police (under A.G.G.) the State



would be held responsible

As for the political activities of the type I was used to, there was not much scope. In the first place, revolutionary movement had not spread its tentacles to the Indian states. They were backward politically. There was certainly some nationalist movement demanding some concessions to the people. It was like the early days of the Congress in British India, days of prayers and petitions. Praja Mandal was the mouth-piece in place of the Congress. Sarwates, father and sons, were its leaders. The son was a good carrom player and became very close to me. When I returned to Indore, as a professor, he was the Speaker of the Assembly.

Even though I could not be directly associated with any active revolutionary groups, some were keen to cultivate my friendship, may be out of curiosity or to share my experience gathered in a wider field. Later, however, I learnt that some of them were active in the Dhar Dacoity Case. My association and guidance were suspected. One of them became a close friend when I was the prof. of political science, at T.R.S. College, Rewa. He was Mahavir Singh, the Registrar of Co-Operatives. His daughter was my student in the M.A. Class.

My undoing at Indore, however, came in a different way. Though far away from Bengal, some of my political friends were still not behind the bars. They used to send me secret instructions through a code-system. It was in a sort of printed matter, something like a pamphlet or book-let. The message sent in code was inscribed by dots on the printed matter. None other than the sender or its recipient could decipher. They came to the address of a class-fellow of mine, the top student but poor in social and financial status. Normally, he was not likely to receive printed matter and so frequently. The state police kept an eye on him but could make no head or tail of what these really contained. One day they called him to their office. The poor boy, Durga Prasad Sadhu, became so nervous that he innocently told them the whole story. The police put 2 and 2 together and suspected some high level conspiracy behind it. It was like the last straw to break the back of police consideration for my highly placed brother-in-law.

One afternoon, about 3 p.m. I was called to the drawing room. To my shock, I found the D.I.G. Brahma Swarup Bhattacharya, a trembling Durga Prasad and Dr. Basu already seated. The D.I.G. did not mince matters. He asked me what the printed matters, already in his hand, contained. I posed utter ignorance and refuted the story given by Durga Prasad to the police. The poor boy could not utter a syllable. I pleaded that it was a police story made up to implicate me. But it did not cut much ice. I was asked to go out of the room.

Between D.I.G. Brahma Swarup Bhattacharya and Dr. Basu it was decided that I should be made to move out of Indore. A high level communication was sent to my elder brother, Principal Deva Prasad Ghosh, (Later President of Jana

Sangha many times) in Calcutta at whose initiative and instance I had come to Indore.

A chapter of a chequered life, somewhat insipid, suddenly came to an end. As per his telegraphic instructions I left for Benares (spelt as Varanasi now). W.V. Oak, one year my senior and a very brilliant student, accompanied me upto Choral, by the evening train to Khandwa. His 'reward' was rustication from the college for a year. It was the first of February 1934 (1-2-1934). I next met him accidentally at the Aliahabad University, ten years later. He was studying M.Sc. in Physics.

I had nothing outstanding to my credit as a student, but I can cite the names of some of my friends who attained eminence in various fields. In academic life, L.C. Gupta, W.V. Oak, L.O. Joshi were the top ones. They all joined Holkar State Civil Service introduced by Dr. Basu. On India achieving independence they were all absorbed in the I.A.S. cadre. R.N. Nagu was not the academic type but was good at Tennis. He joined his father's profession and became finally the I.G. of M.P. police. In sports Mohammed Hussain was outstanding and he ended his career in the prestigious Daly College. In Tennis J.K. Kaul had attained an all India name. He retired as an I.A.S. officer. The elder brother, M.K., also a Tennis player, a music lover and above all, a debonair, became the Registrar of High Court. The college produced a galaxy of successful officers, much to be proud of.

With a third class ticket in my pocket and with a scanty luggage I reached Khandwa by a metre gauge train. It was past midnight. I shifted to the main platform and waited all alone in the wide open space. The mind naturally went back to days gone by and to days ahead. The past was known. Every detail was clear in the mind. There was no regret of any sort. But the future was uncertain as it always is. But in my case it proved to be more gloomy than I could think of.

I only knew that I had to reach the holy city of Vishwanath where my elder brother would be waiting for me. I knew nothing beyond it. On reaching Benares Cant. Station. I found my never-failing elder brother. On reaching my host's home I was told that there were great problems about my admission to any college in north India. My brother a well-known educationist himself, had made enquiries and had a polite but negative reply from everywhere. This was in view of my political past and the police report about it.

His last hope was at the Hindu University, with a stalwart among Indian nationalists as the founder vice-chancellor. The next morning we both went to Pandit Madan Mohan Malviya who knew my brother well. Both were Hindu Maha Sabha leaders of all India eminence. But that did not solve the problem of my admission.

The logic was simple. If I were admitted, policemen would be keeping a watch on me within the university and the boys

would beat them. On that plea and pretext the government would stop the grant for which it was itching. We could not be so selfish as to look to a personal favour at the cost of the University's future.

We came back with a heavy heart and my brother left for Calcutta, probably with a heavier heart. But I was fortunate enough to get admission a few days later, thanks to the kind effort of Dr. Bhagwandas, a saintly zamindar. With my brother I had gone to pay him a courtesy call only after our failure with Pandit Malviya. Dr. Bhagwandas was almost furious. He took me personally in his victoria (Baggi) and almost 'ordered' Panditji to admit me whatever the consequence. I came back a different young man. I hope I have done justice to Dr. Bhagwandas's kindness. Today, I stand as someone in the country in my own field, a speaker and a writer on our freedom struggle.

## S O N N E T

How fleet o'er fifty years have sped and wrought  
Many a change as I am getting old  
And wrinkles on my wan face do unfold  
Their tale, though I have always fought  
The feeling of age. What a joy it is  
To look back on the years which I have spent  
At Arts' feet worshipping whom my soul was bent!  
I worshipped her for years, though vagaries  
Of cruel life forced parting in later years.  
Haply that was but brief. Law's deadly spell  
Is broken and again now I shall roam  
In lovely bowers and groves without fears  
And feel that through Art I shall reach my home  
And shall in peace and tranquility dwell

- M.D. Kirtane, Retd. Addl. District Judge  
(Former student and teacher in the  
Department of English, Holkar College Indore).

- From Holkar Science College Bulletin, 1968-69.

## FOND MEMORIES

- Bimalendu Dhar

To go back in time sixty years

I joined the Holkar College, Indore, at the beginning of the academic session 1930-31, migrating from the Calcutta University. I passed the B.A. Examination of the Agra University from the Holkar College in 1932. I had the good fortune of standing first in English in the University for which I was awarded the T.C. Jones Gold Medal.

I retain very pleasant memories of the time I spent at the Holkar College, Indore. Nobody could fail to be captivated by the charm of the College after being in it even for a short time. Standing as it did on extensive grounds in wide, open space at some distance from the heart of the city, its stately buildings, open spaces, flowergardens, well-mown lawns, the daily concourse of several hundred students and dedicated teachers and other staff its well-ordered courses of instruction in various disciplines, its sports, debates and other extracurricular activities - all combined to lend the institution a colour and an ambience of its own.

I have a fairly vivid recollection of many of my teachers in the College. Prof. C.A. Dobson, Vice-Principal (I think) of the College, taught us English. He wore thick glasses, spoke in soft voices, and could make the most abstruse and difficult ideas unfold their mysteries and stand out crystal clear. He was all humanity and gentleness. Prof. Harijiban Ghosh and Prof. Borgaonkar, also of the English Department, gave us vigorous and stimulating lectures. Prof. Bordia, who also gave us lessons in English, was rather shy, having joined the College, so far as I remember, only recently. But he was a very good teacher and his instruction was a great help to us all. Principal Prafullachandra Basu, who took some of our classes in Economics, was full of energy and life and so were his lectures. His picturesque account of the activities of bulls and bears in the speculative market still rings in my ears. Prof. Dhanwal, who also taught us Economics, was a most charming and graceful personality. His flowing language and perfect diction, combining sound and sense, were indeed a treat. Prof. Srikanth taught us philosophy. The subject was solemn, and somewhat forbidding, but the man behind was the opposite - a friend, philosopher and guide to young learners.

I can also recollect the names of some distinguished students of the College during my time, mostly my seniors, whom also I admired from a distance. Among them I may mention Rungnekar who later distinguished himself as an economist, A.L. Srivastava who later became (I think) Principal of Bhopal College and S.P. Varma who later joined the Rajasthan University and won as I heard international recognition for his contribution to Political Science. Among my own class-mates, I particularly remember two, Nandekar and Tiwan. I send my greeting to all Holkar College staff and students. May all success and glory crown the Celebrations.





प्राग, भिक्षुओं के महानगर-२५४  
में ही आज बिदा हम लेते।।

(४)

आज मोह की गर्तों ओरों,  
मोहिलों के ठीरे सुलझाते,  
भपले दुःख बैठकर सुख लेते,  
एक दूसरे के आशु हन  
आँसों भरभरा आज देखते।।

(५)

मोह भरे अन्धल में होते,  
आज परस्पर लख लीखते,  
आँसु से सम्मोहित होते,  
आज दूर होते की राधों से  
हम और बिकट ही होते।।

(६)

वीरगो की निधियों ओरों,  
गीले स्वर में गीत चोड़ते,  
कभी न होते आज बीतते,  
दी बोलों में बिकट रुदने  
बुन-बुन के प्राण सफट हो लेते।।

(७)

बलकों की लवि काजल घोंटे,  
आज गुलन से सज सजाते,  
मोहिलों के मनु-दिन मूले,  
प्राण, भूतल के प्रवक्त कर-  
मोह अधिक हम परिचित होते।।

(८)

देख आरंभ के फूल बसोहर,  
चिह्न चिह्न के कटे भाकर,  
'कार' सिद्ध 'विपुल' में  
लेखकर,  
अब कभील पोता-काजल  
से, 'दोष' के अक्षर लिख डालें।।

(९)

आज समय की पग-लण्डी पर,  
आँसु का अमृत छिड़का कर,  
मूले-लीला बम-कुली पर,  
देख 'मनु' की आज सुखीटी-  
देख हम तुम पीत कर लेते।।

महाराज श्रीधर केन्द्रे (१९१०-१९९२) शीर्षस्थ चित्रकार और कलाकार थे  
महाराजा शिवाजीराव हाईस्कूल से मैट्रिक करने के उपरान्त, १९२९ में उन्होंने  
होल्कर कॉलेज में प्रवेश लिया और १९३४ में रत्नातक परीक्षा उत्तीर्ण की  
वे इन्टर स्कूल ऑफ आर्ट्स के सशक्त प्रतिस्पर्धि कलाकार थे वे एक उत्कृष्ट कवि  
के शिष्य और कलाकार थे वे अपनी कलाकृतियों के माध्यम से बोलते  
थे अपने चित्रों में स्त्रीय संयोजन के परे-रूपान्ता और गहन में आडम्बरहीन  
सरलता और पारम्परिक बुद्धि के लिये वे विशेष रूप से जाने जाते हैं

अपने ५ सितम्बर १९९१ के पत्र में कॉलेज का स्मरण करते हुए उन्होंने  
लिखा था-

Dear Prof. Dube,  
I had received your letter on  
behalf of Holkar College Centenary  
Celebrations Committee some time  
back, which unfortunately I have  
misplaced and could not find  
out while I am writing this letter.  
Please excuse for the delay.  
I was a student of Holkar College from  
1929 to 1933 or so. I am glad that the  
institution has completed 100 years.  
All along my study there I was  
a back bencher and an insignificant  
student. However I have to admit  
the usefulness of the Library there.  
I also remember Dr. Basu, Dr. Dobson,  
Dr. Padmanabhan, Dr. Borgaonkar as  
my Shikhandas as my good professors.

Yours  
Sincerely  
W. S. Bendre  
N. S. Bendre

## A Peep into the Past

- Mrs. Sumati Bagchi

Mrs. Sumati Bagchi (then Miss Bhandarkar) was a student of this college in the years 1931-33. She did M.A. in English securing first position in the Agra University. For two years (1934-36) she was lecturer in English in our college and has the distinction of being the first lady lecturer to be appointed at Holkar College. After marriage she moved to Dehradun where she continues to live happily-occasionally reminiscing her days at Indore.

Maheshji

At your persistent knocking on doors long fallen into disuse, they are being opened today. I wish for your sake, that some hidden treasures behind the doors could come to light and make your request a worth while one, but alas! that is not to be. I can write about nothing spectacular or very interesting, as no such experiences came to us. My student life in Holkar College had a tenure of two years. I can compare it only to the movement of a quietly flowing stream, no strong waves, no cataracts, no violence of speed.

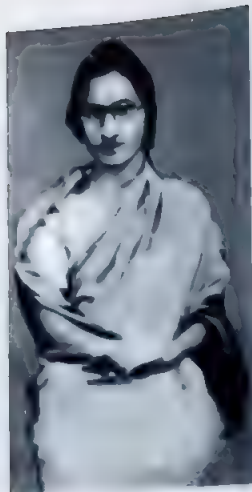
But even at that level of gentleness of life, there was excitement!

Exactly sixty years ago I joined Holkar College for postgraduation in English Literature. I had done my B.A. from the Isabella Thoburn College, Lucknow, an institute for women. My father was of the opinion that under the then existing social conditions girls could have a chance of an all round development only in a girl's college. Coeducation meant repression for girls; they could pocket degrees but were bereft of all other chances of self-development, said he. I enjoyed my college life in Lucknow, but as my two year's sojourn in Lucknow had made me miserably thing according to my grandmother, she wanted me to stay at home and whatever studies I had to undertake were to be from home. Thus I entered Holkar College, where my grandfather had taught Chemistry in 1893. I was the first in my family to join Holkar College, the previous generation having bagged their degrees from Bombay, Poona and Allahabad.

As Holkar College was far away from the city, most girls in those days preferred to study in the centrally situated Christian College. When I joined Holkar College, we were only five girl students - two Wagle sisters Kusum and Mohini, in the First Year, Mairayi Padmanabhan in the Second, Rukmini Knpalani in the Fourth and Sumati Bhandarkar in the Fifth!

The Department of English was then headed by Prof. Dobson. Prof. Hariyaban Ghosh and Prof. D.M. Borgaonkar and of course Prof. Dobson were my teachers in M.A. I was very fortunate in receiving great affection from them, not only in my student life but also later. Prof. Ghosh and Borgaonkar both have given "the dust of their feet" to my humble "Nandadeep" in Dehra Dun.

I think we really enjoyed our life in Holkar College. Because of our small number we received an undue amount of attention and importance. We were solicited to take part in tennis and badminton matches, for writing articles in the College magazines and for dramatics. We were not allowed to say "No" and this brought us to some supremely awkward situations. I remember the embarrassing experience of a tennis match I had to play. In spite of my protests that I was not good player, Manga Kripalani, later on in the R.A.F., insisted on my partnering him in the Mixed Doubles. A crowd of students collected to watch the match. We were playing against Mairayi and her partner. Manga was a good player,



Mrs. Sumati Bagchi

one of the best in College at that time, but I in my nervousness sent all the balls I touched in the net or beyond the lines, getting more and more nervous with each stroke. I don't think poor Manga had anticipated this exhibition! I was grateful to the spectators, because instead of jeering, they all quietly disappeared from the scene in twos and threes, leaving us to face our debacle by ourselves.

But I fared better in my literary activities, my story being judged the best article in the College magazine. The leather bound Omar Khayyam which was the reward is still with me, a prized possession.

And, one day, Prof. Borgeankar came to speak to me "Miss Bhandarkar, I want you to take part in Bernard Shaw's Dark Lady of the Sonnets that we are staging at the Annual gathering. Act on the stage? In front of the dreaded (male) student community? It is no exaggeration to say that I sank in the soles of my chappals through nervousness. The idea of refusing to do what the teacher wanted us to do was absolutely foreign to our upbringing. But so was the idea of ascending the stage, facing hordes of students whose capacity to hoot was to us more formidable than their capacity to appreciate. Perhaps I could tell Prof. Borgeankar that my guardians said "no"? My parents were away in England at that time. They would have not said no, I was certain about that. The only authority I could quote to Prof. Borgeankar was my grandmother. I hesitatingly told my grandmother about Prof. Borgeankar's request and she almost literally pulled

away the ground under my feet when she said "Why not? Borgeankar is asking you?" And so, under the Professor's direction we climbed on to the stage, Maitreyi Padmanabhan as Queen Elizabeth and I as the Dark Lady. The success of our play was beyond our expectations, we didn't suffer from stage fright, thank God! The boys who were our coactors, Jaggi Kaul and Jeevan Nagu are no longer on this earth, but Maitreyi and I share the memory of those days.

It was my good luck to stand first in the M.A. exam, incidentally it being the first First Division in English in the Agra University. That year all the first and second positions in the University exams were from Holkar College. Principal Basu, naturally very proud of his College had a photograph of all of us taken with him in the centre. When he heard that one of my fellow students "X" had maliciously remarked that I had been "given" a first division only because of my "looks", his retort was "In that case the examiners should have failed 'X' completely instead of giving him a second division!" Boys in those days also did not look upon the achievements of girls without envy and if I may say so, tried to be little them whenever an opportunity arose.

But I must say that I was treated with great affection and respect when I had the privilege to work for a year and a half as Asst. Prof., in the Dept. of English in the Holkar College. Being the first lady teacher I had certain advantages, but also corresponding disadvantages. I owe a deep debt of gratitude to the staff of the College. The senior teachers were encouraging and the younger ones helpful and friendly. Death has cut into the relationships formed in those days; Dr. Basu, Prof. Dobson, Prof. Ghosh, Prof. Borgeankar, Prof. Gole are no more, and from our younger group Yarde and Desai have left to join the seniors. Thankfully Prof. Dhar is still going strong amongst the seniors, at ninety plus. Prof. Bordia is still busy at his academic work at eighty five plus and Shanti Varma, Deshpande and I are the babies of the group in the neighbourhood of eighty! I am the only one among them who has had no academic achievements!

I must mention a couple of experiences of my teaching life. Once a first year boy was found sitting in class holding a baby goat on a rope. The other boys were, I think, waiting expectantly to see and enjoy the young teacher's angry reaction. Sensing this, I smilingly congratulated the boy on his new class friend, telling him that although I was sure that both of them had an identical IQ and the same learning ability, the Principal who was taking his round just then, might insist upon both of them going out to share a meal. In suppressed laughter of the class, the goat was taken out, but much to my surprise, the boy came back and sat down quietly. He was a naughty but lovable boy. I hear he is no more.

My reminiscences are dotted with the refrain "no more", but with almost eight decades stretched out behind me, what else can be expected! The incident that I am going to tell you now, however, makes me feel very small as I remember

how I had received the news of the death of a very sweet and lovable person, not with grief but with great relief merging almost into pleasure.

As a teacher I was put in charge of a girls variety entertainment in the Annual gathering celebrations. By this time the number of girl students had increased and all of us prepared with great enthusiasm for the festive evening. In those days we called such activities simply "entertainments" and not "cultural shows" as in modern parlance. We had three items: the inevitable Saraswati Vandana, then a tableau-Pandora's Box-where the evils let loose in the world were to be symbolized by smoke coming out of the box for which we were going to burn two whole packets of incense sticks - our modest efforts at stage effects! Our prize item, as I thought was the recitation of some Omar Khayyam verses with action on the stage with costumes and scenery. One M.A. English student had accepted the Omar Khayyam role and had been given the responsibility of getting her costume - a decent dressing gown disguised with embellishments as a robe, and a fur cap. As she had accepted, there was no need to worry on that score. We had the flask of wine, the loaf of bread and also "thou" in a suitably glamorous outfit, all ready for the first scene. Just as the Show was to begin, our Omar Khayyam burst upon us in a frock and balefully announced that she/he had no brought her costume! I was struck dumb and she, considering attack to be the best method of defence began shouting at me! As I was not her teacher and both of us were the same age, I suppose she did not think that any respect was due to me. Literally screaming she said, "You think too much of yourself because you happen to be a teacher. Why couldn't you arrange for the costume? From where do you think I would be able to procure it?" and so on. I couldn't put in a word edgewise to remind her that she herself had taken the responsibility. We all were totally unprepared for such unwarranted rudeness, but at that moment the only thought uppermost in my mind was where I could get anything like a costume, with the city so far away and the time so short. And even if we sent her on the stage with a kurta pyjama borrowed from a hosteller - a thing unheard of - would she have in that state of mind the capacity to recite "Here with a loaf of bread beneath the bough" and similar gems?

We managed to start. The musical inauguration and Pandora's Box went off according to plan with the incense smoke gussily filling the stage. With the enthusiastic clapping ringing in my ears, I wondered whether I would be able to face the audience and announce the untimely end of the girls' entertainment - a humiliation for the girl students as well as a personal humiliation to me. But just then (heaven sent) teacher stole in behind the curtains and whispered dramatically, "The show has to stop! The princess is dead!" And as I heard the announcement on the stage that because of the death half an hour ago of Princess Manoramaje all the Gathering activities had to be brought to a close, a flood of relief washed

through my taut nerves. I had known the princess personally. She was a very friendly and lovable girl. She had been ill for a long time and been cut off in the prime of her youth. But no such thought nor any sorrow struck my one track mind at that moment. The grief I would have normally felt at the happening was substituted by a criminal relief for which I felt ashamed of myself. Fifty six years have passed since, but I can still feel the intensity of that experience. Our potential Omar Khayyam suffered from a nervous breakdown and died two years later. I wonder if her hysterical outburst was an indication of her unbalanced state of mind to follow.

In the fiftyfive years since I left College and Indore, I have been to Holkar College only twice, once in 1944 in company of shr D.D. Sathe (I.C.S.) my student friend and Prof. Gole's nephew, who wanted once again to visit the old haunts, and then again when Prof. Yarde proudly took me to show me the new impressive looking buildings across the road-the Art and Commerce College and the Library. It was lovely to see the expansion and the progress, the extended educational opportunities to the young. But I feel nostalgic for the old red dilapidated buildings only which meant our Holkar College half a century back.

In spite of the small number of visits to Holkar College (mainly because almost all the new people were strangers) my links with the College were never rusty and the relationship never broken. I have been fortunate in having received, in my home in Dehra Dun, quite a number of my Holkar College associates-my teachers and students. Every time somebody came it was a joyful thrill, a fresh breeze from home. But as I realise that now most of these friends had departed, I remember that simple but poignant line of Charles Lamb,

"All are gone, the old familiar faces."

What I have written may be insipid, signifying only the garbity of old age. But I must say I have enjoyed writing it. I must thank you, Maheshji, for compelling me to take this trip into the past. Momentarily I stood on the threshold of youth my white hair turned into black. Once again I was Sumati Bhandarkar after being Sumati Bagchi for fiftyfive years. Vanished faces came alive, one by one, out of the dimness which had encircled them for so long. The present was made to release its pressure and to stand aside, making room for the bygone days to peep out with their load of joys and sorrows, hopes and despair, blame and appreciation, blessings, rewards falling into undeserving hands-a seemingly never-ending list of commas to be completed only when the final fullstop comes. The eight decades have been richly loaded and now with a full heart I can say at eighty which I could not say at twenty - Thank God for everything! (and most of all, for the white hair!)



# वे दिन, वे बातें

- अक्षय कुमार जैन

जारी हिन्दू विश्वविद्यालय में जब मुझे टायफाइड हो गया और बिनाजी मे सफ़ा इन्क़र कर दिया कि अब वहीं अध्ययन जारी नहीं रह सकता तो मैंने अपनी बड़ी बहिन को पत्र लिखा कि वे मी से कहकर मुझे अपने पास इन्टर्न बुला ले मेरे इस प्रस्ताव की वे बड़ी प्रसन्न हुईं इस प्रकार अक्सर १९३५ में ही इन्टर्न हुईं

मातका के संबंध में यही सुना था कि जित्त प्रकर बनसस की सुबह और अचछ की शाम सुप्रसिद्ध है उसी प्रकार मातका की रात मसहूर है और शबभुष मीने देख कि वहाँ की रात मसहूर और सुखद है इन्टर्न में उन दिनों तु नहीं चलती थी और न हिन्दुओं वाली लड़की ही पड़ती थी वहाँ का जीवन ऐसा था कि देखताओ का भी मन वहीं लग जाय, मैं तो रात झुपट था

होल्कर कॉलेज में मुझे प्रवेश मिल गया और इस प्रकार इन्टर्न प्रवास में आगत तीन वर्ष जीवन के मधुरतम वर्ष सिद्ध हुए

इन्टर्न का पहला साल बड़े क्रम और कष्टमयक का रहा नई जगह नया वातावरण, कक्षा विश्वविद्यालय और होल्कर कॉलेज में अस्मानतः होने हुए भी कुछ समानताएँ थी थी यहाँ का वातावरण हिन्दीय और साहित्यिक था सांस्कृतिक कार्यक्रमों की कमी न थी स्मॉल और बृहत् कक्षा-सम्मेलन और नाटक-बाड़े लोकप्रिय थे इस प्रकार एक वर्ष में मेरा मन यहाँ झुलता लग गया कि जब बी.ए की परीक्षा देकर १९३७ में लौटने लगा तो इतना झुलना भारी था कि मैं उसे आज तक नहीं भूल पाया बरसस कुछ समय बाद ही कुछ महीनों के लिए मैं फिर जगह कर इन्टर्न पहुँचा था

इन्टर्न और मध्य प्रदेश की पुरानी स्मृतियाँ इतनी मीठी, रोमांचक और सरस हैं कि इतना के बाद वहाँ की हृदयलाइज लत रहने के बाद भी वे हम-मस्तिष्क पर किसी की किसी जगह हूँ है

उसी जमाने में हुए कुछ सम्मेलनों का ध्यान बरबस हो रहा है ऐतिहासिक अधिवेशन हिन्दी साहित्य सम्मेलन का हुआ था गांधीजी उसकी अध्यक्षता करने आये थे और स्वागतार्थ्य्य थे सेठ हुकमचन्द अधिवेशन कई कारणों से स्मरणीय रहा जायेगा गांधीजी की अध्यक्षता तो थी ही, वहाँ के बाद से ही हिन्दी-हिन्दुस्तानी का प्रश्न सामने आया था और राजर्षि पुरोषोत्तम दास टण्डन ने महात्मा गांधी की भाषा नीति का विरोध खुलकर किया था और इस प्रकार हिन्दी साहित्य सम्मेलन के कार्यक्रमों में एक नये आयाम का सूत्रगत हुआ था महीनों तक हमारे और क्रिश्चियन कॉलेज में वाद-विवाद का विषय भी प्रायः यही रहा था

फिर मुझे याद आ रहा है अखिल भारतीय विज्ञान कांग्रेस का इन्टर्न अधिवेशन उसकी अध्यक्षता करने बंगाल से प्रो. प्रजुजचन्द राय आये थे हमारे फिजिकल बसु बड़े ही रिजर्व प्रकार के व्यक्ति थे विद्यार्थियों से बहुत निष्कट सम्पर्क वे नहीं रखते थे किन्तु उस अवसर पर उनकी गतिशीलता बड़ गयी थी और विद्यार्थी संपर्क भी स्पष्ट दिखाई देने लगा था उनकी कन्या कुमारी कल्याणी मेरी सहपाठीनी थी हम दोनों की झगड़ी विज्ञान कांग्रेस के अध्यक्ष की सेवा में लगी थी नाम मेरा कुछ ऐसा है कि प्रो राय ने मुझे बंगाली सम्प्रदाय लिया कल्याणी तो उनके साथ उन्मुक्त रूप से बंगाल में बाल्मीक कर लेती थी किन्तु मैं असमर्थ था उनकी वह झिड़की मैं आज तक नहीं भूलता कि 'तुम्हें लज्जा आनी चाहिए, तुम अपनी भाषा में बोल तो नहीं सकते, अंग्रेजी में बोलते हो..'

अनेक वर्षों के बाद मैं मयकर भूकम्प आया था भूकम्प पीड़ितों की सहायता के लिए हम कुछ युवाओं ने एक नाटक मंचित करके कुछ धनराशि वहाँ भेजने की योजना बनाई नाटक के रिहर्सल का प्रबंध तो हो गया किन्तु टिकट इतने भी न बिके जिससे थियेटर आदि का खर्चा निकल जाता हम सब पिला में थे कि तभी किसी ने बातलाया कि इन्टर्न के भूतपूर्व महाराज तुलसीदास उन दिनों वहाँ हैं उनसे हमें मिलना चाहिए हम तीन-चार दिन

महाराज के पास गये और उनसे एक अच्छी राशि प्राप्त हो गई ये घटना इसलिए नहीं भूला कि महाराज तुलसीदास ने हमारे सम्मान की रक्षा के लिये न देकर आने लिए हाल में आगे की दो रंगियाँ ही रिजर्व करने की बात कही थी अभिनय से दो दिन पूर्व उनके कार्यालय से यह सूचना आई कि बच्चों उन सीटों के लिए भी टिकट बेंच हैं और उनसे जो आय हो उसी भी भूकम्प पीड़ितों को भेज दें आगे की सीटों की टिकट बेंचना हमारे लिये सरल था इस प्रकार हमारी समस्या हल हो गई

१९३५ में कांग्रेस की स्वर्ण-जयंती के अवसर पर राष्ट्रीय विचारों के हम कुछ विद्यार्थियों की गतिविधियाँ उस और बढ़ गई उसी अवसर पर श्री सूरजमल जैन और श्री मिश्रीलालजी गंगवाल (दोनों अब दिवंगत) के संपर्क में आने का सुअवसर प्राप्त हुआ था जिस राष्ट्रमाय का बीजरोपण काशी विश्वविद्यालय में हुआ था, उस पर जल उसी समय पड़ा तो बाद को पल्लवित हुआ

मैं स्नेहलतामय के जिस मकान में रहता था उसी के एक भाग में एक सेठ रहते थे जिनका मुख्य कार्य सड़ा था मुझे यह इस प्रकार पता चला कि हमारे घर टाइम्स ऑफ इंडिया अंग्रेजी का पत्र आता था एक प्रति उसकी उन सेठ साहब के यहाँ भी आती थी मैं यह जानता था कि वे अंग्रेजी बिल्कुल नहीं जानते पढ़ने पर ज्ञात हुआ कि वे उस पत्र में जो छाया चित्र 'पॉप' आता था उसी को देखने के लिए पत्र खरीदते थे जब मैंने उनसे अपने पत्र के उस छोटे से अंश को काट लेने की बात कही तो वे बहुत प्रसन्न हुए दरअसल वे उसे देखकर सट्टे के अंक का अनुमान लगाया करते थे ये बात उन्होंने स्वयं मुझे बताई थी

उन्होंने ही मुझे यह बातलाया था कि कुछ समय पहले स्वनाम धन्य क्रांतिकारी चन्द्रशेखर आजाद, भगतसिंह तथा अन्य, अंग्रेज सरकार की निगाह से बचने के लिए उसी मकान में आकर रहे थे, जिसमें अब वह और मैं और मेरी बहन-बहनोई रह रहे थे उन्होंने कितनी ही घटनाएँ उस समय की सुनाई थी उनमें से एक मैं नहीं भूलता है झाबुआ के एक नवयुवक को अपने दिल में दीक्षित करने के लिए जब जलती मोमबत्ती पर हथेली रखवाई जा रही थी तभी ये सेठ वहाँ पहुँच गये थे और उसके अगले ही दिन आधे दर्जन के लगभग वे क्रांतिकारी इन्दौर छोड़कर कहीं अन्यत्र चले गये थे

हमारे कॉलेज में उन दिनों कुछ हस्तियाँ और भी थीं डॉ. प्रमलचन्द्र बसु के अलावा प्रो. इमेरिटस घेस. ए. डॉबसन, प्रो. बोरांगविकर, डॉ. एस. देशपांडे, प्रो. हरजीवन घोष, स.ए.ए. घर, प्रो. धारीवाल, प्रो. पन्नामन, प. चतुर्वेदी तथा प्रो. कमलाकांत मिश्र को मैं कभी नहीं भूल रहा हूँ उनका पितृपुत्र्य स्नेह कोई कैसे भूल जाये? पर प्रो. केसरीलाल बोडिया का हम छात्रों के साथ मित्रवत व्यवहार तो हमारी घरोबर बन गया था नाटकों के सफल अभिनय उनकी ही देख-रेख में होते थे और राष्ट्रीय तथा सामाजिक कार्यों में भी अंग्रेजी अध्ययन के अलावा उनका दिशा निर्देश सदा रहता था

उस समय की एक दुःखद घटना भी मैं नहीं भूल पाया हूँ हम से दो वर्ष आगे था एक छात्र इन्द्रभूषण दास बहुत प्यारा सामाजिक एवं सांस्कृतिक कार्यों में सहयोग करने वाला जाने क्या हुआ कि एक दिन जब मैं कॉलेज पहुँचा तो हमारे मित्र वर्ग को दुःख में देखा पाया, सब मेरी प्रतीक्षा कर रहे



- अक्षय कुमार जैन

सुप्रसिद्ध पत्रकार और लेखक श्री अक्षय कुमार जैन १९३४ से १९३८ तक होल्कर कॉलेज के विद्यार्थी थे बाद के वर्षों में नवभारत टाइम्स के प्रधान-सम्पादक, समाचार-भारती के अध्यक्ष एवं प्रेस-कौन्सिल के सदस्य के रूप में तथा पत्रकारिता और साहित्य के अनेकों संगठनों से जुड़े रहकर अपने प्रभावी कार्यों से उन्होंने सम्मान और प्रतिष्ठा अर्जित की हिन्दी साहित्य और पत्रकारिता के लिये, उनकी उल्लेखनीय सेवाओं के लिये १९६७ में उन्हें 'पद्मभूषण' से सम्मानित किया गया परंतु सरकार की भाषाई नीतियों के विरोध में उन्होंने यह सम्मान अंगले वर्ष लौटा दिया

इस सम्मरानामक लेख में उन्होंने होल्कर कॉलेज के अपने विद्यार्थी जीवन के ४ वर्षों को आत्मीय स्नेह से याद किया है

ये मालूम हुआ कि पिछली शाम दास ने विश्व खाकर आत्महत्या कर ली कारण क्या हुआ? कुछ समझ में नहीं आया हमारे कॉलेज में सह शिक्षा थी, कुछ लोग उसे एक्टरका प्रेम का मामला बताते थे, तो दूसरे पारिवारिक परिस्थितियों का जो भी रहा हो इन्द्रभूषण की स्मृति मानस पर आज भी अंकित है

समय का अंतराल हुआ, १९६५ में ३० वर्ष बाद मध्यप्रदेश फिर जाना हुआ इस बार अखिल भारतीय समाचार-पत्र सम्पादक सम्मेलन के अध्यक्ष के रूप में मैं पंचमढ़ी गया जहाँ अधिवेशन हुआ था पं. द्वारिकाप्रसाद मिश्र उन दिनों वहाँ मुख्यमंत्री थे और एक और (पूर्व मुख्यमंत्री) श्री अर्जुनसिंह भी मंत्रिमंडल के सदस्य थे, नवयुवक और सुदर्शन अर्जुनसिंहजी का दो दिन वहाँ साथ रहा और मैं उनकी योग्यता, कार्यकुशलता तथा सौजन्य का कायल हुआ लौट कर मैंने उनके सहयोग के लिए धन्यवाद का पत्र भी लिखा था उस समय मध्यप्रदेश के कुछ प्रमुख दार्शनिक स्थलों की यात्रा भी हमारे साथियों के साथ करने का सुयोग हुआ था, तभी कान्हा अभयारण्य देखा था और तभी जबलपुर की नर्मदा नदी का भेड़ा घाट और समरभर की चट्टानें भी देखी थी खजुराहो भी उसी यात्रा में गया था उसके बाद भी मध्यप्रदेश खूब घूमा है और उसे अपना घर मानता हूँ जहाँ मैं शिक्षित हुआ, जहाँ मैंने तरुणाई और जवानों देखी उस मध्यप्रदेश को कैसे भूल जाऊँ

उस समय के अपने कुछ साथियों को भी कभी नहीं भुला सकता महेश्वरनाथ माणर, जो बाद में राज्य के रूचना निदेशक पद पर रहे मदन मोहन मार, जिन्होंने राज्य में गृहमंत्री का पद संभाला सहायी कवि मुक्तिबोध और वीरेंद्र कुमार, उमाकान्त त्रिवेदी, जो किष्णु प्रसाद श्रीवास्तव, प्रो. श्याम-नारायण बाजपेयी के नाम मेरे दिल में बसे हुए हैं मनोहरसिंह मेहता जो मुझसे सीनियर थे किन्तु मित्र थे, बाद में तो वे संबंधी भी बन गये राजकुमार सिंह तथा देवकुमार सिंह कासलीवाल एवं उज्जैन घराने के शैल शंकरलाल सेठी के दो पुत्र अपने सौजन्य के कारण मन पर छोड़े हैं

होलकर कॉलेज में ग्यालियर के भूतपूर्व महाराजा के साथ टेनिस खेलने का सुअवसर मिला था उनकी पत्नी राजमाता सिंधिया तथा पुत्र माधवराव सिंधिया अब राजनीति में दो अलग-अलग दलों के नेता हैं उन दिनों शायद अंग्रेज सरकार की किसी बात पर नाराजगी के कारण महाराजा को इन्दौर में रहना पड़ा था ७६ वर्ष की आयु में अब पुरानी यादें धुंधली पड़ती जा रही हैं पर मित्रों के साथ फाताल पानी (जहाँ तबला पीये रहे थे) की यात्रा और मधु जावन अंग्रेजी किन्ने देखने जाने की बात भूली नहीं हैं किन्तु साथी घले गये, कुछ ही लोग हैं पर उस समय की हम लोगों की अभिप्राता, आज दूढ़े भी न मिलेगी

अब जिन बौद्ध शास्ताबाई और बहनोंई नेमीचन्द जी के साथ रहा था वे भी नहीं रहे

साहित्य के क्षेत्र में मध्य भारत साहित्य समिति और वहीं से प्रकाशित होने वाली पत्रिका "दीप्ता" और उसके सम्पादक कुसुमावन्तजी को केने भूल जाऊँ? जिन्होंने मेरी अनेक कथानवियों और गद्य कथ्य छोड़े थे कुसुमावन्तजी तो पत्रकारिता में बाद में हमारे सहयोगी ही रहे और अब वे भी नहीं रहे

अद्वैत दास माखनलाल चतुर्वेदी के प्रथम दर्शन इन्दौर में ही हुए थे बाद की उनके आशीर्वाद के पर शराबर मिलते रहे

काविर बाबनजी को हमने इन्दौर अर्पणित किया था, उनसे पूर्व लखनऊ

के तुलारेलाल भार्गव भी पधारें थे तब कथिता पाठ की धूप रही मधु मई थी

खेल के मैदान की भी याद आती है तो मेजर सी.के. नायडू, सी.एस. नायडू, मुस्ताक अली, जगदाल और अन्य अनेक साथियों के चित्र सामने आ जाते हैं टेनिस का खेल भी बहुत लोकप्रिय था जिसमें अलग-अलग कोर्टों में हम तब खेलते थे

हॉकी का ध्यान आते ही तत्कालीन मुस्लिम यार्डन डीन साहब का ध्यान आना स्वाभाविक है वे जब कार्यवाहक प्रिंसिपल होते थे तो शेरवानी के नीचे टाई अवश्य दुश्मिगोचर होती थी हम उस समय की प्रतीक्षा करते थे क्योंकि हर प्रार्थना "ना-ना" करते हुए वे मंजूर कर लेते थे, वे प्रायः हॉकी के बड़े मैचों के रेफरी हुआ करते थे

हिन्दी तथा मराठी साहित्य समारोह भी थी, और सब में अधिक महामग्न हमारी ड्रामैटिक सोसायटी में रहती थी

उस समय होलकर कॉलेज में साहित्यिक, सांस्कृतिक और क्रीड़ा जगत सभी अपना विशेष महत्व रखते थे, आज उस समय की यादें बड़ी मधुर और स्मरणीय हैं किश्चियन कॉलेज में प्रो. डेविड थे और साथी प्रमाकर मावदे तो आज भी जब मिल जाते हैं तो उस समय की बातें याद आ जाती हैं

सहशिक्षा के कारण वातावरण बड़ा शांतिपूर्ण और गरिमामय था कभी कोई ऐसी घटना नहीं हुई जिसे दुर्घटना कहा जा सके

अपने जीवन के होलकर कॉलेज के वे दिन कभी मुलाये नहीं जा सकते सच तो यह है कि जब तरुण्य में भी बचपना था अब बुढ़ापे में जवानि जाने-कहाँ बली गई, उर्दू का यह शेर याद आता है

तिफली गई व आलम में पीरी अयां हुई,

हम मुत्ताजिर ही रह गये अहले शबाब के

□□

## अभिनव स्वयंवर

- प्रो. डी.एम्. शोरणीकर

देश देश के शासक आए  
'यूनो' - निर्मित मण्डप में  
शक्ति - सुदरी स्वयंवर बन  
आई मैं माला बन मैं।  
जनकपुरी में यथा जानकी  
आई थी ल वरमाला।  
लोभ स्वर्ण - दर्शना का तजकर  
उत्तर को मन दे डाला।  
लेकिन अब तो नहीं रहा है  
अन्तर उत्तर - दक्खिन का।  
यदि अन्तर है तो पूर्व -  
पश्चिम का जीवन - दर्शन का।

यंत्र - जाल, विज्ञान - चमत्कृति  
पश्चिम - सञ्चित अंगुष्ठा लो  
पर पूर्व दिखता पुरित है  
लोकक - शोभित संगम से।  
नम - बुद्धी प्रसाद! बना है  
पश्चिम रावण की लंका!  
"बच बटी" - प्रसाद पूर्व का  
घहरा मानवता - डंका।  
"सीटो" - "नेटो" - "खीटो" की  
वीखों में पश्चिम डूब गया।  
पर पूर्व देता है जग को  
"एकशील" का मंत्र नया।

नीति - तुला पर तोल लिया,  
क्षण को न हुई विचलित बाला -  
भारत - हृद - - - सप्ताट - - - समुखी  
नत - बदना बोली विमला -  
"एक नारि - बत राम - सदृश तुम!  
स्वीकारो यह दरमाला।  
पुनर्जन्म लेकर आई मैं  
जन्म - जन्म संगिनि कमला!"  
पुष्प - वृष्टि - बाँझा - - - दिशा से,  
देख जिसे "सीटो" झाँझाई!  
अंगुष्ठा की ज्वालाएँ निकली,  
घर - माला न तनिक मुरझाई!!

- होलकर कॉलेज टाइम्स - १९ नवम्बर - १९५६ से

## Speech of Pandit Malaviya at Holkar College, Indore

Ladies and Gentlemen,

I am very very thankful to your Principal for having set a very good example in a short speech. I can do no better than that I have been running about from early morning but I could not go back from Indore without paying a visit to your College.

Now, what for are you educated? I do not know whether many of you have already considered the matter and decided in your mind what lines you are going to follow, what you are educated for, because it is no use going on without any purpose or definite ideas. It has been going on for a long time past but it has not borne good results. Every student now who enters a College ought to be making up his mind as early as practicable whether he wants to be a lawyer, which many of you would not like because the bars are over-crowded, or he wants to be a scientist.

The world is situated differently to-day. In the countries of the West they have got different government. You find vocational guidance being given to students to help them to decide what course they should follow. And every care is taken to see that by the time a student goes to school he should know definitely what he wants to join, some vocation, some craft, some trade or any thing like that. Those who wish to go up for higher school or advanced study go forward to the university, but even there care is taken to see that every student there should receive such education which should fit him for life. After twenty-five years of school and college education many of our young men are unable to find a living. What could be more tragic, distressing?

Now, possibly, why should I say possibly, probably I know that some gentlemen have resolved not to marry in despair. This sort of thing will not do. It is laid down that every young man and woman must marry in good time, and that has enabled us to live as a nation. But the question arises with what should we support our families. Government service can in no country accommodate more than one or two percent of the population. It was not more than 2% some time ago. I do not remember the exact percentage now, but it cannot be more than 2% 98% of the people are supported outside Government service. So you cannot expect that every man will find Government service. Therefore, you must pick up

some occupation which will give you chance. The medical profession can accommodate a large number. The number is growing but not so much as it ought to.

Less than 75 years ago, the Japanese were in a very unhappy condition. Ricardo was given all the powers of



The staff and students of Holkar College had an opportunity to listen to Pandit Madan Mohan Malaviya in 1936. The interesting and instructive lecture delivered by Malaviya is being reproduced here from the college Magazine of that year.



emperor. From that time patriotism began to be preached as the religion of the people and Japanese young men and women have turned out as practical patriots. They have got patriotism as their religion. That is their moral code, and they work and grow for the nation

Now I do not know whether many of you have, I hope you have, and you must have some thing to inspire you to lead you to action. enthusiastic action and there is nothing I can think of to-day which will inspire you better as the sense of your love for your country. You are happily in a State where of your love for Swaraj and the civic sense can be much better developed here than anywhere else. I hope you are developing this civic sense, the right that you belong to this State and to this College, that you are ever anxious to promote the welfare of your College, a centre where young men are trained for many vocations of life. If you select your point of view with that kind of consciousness, your selection will be very different. To-day there is a great rush for certain subjects. But think what will they bring to you and to the country. And unless you are able to answer such a question you have not discharged your duty to your country and yourself. There is a great need just now to inspire you to think in that light. That sense of patriotism has perished and India is as much open to every citizen of the world

Take any country. Englishmen are proud of their country. You will not find any Englishman unpatriotic. He uses his own country's products. An Englishman would hardly wear foreign cloth. He wants to promote the goods of his countrymen. If he purchases cloths from other countries he is not helping his country. He has that sense of patriotism. So also any other material. He is proud of his schools. Think of Harrow and Eton. Generations go after one another to the same College and School. They will do any thing to keep up the honour of the School and the College. They are proud of their Universities, Oxford, and Cambridge. And the best men have come from Oxford and Cambridge. "I am an Oxonian," they will say. Have you the same ideals? I should like to know that. I hope you have the same developing sense of patriotic feeling for your State and your country. "My State is the best of all, my college is the best of all, my country is the best of all." That is the sort of feeling which helps the Englishmen to help themselves

Then take the Japanese. How are they competing with other countries like Great Britain, U.S.A., and others which have had a long period of advantage in industrial progress. For small remunerations they are competing with other nations in the open field in matter of industry. How do they do it? They do not ask for high salaries. Salaries are comparatively very low

When Tokyo University was established, a lot of people used to go to law. But then they found that law did not produce national wealth. It only divides the national wealth which has been produced. Your aim should be to produce more national wealth, to take up some profession which will make you add some thing good. Every profession is honourable, every

profession deserves to be respected. It may not get you high remuneration. Take up professions, where there is room for work.

In this respect, we educationists have failed, I am sorry to tell you. We ought to organise the whole system of education so as to be sure that every man-cultivate will be able to earn a living some how or other. He must know where he is going to earn his living. But then every student cannot select one and the same profession. See what suits you most. You should study science, and I am glad that there is a great interest for science in your College. You should be inclined to take up some manual labour and do it as a service done to the country. Whenever good honest work is found, there the students of Holkar College should be found willing. Shouldn't they?

I am glad to see your bright faces, but I wish still good developed physique. You have to render an account of your College before the bar of the student world. And you will be asked to show how you have been benefited by this fine Holkar College situated in one of the best climates, in Malwa. When I came here before, there were only 150, and now there are 750 students. There should be 7000 students in Indore and a University should be established. Your College is lovely, playgrounds are lovely, and no student is justified if he does not make himself a fine athlete. Now, gentlemen, this is a serious business. The question is, I want to ask yourself whether you are giving yourself the best chance of physical development in your College. If there are not proper arrangements, ask for better arrangements. Now I shall give you a small couplet and take it as a service from me;

सत्यं ब्रह्मचर्यं व्यायामं च विद्या।

देशभक्त्यात्मयोगेन, समन्नाहं सदाभव।

These qualities of truthfulness, continence, physical development, love of knowledge, patriotism, and spirit of self-sacrifice, I want you to cultivate every one of you. There is no religion higher than truth. Think truth, speak truth, live truth. Your life should be a life of truthfulness and therefore, "सत्यं" come first. "ब्रह्मचर्यं परोव्रतः" etc. - you should remember that the ancient Rishis in this country divided a man's life into four parts, "ब्रह्मचर्यं" for 25 years. Normal life of man was supposed to be of 100 years, and I was glad to hear from my friend, Mr. Ramagyan Dwivedi of Dhar, that his father lived up to the end of 130 years. A life of 100 years, therefore, should not be regarded as an unattainable ideal. May all live a hundred year. May I see for a hundred years. May I hear for a hundred years. May I speak for a hundred years. May I be prosperous and strong for a hundred years. Therefore, "ब्रह्मचर्यं" will give you strength and longevity.

You must take exercise, both girls and boys. "सूर्यनमस्कार" must be practised. There are other exercise also. Then comes patriotism. Without this these qualities are of no use. Take the examples and story of Sharmistha. For the sake of my community I must expect this position. For the sake of the country, or the community, the princess accepted the position of the slave girl. That is the ideal which existed in ancient India, and I wish you to cultivate that ideal. That is all that I have to say.

Adopted by Moolchand Joshi.

ॐ

## अथ कॉलेज-कथासारः प्रारंभः

- कु. कृष्ण खांडेकर

श्रीगणेशायनमः

आधि वंदितो कॉलेजसा जें अनेक चमत्कारनिवासा।  
जेवली प्रत्येक गोष्ट बुद्धिसा नायिन्यपूर्ण मासते ॥१॥

नंतर वंदू प्रोफेसरा जयांस न कोणाची सरा  
नातरी कॉलेजवे ईश्वरा हणोनि तरी वज्रवीर ॥२॥

विद्यारिहास प्रब्र गंभीरा कैसें वर्तवें कॉलेजकन्यांसमोरा  
जाणया त्याचें उतरा सावधान होईजे ॥३॥

जाण रे मित्रा कर्म गहना समजणें कॉलेजकन्या-लक्षणा  
वृत्ती असे जरि विचक्षणा समजें तरी थोडेंसो ॥४॥

जेव्हा कॉलेजकन्या जवळी काही करूं नये ते वेळी  
स्वस्थहि राहणें ये काळी दोषास्पद ठरतें ॥५॥

गोष्ट नव्हान वा मोठी! असो खरी अथवा खोटी  
त्या समजति त्याचियेसाठी स्टुडंटनें केली ती ॥६॥

सायकलवर फास्ट जाला शान दाखविणारे ठराला  
रलो जाता शब्द 'खट्याल'। कानावरी पडेल ती ॥७॥

हणोनि सायकलवर बसवों परी कॉलेज-कन्या-मार्ग न जावों  
नातरी उपाहास पात्र व्हावो मार्ग तिसरा नाही बा ॥८॥

दोन दिवस लागोपाटी कॉलेज-कन्येची पडली गांटा  
फिरण्याचा मोडणें परिपाठ। भ्रम मग पडतसो ॥९॥

जात असना फिरण्यासा दहा वर्षे त्याचि रस्त्यासा  
जर न सोडाल तयासा 'वात्रटपणा' पत्तरी की ॥१०॥

जेव्हां कॉलेजकन्या आसपासा बंदी मोतवाचें बोलण्यासा  
हा नियम उद्घाटित्यासा शब्द खालिल एकादो ॥११॥

"आमुच्या कानावर पडण्यासा हा एवढा घेतसे त्रासा  
म्हणून कीव येतसे आहतास व्यर्थ व्यर्थ। बिचारो ॥१२॥

जाल जर त्याच्या मदतीसा त्या करितील उपाहासा  
न जाल तर स्त्री दाक्षिण्यासा कलंक व्यर्थ लाविता ॥१३॥

मित्र असना पधरा सोला। घरी जाण्या होऊ नका गोळा।  
लेडी स्टुडंटना मार्ग नोकळा। सदा सर्वदा ठेवावा ॥१४॥

कॉलेज-कन्या सायकलवरी जरी कां ओक्सिडेंट करी।  
दोष येईल तुमच्यावरी। म्हणोनि सदा जपवों ॥१५॥

कॉलेजकन्या असता वगाल। डिफिकल्टीज नसाव्या जास्ता  
नातरि बसे अग्नि नेवांता थंड तुम्हा करिल तो ॥१६॥

हीच येथलीं असे व्यूटी। अग्नि करी हिवाची व्यूटी।  
मानावी खरी अथवा खोटी। 'फॅक्ट' म्या सांगितली ॥१७॥

कॉलेजकन्या हुबार नसता। मार्क जास्त तिने मिळविता।  
विचार त्यावरी न करिता। स्वस्थ बसणें उचित पै ॥१८॥

ज्यास वाटतें कीर्ति व्हावी। कॉलेज-कन्येची ओळख ठेवावी।  
येता जाता नमस्कारावी। कॉलेज-कन्या, तत्व ही ॥१९॥

आहेत गोष्टी अगणिता तरी ग्रंथ-विस्तार होता  
म्हणोनी न समजें उचित। ये वेळी वाटतें की ॥२०॥

ऐसी ही कथा सुंदरा। जरी म्या वगिंली साचारा।  
तरी उरी धडकी फारा। 'कॉलेज-कन्या' भौतीना ॥२१॥

म्यां कथा सांगितली जरी। अनुभवली नाही गोष्ट खरी।  
वर्तनी पाहिली दुःखाच्या परी। वीतिसाव्या सालात ॥२२॥

इतिश्री कॉलेज-लीला ग्रंथा असे सदा मिहाना समता।  
म्हणोनिया श्रोते परिसोता प्रथमोद्यया गोड हा ॥२३॥  
॥ श्री कॉलेज-कन्यापरमस्तु ॥

होलकर कॉलेज-पत्रिका १९३६ ये

## Marathi Literary Association

The association is working vigorously with Mr. S.K. Nirkhe as its secretary. Lectures by Prof. Altekar, Prof. Chaphekar and Mr. J.S. Karandikar, were organised. Mr. S.K. Nirkhe edited the "Seva" which has been published in manuscript and kept in the Literary Exhibition of the All India 20th Marathi Sahitya Sammelan. The Association is proud that our College has sent two of its members, Messrs S.K. Nirkhe and B.N. Pandharkar, as delegates to the 20th Marathi Sahitya, Sammelan

- 1936

# Science

## Congress at Indore in 1936

The Twenty-third Session of the Indian Science Congress was opened on Thursday, January 2nd, 1936 at 5.30 p.m. by His Highness the Maharaja of Indore in the King Edward Hall, Indore City, in the presence of a large gathering of delegates and visitors. The Chairman of the Local Reception Committee, Dr P. Basu, welcomed the delegates and visitors in a speech as follows:-

"Your Highnesses, Ladies, And Gentlemen,

As Chairman of the Reception Committee of the Twenty-third Session of the Indian Science Congress I give me great pleasure to extend a hearty welcome to the delegates of the Congress assembled here to-night. They represent the best men of science in India, many of whom have achieved distinction in helping to extend the bounds of knowledge in various branches of scientific study and several of whom have established for themselves worldwide reputation for original research. I should not miss this opportunity of letting them know that Indore justly feels proud of having the honour of welcoming such distinguished scientists and providing a forum for them to discuss important scientific discoveries to which they have so ably contributed.

Ladies and gentlemen, when I talk of scientific discoveries I wonder how many of us present here fully realize the astonishing and bewildering changes which science has introduced into our ideas about the nature and structure of the universe of which we form a part. I am not a scientist nor even a student of science. But as average laymen we cannot but have an interest in what is going on around us. Scientific discoveries react upon the laymen whose ideas may not be quite accurate but which have or ought to have an interest even for the technical man. Science has made many things familiar to us and introduced vast changes in our ways of living. The exact nature of these things is yet unknown and their ultimate structure is yet the engrossing subject of research. But science has been grappling with these problems with greater success and ever increasing zest. Although the achievement of science has been extra-ordinarily great in the present century yet the final mystery has so far eluded its grasp. Pandora's box is being attacked with increasing success and new wonders are being revealed to us almost every day. To the ordinary man unacquainted alike with the highly specialized subjects of scientific study and with the

evolution of the extremely delicate technique which is involved in scientific experiments the conclusions of physical sciences would appear to be incredible but for the wide and numerous confirmations by their practical application in the affairs of daily life. The practical results of conversion of sound into electricity and its reflection back from the ionosphere as seen in broadcasting, of ultra-violet and infra-red rays for therapeutic and photographic purposes, and of radium in various medical uses as also in accurately estimating the age of the earth from the helium and lead content of deposits have immense value to all human beings.

Physics with its complex mathematical formula has transported us to a stage where the new idea regarding the universe and its constituent factors is utterly strange to the traditional picture of the universe as it appears to the senses. On the one hand it has discovered the operation of the basic forces of the universe and tells us that it is finite but expanding in space, if space has been left with any meaning now, and that yet in the geodesic revolutions it is infinite. It informs us that we are being continuously bombarded by the mysterious cosmic rays, the source, origin and nature of which are as yet only hazily comprehended but which obviously have tremendous influence on the life and conditions on earth. Daring but fruitful experiments have been successfully carried out by which, in quest of nature's secrets, man has ascended fourteen miles above the surface of the earth. The imaginative stories of H.G. Wells which delighted us in our childhood no longer appear as fiction but threaten to be less romantic than the proven facts of the physicist.

Looking, on the other hand, to the structure of the constituent element of the universe physics tells us that matter is nothing but frozen energy and that the much familiar yet mysterious ray is probably the basic factor of which the universe is composed. It is yet a moot point whether this basic factor is merely a wave or a particle or both. The old philosophical question on whether we exist in the ultimate sense is raised again by the work of the scientist and we are no nearer the end of our perplexity when we are told that what we see are probably point events in a geometrical configuration, mere depressions in a vortex of energy.

For long we knew matter as composed of elements and the elements as composed ultimately of atoms which were

indivisible. Lockyer's experiments with variations in the spectra of heavenly bodies and the law of periodicity raised doubts and indicated a more complex constitution of atoms. Even to-day the largest atom remains invisible even under the most powerful microscope. But it has been split up into parts which are a fraction in several thousands of the lightest atom. These are of course invisible but the ingenuity of the scientist has had photographs of the passage of electron and revealed its behaviour as electricity by photographic picture of its deflection under the magnet. Without understanding the technical arguments one can read with pleasure the romance of proton, electron, and photon and wonder with the scientist whether we have yet reached the core of the originally indivisible atom.

In biology no less wonders have been achieved although they are less widely known. Darwinian theory of evolution has undergone considerable modification. Heredity and environment have been studied in greater detail with reference to variation in the species. A new science of ecology has grown, the application of which is bound to revolutionize man's existence on earth. Whether in studying the extension, modification, or disappearance of species in plant or animal life ecology must form the basic study in future. Its practical application in many of the south sea islands has helped man to live more comfortably over wide areas.

In heredity the old traditional idea of the mixture of blood has long been exploded and now we are right in the midst of the intricacies of hereditary transmission of characteristics as the scientist has passed from microscopic chromosomes to ultramicroscopic genes. They not only remain constant for the species but determine the minutest details of what are transmitted from the parent to the offspring. Now we understand the reason why the great improvement in medical science has been unable to deal with hereditary diseases and has had to content itself mostly with what may be called contact diseases. Nature's protective measure for genes has remained unpenetrated although its working through the principle of dominant and recessive characteristics has been revealed. The progress of the science of eugenics is based wholly on the understanding and application of this principle.

Another momentous discovery of biology is the function of the ductless glands. As a boy I read in my text-book that these were remnants of organs which in the course of evolution had lost their functions and had thus been reduced to mere accretions. To-day it is known as a certainty that hormones have a dominating influence on the whole life including mental temperament and character. Besides the gonad and adrenal glands the importance of the thyroid gland has been studied with some detail. But the pituitary gland which is just below the brain is suspected to be the most important of all glands, determining and co-ordinating the working of the body as a whole. Indeed it is probable that we shall soon start saying that the pituitary gland is life itself.

One hundred experts from seventeen countries met at London last month specially to study this particular gland. There is no doubt that medical treatment will undergo a revolution if the exact functions of these glands can be properly understood and their working controlled. In a sense the discovery of insulin has made man independent of the islets of Langerhans.

The borderland of physiology and psychology is being successfully attacked, and mental phenomena are being scientifically studied as manifestations of the individual as a whole. Psycho-analysis has studied more deeply than any other science the working of human mind as manifested in types of thought and conduct. The explosive effect of the subconscious mind has for the first time explained the impulsive aspect of human conduct. As in Darwinian theory of evolution so in Freudian theory of libido, too much emphasis is found to have been given to one aspect of the cause. Inhibition by repression in general rather than of one particular type is now known to be the dominating force in the subconscious mind. The main problem which now remains to be solved is the development of the technique of interpreting the manifestation of the subconscious mind as this expression is in terms of the cruder symbols by which the individual had been used to think or express himself in his childhood. The manifestation naturally varies according to the individual and more according to the social atmosphere through which he passed in his childhood. But the problem is being successfully attacked where details of the individual's early history are well known. There is no doubt that in course of time our ideas both of education and of treatment of the delinquent and the criminal will undergo fundamental changes.

The so-called spiritual phenomena are being studied experimentally and have, in several cases, been found to be mental reactions to the environment in conjunction with the subconscious mind. The simple psychological reactions of man in conditioning, de-conditioning, and re-conditioning of reflexes have all been demonstrated in animals in the famous experiments of Pavlov. Similar experiments by Watson have been successfully performed with the human child and the simpler phenomena of the child mind have been found to be very similar to those of Pavlov's dogs. We need not yet trouble ourselves with the more distant implications of behaviourism or impressionism which as a side issue has recently attacked the domain of man's aesthetic expressions. But there is no doubt that psycho-analysis has progressed so far that it expects soon to be set up as a more or less exact science. The implication of this to man's life is indeed great, much greater than even the scientist realizes. It can be found in some modern tendencies which appear to be somewhat pretentious as can be seen from the clinic of psychoanalysis, in one of the reputed centres of Europe, which purports to cure a woman of the mental disease called jealousy.

It is not necessary for me further, to pursue the picture which is growing in the mind of the average layman as a result of



recent scientific discoveries. In less than a century conditions of human living have entirely changed. The nature of human existence has changed so much that it is almost unrecognizable. The human mind has been able to grasp the nature of things in a way that was not possible a few centuries ago. The human mind has been able to grasp the nature of things in a way that was not possible a few centuries ago. The human mind has been able to grasp the nature of things in a way that was not possible a few centuries ago.

In the social world there have been constant attempts by many different groups to prove the truth of their position more potent than even scientific facts. The method of doubt and of correction by positive proof which science has borrowed from philosophy and the technique of which it has taken the life and the heart, have been used by all the different groups and their particular aims, methods of thought. Thus the struggle to attain their ends, to attain the completion of their aims, is connected to the fact that the individual is placed in a position of competition with other individuals and communities and that the individual has been irresistibly awakened toward social responsibility as the only guide to action and success through the only restraint on emotional expression.

There is a subtle aspect to what the social scientist has been inaugurating in science. The proverb that the old order changes, leaving place to new one, or experiment follows to more basic organization, was conservative to a high degree. Certain social reforms have appeared to break down this conservatism. But more in the direction has been the needs of scientific discovery than that of any other social force. Upon the nineteenth century science, rather than religion, was the source of the idea that human science gives us the better or worse it pursues more serious things but scientific method and scientific ideas have diminished the old religious and moral ideas dominated by a persons God. In this respect, religion has failed to develop and to the detriment to science. A scientific conception of the universe originated our earth from the center position which it had occupied under the Hellenic system. It spiritual matters most still remains the spiritual culture and things seemed to be the pivot of the universe. Thus he shows himself to remain the center point of interest and care of the hands of a benevolent God. This is due to that a deity is considering himself as the most important item of creation. Science has proven that earth is a mere fact in the state universe the sole universe of order, part of the physical system and

application of conclusions is to be as deliberate as in the applied science like medicine or engineering, the equilibrium in the developed human personality can only be achieved by patient work pursuing objective laws and eliminating all subjective aberrations. This is vital to man's future, for in the absence of such adjustment leading to intellectual and emotional balance, he, like Faust, may win the world and yet be damned. Biology and psychology seem to have already started on the way. Their conclusions must be applied by medical science and education, of which the latter is hardly conscious of its function in this direction.

The scientist pursues knowledge for its own sake. There is no doubt that this is a high ideal, one of the highest that humanity has ever attempted to realize. But his work has also a practical bearing both from the cultural point of view and from that of greater efficiency. Without this the leisure, expenses, and facilities which must be provided to the scientist in an increasing measure cannot be guaranteed. Also as a pragmatic end the welfare of man, both material and cultural, is not a negligible objective to be pursued. I hope that attention will be directed to this aspect of the question and that the necessary technique for developing a comprehensive science of knowledge and its successful application for the betterment of the human species will be worked out in the same way as specialization has been pursued in all branches of human knowledge. This cannot be undertaken by the layman but must be done by men who have been highly trained in the scientific method. At present the whole work is left to private enterprise working for personal profit. This is not only insufficient but dangerous to society in any case it leads to great wastage of men and materials and does not utilize the opportunities as well as they might have been. I believe that

There is a general feeling that the layman does not fully appreciate the work of the technical man of science and tries always to calculate things in terms of practical result. This is no doubt true but only to a limited extent. It is human nature to be more interested in what directly concerns it. Yet the opportunities which society offers to the scientist for carrying on his work have materially helped him in the pursuit of knowledge. To rouse further the layman's interest and make him offer greater opportunities to the scientist for carrying on his work little has been done by the scientist himself. For half a century after Huxley scientists have done little to popularize their discoveries and make them available in forms which will be understood by the average layman and which will interest him. In fact, even the expert in one specialized branch cannot always follow the work of another specialist in an allied branch of science. In recent years the work has again been taken up by men like Jeans and Eddington.

Ladies and gentlemen, I fear that I have now exhausted your patience. But I hope that I have not bored you more than what it is customary for a chairman of the Reception Committee. He seems to be the only man who, on an occasion like this, has the privilege of giving expression to the layman's

feelings before the technical experts. I have now only one pleasant duty to perform. His Highness the Maharaja Holkar has kindly consented to open the Twenty-third Session of the Indian Science Congress. We know the number of social engagements which he has got to keep and in which he plays a gracious part. We are therefore grateful to him for agreeing to come here to night. I now request His Highness to declare this Congress open.

His Highness the Maharaja of Indore as Patron of the Congress, then addressed the meeting as follows:

#### LADIES AND GENTLEMEN

A group of distinguished scientists have assembled here to discuss the work they have been doing during the past year and I need scarcely say how much pleasure it gives me to greet them in my Capital. I am a layman in scientific matters and I know that you will not expect me to make a show of an audience that do not possess but I am also the Ruler of a State placed by destiny in charge of the welfare of lakhs of people and any thing that furthers the welfare of mankind naturally arouses my keenest interest. It is therefore in the practical results of scientific research and their application to the improvement of men's everyday life that I try to do my greatest endeavour.

All the numerous branches of scientific activity—medicine, agriculture, veterinary work, psychology, psychoanalysis, metaphysics, mathematics, what we take together under the general term "science"—can and should have the common meetingplace, the betterment of human life. Science can do or must it render man any greater happier and healthier and would like to remain upon a few of the ways open to us by which we can take advantage of modern scientific discoveries. India's greatest problem is her poverty, add to that the vast size of the Indian Continent and the fact that it is still despite the industrialization of a few centres, almost entirely an agricultural nation and one at once realizes how difficult the application of modern methods of the results in short of scientific research and discovery can help us in the solution of this problem. The diffusion or distribution have largely been removed from the general and the very few examples the problems of increasing the yield of the soil and of using our vast natural minerals resources the land and the modern research efforts of our scientists and the application of the results of their labours. For the proper taking of the soil the sowing of scientifically tested seed and the thorough exploitation of the wealth lying beneath the ground can and our duty ought to encourage India from a poor country to one of the richest countries in the world. Our scientists, experts are not very numerous, neither ought to be this and one thing which will, there, have to be done before we can really do an adequate outfit of labour, that is to get and to carry on an ever-increasing propaganda is to raise the standard of the university, colleges, schools, and those of

London and of other famous places of learning. We have a great many famous scientists—Sir Jagadish Chandra Bose, Sir C.V. Raman, our President here to-day, to mention but a few—but are our young men receiving such training as will enable them to take the place of these great scientists when they have passed on?

To return to the problems before us, in many places including I am happy to say, Indore—efforts are being made to improve agriculture, to improve not only the Kisans' implements but more especially the quality of the crops he sows and our scientists have made some notable contributions to man's knowledge of plant life. Moreover, science has widened our vision of health and hygiene in the past, the common people that was almost of fifty years ago. Medicine has preventive and curative has advanced rapidly and in general the scientific study of economics and social behaviour has improved almost beyond belief the possibility of our one day seeing a whole nation of healthy men and women. It is not, Ladies and Gentlemen, lack of knowledge from which we suffer, our problem has mainly in the dissemination of the knowledge we have. India is so vast, the habits of its people so conservative, and their poverty so heart-breaking that it is extremely difficult for the few that have the necessary knowledge to pass it on, whether they are the scientists themselves, or governments, or public-spirited individuals. The Co-operative Movement, in which I take a keen interest in Indore, is capable, when properly developed, of being used as an instrument for the education of the people in scientific matters and also as an instrument for the supply and distribution of scientifically prepared seeds and implements—as I understand is being done in Mysore while for the dissemination of knowledge, see the U.P. Government have been trying out a scheme which greatly interests me—I refer to that Government's efforts to educate the peasant not only in agricultural matters and methods but also in hygiene and in elementary medical attention by means of a cinema which, accompanied by experts, tours the villages on a lorry. In the Punjab I believe some progress is being made in the education of the village by means of wireless. All these are examples of the application of modern scientific discoveries to the improvement of man's lot and I feel sure that this practical side of science is one that you realize as much as I do, for I see that your President this year is Sir Upendranath Brahmachari, who is not only a distinguished medical practitioner of long experience but also a research worker of no mean attainments. In this same field of practical science I must add a word of welcome to the National Institute of Science—an All India organization of which we have stood for long in great need. I am more than glad that at last it has come into existence and I am delighted that its first meeting should be held here in my Capital. Moreover, it is fortunate in having as its first President Sir James Fennell who is in charge of the Geological Survey of India, a Department of the greatest practical importance in extending knowledge of our natural resources.

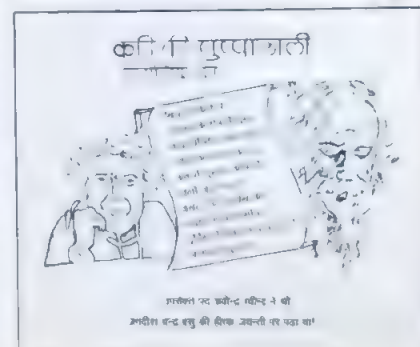
You may perhaps feel that I have over-stressed the practical side of scientific work, but that side, Ladies and Gentlemen, from the points of view both of the peasantry and of the Ruler of a state, must always take pride of place. Nevertheless, the practical application of scientific discoveries is two-edged, while men of goodwill are straining every nerve of science in the cause of humanity, others are degrading the great achievements of that same science to the destruction of their fellowmen. The numerous armed conflicts at present raging in many parts of the world are essentially a battle between destructive science and an uneducated peasantry. This is a problem for which, I confess, I see no solution, yet for the salvation of mankind it is essential that science should be an instrument of construction and of peace, and its lethal destructive potentialities should be controlled and checked in the interests of humanity.

Finally, I see a danger to which we in India are exposed, we are in danger of losing our own great heritage in this newer science that we have taken from the West. We have an Ayurvedic system of medicine which should be studied in the light of modern scientific principles. Up to the present, except for a few isolated workers, the scientific world has held rather disdainfully aloof from India's indigenous medicine. This is a great pity, why should scientists not keep what is good in it and reject only those parts which are proven bad or faulty? I commend this point to your attention, Ladies and Gentlemen. Moreover, medicine apart, India has a philosophy and a metaphysics of her own. For centuries she has enriched herself in philosophy, in the development of the mind and the soul, to-day she is beginning to enrich herself scientifically, in the development of the intellect. Now there are things that so far have proved incapable of intellectual explanation, of scientific test, even perhaps, of intellectual or scientific comprehension. India's practical combination of psychology and physiology in what is known as the practice of Yog has been proved to be capable of results in improving the strength of the body to say nothing of the spiritual achievements to which it lays claim. Surely this can be rescued from ignorant hands and be scientifically examined. It was a practical thing centuries before the West began playing with hypnotism and allied phenomena of the sub-conscious mind. Yet these things exist and the greatest scientists of the West are beginning to find that something more than "pure" science is required to explain them, it is said, indeed, that the West is turning to the East for help in these matters. And may I not be that the explanation is to be found for these curious phenomena of the mind and spirit in our own Indian philosophy? Ought we not to combine our enormous heritage of philosophy and metaphysics with this comparatively new science that we have taken from the West? I fear that, as the 19th century in Europe lost God in the laboratory—if I may put it in that way—so we may lose all that is good in our ancient heritage owing to our over-enthusiasm for the new. In a combination, on truly scientific lines, of the good of both I see a meeting-ground common to all humanity, standing whereon it will no longer



be possible for men to say that "East is East and West is West and never the twain shall meet."

Ladies and Gentlemen, I now have great pleasure in declaring this Congress open and in wishing it all success in the great work it has undertaken.

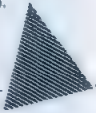


गणेशाय नमः  
श्रीगुरुभ्यो नमः



# The Roll Call of Honour

- C.N. Desai, M.A., Ph.D.



Next in importance to Principal Cholomondeley comes Dr P.C. Basu, who had taken over for a brief period of time and was later on appointed as Principal of Holkar College in 1927. I say that he is next in importance, for the plain reason that no other person except Mr. Cholomondeley was in charge of the helm of affairs for such a long time, about 14 years. He had enough opportunities to build up some traditions if he wanted to, and Dr. Basu used this to some very great advantage for the College. He was a strong person as a Principal and in the early days was almost unbending (so the students thought!) and in the first year or so, kept himself rather aloof from the mass of students. But as years passed, he mellowed into an affectionate Principal, who did so much for the College.

I remember the day he took over as Principal. We had assembled in the central hall on the ground floor, and somehow that atmosphere was not very friendly towards him. Prejudices die hard and Dame Rumour wields her tongue to very great effect. He was supposed to have been a man of the Prime Minister, Shri S.M. Bapna and students were prejudiced as he came after men like Shri Gokhale and Mr. Pearce, both of whom held rather liberal ideas regarding attitude towards the students which should be adopted by the authorities. Dr. Basu felt that things were in a bad shape and wanted to build up on a more solid and stable basis. Whatever may have been his desire at that stage, his action in dissolving the old Gymkhana - the Students' Parliament and substituting a new constitution was not liked by the students. There was a good deal of opposition and a lot of friction. But slowly things improved and Dr. Basu began to set his mark on whatever he started handling. Methodically, and with a foresight, he started schemes for the College without putting any demands for these on the Government and the result was outstanding.

I refer to the scheme of compulsory games for students. Every student had to play at least three times a week any game of his choice. None could escape. If a student defaulted, his name appeared next day in the morning on the notice board with a fine of annas eight mentioned against him. The boy could escape it only by producing a certificate from any professor or lecturer in charge of any batch of any game, that he has played an extra turn and then was exempted. The College fields were humming with activities after 3.30. There were six volleyball courts, two hockey fields, two football fields, six tennis courts and two nets for cricket practice; but these last were not for all. It was a sight to see the college grounds after 3.30 p.m. All members of the teaching staff had their duties allotted to them to supervise these games, which was counted towards the total number of periods which a person had to take. Not all were interested in this scheme, but Dr. Basu persisted and the rewards were great. The College was humming like a beehive. We produced some very great players, in whom Dr. Basu took personal interest. In tennis, we had the green Chummanial, who humbled Japanese Champa, the great Kaul brothers, 'Maharaj' and 'Juggi' (as they were affectionately known) who played, in All-India Tennis, in which Juggi was ranked sixth at one time. Then there was Jiwan Nagu - the present D.I.G. Police at Bhopal - (it is so difficult to remember the real names of these stars of the College that I should be excused if I refer them by these names), and Kedar Nath Kakkar and his brother D.N. Kakkar. In Hockey, we had Murali Zutshi, who later on built up the famous Tikamgarh Team with an All-India reputation. In cricket, we had the famous Jagdale, Bala as he was affectionately called, R. Subramanian (the son of C. Ramiah of the Agricultural Institute in Indore) and Yusuf Ali, who played in Ranji Tournaments. I forget names, but look back over that period as period of some fulfilment. Dr. Basu was himself a good player of cricket - I have some faint idea that he was in the first eleven of his College in Calcutta, but I may be mistaken and always played in the Staff vs Students match, played each year. He would come for some practice on the previous day at the nets. Members of the staff who were genuinely interested numbered quite a few. Professors Borgeonkar, Yarday, Paramasukh Mathur, Kaushal, and the then Dean of the College, Syed Sagor Ali, Padmanabhan - these were a few of the many. Later on Professor S.N. Dhar was for years in charge of football and refereed a number of matches in Indore.

Another scheme was the tutorial scheme, which our College was the first to implement in the Agra University. Batches of students between 6 to 8 had to have a tutorial per week in each subject. It forced the students to read. When I once complained to Dr. Basu that it meant a great strain on us, for we younger members had to examine about thirty to forty scripts per week, he smiled and said 'You fool, who asked you to examine the answer books? It is meant for the boys so that they work. Just check a few, keep in touch with the good boys and exempt the best from any such work and ask them to read and guide them.' I remember a very

interesting incident in which I was concerned. Mr. Owen, Director of Education, Jodhpur State, came as an inspector to our College, and at that time, I was taking tutorials in History in addition to English, and the students had answered a question on the achievements of Cromwell. Dr. Basu and Mr. Owen came to my room, and Dr. Basu introducing me spoke to Mr. Owen. 'Here is my young lecturer. Have you the courage to examine his work?' Mr. Owen took the challenge and asked me to handover some copies. He was shocked that the boys had praised the achievements of Cromwell. 'But this is nonsense. Cromwell was a regicide!' I told him that since the time of Carlyle, opinion has changed and English Historians have now accepted Cromwell's greatness. I also showed him the Books prescribed for study - Warner and Martin's Groundwork of English History. He was not reconciled. But Dr. Basu intervened. 'Oh Owen, you have forgotten your history! And remember, this is Holkar College. We have only first class men on the staff.' This may not be very true but this faith in us and pride in his own college went a long way in endearing him to his colleagues.

Dr. Basu was an exceptionally good teacher, who had the knack of making even the most difficult economic matters appear easy. I was never a student of Economics, but reports from all were of this nature. He had developed a method. He never went to the class even if it were First Year Intermediate without preparation. He lectured in public also, but here too he was systematic, going through some relevant books before he opened his mouth. Thus he always knew what he wanted to say. He was a very strict disciplinarian, which irked some people. I do not remember his having not taken a class, if he was in station - this, even if he had come to Indore by the morning 9.30 train! Naturally, he expected the same sincerity from us, at least from younger members of the staff. When I went to see him after my appointment, he gave me this advice. 'Remember, my boy don't go to the class unprepared, don't leave the class before time, and don't go to it after time. All this will upset discipline. If you have finished your topic and there is some time, keep the boys engaged, by asking them questions or making them write. But your leaving the Class early would disturb the other colleagues'. I may make bold to say that I have tried to follow this advice during the 34 years of my teaching activity. His easy and happy way of lecturing was amply seen by people when he came to Indore almost after eighteen years, to address the Convocation. He had been forced to accept the invitation by Dr. W.V. Bhagwat, when they met in Agra. Dr. Bhagwat was not prepared to listen to any excuses or arguments and even Dr. Basu, when he saw the sincerity and feeling behind the demand, consented.

This brings me to the most important incident in the history of the College. During the 'Quit India' agitation, students had boycotted the College. The then Prime Minister of Indore, Col. Dina Nath, asked Dr. Basu to report the names of the

students who were absent, so that they could be rusticated. Dr. Basu refused, saying that students could remain absent for 25 p.c. of the working days, and hence it was desirable that the matter be not tackled in the manner wanted by the P.M. This resulted in the Govt. suddenly retiring Dr. Basu prematurely. Col. Dina Nath was never very popular as an administrator and was very much disliked by the Praja Samiti - the Congress organisational body in the States. The students were incensed and Dr. Basu rose to a height of popularity which even he had never expected. He was a man of principles and left the Principal's Bungalow almost the next day, shifting into the Dawk Bungalow and putting off his furniture to auction. He would not stay a minute longer than was absolutely necessary, and when he left Indore, the street from the Dawk Bungalow to the station was literally strewn with petals! No Principal got such a send-off and when after eighteen years, Dr. Bhagwat almost coerced him to visit Indore, on reaching the railway station, he broke down with feelings - as he rarely did. He embraced me and other members of the staff, and was visibly moved. When he came to the College he wanted to feel the ground with his own feet, walked all the hold over, in spite of Dr. Bhagwat's request that since a car was ready and he was an old man could move in the car. But Dr. Basu would not listen to such a suggestion. Though his stay was scheduled for three days, at the request of many friends, he was prevailed upon to stay for fifteen days, - due largely to Dr. Bhagwat's clever persuasion. Dr. Basu almost re-lived his past life during those memorable days, and seemed to have grown younger by twenty years! Such was the man who built up this College during the fourteen years that he was in charge. He was three times the Vice Chancellor of Agra University and twice the Chairman of Ajmer Board, in both of which the College began to occupy a very significant place.

Another scheme of his was the introduction of General Knowledge as a compulsory subject for all students. We arranged talks on subjects of general interest. The curriculum was notified well in advance, and the scheme produced an intellectual awakening among the student community, but created awkward situations. 'What was the capital of Australia?' Even Dr. Basu hesitatingly asked Prof. Dhar whether it was Canberra. 'What are the names of the planets?' 'Which is nearest the earth?' 'How does a cycle pump work?' 'What is a thermometer, a barometer, a thermos flask?' 'Who were Pasteur, Lister, Sadi, Firdausi, Bana, Bhavabhuti, Saratchandra Chattopadhyaya, Jenner?' 'What is a serum and what is incubation period?' Explain the terms, L.B.W., Foot-fault, double fault, penalty corner, sticks, penalty bully, offside, hat trick, gooley, leg trap, centre half, throw in cricket and such things. It sometimes tested the knowledge of the teachers also who had to hunt out the necessary information! But it was a welcome innovation and later on, the Ajmer Board introduced a special paper of such a type for its Intermediate Examination.

The students used to stage dramas every year in Hindi and in Marathi in alternate years for the benefit of the Poor Students Library. We used to collect contributions from our old and present students, and the rich contributed liberally. Sohanlal Sanghi, Sethi brothers of Manik Bhawan Rajkumar Singh, D.K. Kasiwal, K.M. Bapna and Seth Hiralal all gave willingly and happily. Dr. Basu was very solicitous about the actors. He attended the performance, and after the first act, would go into the green room, compliment the boys on their fine performance and insisted upon seeing what arrangement was made for their meals after the drama was over. And then, he would insist upon giving a very good tea-party to all those who assisted in the performance! His loyalty was also fixed. As long as he was the Principal, all photographic work must

go to Prataprao Jadhav. The Staff Club would have dinner every two months, and the contract must go to Damuanna - this was his clear instruction to me as secretary.

He is now old - perhaps past eighty five - and leads a quiet life in Calcutta, which he richly deserved. Students of the two College into which this great institution has been split by the wisdom - or otherwise! - of the Government would be failing in their duties to their own Alma Mater if they forget such a personality.

- From Holkar Science College Bulletin (1971-72)

### Holkar College, Indore.

Statement showing the figures of actual expenditure on  
Baddal Mushahira grant for the year 1924-25.

Head	Amount.	Remarks.
Budgetted salaries including savings.	49343-1-5	
Special	9800-0-0	
Dearness Allowance	577-4-5	
<del>General</del> Cabinet Reserve	957-0-0	
General Reserve.	424-4-0	
Total	61401-9-10	

Rupees sixty one thousand two hundred and one, Annas nine and Pies ten only.

*Y. G. Ghosh*  
HD Clerk

*J. Ghosh*

PRINCIPAL

## Dr. Basu, my Brother-in-law.

- Prof. Satya Vrata Ghosh

I was spending my days at Behrampur Detention Camp in the midst of hundreds of like minded young men of Bengal, all suspected of revolutionary activities. Though the government had no evidence to charge us in the court of law, a committee of high court judges examined our cases on the basis of police reports. They held that we could be put behind bars for an indefinite period. We, thus, had an uncertain future.

It was mid-January 1932. I was one day called to the Camp office and was served with the government order of externment. It read thus: "The said Babu Satyabarta Ghosh, alias Runu, shall not enter in, remain in and reside in any area within the presidency of Bengal." At the bottom I wrote: "I shall proceed to Indore." That was the understanding reached between my elder brother, Principal Devaprasad Ghosh (later president of Bharatiya Jana Sangh) and the government of Bengal. The order was served on me by Ginja Bhushan Datta, the father of now famous filmmaker, Utpal Datta. They were my neighbours in the home-town of Bansal (Bangla Desh).

I started for Indore and reached the well-known Holkar State on the 22nd January 1932 at 5 p.m. The escort consisted of an Inspector of Intelligence Branch, Sudhanshu Gupta, and six constables. At the station I found Dr. Pratfulla Chandra Basu and his only child and my young and beautiful niece, Kalyani, known at home as Dolly. With the tripartite formalities over (the parties were the police of the Holkar State and of British India and my brother-in-law), we drove home in a Fiat car (Italian make) driven by Sardar Arjun Singh. He was a very dependable member of our 'household'.

My elder sister, Prem Nalini Basu, came down to receive me most warmly. She used to be always bed-ridden and could not go to the station to receive her youngest brother. But that never made her love any less warm. In a small family of three I was the fourth member.

From our childhood days, we at Barisal, used to regard not only Indore as a distant place but also Dr. Basu a distant entity. Even the young 'Jor Ju ka bhai' could not feel intimate. But Dr. Basu was internally not only affectionate but also very attentive to our all round needs and developments. In a few days I realised it. And he also realised that a 'Dhot-clad' Bengali Babu would be a misfit in his highly westernised aristocratic household. Within almost minutes of my arrival,

S.B. Akolekar (physical instructor at the college and a manager of our household) was summoned. I was taken to the family tailor in the Chhaoni area who was asked to stitch a few pairs of trousers and shirts within 24 hours. Woollens would take a few days more. Dr. Basu 'fiat' had its imperium. The next evening I had the rehearsal of the newly stitched attire. My niece gave me an o.k. Thus dressed I was taken to the college by Akolekar and was introduced to G.K. Yarde, the head clerk. He was almost an institution. My admission was just a formality.

I was taken from one class to another. Chemistry was headed by Dr. S.S. Deshpande, physics by Prof. N. Padmanabhan, Prof. V.G. Gole taught me Mathematics though there was another professor, I.J. Cornelius. Prof. Harijeetan Ghosh was the head of the English department with Prof. D.M. Bhargava as a next man. Later I had the good fortune of working under professor Padmanabhan, Ghosh and Bhargava as principals. Though I was an unknown entity, my arrivals was already known to every one. I was warmly welcomed.

In the college, I felt the presence of Dr. Basu every where and in every thing, more so in the matter of discipline and punctuality. All items were properly organised and done on time. Even on the tennis courts one would feel his unseen presence. But he never took advantage in the classification of tennis players in various 'courts'. The best 4/5 players constituted the 'Tennis Four'. J.K. Kaul, M.K. Kaul, M.G. Kiplani, R.N. Nagu were there. But a player from a lower court could challenge a player of the higher court and occupy his place. 'A' court had Dr. Basu (not by courtesy but by his quality of tennis), Prof. N. Padmanabhan, Prof. Bhargava, K.N. Kakkar and others. We, the beginners, started with 'C' court and gradually went up to 'B' and 'A'. This hierarchy had the imprint of Dr. Basu's impartial attitude and action.

Back to our domestic life which was not very different. There was not much of a home life as is commonly understood. My sister was out of the scene. The 'Master of Ceremony' was all alert and efficient. He was always busy but his eyes did not miss a single item in the household. Yet, he would hardly speak out and never shout. Every one knew what was to be done and when. None failed. There was thus no need for the show of lungs power.



People were mortally afraid of him to be late. Once Holker College was hosting a meeting of the Executive Council of the Agra University. Dr. Basu was the Vice Chancellor. Some members, mainly ladies, had gone to the city for shopping. They got late and returned all panting just on time for the meeting. The Vice-Chancellor, their boss, had a hearty laughter and remarked; "I am not tiger though coming from Bengal. You need not be so afraid of me. Be afraid of your own folly, to be unpunctual". A great lesson so lightly told.

Dr. Basu also know how to relax. On the tennis courts he would freely cut jokes and enjoy the game. Others would enjoy the atmosphere of freedom. On the way back he would be invariably accompanied by friends, usually Prof. ...C. Dhanwal, K.M. and P.S. Bapna. They would all sit on the terrace and be almost boisterous till the dinner time. On most days they would sit through the dinner but not partake. We were non-vegetarian while they were strictly vegetarian (Manwan Jaisin).

exemption from the general knowledge paper on the ground that his father had just died. He was summoned by the principal who was a 'terror'. The boy appeared almost trembling. Quick and loud came the question; "How many fathers do you have?" The boy was fumbling and somehow said, "only one, sir". The second 'shot' came." It is then that your father is coward, for, only the coward die many times before their death." When I meet that friend even now we remember the joke and have a hearty laughter. On that occasion, however, he was in no such position. He just ran out and had to take his general knowledge exam

One day I gathered courage and asked him; "you have so much work in hand, how do you find time for patience. It is an idlers' pass-time?" He was somewhat surprised at this candid question. The simple answer was; "I have time also for patience because I have so much work in hand, as you say". I was somewhat confused and asked for a clarification. Pat came his explanation. "I am certainly not the busiest man in the world. But he also has a day of 24 hours and manages all his work within that frame work of time. It is only a matter of organising the time in the right way." At that time Dr. Basu was the Vice-Chancellor of the far-flung Agra University and the Chairman of equally far-flung All India Board of Education, the Chairman of the newly started Holkar State Civil Service which was his brain child. He was the advisor to the administration in financial matter. Yet, he had time for tennis, friendly talks after the game and also for 'patience' and Hukka. I learnt another great lesson from him, a small but significant sentence, often repeated "if you want to maintain contact, reply to letter promptly. Otherwise, you may not over reply". How true. I realise it now and practise it also.

१९३१ मी इंदुरती जाणाली आणि होळकर कॉलेजजॉल युजियवर इंटरला मला घालून बसविण्याहता आणाली मिळविली एण पथम आनी तो सरस्वर निवम वास्तविकत अरुल्लो किच आनी केळकर कुटुंबाचो पवित्रय नुनो होला एण धर्निच रांयंच नवलेत अस्त तेत यावचे कारणांनी लेखिका माझ्या मातेशीं भिरवायनाई केळकर भाग - ग्याकांरच्या - पावयिल्ले नवलेका आणि गजतनच्या व्याख्याचो हाच्या कमणावाई किचे हांनी कार्यास लेखून नवले नाही एण त्या व्याख्याने मात उत्तम देत. त्यांची वाणी अजयत मधुर होती आणि त्या व्यापारीनांदावर उत्तम राहून प्रबलनिवाचन वाच - वचदा वचत वाचत पा दोषो विवर्णीची सप्तमासमिवाचन गात देत. त्यामुळे अर्थवाचन शक्यता सहे निर्माण जाला सप्तमासमारांवांची अग्र्यक्ष नव्युत आनंद -तीनचा इंद्रला दोसो तेव्हा ती किच्यांयकांयचे उरलेली होती माझ्या वडिलांना बांधला पावत होता व ते अधिकारी अस्तन्याने शिपाई, प्यादी पुकळ अस्त आमचा राहता बंगला खुप मोठा आणि मोठ्या आवारात होता आमच्या आईना शिपाय - रिपण, विणण - मरणे आणि जाटोपय याची अवड होती आणि सप्तमासिक जीवनात नावोलीकि मिळाव्यामुळे तिला अनेक थारामोठोवाच्या घरची निमणरो येत व उलट ती मंडळीची हरी भेटालावत तेत अशा वेळी तिने मोठा खेलाई घरात हाकिताणी कावटसर वेळी तरी बाहेरचा देखावा कार उत्तम ठेवलो होता फाटशी नोकरमाणसे अस्तन्यामुळे आणि स्वत कर्तुवचान असून लोकिककतच्या मोठेपणची लैस अस्तन्यामुळे तिने हे वच उत्तम रीतीन सांभाळले होते. सप्ताजात तो भिरवाजनावेळे केळकर व त्या कमलाबाई नाहच किचे अस्तन्यामुळे दोपीच्यामाई बाहिणी बरीचच नात निर्माण आला त्यांची मोठो आमच्या आईला माश्री म्हणत व त्याचे घरी भेजनातस मीही त्यांना माश्री म्हणू लागलो. त्यांचा वाक - सरस्वती निमळन - आमच्या घरच्या मानाने खुपश मोठा असून, तो यांच्या वावडवडिलांनी नात निर्माण आला त्यांची माश्री बाहेरील रोसंगोतीं मात आधुनिक होली गंध्यायसमोर खुपश मोठे बगीचा होता आणि भोवती मणार किंचा बगी जाऊ शकत एवढा स्ता होता मगच्या बाजूला जाली पागा मोडून नोकरलोवांच्याकरिता व आभितकारीत एवढोय देव्या घाळी होत्या

**इन्दुचे दिवस**

शिपाई दिमतीला अशा घरातून, इंदूरसारख्या गावात आपणहून होस्टेलवर राहयला आला हे विशेषच होते

इसूला मी दोन वर्ष राहिलो हॉस्टेलमध्येच होतो पण तिथल्या जीवकाळामागी मी कधीच समसत झालो नाही त्यावेळी स्वस्ताई खुपच होती विव्हाला अतीव मंदीपेठे साठवोती योग्यस्थाना पयाराल 20% कपात केेली गेली होती असेही मातवते बहुसंख्य महाराष्ट्रीय मुले असलेल्या कल्याणाची मी मेमर होतो जेणेणही खुप स्वस्त होतं मधिला 13 ते 15 रु आकार होई जेवामावटल काशीची कधी कोणी तक्रार करीत नसे पण मी मात्र अगदी वेतालोम. भाताच्या तपेव्यावर फक्त बांधून ते मॉनेट पाथेथ टाकून दीवत त्यामुळे सगळी पेज निपेतु जाऊन फडफडीत येवं मात पानात पडे फुलत्याच चांगल्या असत पण कधी स्वस्तात स्वस्त असेल ती 8-10 दिवस पुढे अशी सेकेरीर आजुत टाकाय्या हिवाळ्यात कॅनीनसचव, आणा-दीडआणा पेर इतका स्वस्त असत पण एकदा बहुधा रोज त्याची भाजी असे. तेवेडे दिवस मात बरे जात पण एकदा कसुद म्हणजे लाल गोमळा सुरु झालो की माझे हास सुरु होत रोज तुकरी सुरु झाली मी म्हटले, 'मला रोज गोमड पाहिजे तुम्हाला परवडत नसेल तर मी तुमगाखर पेऊन येत जाईन ' पण तेही नियमात बसेना. अखेर मला लागल्यास मूळ वाढव्या अशी तहजोड झाली.

तरीफ मला भिन पडेना, बरे काटेना मी घरी तक्रारी पडे दिविली पहिलेच तर म्हणजे होते की, मी धुव्यास राहून हायकोर्ट परीक्षा अभ्यास करायला माझी पत्नी लहानपणापासून अश्वत्थ व मी अग्नी लहानपणी एकदोन मोठ्या अजारातून उतलो होतो म्हणून त्यांना व आईला काळजी वाटू लागली मग त्यांनी आमचे एक दूरचे नातूच पण जिल्हाध्याये वनेही अण्णासाहेब नातू यांना पत्र पाठवून माझी चौकशी घराबारास करविले व जरूर तर मला धुव्यास परत पाठवून हावे असेही काढविले अण्णासाहेबांनी पत्नी आजकाल या माझी लांबच्या मांथ्याने मावस बहील लग्न होव्या पण मी या पुस्तकच्या प्राथमिका पत्रकपत्र म्हटल्याप्रमाणे त्याकाळी थोडक्या घाण्यानेही जोडलेली नाते सध्याच्यापेक्षाही अधिक आसणेने जपली जात अण्णासाहेबांनी बामनादादला म्हणजे त्याच्या थोरल्या मुताला होस्टेलवर पाठविले आणि मला ते बदरल्याच्या वॉटरवर्क्सवरले त्याच्या बाल्यावर घेऊन गेले आणि त्यांनी वडिलांना काढविले की 'मनोहरला काही झालेले नाही, तो Home Sick झालेला आहे त्याला मी अपुनपुन सुटीत गाड्याकडे नेत जाईन आणि सर्व काही ठीक होईल काळजी करू नये

आमचे होळकर कॉलेज आणि होस्टेल यासंबंधीही काही गमती सांगायला हव्यात कॉलेजमधील बहुसंख्य मुले हिंदीत बोलत. आमच्या सारखी बालेन आलेली मराठी मुले आपापसांत आणि तेथल्या मराठी मुलांची मराठीत बोलत इंग्रजी मराठी भाषा ही हिंदीने गसलेली होती व्याख्यातला अफाट गर्दी होती असे आपण म्हणतो पण तेथला मुलाग म्हणे 'काय यार, सर्वदूर भीड होती आणि हिंदी होती' देवाकराचे मराठी अधिक हिन्दी मिश्रित होते तर पारकराचे मराठी त मराठी शब्द फक्त औषधाला सापडत, बाकी सगळे हिन्दीच असे. या सगळ्या हिन्दीच्या वावटळीने, आधीच बैतांगलेला मी जास्तच धावला म्हणजे मला गलमगलत्या जेवणबद्दल मी काही तक्रार केली की ती मुले हसू लागत कारण माझे जेवण जेमतेम दोन-तीन फुलक्यांचे तर त्यांचे जेवण बारा-बारा, चौदा-चौदा फुलक्यांचे असे. मी रागावलो की मला न समजणाऱ्या धावत्या हिन्दीत माझी आणखी 'खिळी' करीत पण तवकरच विष्णू दाभी म्हणून एका एडोलाच्या खानदेशी मुलाशी माझे दोस्ती जमली अहिवाणी माफेरील इतरसाल शिष्या त्याला मुखादोलत होत्या तो जेवणाला माझ्या शेजारी बसू लागला आणि मग तो त्या हिन्दी मुलांना, वैद्यच्या बाबळट माव घाण करून अहिवाणीत प्रभाव पुरवत त्याकाळ लागला

'तू कसाकरला तेले हासस? तुले काय दिसस?' त्यांना काहीच न समजल्यामुळे ती माझावून जात की लोच तो मांड्याकडे वळून त्यांना उभेपुन त्याच्या धिनी खरात सुरू करी आणि आम्ही दोघे खडबडा हसत असू. बाणीने त्यांना बजावून सांगितले की जर तुम्ही गेरफायदा घेऊन डेडवळकडे बोलत तर, 'तुम्हिले उखलीसून पूलनाखाले फेकी देसू, मजा देवना वही तर चा मन्हाबरोबर कुसली घालीसून उखली तेसू अन् खालेच फेकी देसू!' असा तोडस तोड मेटल्यानंतर त्या मुलांनी टिपल-ट्याकी थाकली. 'गवार कही के' वगैरे म्हणणे त्यांनी बंद केले एवढेच नव्हे तर त्यातले बरेचसे आमचे दोस्त झाले

इंग्रजी मित्रांपैकी देवासचे कवी गोविंद झोकरकर, बडोद्याचे द दा दीक्षित वगैरेची अजुनही अधूनमधून पत्रे येतात त्यांत इतरांचा उल्लेख असतो मोरेबर पावणकर व विष्णू दाभी माझ्याबरोबरच पुण्यात आले आज पाटणकर हयात नाही दाभी शेवोनिवृत्त जाल्यावर पुण्यातच छोट्या बंगला बांधून स्थायिक झाला आहे

श्री बा. ना. तथा बाळा साहेब पेंढरकर आणि प्रा. ना. ल. वी. हे दोघे इंग्रजे आणखी दोन मित्र आजही माझ्या निकट संपर्कात आहेत पेंढरकर नायबखात्यात उच्च पदापर्यंत जाऊन सेवानिवृत्त झाले आहेत आणि वी. वी. शिक्षण खात्यात पदापर्यंत जाऊन सेवानिवृत्त झाले आहेत आणि वी. वी. मध्यप्रदेशात झाली असून दोघीही स्वतःचे घर करून भोपाळला स्थायिक झाले आहेत पेंढरकरांचा एक कवितासंग्रह मी पूर्वी प्रसिद्ध केला. आणि नुकताच त्याच्या दिग्दर्शक पत्नीचा कथासंग्रह मी प्रसिद्ध केला आहे.

वैद्याची व माझी असे-तुरेची जवळीक आहे नारायण मध्दारी काही वर्षे ऑफिशियल गडप झाला होता. नंतर तो इंग्लंडमध्ये गेला. 62-63 च्या सुमारास तो परत आला आणि त्याचा आणि माझे सूर जमले एवढेच नव्हे तर ते बळकटही झाले त्याचा एक कथासंग्रहही मी प्रसिद्ध केला आहे पण नंतर तीन वर्षांपूर्वी त्याचे 'लंडनची पत्रे' हे पुस्तक मी प्रसिद्ध केले आणि ते मनोहर - ग्रंथालयाच्या भूषणस्पर्ध प्रकाशनांपैकी एक आहे असे मी मानतो. वयोमान, प्रकृती आणि पुणे भोपाळमधील अंतर या मुळे आमची गाठ आता फारशी पडत नाही पण पत्र-व्यवहार सतत चालू असतो

आमच्या होस्टेलमधील विद्यार्थ्यांसोटी दोन थातुरमातुर हॉटेल होती त्या हॉटेलत अँट्युमिनियचे लारा व तसल्याच प्रकारच्या काहीशी वाट्या किंवा ताटल्या असत बत्तारीची सिटारिडेंचे मिळे सरसकट 1 रु शेर मग पेढा घ्या, गुलाबजोब घ्या, मखननवडा घ्या किंवा रबडी घ्या लिखत जिन्नस म्हणजे धिक्का किंवा कचोरी एका हॉटेलवाल्याचे नाव होते कुमहर व दुसऱ्याचे अंकारप्रसाद होस्टेलमधील मनीन राहायला गेल्यानंतर चारपाय दिवसांनी मी प्रथम कुमहराच्या हॉटेलत गेलो आणि एका बाकड्यावर बसलो ऑर्डर दिली जिन्नस खाऊन झाले आणि पैसासाठी विखात हात घातला तेव्हा पाकीट खोलीवर विसरल्याचे लक्षात आले मी थोडा गागरलो आणि म्हणालो, 'कुमहर, मी पैसा लानेको भूल गये, फिर मी तुमझा पैसा नहीं चुकाऊंगा।' तो हसला आणि म्हणाला, 'क्यों बाबूजी, आप हमारा पैसा नहीं चुकायेगे।' मी पुन्हा म्हटले, 'नहीं चुकाऊंगा।' त्याबरोबर तो मोठ्यादा हसला आणि मोवातली इतर मुलेही हसली. कारण त्यांना त्यातला विनोद काळजा होता. मग एका मुलाने मला सांगितले, 'अरे, नहीं चुकाऊंगा, याच अर्थ चुकते कणार नाही-देवार नाही असा होतो.'

आम्हाला अकोलकर म्हणून एक पी.टी. इन्स्ट्रक्टर होते. ते रोज पहाटे शिटी बाजवीत पाच-दहा मिनिटांनी पुन्हा बाजवीत तोंपयंत होस्टेलमधल्या आम्हा सवना ड्रिलसाठी एका ओळीत उभे राहणे लावले. मग हमजे होई, जास्त वेळा गरीजने लागली तर दंड होई. कॉलेजचे बंगाली प्रिन्सिपॉल डॉ बसू हे मयंकर कडक होते त्यांनी कॉलेज म्हणजे शाळा करून टाकली होती सकाळी 10:11 ते 4:11 कॉलेज असे आणि आठ पिरिअड्सपैकी आपापल्या विषयप्रमाणे कुलेलेरी चार पिरिअड्स प्रत्येकाला असत. पण त्यामुळे प्रत्येकजण दिवसभर जडजडला असे त्याशिवाय टेनिस खेळणाऱ्याखेरीज इतरांना दुसरा कुठलातरी खेळ सक्तीचा असे. त्यामुळे मनाला उस्तं अशी नसेच पण हे कॉलेजजीवन तेथल्या मुलांच्या आवकणी पडलेले होते गुड मुले किंवा बडे बाप के भेटे मात्र पुढकड्या ही शिस्त चुककामून लावीत आणि मग त्यातून कसाती मार्ग काढीत

आमचे पी.टी. इन्स्ट्रक्टर तर फार उत्साही होते स्वतः शिकलेले नसले तरी अधिकांकांवर ते आम्हा अंडर ईंग्लिशवर वर 'रुबाब कस्त' असत.

आमच्या बँचपूर्वी एका विद्यार्थ्याने त्यांना म्हण गवायचा करून म्हटले, 'सर, मला सकाळी मुठ्ठीक जाग येत नाही तुम्ही मला उठवाल का?' त्यांना या मुलाच्या अगत्याचे खूप कौतुक वाटले दोन-चार दिवस त्यांनी त्याला उठवते त्यानंतर एक दिवस त्यांनी त्याच्या अंगवायेचे पांघरूण दूर करलाच तो जेना जन्मला होता नसा तो त्यांना आढळला ते प्रथम खजिले झाले आणि मग खूप सतापले तेव्हा गवायचा करून तो म्हणाला, 'सर, माफ करा रात्री फार उकडायला लागल म्हणून कपडे काढून टाकले व फक्त एक चादर आवार ठेवली' तेव्हापासून बहुधा कुणालाही अगत्याने उठवायचे अकोलकरांनी सोडून दिले असावे

कॉलेजच्या शिक्षणाबद्दल सांगायचे म्हणजे डॉब्सन, घोष, बोरावाकर असे काही प्रोफेसर इंग्रजी अतिशय उत्तम शिकविले असत त्या तोडीचे इंग्रजी पुण्यास आल्यावर फर्ग्युसनमध्ये प्रो. गोककांचे एकले आणि माझे बी.ए. चे वर्ष संपत आले तेव्हा लीला वागळे म्हणून एक इंग्रजी लेखकर आमच्या परशुरामभाऊ कॉलेजात आल्या तेव्हा त्यांचे एकले.

मी इंग्रजीत परत आलो आणि इटरमीजिएटच्या परीक्षेच्या तयारीला लागलो इटरमिजिएटचा कोर्स दोन वर्षांचा असे आणि परीक्षा अजमेर बोर्ड येत असे कॉलेजमध्ये दर तिसाहीस एक अशा दोन वर्षांत पाच परीक्षा या पाचही परीक्षा मिळून प्रत्येक विषयात एकूण मार्क मिळवून पहिला वेणारास बक्षीस मिळत असे. मला मराठीचे बक्षीस मिळाले होते. त्यामुळे एवढी इंग्रजे वास्तव्य फारसे सुखावड झाले नसले तरी त्यावेळी तरी मी आनंदात होतो. महाराज वसंतराव होळकर यांचे अय्यबंदखाली बक्षीस सगळ्या झाला आणि सगळ्यासंबंधाच्या हस्ते बक्षीस दिली गेली. पाहुण्याचेबरोबरच विजेला विद्यार्थ्यांना उद्यानोपाहार्याचे आमंत्रण होती. आमच्या आग्रहावरून प्रिन्सिपॉल बसुजी राजा-राणीला किंवा विद्यार्थ्यांकडे आणले आणि सवांचे अभिवादन हातमुखात सवीकामन पाच-चार मिनिट आमच्यासमवेत घालवून राजा-राणी निघून गेली. अगदी खरे सांगायचे तर आम्हाला हसरीसारखे काळेभोर डोळे असलेल्या राणीला जवळून पाहायचे होते आणि तो हेतू साध्य झाला होता

मराठीच्या माझ्या पाचव्या पेपरवर 73 मार्क होते पण पो ऊर्ध्वसेर याचा शेर होता, 'तुझे अक्षर वाचणार कोण?' आणि या अक्षरापायी माझे ज्ञान कितीतरी वेळा वाया गेले आहे. खरे तर हा दोष सर्वन्वी माझा नाही वयाच्या नवव्या वर्षी झालेल्या विषमज्वरात माझ्या उजव्या हातावर व पायावर परिणाम झाला त्यामुळेही सलग चणले अक्षर येत नाही आपण लिहिलेले आपल्यालाच

वाचता येत नाही आणि 'आप लिखे जीर खुदा बाचे' जशी स्थिती होते आणि त्यामुळे लिहिण्याचाही फटाका येतो या दोघावर मना मान-कन्या आली नसती असे नाही, पण तो वेगळा विषय आहे परिणाम मात्र व्हायचा तोच झाला आणि पुढच्या परीक्षात मी मागे पडत गेलो

इंग्रजी कॉलेजातील आणखी दोन आढळणी आवकून सांगायला हव्यात त्या दिवसांत कॅम्प या खेळाचे फार बंड होते. आमच्या कॉलेजातला सुळे नागचा मुलगा कॅम्प खेळण्यात फार निष्णात होता मुळे दिवायलाही गोंरागटाला आणि नाजूक होता आणि त्याचा खेळही तसाच नाजूक असे सुळेबरोबर कोणी खेळायला बसला तर सुळे त्याला खेळवतो आहे असे म्हणत एक दिवस सुळे होस्टेलवर कुणाबरोबर तरी खेळत होता आणि बरीच मुले तो खेळ पहात होती. त्या मुलांमध्ये त्या दिवशी एक नवीन बंगाली मुलगा येऊन बसला होता आगत एक काळी बंडी, सोपा सोडलेले धोतर व डोळ्यावर जाड भिंगाचा वध्मा असा त्याचा अजकार होता दिवायलाही नवागतप्रमाणे हुजरा दिसत होता त्याचे नाव घोष एक गेम झाल्यावर त्याने विचारले, 'May I play?' सुळे त्याला म्हणाला, 'Yes come on!' खेळ सुरू झाला आणि असे आग्रही घोषने बाजवून आणि विबाजवून पाया असं दणक लावला तो दोन मिनिटात बोई साफ आणि सगळ्या सोपट्या घरात कोण जिकला याला नव्हत नाही पण घोषने सुळेची त्या दिवशी झोप उडवली असाणार. कारण बघ्या मुलाचा आता तो हीरो बनला होता आणि ती सुळेची हुर्वा कर्त होती

आणखी एक आढळण पत्रवा कविवर्य ना प देशपांडे याचा अमृत महोत्सव झाला तेव्हा, 'एकदम उफाळून आली होस्टेलमधील मी वाऊल ठेवल्यापासून, 'राना रानात गेली बाई शीळ' या गायनाने सर्वांच्या मनाचा कडवा घेतलेला दिसला गायमननवर जी एन जोशींनी रेकॉर्ड केलेला लागलेली अमायची आणि मुले ते गुणगुणत असायची किंवा बसल्या जागी ठेका तरी घरायची

इंग्रजात येताना मी जेवढा खुशीत होतो तेवढा परत, जालाना नव्हतो पेपर चालले गेले होते, परीक्षेत यश नवी मिळणार होते पण अनुवाची गळबरीज केली तर तोंडाला चब कडवट होती तरी सुद्धा होस्टेल सोडताना मला फार वाईट वाटले आजपर्यंत ज्या ज्या वास्तूत मी वास्तव्य केले ती ती वास्तू सोडताना मला नेहमीच वाईट वाटत आले आहे प्रत्येक वास्तूशी माझे, आजणान अनुबध निगण होतं आणि ते सहज सुटत नाहीत, तुटतात आणि त्याच्या वेदना मनाला जाणवतात असे का हावे हे मला काहीही कळले नाही!

Sak alle Balvant 16/11 Brah s/o Keshavnarao V. Gundhar, Khandwa. Khandwa H.S. All. Mat. II '17 Work free. Passed I.A. III 1919. Seems a good fellow. Some brains. Improved 1920; Very good work. Won first prize in English and History; Thirajirao Medal for 1921.



## Prof. Ramprasad Kaushal (1911-1983)



- Dr.K.K. Chaturvedi

Born at a small town, Sehore, of the old Bhopal state on 29th March, 1911, Prof. Kaushal received his early education in the same town where his name still appears on the merit board. He later joined Holkar College, Indore, from where he got his B.Sc. in 1932 and M.Sc. (organic chemistry) in 1934. Being a first class scholar throughout, he was offered a lectureship by the Holkar state to enable him to undertake research work. He joined the Chemistry department of Holkar College in its infancy and started working on.

"Hydroxymethylene Compounds and Pyrones" under the guidance of late prof. S.S. Deshpande. In 1941 he was awarded a D.Sc. by Agra University in recognition of his research work and had the honour of being the first scholar to get this degree from Holkar College. Alongwith his teaching assignment he continued his research work and in 1946 got from the Holkar State the coveted State scholarship and joined the Institute of Technology, Manchester (England) where he worked with Prof. T.K. Walker on "Synthesis of polysaccharides by Acetic Acid Bacteria". He was awarded a Ph.D. by the University of Manchester for this work in 1948. In 1948-49 he worked as Research Chemist at Bleachers' Association, Bromely cross, Manchester in order to solve the problem of utilisation of kler liquor and starch mixings for the production of *aceto bacter acitigenum* and cellulose thereof. In recognition of his work he was made Chartered Chemist and later elected fellow of the Royal Society of Chemists (London).

On his return in 1949 he was made Reader in Holkar College. In 1953 he was selected as Chief organic Chemist for the Government penicillin Factory and went to Rome as a W.H.O. Scholar to work on penicillin Technology under late Prof. Chain. From 1954 to 1958 he worked as chief organic chemist at the Hindustan Antibiotics, Pimpri (Poone) and on completion of this assignment, his dedication to teaching and research brought him back to the newly formed Madhya

Bharat. In 1958, he was made professor and Head of the Department of Chemistry at the Government Post-graduate Science College, Gwalior.

In 1962 he was given a more challenging job of starting Applied Chemistry in Engineering colleges. He was the first professor and Head of Department of Applied Chemistry at the Government Engineering College, Jabalpur and was appointed Chairman of the Board of Studies by Jabalpur university. It was here that he retired in 1968 and returned to his Holkar College. From 1968 to 1973 worked under the UGC scheme of Retired Teachers at Holkar Science College, Indore, where he started M.Sc. in Bio-Chemistry and active research guidance by taking K.K. Chaturvedi as his first research student at this centre. Since his return from Poone till he breathed his last, he devoted himself completely to teaching and research. He had published over 80 research papers in the various Journals and guided 21 research scholars who got their doctorate from various universities. The work of his students unfolds the multi-dimensional personality of prof. Kaushal. His earlier work had established him as a theoretical organic chemist but his work at the penicillin Factory added new dimension. He was drawn towards the applied aspect of chemistry resulting in the search for and presentation of organic compounds essential for the welfare of the human race as well as towards instrumentation which put him in the select band of pioneers in the field of industrial chemistry. Prof. Kaushal also contributed a lot to the field of inorganic chemistry by combining inorganic metals with therapeutic value with therapeutically established organic legends like sulphate drugs, anti-malarials, antidiabetic agents etc. and established that these combinations are more useful as compared to the parent drugs. He was in addition a dedicated and skilful teacher and his students had good reason to be grateful for the warmth of the hospitality of the kaushals. □□

## कर्म देवाय?

(गुरुवर प्रोफेसर जी एम बोरगाँवकर सा. की स्मृति में)  
- एल.एन. भट्ट, एम.ए., एलएल.बी., एल.टी.

एक बार आदिगुरु श्री मच्छकराचार्य के मन-मानस में एकाधिक प्रश्न आलोडित-विलोडित होने लगे और वे ही स्वकल्पनाभूत प्रश्नों का अकाट्य तर्क-सम्मत बुद्धि से उत्तर देने लगे इन प्रश्नों में एक प्रश्न बड़ा जटिल था, वह था - "को गुरु?" आदिगुरु इसका सहज उत्तर देते हैं - "शिष्य हितायोद्यतः सततम्" इस उत्तर की सहज परिमीमा में एक विरल किन्तु सरल व्यक्तित्व, गुरु की मध्य कल्पना को साकार करता हुआ मानस-पटल पर कौंच जाता है और परिणाम स्वरूप हमारा समक्ष सहज सत्यभाव से मिश्री-सी मुसुबराहट युक्त ऑन साहित्य के आधिकारी प्रोफेसर जी एम बोरगाँवकर सा. का ऋषिचतुल्य भाव-भंगिमावान समुच्च, प्रत्यक्ष रूप से विगत स्मृति को कुहासे को चीरता हुआ, आलोडित हो उठता है

गुरुगाम्य गुरु बोरगाँवकर सा. वैसे तो मेरे कॉलेज जीवन में मेरे परमाराध्य अध्यापक रहे परंतु उन्हें और निकट से जानने का अवसर तब मिला जब वे मेरे होस्टल के डीन बने. पूर्व में श्रद्धेय पदनामन सा. डीन थे. उनके उपप्राचार्य के पद पर पदोन्नत होने पर उनके स्थान पर बोरगाँवकर सा. डीन हो गये. कुछ समय पश्चात बोरगाँवकर सा. ने मुझे होस्टल का प्रिन्सेप्ट नामांकित किया. इस अवधि में मुझे उनके साधन संपर्क में आने का अवसर मिला मैंने पाया कि वे केवल एक आदर्श शिक्षक ही नहीं, अपितु अपने आप में एक संस्था थे. उनका मध्य व्यक्तित्व, उनका कृतित्व, उनका सामाजिक परिवेश एक विराट व्यक्तित्व को झलक भर दे जाते हैं उनकी भलमनसाहत, मानवतावादी दृष्टिकोण, प्रोपेकारी भावना, छात्र-कल्याणार्थ सततोद्यता, सौम्यता, रीतिन्य, खेल-भावना आदि अनेकानेक सद्गुणों ने उनको छात्र-जगत में अत्यधिक लोक-प्रिय बना दिया अध्यापन के साथ-साथ उनकी आंग्ल साहित्यिक रचनाएँ भी उनको अविस्मरणीयता प्रदान कर गई हैं निद्रा-हीनता इसोमनिया) रोग से ग्रस्त होते हुए भी उनकी सामाजिकता एवं साहित्यिकता में कोई रिक्तता नहीं आई. वे शिव शंकर के समान इस रोग रूपी गरल को अपने आप में समाहित कर लोकमिमुखी व्यक्तित्व को सौचते रहे.

प्रोफेसर सा. के बहुआयामी व्यक्तित्व की संपूर्ण झलक एक छोटे से लेख में दे पाना एक दुष्कर कार्य है परंतु फिर भी उनके यश-सागर से कुछ मुँदा-शुक्लियाँ अवश्य ही प्राप्त की जा सकती हैं और उन्हें प्रस्तुत किया जा सकता है.

अध्यापक के नाते उनकी सरस एवं सरल शैली एक दार्शनिकता के अंदाज

के साथ उनके अध्यापन में बार चौध लगा देती थी. मंत्र-मुग्ध एवं ठगे से छात्र उनका मोला-माला मुखारविंद निहारते रहते थे कई बार तो ऐसा लगता कि पेरियड ही समाप्त न हो तो कैसा रहे! वे एक सफल अध्यापक थे और इसकी पुष्टि में उनकी साहित्यिक सतत साधना थी. ख्यात आंग्ल नाट्यकार शेक्सपियर पर तो उनका असामान्य अधिकार था *Years and Laughter* (Tragedy and Comedy) कृत्रला इसका अनुपम निर्देशन है वे निर्रे एक सफल अध्यापक ही नहीं, एक सफल साहित्यकार भी थे उनका साहित्यकार उनके अध्यापन पर भी सदैव हावी रहता था और वही तत्व उनकी अध्यापकीय सिद्धि का बीज बन था. उनकी सभी रचनाएँ सरल, सरस, सुबोध और मनोहारी थीं और हैं उनकी रचना-धर्मिता की दिव्यता फिनिस (Phoenix) पक्षी से मेल खाती है, जिसके पंख कभी पंक्ति पृथ्वी का स्पर्श नहीं करते उनकी निबंध रचना भी बेमिसाल थी "All for your delight" निबंध संग्रह अपनी अनोखी शैली के कारण बहुत लोक-प्रिय हुआ शेक्सपीयर ट्रेजेडी पर भी लिखी गई पुस्तिका छात्रहित में बहुयोगी सिद्ध हुई. आलोचना का क्षेत्र भी उनकी कलम से अछूता नहीं रहा. उनके द्वारा रचे गये एकांकी नाटक (One act plays) भी आंग्ल साहित्य प्रेमीयों द्वारा सराहे गये मध्य-भारत हिन्दी साहित्य समिति द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'वीणा' में क्रमशः उनके एकांकीयों का हिन्दी अनुवाद भी प्रकाशित हुआ उनकी रचना-प्रतिभा अपने आप में एक अनोखापन लिये होती थी निबंधों को पढ़ते समय कहीं कहीं चार्ल्सलेब बतियाते प्रतीत होते थे

वे छात्र-वत्सला गुरु होने के साथ-साथ स्वयं अतिशय श्रद्धावान छात्र भी थे. तथा अपने गुरु चार्ल्स डॉबसन सा. का अत्यधिक समान्तर करते और यदा-कदा अपनी सेवाएँ उन्हें अर्पित कर गुरु-मूलक रिक्त का परिचय भी देते थे.

उनका क्रीडा प्रेम भी निराला था इस क्रीडा-प्रियता की अहमियत और भी अधिक तब बढ़ जाती है जब वे निद्रा हीनता के रोग को झुल पर हारी नहीं होने देते. वे टेनिस के अच्छे खिलाड़ी थे और प्रतिदिन इसमें आनंद लेते थे. दैसे तो क्रिकेट आदि सभी खेलों में उनकी रुचि थी परंतु टेनिस तथा बिज एव टहलाना उनकी दिनचर्या के अभिन्न अंग थे वे होलकर राज्य के बिज के एक ख्यातनाम एवं स्थापित खिलाड़ी थे होलकर राज्य के भूतपूर्व नरेश महाराजा यशवंतराव होलकर जब कभी बिज खेलते, वे प्रोफेसर सा. को आमंत्रित करना कभी भी नहीं भूलते थे उनकी ऊर्जास्थिति खेल को रूचिपूर्ण बना देती थी. इसी संदर्भ में प्रोफेसर सा. ने महाराजा सा. की उदारता एवं सोमनय्यता दर्शाते हुए एक घटना सुनाई थी एक रात

महाराजा सा., डॉ. रोमानसिंहजी भंडारी, प्रोफेसर सा. एवं फिलोजूडीन चौधरी सा. क्रिज खेलने बैठे काफी देर तक महाराजा सा. एवं साथी बोरगाँवकार सा. के विरुद्ध जीतते रहे. काफी देर रात हो चुकी थी, महाराजा सा. को विश्राम की आवश्यकता थी प्रोफेसर बोरगाँवकार सा. ने निवेदन किया कि खेल समाप्त किया जाय परंतु आश्चर्य रूप से खेल निरंतर चलते हुए महाराजा सा. ने प्रोफेसर सा. से कहा "Let's continue, its your turn to win now." इस प्रकार की संवाधयता का परिचय सदा से ही प्रोफेसर सा. के सदाशिव व्यक्तित्व के साथ जुड़ा रहा है।

वे अतिशय सरल एवं सीधे व्यक्तित्व के धनी थे. परोपकार की भावना उनकी सारा-रस में समाई हुई थी. भुझे अच्छी तरह वे कड़वे प्रसंग याद हैं जब उन्हें अपने इन सदगुणों की बहुत बड़ी कीमत चुकाना पड़ी है. अच्छा है इन प्रसंगों को हम यहीं कड़वे प्रसंगों को त्यागकर मीठे प्रसंगों का उत्प्रेषण, सचमुच ही उनके मधुर व्यक्तित्व की अभिट छाप मानस पटल पर अंकित कर अविस्मरणीय बन जाता है. एक घटना उन दिनों की याद आती है - जब मैं बी.ए. के अंतिम वर्ष का छात्र था. परीक्षा के समय में अस्वस्थ हो गया. अंग्रेजी साहित्य का प्रथम प्रश्नपत्र था, उसकी पूरी तय्यारी नहीं हो पाई थी. मन में अतिशय बेचैनी एवं घबराहट थी. प्रोफेसर सा. भूतपूर्व डीन सगीर अली सा. के कमरे में कॉलेज मेन होस्टल के पास ही रहते थे. मैं उनसे कुछ सहायता लेने पहुँचा परंतु पाया कि वे स्वयं बीमार हैं. मैं उससे पॉल लीटने लगा परंतु मेरे मुँह तो सदाशिव थे, उन्होंने मुझे जोर से पुकार कर बुलाया और एक डेढ़ घंटे तक विषय समझाते रहे - अपनी स्वयं की अस्वस्थता के बावजूद.

आजकल कहीं ऐसे गुरुओं के दर्शन होते हैं. ऐसी अनेकानेक घटनाएँ हैं जो प्रोफेसर सा. को अविस्मरणीय बना देती हैं. बागी की रूप में मुझे एक और प्रसंग याद आ रहा है - जब प्रोफेसर सा. डीन थे, मेरा एक जैन साथी होस्टेलर सिनेमा देखने का बहुत शौकीन था. व सैकंड शो देखकर होस्टल आता था. मेस का रसोइया उसकी थाली मेस में थाली से डेढ़ मेज पर रखकर चला जाता था. ताकि मेरा साथी भोजन पा सके. एक दिन मेरे नॉनवेज मित्र ने दाल में अंडा डाल दिया. ताकि वह जैन मित्र का भोजन कर सके. क्योंकि जैन मित्र उसे खाएगा नहीं. जैन मित्र इस कस्तूत को देखकर व्यथित हो उठा और आक्रोश में आकर शिकायत करने डीन सा. के कमरे पर रात के 10 बजे जा घमका बोरगाँवकार सा. को इसीमणिया की शिकायत थी, वे सोने की कोशिश कर रहे थे कि जैन साथी के पदचाप सुनकर कायाक बोले, "कौन?" - मेरे शिकायती मित्र ने उन्हें घटना सुनायी. इस पर बोरगाँवकार सा. ने श्रीमती बोरगाँवकार को बुलाकर मुझे मित्र को कुछ खाने के लिये देने को कहा. मित्र शर्मादा हो उठा, परंतु डीन सा. उसे खिलाकर ही माने. ऐसे सब्बद डीन सा. के दर्शन बिराग लेकर दुनिया में घूम आओ, तब भी नहीं हो सकते.

उनका सरल एवं निष्कपट उदारवादी व्यक्तित्व सकीर्णता को अपने पास कभी फटकने नहीं देता था. वे सचमुच में मानव फिनिक्स (Phoenix) थे. उसी संदर्भ में मुझे एक घटना याद आती है. जब उन्हें स्नातकोत्तर माघव महाविद्यालय के प्राचार्य पद पर पदोन्नत किया गया. वे बड़े परेशान रहने लगे, उन्हें यह जवाबदारी रास नहीं आई. उनका व्यक्तित्व प्रशासनिक नहीं था. वे रीढ़-दाढ़ के आदमी नहीं थे. उन्होंने पदवनति माँगीली. एक सीधा-सादा साहित्यकार प्रोफेसर साय, धाम, डंड, भेद की पंकिल मृमि पर केंस पग धर सकता था.

उस जमाने के ऑल साहित्य के मूर्धन्य विद्वानों में प्रोफेसर सा. की गिनती होती थी. जिस किसी ने उन्हें सुनने का सौभाग्य प्राप्त किया. निकाल हो गया. उनका वाक् प्रपात झर-झर की संगीतमय ध्वनि निनादित करता हुआ श्रोताओं के मन-मग्न को नृत्यमय कर देता था. मध्यप्रदेश की गैलरनी पंचमढ़ी में ऑल भाषा का एक सेमिनार आयोजित हुआ. आयोजन बड़ा भव्य था. सभी व्याख्याता, प्राचार्य एवं विभागाध्यक्ष, सचिव सम्मिलित हुए. इसके समापन के सुअवर पर तत्कालीन शिक्षा मंत्री डॉ. शंकर दयाल जी शर्मा, गवर्नर पाटसरकर सा., मुख्यमंत्री काटजू सा. आदि गणमान्य सख्त आमंत्रित थे. अन्य अतिथियों में सेमिनार को सफल बनाने के लिये प्रोफेसर बोरगाँवकार सा., डॉ. राजेन्द्र वर्मा तथा ब्रिटिश कौंसिल के सीनियर ऑफिसर मि. स्पेन्सर आदि को भी आमंत्रित किया गया था. समापन समारोह के अवसर पर गुरुवर बोरगाँवकार सा. को भाषण देने के लिये विशेषरूप से कहा गया. उनके शैक्सपियर पर दिये गये विद्वत्तापूर्ण भाषण की सभी ने मुक्त कंठ से सराहना की. मि. स्पेन्सर तो यहाँ तक कह गये कि इतना अच्छा तो मैं भी नहीं बोल सकता.

आज श्रद्धेय बोरगाँवकार सा. हमारे बीच में नहीं हैं, परंतु उनकी विद्वत्ता की पताकाएँ आज भी हमारी स्मृतियों में लहरा रही हैं. वे स्मृति शेष रूप से हमें आज भी आलोकित कर रहे हैं तथा जिनकी जीवन्तता का उद्योष महाराज मूर्तहरे के इस प्रभावी कथन में समाविष्ट हो गया है -

जयति ते सुकुतिनो, रससिद्धा कीधरसा।  
नास्ति येषां यशः कार्ये, उत्तमरमणजे भयम्।

□□

## महाविद्यालय के प्रति

विजयेन्द्र शंकर 'साहित्य रत्न' बी.एससी. पूर्वार्ध - १९५६

उन्नति के मार्ग के ए सजग प्रहरी  
मौन तुम किस साधना में रत खड़े हो  
साधना के साधनों में आज हमको भी जुटा दो।  
हिंस्र पशु मानव बना जब युद्ध तोंडव कर रहा था  
स्वनिष्ठ क्षणों में मानवा के तार सारे छेड़ता था।  
ज्ञानवाता निस्पृही बस शांत थे तुम सुन रहे थे;  
क्षणिक मानव की क्षणिक कुछ भावमय वे बोलिया।  
संघर्ष एवं प्रेम के वे विविध अनुभव  
आज हमको भी सुना दो।

संयम, नियम, व्यवहारकोशल शौर्य, शक्ति, वक्षता दो,  
दृढ़ तपस्वी, मौनसेवक, युगविधायक, युग प्रवर्तक।  
सत्य एवं सरल जीवन का सुपथ हमको दिखा दो।  
विज्ञान, विधि, वाणिज्य एवं कला क्रीडा  
ज्ञान गौरव के शिखर इन रास्ते स्तंभों को दिखा दो।

When Pope wrote in one of his Epistles.

*For forms of government let fools contest,  
What'er is best administered is best.*

He obviously could not think of totalitarianism as a form of Government. Sir Maurice Gwyer, Chief Justice of India and Vice-Chancellor of the University of Delhi in his address, recently delivered at the convocation of the Punjab University pointed out the principal differences between the two systems of government, democracy and totalitarianism. Apart from respect for law, their rule of law and the liberty of freely expressing one's own opinions and beliefs, a democratic form of government is "one which is based upon the personality of the individual man and woman, whereas the other system is based upon the conception of a state as an organisation apart from and superior to the individual men and women who compose it, demanding from them complete and uncomplaining subjection, the state asserting all rights and conceding none."

If other forms of government do not matter, totalitarianism certainly matters. The transition from monarchy to democracy has been possible in many countries in the past, possibly a reversion from democracy to monarchy is also not unthinkable, but if democracy is replaced anywhere by totalitarianism, it will certainly mean untold misery for millions of people.

Such a thing, however, has very recently happened in Austria. All those, who have recently travelled in Europe, agree in saying that Vienna seemed to them a centre of European culture. The sudden change from democracy to dictatorship had a startling effect. The ordinary people have been depressed, flattened out in the new regime. In Vienna which was a city of political jokes and cartoons, they can no more speak as they like, they can no more do as they like. Constraint has come over those delightful and expansive people of Vienna. The children of Vienna are no more the children of their parents, they are the children of the State which has got absolute authority in the sphere of education. Children returning from their schools talk to their parents in a language, which appears to them strange. Military drill, mass singing and patriotic devotions have a wonderfully fascinating effect on juvenile minds. It is no use arguing with those children. They may report you at school next day. They are more loyal to the State than to their parents. In the same manner, they are more loyal to the State than to truth or scientific reasoning. Likewise a waiter or a household servant can denounce you as a traitor, as an enemy of the State, which is identified with one party. Thus even among friends, you can only talk about the weather or praise the speeches of Dr. Goebbels or Adolf Hitler.

Milton in his famous tractate "Areopagitica" fought for the liberty of the press. We thought that the battle was won once and for ever. But totalitarianism censors all news, all

# The Great Virus

- Harjiban Ghosh

opinions. Even your entertainments all filtered through the Hitlerian sieve. You must accept even for your dissipation, for your idle hours, what is supposed to be good for you by the State. Thus the judgement of man is being hourly insulted. You are not supposed to have any conscience or moral notions of your own. The State is the only morality. In a totalitarian State, if you want to prosper materially, you must join the dominant party. By frequent meetings, speeches, parades, excursions, party members are given the illusion that they really control the operation of the State. Party organisations are given special facilities everywhere. They get concessions in railway fares, theatres, operas and concerts. In short, a party member is a preferred citizen. That would be impossible in democracy. A party button on the lapel of your coat is a sure pledge of preferment, even while standing in line at a post office.

Outside the party, if you are extremely cautious and industrious, you can eke out a living for yourself, but you must keep your own counsel at all times, otherwise you cannot stay out of jail or concentration camp for a long time. Living in that sphere, you then begin to think that the Dictators must be right, and something is wrong with you. Slowly you begin to acquiesce in that form of government, and this passive existence is characteristic of the larger part of the population in a totalitarian state. But is not this acquiescence fatal for the growth of the individual and therefore of the nation? Time alone will show.

Dictatorship, if it is to survive, must be always dynamic. Dictators must keep their people for ever busy. If there is no Spain or Abyssinia, there must be at least inflammatory speeches, impressive parades, hysterical gestures.

The highest ideal is sacrifice or death for the party. When



Mussolini was exporting poison gas to Abyssinia, no Italian questioned the morality or justice of it. The only thing that agitated Italy was whether she would succeed or if England would intervene.

Totalitarianism so far has succeeded by appealing to the emotions of the young people. It has more glamour, it is more picturesque. With their perpetual celebrations and parades, their mythology of semi-divine heroes, they have made patriotism more enthralling than democracy could ever have done. The effect is very much like that of a narcotic. The question is: how long it will last.

There is another weapon, which is almost invincible in the hands of a totalitarian state. That is falsification of facts, of history. If you tell a lie today, you feel the qualms of your conscience. If you repeat the same mendacious statement to-morrow, it becomes easier for you, your conscience becomes more slippery. If you can circulate the lie properly

and if you can suppress the truth, the lie in course of time will acquire the sanctity of truth. History, as it is taught in the German Schools, public and private, has got the same kind of sanctity. For instance, there is no doubt in modern Germany that the Spanish republic is governed from Moscow. If there had been a European conflagration over Spain, Hitler would have had no difficulty to persuade the German people that it was a war of defence.

Any form of government is after all a machine. The machinery set up by totalitarian states has diabolical form, terrific crushing power, but Man, the supreme creation of God, must rise superior to any machine, which he may have set up.

From Holkar College Magazine, February - 1939

□□

## कविता कानन

ऐ अनजानी चाहे ?  
जो मुश्किल से जानी जाती है  
ऐ मन-बसत की कसिरी है  
जो फनामंड में खोती जाती है

निरंज कुमार खंडेलवाल  
तृतीय वर्ष 'कला'

आज शोषित हैं मगर कल तुमसे सब सकता नहीं  
मगर उल्टे आज पर कल तुम्हें मर सकता नहीं  
आज जो झलक है उनको भिटा सकता नहीं  
है मुझे विश्वास जब तक, तुम डिगा सकते नहीं  
भी गुना पायेय  
द्वितीय वर्ष 'वाणिज्य'

परवर साकर बन पाया नहीं  
प्यार अधिकार बन पाया नहीं  
साधना के सिन्धु में बहते रहे  
पर प्यार का प्रतिफल मिल पाया नहीं

उमराव सिंह चौधरी 'नगर'  
द्वितीय वर्ष 'विज्ञान'

अबल घरा का हरित हो चुका है,  
बह स्वेह जिससे सरस हो चुका है,  
उसी को सुखाने हवा बह रही है,  
नया गीत गाने सुबह आ रही है।

सुरेन्द्र कुमार विवेदी  
तृतीय वर्ष 'कला'

टकराते-टकराते कितने युग  
बीते मेरे जीवन के  
फिर भी लेता रहा हिलोरे  
तार-तार करके जीवन के

मनोहरलाल जे. चौहान  
चतुर्थ वर्ष 'वाणिज्य'

रजत-प्रास को लोहे से मोड़ दो  
समय के बन्धन समय से तोड़ दो  
सोना पीट फुलाये बैठा है  
मोटी चौड़ी ऐसी सी बंदी है  
यह हीरा, मोती, लाल और पन्ना सौं  
ये सभी हैं शोषित शोणी

सुरेन्द्र कुमार सिंह  
तृतीय वर्ष 'कला'

होलकर महाविद्यालय पत्रिका - १९५५-५६

## छः दशक पूर्व जब प्राचार्य ने ही स्नेह सम्मेलन से बहिर्गमन किया!

- श.रा. कवीश्वर

कॉलेज के छात्रालय में खादी का केन्द्र :

सन् १९३० की बात है मैं होलकर कॉलेज में (तब यहाँ विज्ञान के साथ 'कला' विभाग भी था) बी.ए. अंतिम वर्ष का विद्यार्थी था, तथा छात्रावास में ही रहता था। इस दरम्यान मेरे वर्गबंधु श्री वि.वा. अयाचित (जो बाद में विधान सभा सदस्य हुए) से मेरी घनिष्ठ मित्रता हुई वे भी छात्रालय में रहते थे - उज्जैन के तत्कालीन ख्याति प्राप्त देशभक्त श्री पुरतके बकील की प्रेरणा से अयाचित पूर्ण खादीधारी थे और श्री अयाचित की प्रेरणा से, मैं तथा खड्का के श्री अनेखीलाल अरस्कर, श्री मारु व हाडके श्री चौधरी आदि छात्रों ने होलकर कॉलेज के छात्रालय में ही (मेरे कमरे में) शुद्ध खादी का बिनालाम का बिक्री केन्द्र खोला। श्री अरस्कर एच श्री मारु के माध्यम से खंडवा के खादी भंडार से हमें विभिन्न प्रकार की खादी उपहार भेजना मान्य किया, जिसका मूल्य खादी बेचने बाद हम भेजते थे। शायद कुछ खादी उज्जैन से भी आई थी।

उस समय इन्टर्न में शुद्ध खादी प्राप्त करने का अन्य स्थान नहीं था, तथा शहर से भी कुछ लोग हमारे केन्द्र पर खादी खरीदने आते थे इसमें

भी विशेष बात यह थी कि, हर रविवार को होलकर कॉलेज के हम उपरोक्त चार पांच विद्यार्थी अपने हाथों से इन्टर्न की सड़कों पर एक ठेलागाड़ी चलाकर खादी बेचते थे।

भारत पर अंग्रेजी सत्ता के उन दिनों में एक 'देशी रियारत' के शासकीय महाविद्यालय के छात्रालय में खादी बिक्री का ऐसा केन्द्र चलाना, तथा छात्रों द्वारा उसका शहर में जाहिर प्रचार करना, जनता में बहुत कुतूहल का विषय था, तथा इसकी जानकारी दूर तक प्रसारित हुई खादी केन्द्र चलाने के अलावा हमने Youth and Truth शीर्षक से एक हस्तलिखित पाक्षिक पत्रिका भी आरंभ की, जिसके प्रथम आवरण पृष्ठ पर No religion is nobler than truth and no followers fitter than the youth यह बोधवाक्य, तथा अंतिम पृष्ठ पर खादी प्रसार का आह्वान छपा था।

प्राचार्य डॉ. वसू :

कॉलेज के प्राचार्य डॉ. प्रफुल्ल चन्द्र वसू थे वे अर्थशास्त्र के विद्वान प्राध्यापक एवं कुशल प्रशासक होकर, उनका व्यक्तित्व प्रभावी था, अनुशासन का वे



प्रो. कविश्वर,  
प्रो. पद्मनाभन  
और  
डॉ. शंभाकृष्णन.

उद्धाता से पालन करता था। इस महाविद्यालय में कई वर्षों बाद एक भारतीय विद्वान प्राचार्य हुआ था, इन्होंने इन्दौर की जनता में भी उनके प्रति विशेष आदर भावना थी।

उस समय की कुल परिस्थिति में स्वाभाविक ही डॉ. बसू को होलकर दरबार का, तथा पास में ही इन्दौर छावनी में स्थित अगेंट ए जी जी. (Agent to the Governor General) का ख्याल रखना आवश्यक था फिर भी डॉ. बसू ने हमारे खादी केन्द्र में तनिक भी बाधा नहीं डाली। इन्नाही नहीं, एक बार हमने महाविद्यालय में ही खादी का प्रदर्शन आयोजित किया, उसे देखने हमारे अनुरोध पर स्वयं डॉ. बसू आये थे, हमारी हस्तलिखित पाठ्यक पत्रिका भी कॉलेज के वाचनालय में रखने की अनुमति उन्होंने दी।

#### वार्षिक स्नेह सम्मेलन की सभा :

सन् १९३० के आरंभ में ग्वाल्हा गांधी की नमक सत्याग्रह की घोषणा से सारा भारतवर्ष रोमांचित हो उठा, तथा उन्होंने साबरमती से अपनी दाड़ी यात्रा शुरू की उस यात्रा में दिनांक २६ जनवरी के दिनांक को विशेष महत्व दिया गया था आज भी हम उस दिनको भारतीय संविधान के आरम्भ दिन के रूप में मनाते हैं। सत्याग्रह उस वर्ष वही दिन होलकर कॉलेज के वार्षिक स्नेह सम्मेलन हेतु निश्चित हुआ उस अवसर पर स्नेह सम्मेलन की आम सभा में देशभक्ति युक्त भाषण देने की योजना मिली और मेरे मित्रों ने बनाई इन्दौर रियासत के तत्कालीन शिक्षा मंत्री के एक पुत्र, जो उस समय कॉलेज के छात्र थे, स्नेह सम्मेलन समिति के अध्यक्ष नियुक्त हुए थे।

वर्तमान में जहाँ सशक्त हॉल है, वहाँ खुली जगह पर स्नेहसम्मेलन का विशाल तम्बू लगा था सुबह का समय था, छात्रों से तम्बू खड़ाखरा था। कुर्सियों पर प्राचार्य के साथ अध्यापकगण, इन्दौर के विशेष नियमित अधिकारी एवं कुछ मूलपूर्व छात्र बैठे थे।

समा विधिवत आरम्भ हुई स्वागत भाषण एवं कुछ अन्य भाषण के बाद छात्राध्यक्ष ने मुझे भाषण के लिये आमंत्रित किया उस समय भाषण प्रायः अंग्रेजी में होते थे शुरू में मैंने महात्मा गांधी के नेतृत्व में चल रहे स्वतंत्रता आंदोलन का उनकी दाड़ी यात्रा का, एवं उस संदर्भ में २६ जनवरी, के उस दिन के राष्ट्रीय महत्व का उल्लेख किया, फिर मैं हमारे पढ़े-लिखे लोगों में पाश्चिमात्य संस्कृति का अध्यापकगण करने की प्रवृत्ति कैसी पनप रही है, यह बताने लगा।

#### प्राचार्य का समा से बहिर्गमन :

इतने में एक विलक्षण घटना हो गई! मेरा भाषण बालू था उसी दरम्यान प्राचार्य डॉ. बसू एकदम उठकर समा छोड़कर अपने बैगले चले गये। सारी समा विस्मयचकित होकर देखने लगी! मैंने जैसा-तैसा मेरा भाषण समाप्त किया, और समा विराजित हो गई महाविद्यालय परिसर में एकही चर्चा होती लगी कुछ मेरे भाषण की प्रशंसा करते थे, तो कुछ उसे अप्रामाणिक मानते लगे। कुछ अनुमान करने लगे कि अब प्राचार्य मुझे कॉलेज से रजिस्ट्रार के दफ्तर, तथा एक अच्छे विद्वार्थी ने (उसके पूर्व मुझे गुणों के आधार पर शिष्यवृत्ति एवं पारितोषिक प्राप्त हो चुके थे) अपना मविष्य व्यर्थ खर्चने में डालते इस पर खेद व्यक्त करने लगे यह सब सुनकर मुझे भी ऐसी समाधान

लाने लगी कि, अपने 'वॉक-आउट' के बाद अब प्राचार्य मुझे महाविद्यालय से 'गेट-आउट' का आदेश देंगे!

किन्तु अन्ततोगत्वा कॉलेज के सूचना-फलक पर ऐसी कोई सूचना नहीं लगी बाद में मुझे पता चला कि, कुछ अध्यापक प्राचार्य से मिले और उन्होंने इस प्रकरण को अधिक तूल न देने का सुझाव दिया, मुझे यह भी मालूम हुआ कि प्राचार्य महोदय ने समा के छात्राध्यक्ष को मेरा भाषण बीच में ही रोकने हेतु संकेत किये थे, किन्तु वे अध्यक्ष के ध्यान में नहीं आये और अखिर प्राचार्य स्वयं उठकर चले गये।

कुछ ही समय बाद मैं श्री अयाचित आदि के साथ प्राचार्य से मिलने उनके बैगले पर गया मैंने कहा कि, मेरा उद्देश्य किसी को अपमानित करने का न होकर भारत का स्वतंत्रता आंदोलन एवं भारतीय संस्कृति की महानता की ओर श्रोताओं का ध्यान आकर्षित करना था, प्राचार्य बसू बोलते कि, मैं तुम जैसे युवकों की भावना समझता हूँ, किन्तु तुम्हें भी मेरी तथा महाविद्यालय की वर्तमान परिस्थिति ध्यान में रखना चाहिये।

#### ऑ बसू की उदारता :

प्राचार्य डॉ. बसू ने उसके बाद मेरे बारे में तनिक भी कटुता न रखते हुए सदैव मुझे मेरे अध्ययन में प्रोत्साहित किया यदि स्नेह सम्मेलन की उस घटना पर डॉ. बसू विपरीत दृष्टिकोण रखते तो मेरे अध्ययन में कुछ बाधा आ सकती थी इसके बाद मैं उसी के कार्यकाल में इस महाविद्यालय में दर्शनशास्त्र का प्राध्यापक नियुक्त हुआ, उनकी मुझ पर सदैव पूर्ण कृपा दृष्टि रही, इन्दौर के एक महाविद्यालय के प्राचार्य होते हुए भी, वे सुरु विशाल आगरा विश्वविद्यालय के एक से अधिक बार निर्वाचित कुलपति रहे और इस महाविद्यालय एवं इन्दौर की प्रतिष्ठा में श्रीवृद्धि की।

स्वर्गीय डॉ. बसू की पावन स्मृति में मेरा विनम्र अभिवादन

□□

Holkar College Times  
February 16, 1959

Appreciation of an Artist

#### PAINTINGS OF AGASHE

Our Readers know that there was held a one-man-show of some of the paintings of Vasant D. Agashe, in our Arts Exhibition on the occasion of the recent Social Gathering As it attracted a large number of persons, and evoked great appreciation from the Chief Guest

The young artist, Vasant D. Agashe (a student of our Senior B.A. class) began his career as a student of Drawing and Painting under the able guidance of Prof. Chandresh Saxena of the Arts College, Indore. Though he took an all round interest in Painting, landscapes have attracted his special attention.

I joined Holkar College in 1937 to receive B.Sc. degree in 1941 Dr. P. Basu was the Principal for the first two years and probably in 1939 Mr. Richardson replaced him as Principal

Dr. Basu was an autocrat and a great disciplinarian. He enforced discipline more through authority than by persuasion and love. A general atmosphere of fear prevailed in the college. Very few students dared to approach him and those who took the necessary courage to do so were badly snubbed. We were told that on one such occasion, Mr. W.V. Oak received from him a cutting rebuff - "Go and Speak to the Wall". With his acute presence of mind and sense of humour Mr. Oak smilingly retorted that he was actually doing so. Mr. Oak was a brilliant student and with the courage he exhibited before an autocrat he naturally became a darling of the students.

We, the Science students, were less affected by Dr. Basu's authoritative ways. We had our own Scholastic world with Dr. Deshpande, Prof. Padmanabhan. Prof. Gole as our Heads of Departments aided by Dr. Bhagwat, Prof. Gangrade and others. All our Professors had maintained a very close contact with us and were intensely interested not only in our current studies but also in our future. One could easily identify Dr. Deshpande, a keen Scholar, always in a hurry to attend to his research problems. The class of Prof. Padmanabhan always presented a serene atmosphere. He always lectured in a regulated voice, never raising it high nor keeping it too low. We were convinced that in clarity, no one could reach his level. I always liked Prof. Gole's lectures for his novel approach in solving difficult mathematical problems. Dr. Bhagwat always displayed his great enthusiasm throughout. His devotion to his research work and to the welfare of his students was unbounded.

How deeply were our professors involved in our studies is vividly shown by an event that took place when we were in the third year. An inquisitive classmate of ours somehow secured the date of birth of Prof. Gangrade. On that day just before his class he divulged his secret to us. All were joyful. We all wished him a very happy birthday and requested him

to call off his lecture in the honour of his birthday. Prof. Gangrade did yield to our entreaties by way of offering us a sum of rupees five to celebrate his birthday but insisted on to take the class. Needless to say that after the class we enjoyed a grand party in the College Canteen.

The change over from Dr. Basu to Mr. Richardson was generally welcomed. This was in spite of the fact that those were the days of freedom struggle and he was a foreigner. He was approachable, had pleasing manners and took keen interest in all activities of College. Preparations were afoot for the celebration of the Golden Jubilee of the College in the first quarter of 1941. With great alacrity he tried to organise the function through full cooperation of the students. And here his charming and persuasive ways could not dampen the spirit of freedom struggle imbibed in the students. The students insisted that the function began with the singing of 'Vande Mataram'. He arranged comprehensive discussions on the subject through the meetings of Students Union during nights. But the students did not yield and the celebrations had to be postponed. Our chief spokesman Mr. G.M. Chaphekar became our hero over night. His advocacy of our cause was so effective that authorities could not find a way out. Here were sown the seeds of an eminent advocate.

A little episode that took place during this struggle cannot be forgotten by me. I was a poor student and granted free tuition. My colleagues always guarded my interest and kept me away from all demonstrations taken place in the college in response to freedom struggle. During Jubilee preparations, however, I was elected a member of Students Union and was obliged to attend its meetings. I think Dr. Deshpande felt particularly concerned about my studies. He requested my uncle to bring pressure on me to stop my attending these meetings in view of the fast approach of our final examination. Such was the care we received from our revered teachers.

In the end, I may be allowed to say that the 1941 B.Sc. batch of Holkar College was possibly the best in that out of 35 students, 6 students were rated in the first class and most of the others stood in the second class.

□□





भानुदत्त सिंह मेहता

## स्वतंत्रता संग्राम और कॉलेज के वे दिन

१९३६ में श्री होलकर कॉलेज में प्रवेश लिया और छह वर्षों तक वहीं अध्ययन किया १९४२ में भारत छोड़ो आंदोलन के कारण कॉलेज छोड़ दिया डॉ. देशपांडे के मार्गदर्शन में प्रारंभ किया शोध कार्य छोड़ना पड़ा कॉलेज की शिक्षा क्यों ले रहा हूँ, विज्ञान का विषय क्यों चुना है या बाद में शोध कार्य में समय क्यों लगाना चाहता हूँ, इस सब के बारे में मन में कोई स्पष्टता नहीं थी, हाँ, स्कूल के बाद कॉलेज का जीवन ज्यादा दिलचस्प था, लगता था मानों एक छलींग में ऊँचाई मिल गई है

छावनी के बाद कॉलेज के मार्ग का शांत वातावरण और आसपास के बड़े बड़े पेड़ों के झुंडों का दृश्य बड़ा मनोहारी लगता था, इस चौड़े मार्ग पर तेज रफ़्तार से सायकल चलने में बहुत मजा आता था, उन दिनों सड़क दुर्घटना का डर नहीं था क्योंकि मार्ग में बस, ट्रक या कार यादकदा ही दिखती थी

कॉलेज की इमारत हमें बड़ी शानदार लगती थी, दूर से पेड़ों के बीच इसकी लाल-लाल झलक दिखाई देती तो एक विशेष गर्व का अनुभव होता था कॉलेज के आगते में घुसने पर सायकल स्टैंड पर सायकल रखते और कॉलेज के वातावरण से अभिभूत से हो जाते थे तब डॉ. बंसु प्रचार्य पद पर थे, उनका बड़ा दबदबा था व्यवस्थित और अनुशासित कॉलेज की गतिविधियों का श्रेय उन्हें जाता है, विज्ञान-विभाग के गुरुजनों में डॉ. देशपांडे, डॉ. भागवत, प्रो. माधुर, डॉ. कौशल, प्रो. पद्मनाभन, प्रो. गोले व प्रो. गवाराडे थे, प्रो. घोष, प्रो. बोर्णोवकर, प्रो. मिश्रा, प्रो. श्री खण्डे, प्रो. उर्दुबरेषे, प्रो. यादव, प्रो. वर्मा, प्रो. बोर्डिंग, प्रो. देसाई और प्रो. अक्षय यादव आ रहे हैं सभी गुरुजनों के लिये हमारे मन में बड़ा आदर था, नगरिकों से भी उन्हें समुचित आदर मिलता था, सादा जीवन और उच्च विचार उनकी जीवन शैली थी पैसा कमाने के लिये उचित अनुचित का विचार न कर जो दीर्घ भाग आज नजर आती है, तब उसका सर्वथा अभाव था, शिक्षक वर्ग अपनी गरिमा व मर्यादा के प्रति राजग था, कॉलेज के सभी शिक्षकों से मुझे इतना अच्छा व्यवहार मिला कि उसकी याद से आज भी मन सुखद कृतज्ञता से भर जाता है

होलकर कॉलेज आगरा युनिवर्सिटी का प्रतिष्ठित कॉलेज था, यहाँ अध्ययन-स्तर, खेल-कूद का स्तर, पुस्तकालय का संग्रह व खरखराब, प्रयोगशाला की सुविधाएँ, छात्रावास व खेल के मैदान, सभी कुछ दूसरे कॉलेजों के मुकाबले में बेहतर थे, इन्दौर के आस-पास के क्षेत्रों के कई विद्यार्थी यहाँ शिक्षा पाने के लिये आते थे, कई मर्त्या दुसुरथ क्षेत्रों के विद्यार्थी भी यहाँ प्रवेश लेते थे तब स्नातकोत्तर शिक्षा की व्यवस्था कुछ विषयों तक ही सीमित थी तथा शोधकार्य की सुविधा सिर्फ रसायन शास्त्र में थी

इन्दौर की आबादी चौधे दशक के अंत में करीब दो लाख थी यह होलकर विरासत की राजधानी थी भारत के मध्य क्षेत्र का यह सबसे बड़ा और सबसे अधिक प्रगतिशील शहर था, राजा की प्रशासन में दखलताजी नहीं थी प्रशासनिक अधिकारी समतावान थे और विकासोन्मुख दृष्टि रखते थे शिक्षा, उद्योग, व्यापार व कृषि के अतिरिक्त पूरी होलकर विरासत में ग्राम पंचायतों व नगरपालिकाओं का काम सरकारीय था इन्दौर शहर की नगरपालिका की व्यवस्था अनुकरणीय मानी जाती थी

इन्दौर में पहला अंग्रेजी स्कूल १८४९ में स्थापित हुआ, इसके बाद डॉ. तेजी से शिक्षा सुविधाएँ बढ़ती गईं, १८७८ में किंग एडवर्ड मेडिकल स्कूल

की स्थापना हुई १८७९ में इंग्लिश-अरबि स्कूल स्थापित हुआ १८८८ में क्रिश्चियन कॉलेज तथा १८९१ में लैन्ड्रिक नर्सिंग स्थापित हुआ महिला शिक्षा के लिये १९१२ में चंद्रावती महिला विद्यालय व १९२२ में लैडी रीडिंग स्कूल की स्थापना हुई इसी अवधि में वहीं आर्ट स्कूल, संगीत विद्यालय, संस्कृत महाविद्यालय, एंग्लो-मराठा विद्यालय, विश्वविद्यालय, नगरपालिका लाइब्रेरी, नर्सन मंदिर, हिन्दी साहित्य समिति व महात्मा गांधीय समिति की स्थापना हुई, १९२४ में कृषि शोध कार्य के लिये ३०० एकड़ के फार्म के साथ प्लॉट इन्स्टिट्यूट की स्थापना हुई गुरु-बधिर व अंध बालकों के लिये भी शिक्षा व्यवस्था प्रारंभ की गई सरकारी प्रयत्नों के साथ शिक्षण संस्थाओं को स्थापित करने के लिये गैर सरकारी प्रयत्न भी काफी मात्रा में रहे इन्दौर आर्य समाज, ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज व थियोलॉजिकल समाज की गतिविधियों का भी केन्द्र रहा इन तमाम संस्थाओं के कारण शैक्षणिक व सांस्कृतिक दृष्टि से इन्दौर अपना महत्व रखता आया है

हमारी पीढ़ी को बचपन से ही कुछ धार्मिक व सामाजिक सुधारकों के बारे में काफी पढ़ने और सुनने को मिला और हमारे विचारों पर स्पष्ट हो उनका असर हुआ राजा राममोहन राय व ईश्वरचंद्र विद्यासागर ने रूढ़िवाद का विरोध कर प्रगतिशील विचारधारा का उन्नीसवीं सदी के अंत में सूत्रपात किया था बंगाल में ब्रह्म समाज के आंदोलन ने व महाराष्ट्र में प्रार्थना समाज के आंदोलन ने वर्ण व्यवस्था पर प्रहार किया स्वामी विवेकानंद ने राष्ट्रीय स्वामिमान देशवासियों में भरा और बताया कि भारत के पास अध्यात्म का अद्वैत खजाना है स्वामी दयानंद ने प्राचीन भारतीय गौरव को जगाया और हिन्दू समाज को शक्ति प्राप्त करने की दिशा दी ऐनी बेसेन्ट के थियोलॉजिकल आंदोलन ने विश्व बंधुत्व के लिये प्रेरित किया

दादाभाई नौरोजी बालगंगाधर तिलक, गोपालकृष्ण गोखले, न्यायमूर्ति रामदे, लाला लाजपत राय, विपिनचन्द्र पाल, फिरोज शाह मेहता, सुरेन्द्रनाथ बेनर्जी जैसे महापुरुषों ने गुलामी से होने वाले आर्थिक, सामाजिक व राजनैतिक हास की बात समझाई, स्वतंत्रता प्राप्ति की इच्छा जगाई और स्वतंत्रता आंदोलन के भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के संगठन को फैलाया व मजबूत किया

बीसवीं सदी के दूसरे दशक में महात्मा गांधी ने भारत में अहिंसा के आधार पर लड़े जाने वाले क्रान्तिकारी स्वतंत्रता संग्राम को हर भारतवासी से जोड़ा और साम्प्रदायिक एकता स्थापित की, ब्रिटिश शासन की जड़ों को महात्मा गांधी के अहिंसक आंदोलन ने झकझोर डाला, क्योंकि पहली बार लाखों की सख्या में आंदोलन से संचर्न रखने वाली प्रवृत्तियों में लोगों ने भाग लिया और हजारों की सख्या में लोग सत्याग्रह कर जेल गये गांधीजी ने युगान्तरकारी वातावरण बनाया जनता ने उन्हें श्रद्धा और आदर के साथ अपनाया और उनके नेतृत्व में बड़े से बड़ा त्याग करने की आतुरता बताई ब्रिटिश शासन ने भी गांधीजी के आंदोलन को कुचलने के लिये कोई कसर न छोड़ी

भारतीय राजनैतिक आंदोलन पर रूसी क्रान्ति का जबरदस्त प्रभाव पड़ा था युवकों में विरोधरूप से समाजवाद की विचारधारा के प्रति आकर्षण बढ़ रहा था इनमें से कुछ की मान्यता थी कि आजादी व समाजवाद को क्रिसक क्रान्ति के मार्ग से ही प्राप्त किया जा सकता है क्रांतिकारियों के एक दल ने १९२५ में काकोरी रेलवे स्टेशन पर सरकारी खजाना लूट लिया इससे खूब तहलका मचा, नवजवान सरदार भगतसिंह ने १९२९ में लेजिस्लेटिव कोसिल का ध्यान आकर्षित करने के लिये बैठक के दौरान

एक बम फेंका जिसके कारण फासी की सजा दी गई लोगों के कड़े विरोध के बावजूद १९३१ में उन्हें फासी पर लटकवा दिया गया इस शाहवात से सारा राष्ट्र महोदय से हिल गया साथ ही भगतसिंह के प्रति त्याग से अभिभूत हो गया व ब्रिटिश शासन के विरुद्ध क्रोध से उद्वेलित हो उठा जनरल डायर द्वारा किया गया बर्बर हत्याकांड इस समय याद आना स्वाभाविक था भगतसिंह की बहादुरी व त्याग से अनेक युवकों ने प्रेरणा पाई इन्दौर के कुछ क्रान्तिकारी युवकों ने राजनैतिक उद्देश्य से एक डकैती आयोजित की धार डकैती-कांड के कुछ युवकों से मेरा भी संपर्क था

जवाहरलाल नेहरू १९२९ में लाहौर के कांग्रेस अधिवेशन में अध्यक्ष बनाये गये इस अधिवेशन में संपूर्ण स्वतंत्रता का प्रस्ताव पास हुआ और २६ जनवरी १९३० को भारत भर में पहला स्वतंत्रता दिवस मनाया गया और इसके बाद से लगातार इस दिवस को मनाया जाने लगा जवाहरलाल नेहरू और सुभाष बोस नवयुवकों के आदर्श थे इस दशक में अनेक कल्पनाशील युवक तान्त्रिक, काव्यवादी व गतिविधिकाय नैतिक बनने की तरफ प्रवृत्त हुए

१९३० में आंदोलन की बागडोर गांधीजी के ही पास थी उन्होंने दाड़ी-यात्रा और नमक कानून तोड़ने का कार्यक्रम बनाया ब्रिटिश शासन ने बड़ी क्रूरता से आंदोलन कुचलने की कौशिश की परंतु आंदोलन बढ़ता गया इन्दौर की कांग्रेस शाखा ने भी बड़े कडाह में समुद्र का पानी सुखा कर नमक बनाया मैं भी भीड़ में दर्शक था और चुल्हकी पर नमक प्रसाद के रूप में मुझे भी मिला था

इन दिनों गांधीजी द्वारा सुझाई गई प्रवृत्तियों को देश भर में चलया जा रहा था तकली व चर्खे पर सूत कातना हमें बड़ा अच्छा लगता था इसमें सर्जन का आनन्द था विदेशी वस्त्रों की होनी देखते समय हमें खूब उत्तेजना महसूस होती थी शराब की दुकानों पर पिकेटिंग चलता अस्पृश्यता निवारण प्रौढ़ शिक्षा व सुनियोजित शिक्षा के कार्यक्रम भी चलया जा रहे थे

१९३७ में प्रांतीय सरकार के गठन के लिये चुनाव हुए ग्यावरह में से आठ प्रांती में राष्ट्रीय कांग्रेस को बहुमत मिला और यह स्पष्ट हो गया कि कांग्रेस ही भारतीयों की प्रतिनिधिक संस्था है आठ प्रांती में कांग्रेस सरकार बनी बाकी तीन में मिली जुली सरकारें बनीं

आंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्थिति तेजी से बिगड़ रही थी इटली ने इथोपिया पर कब्जा कर लिया था, जापान ने चीन पर हमला कर दिया था १९३८ में जर्मनी ने आस्ट्रिया पर कब्जा कर लिया और इसके कुछ बाद चेकोस्लोवाकिया को रौंद डाला, इटली में मुसोलिनी और जर्मनी में हिटलर की ताकत के सामने इंग्लैंड व फ्रांस जैसे सशक्त देश किसी भी तरह का प्रतिरोध करने से चकरा रहे थे और छोटे छोटे देशों के विप्लव जाने पर घुप थे, मुसोलिनी और हिटलर का आक्रामक रूप बढ़ता गया अन्तर्गतत्वा सेप्टेम्बर १९३९ में विश्वयुद्ध फिड़ गया जर्मनी, जापान और इटली के विरोध में इंग्लैंड, फ्रांस, रूस, चीन और अमेरिका खड़े हुए इंग्लैंड और फ्रांस ने अपने आधिपत्य देशों को अपना समर्थक घोषित कर दिया और इस तरह भारत को भी युद्ध में शरीक कर लिया गया भारत की इच्छा मालूम किये बिना इसे युद्ध में घसीट लिया जाना अनैतिक व अपमानजनक था कांग्रेस स्पष्ट रूप से फासिस्ट ताकतों से विरोध भी साथ ही किया व सामाज्यवादी रूप का भी विरोध किया था अंततः प्रांतीय सरकारों ने

कमरे से जगमगाते थे। पिता और मैट्रिकल सहायक के साथ शराबी न करने की घोषणा की। तब तक कमरे में इतनी ही चिंगा गाना जारी थी १९४० में कमरे में व्यक्तिगत सहायक के द्वारा सारा सारा ही गैरिस्ता को धुका किया

देशी शिवालयों में निरपेक्ष शक्ति स्वयं करने व उत्तरदायी शासन की मांग करने के लिये प्रगल्भ समाज खड़े करने की कांग्रेस ने निर्धारित की थी। सारा बड़ी शिवालयों में प्रगल्भ समाज खड़े करने काम कर रहे थे इन्दौर में प्रगल्भ समाज १९४० और इलाहाबाद में १९४१ में था। होलकर शिवालय के जनप्रिय दीवान श्री बापना की मृत्यु के पश्चात कर्नल दीनानाथ इस पद पर आये, जिन्होंने प्रजापंडित की एकता नष्ट करने के लिये तालाब देकर कुछ लोगों को फेंका। और इस तरह संघर्ष का वातावरण बनाया

होलकर कॉलेज के प्राचार्य डॉ. बसु इस समय विदाय हो गये थे उनके स्थान पर रिचर्डसन आये। रिचर्डसन ने भी विद्यार्थी एकता को नष्ट करने के लिए उर्दे मालूम माने थे। पिता ने तीन मुस्लिम विद्यार्थियों के विधायक को मारना दिया। रिचर्डसन का संघर्ष वहीं था जो भारत में अंग्रेज प्रशासकों का था

१९३८ में दिल्ली में अखिल भारतीय स्टूडेंट फेडरेशन का संघटन बनाया गया था। एम. फारूकी तब संघटन के महासचिव थे। धीरे-धीरे स्टूडेंट फेडरेशन की शाखाएँ स्थान-स्थान पर स्थापित हो रही थीं। फेडरेशन का उद्देश्य आजादी के राष्ट्रीय आंदोलन में विद्यार्थियों की हिस्सेदारी को बढ़ाना था। १९४० में इन्दौर में भी फेडरेशन स्थापित हुआ। इसमें सिर्फ कॉलेज स्तर के विद्यार्थियों को संघटित किया गया। वस्तु सरदर, प्रभाव उद्देश्य, राजू वैद्य, वैद्य व मेरा फेडरेशन की स्थापना में प्रमुख हिस्सा था। प्रथम कार्यकारिणी में वस्तु सरदर अध्यक्ष और प्रभाव उद्देश्य महासचिव नियुक्त हुए। दूसरे वर्ष में मुझे अध्यक्ष और संकर ओझा को महासचिव बनाया गया। राजू वैद्य, अनंत लाल, चदन मेहता, नाथूलाल जैन, सरदार रणजीत सिंह, प्रताप सिन्हा, नंदकिशन भट्ट, गीत श्याम सुंदर व्यास, डॉ. महलोजा, श्री हरी मोहोय, जगमोहन पवार, डूंगू पाटकर मुक्ता कृष्ण, जोहरीलाल झाझरिया हिरालाल शर्मा, अजित प्रसाद जैन आदि इन्दौर के विद्यार्थी आंदोलन में प्रमुख थे

रिचर्डसन ने आते ही कॉलेज में विद्यार्थी पार्लियामेंट क्लब की, स्टूडेंट फेडरेशन के कार्यकर्ताओं ने पार्लियामेंट में विपक्ष की भूमिका में रहना पसंद किया। उद्देश्य और नाथूलाल जैन अच्छे वक्ता थे, विपक्ष सत्ता पक्ष पर हावी रहता था

१९४२ में जापानी फौजें बर्मा तक आई थीं और भारत पर आक्रमण की समाचना बढ़ गई थी। कांग्रेस ने अंग्रेजों से कहा कि वे भारत छोड़ दें। तब हिन्दू देश की रक्षा की जिम्मेवारी पूरी कर लें। ८ अगस्त १९४२ को बम्बई में कांग्रेस कमिटी का अधिवेशन हुआ उसमें 'भारत छोड़ो' का प्रस्ताव पास हुआ। गांधी जी ने देश को आत्मन्य किया कि 'करो या मरो' इस महत्वपूर्ण अधिवेशन की कार्यवाही देखने फेडरेशन के चार व्यक्ति बम्बई गये थे। जोहरीलाल झाझरिया, डूंगू पाटकर, नाथूलाल जैन और मैं ९ तारिख को गवर्नरिया टेक मैदान पर जनता को संबोधित करने वाले थे। गांधी जी का आशा थी कि कोई कड़ा कदम उठाने से पहले ब्रिटिश शासन उनसे

बातचीत करेगा। परन्तु ८ तारिख की रात को ही कांग्रेस के तमाम प्रमुख लोगों को गिरफ्तार कर लेना गया। जनता में जो प्रेरित हो गई ९ तारिख की रात को संघर्षित करने के लिये कस्तूरबा का नाम तब हुआ। परन्तु उन्हें भी गिरफ्तार कर लिया गया। हम लोग सभा मैदान में गये तो युद्ध का सा वातावरण मिला। मीड पर छोड़े डौड़ाये गये, सारे मैदान पर टैपर गैस के बम फेंके गये, फायर हाइड्रेंट से पानी छिड़का गया और लाठियों घटाई गईं। पूरा बम्बई बंद हो गया। अन्य शहरों के लोगों ने भी शस्त्रों को बढ़ रखा, टेलीफोन के तार काटे, रेल की पटरियाँ उखाड़ी और बमताओं को मुकदमा पहुँचाया। सरकार ने हर जगह के महत्वपूर्ण राजनेताओं को जेल में बंद कर दिया था।

इन्दौर के विद्यार्थी हमारी वापसी का इंतजार कर रहे थे। इस वर्ष जोहरी लाल झाझरिया अध्यक्ष थे। हम लोगों ने १३ तारिख को तमाम संस्थाओं को बंद करने का और जुलूस निकालने का तय किया।

१९४२ में होलकर कॉलेज के प्राचार्य पद पर डॉ. राजू आ गये थे। रिचर्डसन को शिक्षा-मंत्री के पद पर स्थानांतरित किया गया था। डॉ. राजू सरल परन्तु कुछ सनकी स्वभाव के थे। वैसे वे अच्छे वक्ता थे और उनकी क्लास में उन्हें सुनने अन्य कक्षाओं के विद्यार्थी भी आते थे। मेरा उनसे संपर्क नहीं आया। १३ अगस्त, जो हम कॉलेज में विद्यार्थियों की सभा करना चाहते थे, परन्तु इसकी अनुमति नहीं मिली। कॉलेज के बाहर सड़क पर सभा हुई और हड़ताल की पुष्टि की गई। शाम को प्रजापंडित, कोयस, स्टूडेंट फेडरेशन व मजदूर संगठन द्वारा एक संयुक्त रैली निकाली गई। पूरे शहर में, कारखानों में व शिक्षण संस्थाओं में हड़ताल थी और वातावरण तनावपूर्ण था। पुलिस ने जुलूस को रोकना और तितर-बितर करने के लिये सब तरह के प्रयास किये। अब स्पष्ट था कि सब प्रमुख आंदोलनकारी गिरफ्तार किये जाएँ। 'आगामी कल' के संपादक प्रभावचंद्र शर्मा मुझे व मेरे कुछ साथियों को मीड से निकाल लाने और मुझे अंडरग्राउंड हो जाने की सलाह दी। मेरे साथियों ने भी इसे ठीक माना। तब हुआ कि नंदकिशोर भट्ट अपने निवास पर मुझे छिपा कर रखेंगे, रात में पुलिस ने मेरे घर पर छापा मारा पर मैं नदारद था। प्रजापंडित पत्रिका को गुप्त रूप से निकालने का काम मेरे बड़े भाई मनोहर सिंह मेहता के पास था। सौ पुलिस की निगाह हमारे घर पर रही और दो दिन बाद फिर से पुलिस ने छापा मारा पर सफलता नहीं मिली। जोहरीलाल झाझरिया व डूंगू पाटकर को गिरफ्तार किया जा चुका था। अन्य लोगों के साथ कुछ महिनों तक मैं देश बदल कर अलग-अलग स्थानों पर रहा। आंदोलन को जीवित रखने के लिये बुलेटिन व गश्ती विद्यार्थी तैयार करता व विद्यार्थियों से संपर्क करता, हथियार और विस्फोटक पदार्थ भी एकत्रित किये गये और जंगलों में जाकर उन्हें प्रयोग करने की विधि सीखने का प्रयत्न किया। नेताओं की गिरफ्तारियों के बावजूद आंदोलन की गरमी बनी हुई थी। डॉ. राम मनोहर लोहिया और अरूणा आसफ अली अंबर गाँउंड रह कर पूरे भारत के आंदोलन का निर्देशन कर रहे थे, डॉ. केसकर एम.पी. सिन्हा, उषा मेहता जैसे अनेक प्रमुख लोग अंबर गाँउंड हो गये थे। जयप्रकाश नारायण जेल से भागने में सफल हो गये थे। सुभाष बोस आजाद हिंद फौज संघटित कर चुके थे और यह फौज भारत सरकार की फौज से सफल तो रही थी। आंदोलनकारी एक रेडियो स्टेशन संघटित करने में भी सफल हो गये थे। फिर भी, १९४२ के अंत तक आंदोलन कई स्थानों पर टका पड़ने लगा था। जेल में १९४३ के प्रारंभ में गांधीजी ने इक्कीस दिनों का अनशन करने का निश्चय किया। अनशन के दौरान गांधीजी की स्थिति बहुत नाजुक थी। सारा देश चिंतित हो गया और आंदोलन

में तेजी आई। कस्तूरबा की मृत्यु जेल में हो गई। इस बात से भी लोग काफी उद्विग्न हुए। ५ फरवरी, १९४४ को गांधीजी को रिहा कर दिया गया। दूसरे नेता भी धीरे-धीरे रिहा किये जाने लगे। सबसे राहत की ताँस थी अब बागडोर फिर से गांधीजी के हाथों में था।

युद्ध में अब ब्रिटेन, रूस आदि मित्र राष्ट्रों का पलड़ा भारी होता जा रहा था। जर्मनी जापान और इटली हर मोर्चे पर कमजोर हो रहे थे। युद्ध समाप्ति की ओर था। अखिर १५ मई १९४५ को जर्मनी का पतन हो गया।

ब्रिटेन में लेबर पार्टी जीत गई थी, जो चर्चिल की कन्जर्वेटिव पार्टी के मुकाबले में भारत के प्रति कुछ बेहतर रुख रखती थी। आजाद हिंद फौज के नेताओं के मुकदमों तथा नैनी की बगावत के समय पूरे भारत में जो जोश उमरा उसे देखते हुए भी यह मान्यता बढ़ गई थी कि भारत के स्वशासन



श्री निरंजन जमींदार छात्रों के दशक में इस महाविद्यालय के छात्र थे वे हिन्दी, मराठी, अंग्रेजी के छात्रों में प्रसिद्ध थे। इतिहास और राजनीति में उनकी विशेष रुचि थी। उनकी अनेक कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं। 'आरंभ शिक्षा बहरी रही' - उनका प्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यास है। होलकर कॉलेज का सदस्य लिये उनके दो उपन्यास 'निर्माणा' और 'मजदूर के फूल' प्रकाशनाधीन हैं।

के हक को अब तालना कठिन है। परन्तु इसी समय भारत में मुस्लिम सांप्रदायिकता का भयानक उत्कर्ष हुआ जिसने चर्चाओं की सफलता में रुकावट पैदा की। अखिरकार हमारे नेता बैठवारे के लिये तैयार हुए। १५ अगस्त, १९४७ को कटा हुआ भारत आजाद हुआ। गांधीजी के अनुसार कांग्रेस को भंग करना बेहतर होता। उस दिन मैंने अपने को राष्ट्रीय कांग्रेस से अलग कर लिया।

स्वतंत्रता संग्राम से जो लोग जुड़े थे, वे व्यक्तिगत आकांक्षा को लेकर नहीं जुड़े थे। स्वतंत्रता की मंजिल जब पूरी होने आई तो व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा लोगों पर हावी होने लगी। गांधीजी को मुलायम जाने लगा, त्याग व सेवा का युग समाप्त होने लगा।

□□

होलकर महाविद्यालय का नाम लेते ही संसार के, देश के, राज्य के और जीवन के एक अत्यंत उथल-पुथल भरे युगपरिवर्तनकारी दशक का स्मरण हो आता है। सन १९३९ में द्वितीय महायुद्ध प्रारंभ हो गया था और सभी परिवर्तन की दहलीज पर खड़े नए प्रमात के आगमन की बात जोह रहे थे।

भारत अंग्रेजों की दासता से मुक्त होने का अंतिम निर्णायक स्थापन में रत था। भूतपूर्व होलकर राज्य में उत्तरदायी शासन और लोकतन्त्र की स्थापना के आंदोलन प्रारंभ हो चुके थे। चारों ओर उथल-पुथल थी। चालिस का दशक कई कारणों से अधिसंभवी बन गया था।

होलकर महाविद्यालय में प्रवेश कठिन नहीं था। मेट्रिक के बाद उच्च शिक्षण के लालायित विद्यार्थी वहाँ प्रवेश पा सकते थे। विज्ञान में मात्र सीमित स्थान थे। कला संकाय में प्रवेश का कोई बंधन नहीं था। चालिस के दशक में वाणिज्य संकाय प्रारंभ हुआ। नागरिक शास्त्र का नया विषय कला संकाय में जोड़ा गया था। स्वातंत्र्योत्तर विषयों में अंग्रेजी, अर्थशास्त्र, और इतिहास के साथ रसायन शास्त्र में पाठ्यक्रम थे। अन्य विषयों के लिए कोई व्यवस्था नहीं थी।

होलकर महाविद्यालय में चालिस के दशक के पूर्व स्व. डॉ. पी.सी. बसु प्राचार्य थे। उनकी विद्वता का दबदबा था, वे एक कठोर अनुशासन प्रिय व्यक्ति माने जाते थे। छात्रों का उन पर प्रेम था। जब वे सेवानिवृत्त हुए तो रेलवे स्टेशन पर इन्दौर के छात्रों और नागरिकों ने उन्हें अधिस्मरणीय विदाई दी। मैं उस विदाई सभासद में था। छात्रों की आँखों में आँसू बह रहे थे।

प्राचार्य बसु की सेवा-निष्ठा के बाद महाराजा यशवंतराव होलकर ने अपने मित्र, कनाडा के मिस्टर एच.बी. रिचर्डसन को प्राचार्य बनाया। वे तत्काल प्रकाशित करवाया। छात्रसभा का गठन करवाया, होलकर कॉलेज टाईम्स में मैंने अंग्रेजी संपादक के नाम पत्र लिखना प्रारंभ किए थे। उस समय महाविद्यालय में वह नया प्रयोग था।

उस समय इन्दौर में प्रगतिशील, विशेषकर कम्युनिस्ट विचारों का जोरदार प्रचार हुआ। महाराष्ट्र के कुछ साथी कम्युनिस्ट साहित्य का व्यक्तिगत सम्पर्क



कर प्रचार करते थे। मैंने उसी काल में बहुत सा कम्युनिस्ट साहित्य खरीदा और पढ़ा। कम्युनिस्ट विचारधारा के अध्ययन के लिये समितियाँ भी जिनमें राएबाद, गौधीवाद, कम्युनिज्म आदि पर खुलकर बर्षाएँ होती थीं।

इसी काल में महाराजा के कुछ सलाहकारों के कारण होलकर महाविद्यालय में प्रुस्तिम साम्यवादिता का प्रचार हुआ। वदे मास्तर गीत के विषय में काली कटु संघर्ष हुए। सभात अक्बर की जन्मतिथि समारोह पर स्व. सर तेज बहादुर सक् प्यारे थे। उन्हें छात्रों ने बोलने नहीं दिया। इस अवसर पर प्राचार्य रिचर्डसन शायद पालरी की वेशभूषा में आये थे।

बालिस के दशक में ४२ का आंदोलन प्रारंभ हुआ। उसमें राक्षसी छात्रों ने भूमिगत होकर पत्रिकाएँ निकाली। बम आदि बनाने के प्रयत्न भी हुए थे। छात्रों का रुझान उस समय समाजवादी विचारधारा की ओर था। वे गौधीजी की अहिंसा में विश्वास नहीं करते थे।

इसी दशक में इन्दौर के सीमाय से नोबल पुरस्कार विजेता स्व. सर सी वी रमन इन्दौर प्यारे थे। उनके अत्यंत रोचक व्याख्यान सुनने का मौका मिला।

होलकर महाविद्यालय में प्रा. रिचर्डसन के बाद प्राचार्य राजू आए। वे दर्शन के प्राध्यापक थे। उनका व्यक्तित्व विचित्र था। हर पांच मिनट में वे अपनी बातों से मुक्क जाते थे। उनके कई लतीफें सुने जा सकते हैं।

महाविद्यालय में सहसिधा थी। फिर भी छात्राओं की संख्या बीस से अधिक नहीं थी। छात्राओं में आज की तरह बमक दमक नहीं थी। उन्हें अधिकतर 'पढ़ाऊ' स्कॉलर माना जाता था। उनसे बात करने में नए छात्रों को बहुत अटपट लगता था।

होलकर महाविद्यालय के प्राध्यापकों की विद्वता की सभी दूर तक धाक थी। अंग्रेजी में प्रो. घोष, प्रो. बोरांगकर, प्रो. बोर्डिया आदि थे। अर्थशास्त्र में प्रो. घारीवाल, प्रो. यारदे, प्रो. सिंहल आदि थे। इतिहास में प्रो. धर, प्रो. वर्मा, प्रो. श्रीवास्तव थे। हिन्दी में प्रो. चतुर्वेदी और प्रो. मिश्र थे। दर्शनशास्त्र में प्रो. कविबर थे। विज्ञान संकाय में डॉ. देशपांडे, पूज्य माने जाते थे। वे

एक सत वैज्ञानिक थे। प्रो. पदमनाभन, प्रो. गोले, प्रो. भाबुर, डॉ. भागवत आदि थे। उनके अध्यापन की ख्याति सारे भारत में थी।

कानून विभाग में प्रो. अय्यर का दबदबा था। इन्दौर के प्रतिष्ठित अभिभाषक पारट टाईम पढ़ाते थे। सारे मालवा और निमाड के बहुसंख्यक अभिभाषक होलकर कॉलेज से निकले हुए थे।

महाविद्यालय के प्राध्यापक शिक्षण कार्य के सिवा सामाजिक साहित्यिक और जनकल्याण के कार्यों में सक्रिय भाग लेते थे।

प्रो. बोर्डिया स्काउट आंदोलन में थे। प्रो. चतुर्वेदी, प्रो. मिश्र, प्रो. वर्मा मध्य भारत हिन्दी साहित्य समिति में सक्रिय थे। प्रो. कविश्वर प्रो. उदय, प्रो. डॉ. भागवत महाराष्ट्र साहित्य सभा, इन्दौर जनरल लायब्रेरी में सक्रिय थे। प्रो. यारदे हरिजन सेवक संघ का कार्य करते थे।

छात्रों की संख्या कम होने से प्रोफेसरों और छात्रों में विशेष स्नेह सम्बन्ध रहता था। वे छात्रों का मार्गदर्शन भी करते थे। अनेक प्रोफेसर गुरुत्वरूप से राजनीतिक गतिविधियों का मार्गदर्शन भी करते थे। कॉलेज का वातावरण सौहार्दपूर्ण था।

होलकर महाविद्यालय उस समय छोटा था और कोलाहल से दूर होने के कारण अध्ययन के लिये बहुत उपयुक्त था। यहाँ जाने पर शांति का अनुभव होता था।

मालवा की राजनीतिक और सामाजिक प्रगति में होलकर महाविद्यालय के छात्रों का भरपूर योगदान रहा है, इस निष्कर्ष से सभी सहमत होंगे।

होलकर महाविद्यालय विज्ञान का केन्द्र बन गया है। पहले जो विभिन्न संकायों का संगमतीर्थ था वह विशेषज्ञता (स्पेशलाइजेशन) के दौर में बदल गया है। विश्वास है नये युग के छात्र इसका गौरव बढ़ावेंगे।

□□

# 50 YEARS



- Inayat Hussain

Mr Inayat Hussain did his Intermediate from Holkar College in 1942. He passed his M.Sc. in Civil Engineering from the University of Tennessee (U.S.A.) in 1948. After Migrating to Pakistan he worked on many high posts like Secretary of Atomic Energy Commission and C.S.I.R. At present he is associated with a firm of Engineering Consultants and Architects at Karachi.

Wouldn't you consider yourself fortunate to have been an alumnus for fifty out of one hundred years of the life of an institution like the Holkar College? Well, I would, and I do!

My academic association with the College was rather brief - just two years during which, after matriculating from the Maharaja Shivajirao High School, I did Intermediate Science, before proceeding for my engineering education at the Aligarh Muslim University. But Holkar College was nothing new to me even as I enrolled there in the Summer of 1940 I was hardly ten years old when, in 1932, my uncle, the Late Fakhruddin, (Advocate Indore High Court), after matriculation also from the Maharaja Shivajirao High School, joined the First year Arts Class at Holkar College. He was, as far as I can recollect, the first member of the Bohra Community of Indore, to have gone for higher education; Holkar College was therefore a house-hold name in my family.

When I joined the College, I had let myself be persuaded by my uncle to forego science education, and take up commerce. Because I had a good academic record in the High School, where I had studied science, I had no difficulty getting admission in the Commerce Section. But a friend of the family, Professor Chaturvedi (he taught Sanskrit at the College) happened to drop by at our modest establishment (Arms & Ammunitions), and prevailed upon my elders to let me study science and mathematics because, according to him, I was destined to be an engineer! The very next day I, with my uncle Mr. Fakhruddin, waited upon the Principal, the unforgettable Dr. Prafulla Chandra Basu, at his residence. I remember very clearly the rebuke he gave my uncle for having compelled me to forego science. But he agreed to my changing the subject. I also remember that my roll-number, in a class in which admission was restricted to fifty students, was fifty one. Professor Basu knew that several students would drop out of the science class and there would be no problem of my

being accommodated there. By the time we appeared for the intermediate Science Examination, our class had shrunk to only forty students. My roll number in the class however remained fifty-one.

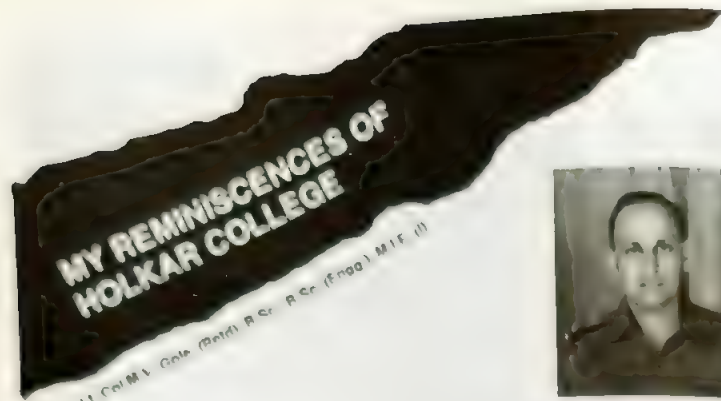
It is a measure of the great esteem and respect in which Holkar College was held among the institutions affiliated to the Rajputana Board, that in the year 1942 in each of the four subjects viz. English, Mathematics, Physics and Chemistry, at the inter science examination, one out of the two (three in the case of English) papers was set by a member of its faculty. Professor Borgaonkar - the incomparable exponent of Shakespeare, Professor Gole, Professor Padmanabhan and Dr. Deshpande. It is also a measure of the integrity of these dedicated teachers that merely a student had any inkling of this, until we set down at the examination desk and realised, from the style of the question papers placed before us, day after day that Holkar College had the honour of providing no less than four out of the nine examiners.

The Rajputana Board, like our own college, was considered to be the epitome of honesty and integrity, in matters of academic standards. In the year that I completed my intermediate Science studies, only the forty students who took the final examination eight students passed in the First Division, eight in the Second and four in the Third; the remaining twenty just failed. I was one of the lucky eight in the top bracket.

Dear Old Alma Mater - I respect and revere thee for having enabled me to qualify for admission in the Engineering College at Aligarh. God bless each brick and stone of thy Campus and may all those who enter thy portals to learn, go forth to serve.

□□

Responsible Manager, Garia  
b. Trivani, Manager, Ind.  
Joined 1914. A good fellow who worked well in 1st yr. Worked off in 2nd yr.  
- from 1916 to management of property. Passed F.A. (3rd) 1916  
Doing fairly well in 1917. Intelligent. At always enough work. Father of 10 sons  
- ... of the ... double ... 148 ... 1917-18  
Passed B.A. 1918 (III) Shivaji Rao medal 1918. Went to Bombay for M.A.  
State employ. Incited our boys agt. Principal, Oct.-Nov. 1920.



was in Holkar College from '937' to '944 and passed my B.Sc. (Agri.) University from there.

The College was situated in quiet, sylvan surroundings away from the din and bustle of the city. It was a pleasure to breathe 24 miles to the woods. There were no buses then. I could walk to the college as a classmate and the 20-25 minutes passed in no time at all.

We enjoyed going to the classes. The Professors and lecturers knew the students by name and what's more the students knew their teachers. College and extra-curricular activities filled the whole day. On 'practical' days many of us went from the laboratory straight to the playgrounds or the Parade Ground. Most of us were who joined the college in the first year. On other days usually Wednesdays and Fridays, we had time to go home and come back to school.

Large gathering was an eagerly awaited event as also the election of student parliament sessions. As the student movement was in full swing all over the country, the student parliament were loaded with political issues and were full of force and passion to the great detriment of the student community and some embarrassment to the college.

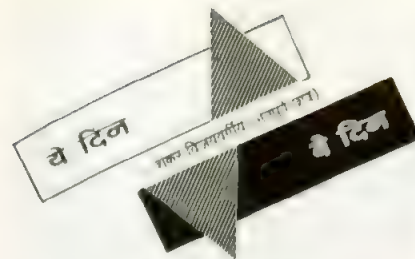
The college ground and the Parade ground were three different cross sections of the experience of group life was a great experience. Life in the Armed

There was great respect for the teachers—each had his own peculiarities—some stern, some great mixers, some just plain serious, some mischievous, and so on—but all commanded respect. Our Professors - Deshpande, Padmanabhan, Bhagwat, Gole, Gangrade, Chitale, Kaushal, Borgaonkar, Paul Desai are all etched in my memory deeply, and as I think of them, involuntarily I bow my head in respect.

A number of friendships were formed which lay dormant till the persons met me again—some frequently, some less so, and some I have never met again. But even after 40 years when I meet an old friend, the thread can be instantly picked up again, as if we had parted only yesterday or yesterday-year. It is only when the events of the lapsed period are talked about, and the extensions of the family-tree are discussed, that the actual span of time that has elapsed strikes us with force. However, the warmth of friendship lingers on.

All in all, when I pause to reflect on those days, the friendships, personal relationships and events of those 4 years come flooding in the mind all at once, so that I can choose which one to bring into greater focus for deliberate thought (the process being perhaps more efficient than even a computer can provide).

As I look back on those 4 years, I find there is a touch of sadness in the mind (that the days are gone for ever) along with the pleasure of happy recollections. I think that is what they call nostalgia.



आज से सौ वर्ष पूर्व होलकर कॉलेज की स्थापना का श्रेय तत्कालीन होलकर राजघराने को है। बीसवीं सदी के प्रारंभ में ब्रिटिश भारत के संप्रभु ही देशी रियासतों में भी प्राथमिक शिक्षा को प्रोत्साहन देने के उपक्रम हुए बड़ी और दानवकीर रियासतों ने इस दिशा में विशेष प्रयत्न किये। होलकर रियासत भी इस दिशा में लिच्छवी नहीं रही। होलकर रियासत ने १९२५ में निःशुल्क अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का बिल स्वीकृत किया। अनिवार्य शिक्षा का इस योजना के अंतर्गत इन्दौर नगर के विभिन्न क्षेत्रों में बारह प्राथमिक शालाएँ इसी वर्ष स्थापित की गईं। इनके मकन भी बनाये गये। इन मकनों के अवशेष अभी भी हैं। उन्हें जाफरीवाले स्कूल के नाम से जाना जाता रहा है। अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की इन संस्थाओं में छात्र उपस्थिति बढ़ाने के लिए उपस्थिति अधिकारी नियुक्त होते थे। वे निरन्तर उपस्थिति पर कृष्टि रखते थे। बालिकाओं की उपस्थिति बढ़ाने के लिए भी स्कूल मदर के नाम से कुछ महिलाएँ कार्यरत रही हैं। इस विवरण का अभिप्राय यही है कि होलकर रियासत शिक्षा के क्षेत्र में - स्कूली और महाविद्यालयीन दोनों ही - अग्रणी देशी रियासत रही है।

स्पष्ट है कि शिक्षा के प्रति होलकर रियासत के लगाव का परिणाम यह होलकर कॉलेज है। वर्ष १८९१ में स्थापित यह कॉलेज इस क्षेत्र में एक

मगर ऐसा कॉलेज था जिसमें विज्ञान, कला, वाणिज्य, विधि आदि सभी मकाय थे। लगभग इसी समय इन्दौर नगर में कला समूह के लिए किश्चियन कॉलेज की भी स्थापना हुई थी। उस कॉलेज का शताब्दी समारोह मनाया गया था। मुक्त है राजपूताना और सी पी एड बार के मध्य होलकर कॉलेज ही एक मात्र ऐसा कॉलेज था जिसमें विज्ञान के स्नातक और स्नातकोत्तर अध्ययन प्रणाली की व्यवस्था थी। तत्पश्चात् यह है कि जब शिक्षा का प्रसार प्रभाव बढ़ रहा था, तब भी होलकर कॉलेज प्रदेश और देश में भी महत्वपूर्ण स्थान रखता था। आगरा विश्वविद्यालय में होलकर कॉलेज का स्थान निरन्तर प्रभावशाली रहा था। चाहे शैक्षणिक अथवा क्रीडा संबंधी गतिविधियाँ रही हों। आगरा विश्वविद्यालय में, ब्रिटिश इंडिया (विशेषकर तत्कालीन संयुक्त प्रांत) के नगरों के कॉलेज सम्बन्ध होने पर भी देशी रियासत के इस कॉलेज का अपना अलग ही महत्वपूर्ण स्थान था।

मैं वर्ष १९४५ से १९४८ तक तीन वर्ष होलकर कॉलेज का छात्र था। पहिले दो वर्ष एम ए अंकेजी का विद्यार्थी के रूप में और एक वर्ष विधि के छात्र के रूप में। आज की तुलना में जब उस काल का स्मरण आता है, तो बहुत सी बातें अनयास्य मूर्त हो जाती हैं। यह अनुभव होता है कि उस समय शिक्षा एकांगी नहीं थी। छात्रों का बहुत बड़ा समुदाय खेती की गतिविधियों में भी सक्रिय भाग लेता था। उस समय शिक्षा में उच्च श्रेणी प्राप्त करने के लिए साधनों की शुद्धता पर भी उल्लास था। ध्यान रहता था जितना साध्य प्राप्त करने के लिये परिश्रम पर।

अनेकों परिवर्तन होने पर भी होलकर कॉलेज अपनी पुरानी परम्पराएँ और पुराना गौरव अबुल्ल बनाये हुए है। यह ठीक है कि विस्तार के साथ गुणात्मकता पर प्रभाव पड़ना अवश्यभावी है, किन्तु विस्तार की गुणवत्ता में समुचित सामंजस्य का नाम ही तो प्रगति है। कॉलेज की इस ओर प्रगति के लिए मेरी पुरानी पीढ़ी की शुभकामनाएँ हैं।

मेरी मातृ संस्था के शताब्दी होने पर उसका अभिनन्दन है।

## होलकर महाविद्यालय पत्रिका

१९५५-५६ से



डॉ. शिवमंगल सिंह 'सुनम'

मल का गोती मैं तुम्हें दिये देवा है  
तुम दूरी बेध कर अपना हाथ बढा लो।  
हर साथ तुम्हारे लिये सजोवी मैंने  
तुम दूरी सुटाओ या भवस में सजोवी,  
हर रास संगीत तुम्हें किये देवा है  
तुम दूरी बिच्छेरी या भवस में बाँधो।  
मेरी उरां में रसा रसवती होतो  
कल की क्या चिंता? देखो तब कि-तब  
भठर की जलज मुझे बढावा देतो है  
मिठी की मिलावा रखे नहीं बेगलबल।  
जाते फिर संधि में जाता जाऊँ  
तुम मुझे जलाकर दीवाली गढालो।

शब के भठर के तार बरी हो जिनसे  
लकड़ों की बूझार नती पोणा है,  
अपने दिव जिकर कई जलम ओप है।  
तुमने लव होकर जीता ही जीता है।  
वह ली ओलों का दीप कि दर दर गलक  
परदा दोहो के बीच बढत होना है,  
सुर असुर जिनसे पोले से पवराओ है।  
रसको इस कर पी जाता ही पोना है।  
ब्राने फिर कब पोता में माला जाऊँ  
राखेद के लवने में अबु लवला ली।  
मल का गोती मैं तुम्हें दिये देवा है  
तुम दूरी बेधकर अपना हाथ बढा लो।



# आंदोलन और इन्दौर



१२. निम्नलिखित विचारों को पढ़िए और अपने अपने मते व्यक्त करें।  
 (क) शिक्षा के माध्यम से ही हम अपने देश को बदल सकते हैं।  
 (ख) शिक्षा के माध्यम से ही हम अपने देश को बदल सकते हैं।  
 (ग) शिक्षा के माध्यम से ही हम अपने देश को बदल सकते हैं।

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

[illegible]

वास्तुशिल्प कार्यालय में धसपेठ

सन् १९४१-४२ के मध्य फ्रांसिकारी साहित्यों के निर्देश पर कुछ विद्यार्थी  
अन्तर्गत नवयौवन में पचराशी और कर्मचारियों के रूप में काम करते थे और  
कर्मचारी भासने से प्राप्त मुक्त दस्तावेजों की जानकारी भाई नारायणसिंह को  
के एल बॉर्दिगा और प्रो एस पी वर्मा को दिया करते थे ये महासुनाय  
फ्रांसिकारी प्रतिनिधियों के 'मिस्त्राक' नामे जाते थे सन् १९४१ में हुन्दर  
नाम की ओर से बिस्को पाकी (नेहरू पाकी) में परवर्त्ती आयोजित हुई  
हई एक दिन महिलाओं के लिए रखा गया तब शरी धोतीपाला आतादारी  
तुलसि अन्तरकारी आगतक मणाला हुन कम्पारिस्सो में उसकी खुश मिस्त्रा  
की और उनके अन्तर्गत में परवर्त्ती को मिस्त्रा पाकी मजदूर उन मिस्त्रा  
फ्रांसिकारियों को नौकरी से पृथक कर दिया गया शरी धोतीपाला की मिस्त्रा  
हउरत नौती में २९ डेअर सिप्रान और १२ ओयसा नामक विद्यार्थी समुदाय  
को हाथ आ

भारत छोड़ो आंदोलन १९४२

अप्रैल १९४२ को बम्बई में महात्मा गांधी ने अंग्रेजों को 'भारत छोड़ो' का आदेश दिया।



हय स) पि राज, पी डी रामा जी के मानी  
प्रौर पी मिश्रा

नो 'अभी या कभी नहीं' समझा उन्होंने १९ अगस्त ४२ को ही अपनी प्रस्तावना में कहाजाने तककर बाद का अर्थका पाठ्य विधिया १० अगस्त को छात्रापीठ की बैठक बनाने लायकीरी में हुई कतिपय सन्धिना के अनुसार का धार पोषाध किया किन्तु एक के पक्षना से पाषाध सन्धिना का प्रस्ताव हीयुक्त हुआ हमारे सामन्यधी विचारधारा वाला सभी विचारमार्ग और धर्म गद्दी का बोध लायकीरी को 'अन्तर्गत' कहने लगे तो उन्होंने विरोधी रूप प्रपनाया और अगामी योजना भी गौरीगन्तव्यही प्रसारिणी के अन्तर्गत पेशात परात पर बनाई गई वहाँ पुरकारा बहल तथा हमारे कौलना की छात्रापीठ भी एतना ही गई योजना बनाने तथा डिस्टेन्ड मनीज्मेन्ट करने का कार्य लायकीरी कीधरी प्रसारिणी तात्कालिक रूप से ही शुरू करवा दी गयी थी और १० व ११ अगस्त को कौलना की स्कूलों के देवनागां पर विफेडिती हलने के हेतु सत्यक नेता मनीज्मेन्ट किये गये और एतल और कौलनां एतल अन्तल दुल्लर निकलने लगे इतने में ही तारुख ११ अगस्त छात्रापीठ पारिसने ने जैत हाई स्कूल के पास छात्रानेता भी इन्दनाराधन पुराधिकार का निर्णयकार कर लिया, जिससे विद्याथिनीया का खल सखत हो गया किन्तु ११ अगस्त को ही अर्थाज्जित घटा धर की आसमान में पाषाण की गई कि १० अगस्त को माषण चौक (सुभाष चौक) में छात्रों की विशाल आसमान पीठी इतकी लिए हावकादर कालेज के छात्र भी सान्त्वनाम गये नेता धाषिती एर इन्दर के सभी हावकादी छात्र रजदी राधना में सुभाष चौक में एतल

— — — — —

[illegible]

१. प्रत्येक वर्ष और व अ कानूनी प्रमुख समीक्षा की इन मंच  
२. प्रत्येक वर्ष विचारों की समीक्षा पर विशार निर्णय किया और  
३. प्रत्येक वर्ष के बाद वही भाषण एकत्रित पर माध्यम

इस कार्य की आवश्यक सेवा निम्नलिखित

[illegible]

हूए जहाँ पुलिस ने घेरेबाई कर रखी थी, किन्तु विद्यार्थियों के छोटे-छोटे दलों ने घुसकर उसे विशाल सभा का रूप दे दिया। फायर ब्रिगेड के सुपरिण्टेंडेंट श्री निवासकर ने अग्निशामक यंत्रों से सभा पर गरम पानी बरसाया, पुलिस ने लाठी चार्ज किया, फिर भी छात्रों ने सभा का कार्य पूरा किया श्री मोहनलाल गर्ग गिरफ्तार हुए तथा श्री आनन्द जैन दूसरे नेता घोषित हुए छात्रों ने फिर छोटे-छोटे दलों में बैठकर पूरे नगर में जुलूस निकाले पुलिस ने परेशान हो हमनचक्र प्रारंभ कर दिया अधिकारीगण 'इंस्लाब जिन्दाबाद' और 'जो भाग जाओ' नारे लगाने वाले छोटे छोटे बच्चों को भी ऊछे मारने लगे १३ व १४ अगस्त के बीच हमारे प्रमुख नेता गिरफ्तार हो गये डॉ. कु. मालती सर्वदे, कुमारी हंडु पाटकर तथा हमारे अध्यक्ष जीवरी लाल झांझरिया गिरफ्तार हो गये श्री नाथूलाल जैन तथा अन्य नेता अण्डर ग्राउण्ड हो गये १४-८-४२ को नरिया कोने पर जुलूसी पुलिस अधिकारी श्री मंगवानदास तिवारी की पिटाई करने के आरोप में पंडित के नाम पर भी बी.डी. दुबे पकड़े गये, जबकि श्री पंडित भाग गये जब प्रजापण्डित के नेताओं में छात्रों को १६ अगस्त की बैठक में बुलाया, तब भी के.ए. भौरास्कर परमेश्वरदत्त शर्मा, प्रभाकर, अडसुते कु. मुक्ता ऋषि और डॉ. जम्भोजिन्स विहार उनके पास पहुँचे, किन्तु प्रजापण्डित और छात्रसंघ के आंदोलन चलाने की नीति-नीति में मतभेद होने के कारण विद्यार्थियों ने हिंसक-अहिंसक दोनों शैलियों से आंदोलन चलाने की नीति अपनाये की बात कही, जिससे तत्पश्चात् सत्रों ने अस्वीकार कर दिया छात्रों ने प्रजापण्डित के नेताओं के मार्गदर्शन में चलने की बात तो मान ली, किन्तु प्रजापण्डित नेताओं की धोषी नीति के कारण वे अपना आंदोलन अपने अण्डर ग्राउण्ड नेताओं के आदेशों से चलाने लगे छात्रों ने राज्य भर में आंदोलन को फैलाया और छोटे-छोटे समुदायों में बैठकर दीर्घ समय तक आंदोलन चलाने की योजना बनाई श्री इन्दुनारायण पुराणिक, श्रीनंदन ठाकुर तथा परमेश्वर दत्त शर्मा जिन २६ अगस्त को गरोठ जिले में पहुँचे उन्होंने सर्वश्री चट्वांसकर, बापूलाल चौधरी और तेलंग वकील साहबों के साथ रामपुरा, भानपुरा, कुकडेवर, मनासा, और मणवानगढ़ में जन-जागृति की, वहीं वे दोनों गिरफ्तार हो गये और कुछ समय बाद होलकर राज्य के रीजेण्ड ने देवास के महाराजा विक्रमसिंह पवार के विचार आदेश से छोड़ दिये गये, इसके बाद श्री लालचंद चोरडिया के गरोठ जिले को बागडोर सहाली और उन्होंने उनके जेल घरवालों की सर्वश्री मदनलाल ओझा व उपाध्यक्ष ने उनको सहाय्य दिया निमाड जिले में भी जागृति विद्यार्थी और मजानन सोनी ने पर्याप्त काम किया मध्यप्रदेश के वर्तमान मुख्यमंत्री श्री प्रकाशचन्द्र सेठी ने छात्र आंदोलन में सहाय्य माग लिया और होलकर कॉलेज से नाम कटने पर उज्जैन चले गये

आंदोलन में विद्यार्थियों ने लुका-छिपी का खेल खेला छात्रगण छात्रावासों में रहकर पुलिस की तलाशी के समय टेबल टेनिस कर्मा, उचार के खेलों तथा अन्य छात्रों के कमरों में छिप जाते थे और फिर खेल के तारों को काटते, रेल की पटरियों पर डायनामाइट लगाते, रसायनों की प्रयोगशाला से सामग्री ग्रहण करने तथा बम बनाने के प्रयोग करते थे टोड-फोड की कार्यवाही उ. वि. वि. का थ. श्री सुब्रत राय, पंडित, लल्लू राय तथा वी.एस. पानिस इन्हीं लोगों के सहयोग के कतिपय दुस्साहसी साधियों ने पातलपानी के पास मिर्चिकायन प्रयोग कर दफ्तन कराई थी

विद्यार्थी नेता ज.म. सर्वश्री मोहनलाल झांझरिया, डी.के. जमदीश, आनन्द नेता मणवानगढ़ की ज.म. सर्वश्री क.एम. भौरास्कर, राहुल बारपुते,

परमेश्वरदत्त शर्मा पंडित, वी.वी. दुबे, कु. मालती सर्वदे, कु. हंडु पाटकर, कु. मुक्ता ऋषि कु. नारायण शर्मा वी.एस. रावगी, मणवेश विद्यार्थी, लालचंद चोरडिया आनन्दसिंह मेहता डॉ. जगमोहनसिंह पवार, ब्रह्मान अली, नदकिशोर भट्ट, वि.स. फुलकर्णी, प्रभाकर भंडारूते इन्दुनारायण पुराणिक, नंदन ठाकुर, नाथूलाल शर्मा, टी.एस. सुराणा, सुब्रत राय, वी.एस. पानिस, के.एम. भौरास्कर और बापूलाल झांझरिया की सेवाएँ उल्लेखनीय रही, मार्गदर्शक के रूप में प्रोफेसर के.एल. बोर्डिया तथा प्रोफेसर एस.वी. वर्मा ने आगाह देशभर का परिचय दिया वहीं कारण है कि इन दोनों आचार्यों को इन्दौर छोड़कर क्रमशः उदयपुर और मेरठ जाना पड़ा

राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लेने के कारण कतिपय छात्रों को प्राचार्य द्वारा निष्कासित कर दिया गया, उनमें सर्वश्री परमेश्वरदत्त शर्मा, नाथूलाल शर्मा और सुंदरसिंह चौहान को एक वर्ष के लिए तथा श्री गजानन सोनी व श्री प्रकाशचन्द्र सेठी को ४२-४३ के सत्र के लिए अपने अध्ययन से वंचित रहना पड़ा

### प्रजापण्डित और गोली :-

९ नवम्बर १९४३ को होलकर कॉलेज के भवन पर झंडा फहराने का निर्णय विद्यार्थी कॉंसिल ने लिया कि अध्यक्ष झंडा फहरायेगा होलकर कॉलेज की ओर से हुसम आया कि जो झंडा फहरायेगा उसे गोली से उड़ा दिया जायेगा, प्रस्तुत पंक्तियों का लेखक और कुमारी मुनी गुप्ता होलकर राज्य का झंडा लेकर भवन के ऊपर चढ़े, कुमारी मुनी ने तिरंगा झंडा दिया और मैंने उसे तत्काल फहरा दिया, हम पीछे से गोले उतर आये, जब पुलिस अधिकारी ने प्राचार्य श्री जै.बी. राजू से पूछा कि झंडा किसने फहराया, तो जो जवाब उन्होंने दिया वह अनूठा था, उन्होंने पास में खड़े प्रो. देसाई से कहा कि 'प्रोफेसर देसाई, तुमको तिरंगा झंडा फहराता दिखाई है क्या? हमको तो नहीं दिखाता, तब सभी लोगों ने कहा हमको तो नहीं दिखाता, बेचारा पुलिस अधिकारी सतमककर चला गया

### जुलूस और प्रेरणा :-

सितम्बर के अंतिम सप्ताह में आंदोलन कुछ शिथिल पड़ने लगा, क्योंकि महाराजा होलकर की अनुपस्थिति में रीजेण्ट बने देवास के महाराजा विक्रमसिंह ने विद्यार्थी नेता दी.के. जगदीश के.एम. भौरास्कर, जी.के. सेनी तथा परमेश्वरदत्त शर्मा से समझौता कर गिरफ्तार छात्रों की आम रिहाई के आदेश दे दिये, जिससे मोतवालियों या इधर-उधर छोटी-छोटी चौकियों एवं जेलों में बंद सभी विद्यार्थी छूट आये, तब आंदोलन में चेतना बनाये रखने की दृष्टि से हर माह की ९ तारीख को जुलूस निकालने की योजना बनी ९ नवम्बर १९४२ का जुलूस बड़े जोश-खरोश के साथ निकला गया जो नगर के मध्य से अर्धतः मध्य बन गया था पुलिस ने इस जुलूस को तितर-बितर करने के लिए लाठियों चलाई, किन्तु बिखर-बिखर कर बार-बार वाप आते विशाल बनता गया, अंत में सुभाष चौक में पहुँचकर बली-गली में फैल गया

### प्रजापण्डित पत्रिका :-

सन् १९४२ के आंदोलन में हमारे नेता श्री मनोहर सिंह मेहता के निर्देशन तथा विद्यार्थी साथी सर्वश्री राहुल बारपुते विमलचंद झाझरी, लालचंद

The centenary is surely an occasion of great joy and pride for all those who have had the privilege of being associated with this premier institution of higher learning. I too, had the good fortune of being a student in this institution during those momentous years in our freedom struggle 1940-1944. Though out of sight all those years, it was not out of my mind and the letter from Professor Mahesh Dube, revived many sweet memories of my student days. The letter brought to my mind my class mates whom I have not met since 1944

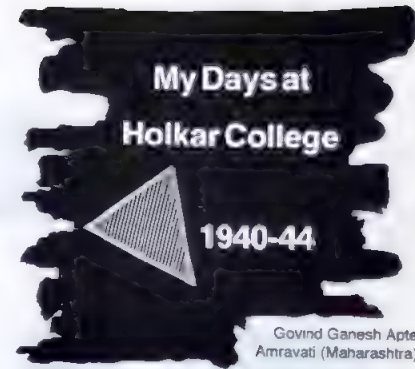
As for my reminiscences let me admit at the outset that many events have evaporated from my memory due to a gap of more than four decades. Even then I vividly remember some. The sprawling college campus, very busy during the afternoon, was absolutely silent after the evening as it was far off from the town, separated by nearly 3 miles of uninhabited open space from Juni Indore side where we lived. Not a soul moved after sunset on the Bhavar Kuwa road. Now I hear, the college is surrounded on all sides by residential colonies

Holkar College was the only Science College in the entire region of central India. The nearest other science college was 350 miles away at Gwalior. There were post graduate classes in only one subject - Chemistry, Biology department was non-existent. B.Sc. junior and senior students came together for Physics and Chemistry theory and B.Sc. and B.A. students came together for English. We knew nearly every student in the Science faculty and many from the other faculties Arts and Commerce. Another reason for this intimacy with all was a novel scheme run by the college. If I remember correctly, it was called students welfare scheme. Each student belonged to a group consisting of a students taken from all standards. One professor was incharge of this group. The purpose of the scheme was to bring students of various standards together and to let the professors come in close contact with them so that they understand their problems. We were privileged to have Dr. S.S. Deshpande to guide us. The scheme worked for a couple of years. Later on due to disturbed political atmosphere it was abandoned. On one occasion our group took an excursion trip on cycles to the waterfall, some 10 to 12 miles away from Indore. Dr. Deshpande also was with us on a cycle.

चोरडिया, के.एम. भौरास्कर, मणवानगढ़ कटारिया, और कु. मुक्ता ऋषि के माध्यम से पत्रिका द्वारा मार्गदर्शन मिलता रहा, जिसमें विद्यार्थियों और प्रजापण्डित के नेताओं का समन्वित वृत्तिको मिलता रहता था

### विद्यार्थी कांग्रेस की स्थापना :-

२९ नवम्बर १९४३ में राजनीतिक बंदियों की रिहाई हुई, तब संगठन को सुदृढ़ बनाने की बात सोची गई छात्रसंघ के स्थान पर राष्ट्रीय विचार धारा के छात्रों ने श्री जी.ला. झांझरिया की अध्यक्षता में विद्यार्थी कांग्रेस की स्थापना की जो बाद में इन्दौर राज्य विद्यार्थी कांग्रेस कहलाई, इसकी



Holkar College in those days was a scholar's college. It had the most students in the merit list, often the toppers. This perhaps was due to the absence of professional colleges in those days. At present the brilliant students opt for the engineering and medical college and the pure science subjects are starved of good students. We had some exceptional teachers. I especially remember Professor V.G. Gole of mathematics, Dr. S.S. Deshpande and Dr. W.V. Bhagwat of Chemistry, Professor Padmanabhan of Physics and Professor Borgaonkar of English

Annual social gathering at Holkar College in those days always had a Hindustani classical music recital by some renowned artist. Classical music and present day college annuals never go together. Students had certain problems in our days also. But agitations and stoppages over petty demands were not known to us. The achievement of the present generation in various fields has to be accepted. But it must be realised that a greater amount of dedication and discipline is needed

In the and I wish the Holkar College a future more glorious than it's past.

□□

कार्यकारिणी में सन् १९४७-४८ में श्री वैकुण्ठदास स्वामी अध्यक्ष, वी.डी. शर्मा उपाध्यक्ष, जगदीश विद्यार्थी प्रधानमंत्री तथा सर्वश्री ओ.वी. रावत, जी.एल. ओझा, डे.ए. हिलाल, विश्वनाथ उपाध्यक्ष, प्रेमनारायण भट्ट, मोहनलाल नीमा और ए.एस. मुर्झिया सदस्य थे, उसके पश्चात् इसका विलयन म.म. विद्यार्थी कांग्रेस में हो गया

इस प्रकार छात्र आंदोलन विशाल से विशालतम हो गया और इन्दौर राज्य के भारत सच में विलीन होने पर ही इसने अपने अस्तित्व का विलीनीकरण किया.

□□



## स्मरण उन दिनों का

- स्वराज्य लता गोवल (मुन्नी गुप्ता)

(१९४२ के राष्ट्रीय आंदोलन की गतिविधियों में कॉलेज की जो छात्रा सक्रिय थीं उनमें कुमारी स्वराज्य (मुन्नी गुप्ता) का नाम प्रमुख था। अध्ययनशील निर्भीक और अत्यंत मुखर मुन्नी गुप्ता एक अच्छी खिलाड़ी भी थीं। उन्होंने कुछ समय तक होलकर कॉलेज के रसायन विभाग में अध्यापन कार्य भी किया। इन दिनों वे मधुरा में हैं और कई सामाजिक तथा सांस्कृतिक गतिविधियां से जुड़ी हैं।)

होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर के गणित के प्रोफेसर महेश दुबे का एक पत्र मुझे मिला। इस महाविद्यालय की छात्रा होने के नाते, इस महाविद्यालय से जुड़ी मेरी स्मृतियों का उत्तेजक प्राप्त करने के लिए जो विनम्र आदेश उन्होंने अपने पत्र में मुझे दिया है, उससे मैं अविभूत हो गयी।

इस महाविद्यालय के दीर्घ जीवन से जुड़े मेरे जीवन के मात्र कुछ वर्ष (आठ वर्ष) मेरे आज तक के निजी जीवन की अनुभवमय उलटवियां में से एक है। अपने छात्र जीवन की उस अन्य अवधि में बिखरे स्मृति के उन सुखद बिन्दुओं को जोड़ने जब मैं बैठी हूँ तो लगता है मेरी आयु सिमट कर उन कुछ वर्षों में ही सीमित होकर स्थिर रह गयी है। लगता है, मैं आज भी अपने उस प्यारे महाविद्यालय के किसी न किसी कमरे में अपने अन्य अनेक साथियों सहित बैठी अमक-अमक अध्यापकों के लेकर सुन रही हूँ और उन्हें नोट कर रही हूँ। कभी फिजिक्स लेब्ररी तो कभी केमिस्ट्री लेब्ररी में एक्सपेरिमेंट कर रही हूँ और इस महाविद्यालय के खेल का वह हरा भरा मैदान तो मेरे उन्मुख आनन्द की अनुभूति से मुझे आन्दोलित कर रहा है। लगता है मेरे जीवन में जो कुछ उत्कृष्ट था, अनुभव था, वह मुझे फिर से मिल गया है। मात्र इस सुखद स्मृति में खोजने आज मैं कितनी आनन्दित हूँ। मेरे शब्द उसको व्यक्त कर नहीं सकते। फिर भी कुछ प्रयास कर रहा हूँ। देखती हूँ - वर्तमान की इस सोझ में अतीत की उस मर्मस्पर्श नज़र के कुछ सर दिखने को मिल जाय सन १९४२ की गुलाब की पहाड़ पर। जब मैंने प्रथम वर्ष मास्टर में प्रवेश पान की अकूप अभिलाषा से इस महाविद्यालय से सम्पर्कित प्रिंसिपल श्री देशपांडे के सम्पर्क में आने के बाद मेरे शब्दों में एक नया रसकान्त सुलवा लो।

प्रिंसिपल श्री देशपांडे के इस तीखे शब्द बाण से आहत होकर भी मैं धैर्यपूर्वक उनके काररे से यह प्रण करके निकली कि मैं इसी कॉलेज में साइंस का नया सेल्सम खुलवाकर रहूँगी और एडमीशन भी यहीं लूँगी। मेरी उसी दिन शिक्षा विभाग के उच्चस्थ अधिकारियों से मिलकर कॉलेज में साइंस का नया सेल्सम खुलवाने की जोखदार मांग, पत्रों के माध्यम से की प्रयास करना मेरा काम था। मैंने उसे इन्हें संक्षेप से साथ किया मुझे इसमें सफलता ही मिलेगी, यह सब कुछ मेरे हाथों में तो नहीं था। लगभग एक माह बाद मेरे पुर्य पितृजी को प्रिंसिपल देशपांडे का एक पत्र मिला जिसमें उन्होंने लिखा था - आपकी लड़की मुन्नी गुप्ता के प्रयासों के फलस्वरूप

शिक्षा विभाग ने कॉलेज में एक और साइंस सेल्सम खोलने के आदेश प्रदान किये हैं। आप अपनी उस लड़की को जो साइंस ही पढ़ना चाहती है कॉलेज एडमीशन के लिये भेज दें। पितृजी ने वह पत्र मुझे दिखाया तो मैं मारे खुशी के उछल पड़ी। मुझे खुशी इस बात की विशेष थी कि मेरे साथ मेरे ५० अन्य छात्रों को भी साइंस में एडमीशन मिल जायेगा, जिनके एडमीशन नहीं हुए थे।

होलकर विज्ञान महाविद्यालय में मैंने उस समय प्रवेश लिया था जिस समय महात्मा गांधी के नेतृत्व में अंग्रेजों के विरुद्ध भारतीय स्वतंत्रता संग्राम अपनी करम सीमा पर था। अंग्रेजों, भारत छोड़ो आंदोलन जन जन के कण्ठ में गूँज रहा था। सरदार भगतसिंह, राजेन्द्र गांधी, पं. रामप्रसाद बिस्मिल, अशफाक उल्लाह, डा. रोजनसिंह जैसे अन्य अनेक क्रांतिकारियों ने अपने इस देश की आजादी को हासिल करने के लिए हैसते-हैसते फाँसी के फंदे से झूल गये थे। उनका विश्वास था कि उनका यह बलिदान व्यर्थ नहीं जायेगा। उनका यह बलिदान उनके अचर्य काम को पूरा करने के लिए देश के युवा वर्ग में प्राण फूँकता रहेगा, इन सब बलिदानों के बाद भी महात्मा गांधी यह सोचते रहे कि अंग्रेजों को अब भी समझ आ जायेगी और वह भारत छोड़कर चले जायेंगे। लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। महात्मा गांधी जैसे शांत प्रिय व्यक्ति के भी धैर्य का बांध टूट चुका था। तब उन्होंने भारत के छात्र एवं युवा वर्ग का आह्वान करते हुए "करो या मरो" का नारा दे डाला। फिर क्या था, क्रांती की यह विगारि जंगल की आग की तरह सम्पूर्ण देश में फैल गयी। विद्यालय और विश्वविद्यालय इस क्रांति के प्रमुख केंद्र बन गये। इन्दौर का हमारा यह होलकर (विज्ञान) महाविद्यालय स्वतंत्रता प्राप्ति के इस महान यज्ञ की आहुति देने से पीछे कैसे रह सकता था।

यह मेरा सीमापार रहा कि मेरे पुर्य पितृजी डॉ. विश्वेश्वर दयाल गुप्ता राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत एक कटु गायी वादी थे। अंग्रेजों के डैली कॉलेज (प्रिंस कॉलेज) में डॉक्टर होने पर भी हमेशा खादी पहनते थे। उनकी से प्रेरणा प्राप्त कर मैंने भी खादी के वस्त्र पहन कर कॉलेज जाना आरंभ किया। मैंने अपनी साथी छात्राओं को, जिनमें किसी अकल-सरिया, अम्बा गोदरेज, कमल कालेवर, इंदिरा मदनगार, आदि प्रमुख थीं - खादी ही पहनने के निश्चय पर राजी कर लिया था। हम सभी सहैलियों खादी के वस्त्र पहनकर बड़े गर्व के साथ कॉलेज जाती थीं। खादी के वस्त्रों को पहनकर अपने देश की खातिर भर मिटने का एक अजीब सा उत्साह हमारे दिलों में हिलोरे मारने लगता था। कभी अकेले तो कभी सामूहिक रूप से खादी और अजादी से जुड़ा यह तराना गुनगुनाने लगती थी -

अब न हाव में बजे बुड़ियाँ, और न पलक में पानी,  
अबला जीवन अंगारों पर, अकित अमर कहांनी।  
कोमल कर में प्रबल अस्त्र ही, मन में धुन आजादी की,  
विनागरी पर चले गोलियाँ, पहिन बोलियाँ खादी की।

भारत छोड़ो एवं स्वदेशी आंदोलन के अंतर्गत होलकर कॉलेज के हम अधिकशा छात्र-छात्राओं ने तो विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार आरम्भ कर दिया था। लेकिन स्वदेशी के इस आंदोलन में हम कुछ छात्र-छात्राएँ शहर के अन्य विद्यार्थियों को भी विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार करने पर राजी करते और उन वस्तुओं की सार्वजनिक स्थानों पर होली जलाते। होली के इस कार्यक्रम में कभी-कभी तो ऐसा भी होता था जब वह लोग भी अपने विदेशी वस्त्र या सामान इसी होली में फेंकने आ जाते थे, जो हमारे लाख समझाने

पर भी नहीं समझते थे, और हमारी इन बातों का बकवास मानते थे। इस दृष्टि को देख मुझे और मेरे साथियों को सुखद आश्चर्य तो होता ही था, हम इस कार्य को और बढ़ चढ़ कर करने की प्रेरणा मिलती थी।

अगस्त १९४२ की क्रांती यकायक तुफान की तरह उठी। लोगों को यह कल्पना नहीं थी जब महात्मागांधी को अकस्मात गिरफ्तार कर ब्रिटिश सरकार ने जनता को अंधकार में डाल दिया था। उसे पता नहीं चला कि अब किस प्रकार आजादी का युद्ध लड़ा जाये। जनता में गांधीजी की गिरफ्तारी से निराशा थी, बॉम्ब एवं बेबैनी थी। देश के अन्य भागों की तरह यहाँ के भी देशप्रेमी तोड़-फोड़ के कार्यों में संलग्न हो गये। यह युवा वर्ग एवं जनता का खुला विद्रोह था। युवा छात्रों एवं नौजवानों की टोसियाँ क्रांति की भावनाओं को फैलाने में तत्परता से लगी हुई थीं। विदेशी सत्ता के विरुद्ध पोस्टर लगाना भी प्रारम्भ कर दिया गया। जिन्होंने इस कार्य में अधिक भाग लिया - श्री पी.डी. शर्मा, श्री मंडलोई, श्री आशाशान भाटी, श्री हरमोविंद, श्री आर.वी. श्याल एवं कु. खैर व कु. इंदु पाटकर इत्यादि प्रमुख थे। जो लोग उस समय जहीद हुए थे उनकी स्मृतियाँ हमें आज भी याद आती हैं। उनकी दिवंगत आत्मा के इस संदेश को भावुक हृदयों ने अवश्य सुना होगा और सुन सकते हैं -

सुनो ए साकिना बज्म है हस्ती, सदा क्या आ रही, असमा सो।  
कि आजादी का एक समूहा है बेहतर, गुलामी की हयाते जाहदाँ सो।  
"हे भूमण्डल निवासियों सुनो आकाशवाणी क्या कह रही है?"  
स्वतंत्रता का एक क्षण दासता के अमर जीवन में श्रेष्ठ है।" - जोश

९ अगस्त, १९४२ का दिन था। हम लोग अपने कॉलेज के गेट पर 'पिकेटिंग' कर रहे थे तभी वहाँ पुलिसों ने आगो और उनकी पकड़ में हममें से जो भी आया उन्हें जोषों में बिटाकर कोतवाली ले गयी। अपने उन साथियों में से कु. शिवम छोड़े, मालिनी कालेवार और सुदरसिंह चौहान, इंदु मैहता आज भी मुझे याद हैं। कोतवाली पहुँचने के बाद मेरे अन्य साथियों को तो एक-एक कर देर-अदेर से उनके अभिभावक अपनी जमानत पर छुड़ा ले गये। कोतवाली में केवल मैं ही रह गयी थी। क्योंकि मेरे घर से मेरी जमानत के लिये कोई पहुँच नहीं पाया था। मुझे वहाँ बहुत देर हो गयी थी। मैंने देखा कि वहाँ कोई एक बड़े अधिकारी आये जिन्हें वहाँ के इंस्पेक्टर ईंधार्ज ने भी सौंपट दिया। उन अधिकारी ने इसकावर ईंधार्ज से पूछ-ताछ की तो उन्हें बताया गया कि अन्य लड़कियों के अभिभावक तो अपनी अपनी लड़कियों को निजी जमानत पर छुड़ा ले गये, लेकिन इस लड़की का कोई भी अभिभावक अभी तक नहीं आया और यह लड़की भी माफिनामा लिखने को तैयार नहीं। इतना सुनते ही वह अधिकारी मेरे पास आये और मेरी पीठ थपथपा कर बोले तुम जैसे ही साहसी युवक-युवतियाँ देश को आजाद करा के रहेंगे। इन शब्दों के साथ ही उन्होंने मुझे पर जाने का आदेश दे दिया। मैं उन पुलिस वालों के सामने अपना सीना तान कर घर लौट आई।

हमारे होलकर कॉलेज के भवन पर लगा हुआ यूनिवर्स जैक का झण्डा हमारी गुलामी का प्रतीक था। यह झण्डा मुझे और मेरे अन्य साथियों को कण्ठोत्ता रहता था।

उन यूनिवर्स जैक के स्थान पर हमने अपना तिरंगा झण्डा लगाने की योजना बनाई। मेरे साथ मेरे सस्युटी सर्वश्री पी.डी. शर्मा, जी.एल. ओझा,

(आप कुछ ही दिन पूर्व सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीश पद से रिटायर हुए हैं) और पी. कामगुरु सबल था। एल.पी. सिंह, तेजसिंह सुगना आदि थे। हम सबने अनेक स्थानों पर युनियन जैक उतारकर अपना प्यारा तिरंगा फहराया। इस अपराध में पुलिस जब अपराधियों की तलाश करती थी और जब उसे कोई पता नहीं लगता था तो हमें पुलिस से सामूहिक रूप में लाठी चढ़ाई की मार सहनी पड़ती थी। पुलिस के उस जुलूम में, कष्ट के स्थान पर हमें अपने देश की आज़ादी नजदीक दिखाई देने लगती थी। युनियन जैक का फाड़ना और उसकी जगह तिरंगा फहराने की बरादती हमारे होलकर कॉलेज के हमारे छात्र-छात्राओं द्वारा ही विशेष रूप से की जाती थी। पुलिस प्रशासन हमारी इन हरकतों से भारी परेशान हो चुका था। अंततः अंग्रेज सरकार ने हमारे प्रिंसिपल श्री राजू को बाध्य किया कि ऐसे अपराधों तबों के विरुद्ध कठोरतम कार्यवाही करें अन्यथा सरकार प्रिंसिपल के विरुद्ध कठोर कार्यवाही करेगी। प्रिंसिपल राजू को हमारी सभी हरकतों का पता था लेकिन उन्होंने हममें से किसी एक का नाम नहीं बताया और स्वयं ने ही अक्सिस्टेंट गवर्नर जनरल से इसके लिये लिखित माफी मांगी। इसके बाद प्रिंसिपल राजू ने हम सबसे अपनी पड़ाई पर ध्यान देने की अपील की और हम लोगों ने भी उनकी उदार मायनाओं का आदर करते हुए अपना सम्मान पड़ाई में भी लगाना आरम्भ कर दिया। प्रिंसिपल राजू द्वारा अपने छात्र-छात्राओं को बचाने की उस आदर्श भूमिका को स्मरण कर मैं आज भी पुलकित हो जाति हूँ।

हमारे उस छात्र जीवन में अंग्रेज सरकार ने 'वंदे मातरम्' गीत का गाना एक संगीन अपराध घोषित कर रखा था। क्योंकि 'वंदे मातरम्' हमारे लिए हमारा जय घोष था तो अंग्रेजों के लिए यह उनकी मूक्य का पापम था। फिर ऐसे भयावह अस्त्र को चलाने में हम क्यों वृकते और अंग्रेज भी उसे चुनौतने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ते हमारे कॉलेज की 'स्पॉर्ट्स मीट' का दिन था। हमने युनियन जैक के स्थान पर तिरंगा झण्डा फहराया, और वंदे मातरम् का ऊँची-से-ऊँची आवाज़ में जय घोष किया। पुलिस ने आकर हम छात्र-छात्राओं की जमकर पिटाई की ज्यों-ज्यों पुलिस के डंडे बरसते थे त्यों-त्यों हमारे कण्ठ से वंदे मातरम् का जय घोष तीव्र से तीव्रतर होता जाता है। हमारे गैस कैम्टन श्री पी.डी. वर्मा तथा इंसपेक्टर (अनुदेशक) अकालीन ने बड़ी ही दिलीरी के साथ हम सबका ऐसे समय में मनोबल बढाया।

प्रोफेसर डॉ. मानवत, प्रोफेसर आंठिया और प्रो. माधुर हमें केमिस्ट्री पढ़ाते थे। प्रो. ग्राडे और प्रो. गोले हमको गणित पढ़ाते थे तथा श्री पद्मनाभन फिजिक्स जब भी हमारा कोई पीरियड खाली होता, हम कॉलेज के गेट पर जाकर अंग्रेज विरोधी गतिविधियों में सम्मिलित हो जाते थे। इन कार्यों में मेरी रुचि कुछ अधिक ही थी। यह देखकर प्रो. माधुर अक्सर मेरे विषय में यह कहा करते थे कि ये लड़की डिबीजन तो क्या, पास मार्क्स भी मुश्किल से प्राप्त कर पायेगी मैंने भी प्रो. माधुर के इस कथन को चुनौती के रूप में स्वीकार किया। मैं जिला अधिक हिस्सा आजादी की लड़ाई और कॉलेज की एक्स्ट्रा करीकुलर एक्टिविटीज में लेती थी, उतना ही अधिक महत्व मैं अब अपनी पड़ाई में भी देने लगी उसी का परिणाम यह हुआ कि एम.एससी. (प्रोविन्स) में मुझे आगम विश्वविद्यालय में हाइड्रोड माक्स मिले और एम.एससी. फायनल में मुझे विश्वविद्यालय में द्वितीय स्थान मिला मेरे इस रिजल्ट को देखकर सबसे अधिक प्रसन्नता श्री प्रो. माधुर को ही

हुई

हमारे कॉलेज की केप्टीन के इवार्ज देवीसिंह थे, आजादी से सम्बंधित जितनी भी गुप्त योजनाओं की मीटिंग होती थी वह सब केप्टीन के बराबर वाले देवीसिंह जी के कमरे में ही बना करती थीं। श्री देवीसिंह जी स्वयं राष्ट्रीय विचार धारा के पक्षधर थे, वह स्वयं खादी पहनते थे, और खादी पहनने वालों का भरपूर सम्मान करते थे जब कभी हम युनियन जैक के स्थान पर तिरंगा झण्डा लगाने या युनियन जैक को फाड़कर फेंक जाने जैसे साहसिक कार्य करते उनके पास आते थे तो वह हमें पुरस्कार स्वरूप गुलाबजामुन खिलाते, या फिर केसर पड़ा हुआ गर्म पत्ता सिलाते थे। श्री देवीसिंह जी का वह आत्मीय और प्रेरणाप्रद व्यवहार हम कभी नहीं भूल सकते। आज आजादी के इस स्वच्छंद यातावरण में भी हम श्री देवीसिंह जी के इस दिव्य प्रेम-पाश से मुक्त नहीं हो पाये।

मैं कॉलेज की स्पोर्ट्स चैम्पियन थी और मुझे ओजस्वी वका के रूप में जाना जाता था। समय-समय पर विशाल जुलूसों का नेतृत्व करना मेरे लिये मेरी दिनचर्या जैसे बन गयी थी। स्वतंत्रता संग्राम में अपना कर्तव्य जोक देने की प्रेरणा देने वाले भाषण मेरे साथी मुझे से आग्रह पूर्वक दितव्य करते थे।

हमारे फिजिक्स डिपार्टमेंट में दो सगे भाई चंपरासी का कार्य करते थे जिनमें से एक का नाम श्री बालकृष्ण था और दूसरे का नाम मुझे यह करने पर भी याद नहीं आ रहा, जब कभी हम अपनी कक्षाएँ छोड़कर इधर-उधर चले जाया करते थे तो इन दोनों भाइयों में से कोई एक सूचित करता था कि कक्षा में सर आ गये हैं। तो दूसरा हमारी अनुपस्थिति में सर से रहने बना दिया करता था, कि हम उससे यह कह कर गये हैं हम अभी जा रहे हैं हमारे इधर-उधर जाने का उद्देश्य भी आजादी प्राप्त करने का हमारा एक उन्माद ही था हम कभी 'पिकेटिंग' पर जाते थे तो कभी किसी जुलूस की योजना में तो कभी किसी गुप्त मीटिंग में।

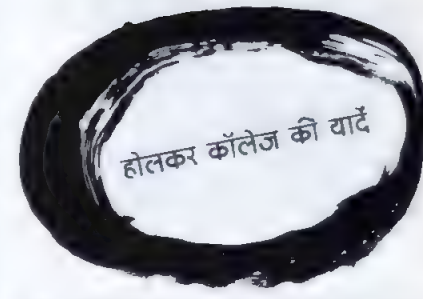
इस प्रकार होलकर कॉलेज में मेरे विद्यार्थी - जीवन के वर्ष व्यतीत हुए आज तो उनकी स्मृतियाँ ही शेष रह गयी हैं 'शराबदी' के सदस्य में मिले इस अवसर ने मुझे एक बार फिर उसी समय में पहुँचा दिया कॉलेज में बिताये वे वर्ष मेरे जीवन के अमिट अंग हैं और सदैव ही स्मृतियों में बने रहेंगे मुझे विश्वास है कि शैक्षणिक उत्कृष्टता, वैचारिक निर्भीकता, साहस और गतिशील जीवन की जिन परम्पराओं में हम लोग पढ़े और बड़े हुए वे आज भी मेरी मातृ-संस्था में मौजूद होंगी

□□

मैं माधव कॉलेज उज्जैन से इण्टर साईंस पास करके तृतीय वर्ष विज्ञान की कक्षा में होलकर कॉलेज में आया। प्रवेश के समय देश में राष्ट्रीय आंदोलन का प्रभाव था। मैं उससे जुड़ा होने के कारण खादी पहनता था और चोली जमीन, हाफ कोट पहनकर दाखिल हुआ जिस पर दादा लोगों ने फन्दियाँ कसीं और मामूली छेड़छाड़ की किन्तु सम्मान करने पर ज्यादा कुछ नहीं हुआ, उस समय रैपिंग में विकृति नहीं थी खादी धारी की भी अपनी एक इज्जत थी।

पारम में इधर-उधर मकान लेकर रहा फिर न्यू होस्टल में जगह मिली और आखिर तक वहीं रहा उस समय होलकर कॉलेज में तृतीय वर्ष और चतुर्थ वर्ष के साईंस के विद्यार्थियों की एक ही क्लास लगती थी क्योंकि पढ़ाने वाले कम थे, उस समय होलकर कॉलेज में खेल-कूद इत्यादि की गतिविधियों के अलावा राष्ट्रीय आंदोलन की गतिविधियाँ भी काफी थी। ४२ के आंदोलन के बाद मुख्य नेता जेल में थे विद्यार्थी संगठन अथवा विद्यार्थी फेडरेशन चलता था जिसमें काँग्रेसी, सोशलिस्ट और कम्युनिस्ट सभी शामिल थे। दूसरी और राष्ट्रीय आंदोलन से विमुख, हिन्दू संगठन बनाने में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संगठन का भी विद्यार्थियों पर प्रभाव था, हम लोग विद्यार्थी फेडरेशन की ओर से गतिविधियाँ चलाते थे और राष्ट्रीय आंदोलनकारियों के कार्यक्रम जैसे २६ जनवरी, गांधी जयंती, लेलक जयंति मनाते थे सभाएँ प्रभातफेरियों निकालते थे विद्यार्थी फेडरेशन में हम जंग, भोमप्रकाश रावल, होमीदाजी, गोवर्धनलाल ओझा, श्यामसुंदर द्रवर, टी.के. जगदीश शकुंतला पाटकर, व अन्य कई लोग थे, होलकर राज्य में उस समय प्रतापडल चलता था, सन् १९४५ में राष्ट्रीय नेता जेल से छूटे तब काफी सक्रियता आई सन् १९४३ में बंगाल में मयंकर अकाल पड़ा, द्वितीय महायुद्ध में अंग्रेजों के शामिल होने से अनाज बाजारों में बढ़ रहा और बंगाल में जनता को भीषण दुर्भिक्ष का सामना करना पड़ा जिसमें हजारों लोग मर गये राष्ट्रीय भावनाओं के कारण हमने विद्यार्थी फेडरेशन के मार्फत करीब २-३ हजार तम्बाकू इकट्ठा करके बंगाल के अकाल पीड़ितों की राहतार्थ के लिये भेजा एक बार मंदसौर में बाढ़ आई उसमें भी विद्यार्थी फेडरेशन के स्वयं सेवक आगे आये, सन् १९४५ में विद्यार्थी फेडरेशन के एक जलसे में श्री नरहरि विष्णु गाडगिल जी एक महत्वपूर्ण राष्ट्रीय नेता थे, आये और उन्होंने सन् ४२ के आंदोलन में कम्युनिस्टों द्वारा शामिल न होने और रूस के शामिल होने से उसे जनमुद्र करार देने की काफी आलोचना की, इसी संदर्भ में अ.मा. स्तर पर विद्यार्थी कांग्रेस की स्थापना हुई और इन्तों में भी हम लोगों ने विद्यार्थी फेडरेशन

क-हैयालाल इंग्रवाल



में प्रस्ताव पास करके विद्यार्थी कांग्रेस की स्थापना की। होमीदाजी, शकुंतला पाटकर, तबों, टी.के. जगदीश, प्रदीप, विष्णु, जैक इत्यादि लोग शामिल थे, आजा रावल, श्यामसुंदर द्रवर इत्यादि विद्यार्थी कांग्रेस में रहे सन् १९४६ में अल्पक विद्यार्थी कांग्रेस के अधिवेशन में दिल्ली गये थे, जिसका उद्घाटन जवाहरलाल नेहरू ने किया था, उसमें अरुण आसफअली और कई नेता आये थे और रामसुनेर शुक्ला अध्यक्ष तथा रवीन्द्र वर्मा मंत्री चुने गये थे गांधी जी उस समय दिल्ली में नहीं थे इसी प्रकार बाल्यकाल में साबरमती में भी वे नहीं थे, देशी रियासत में रहने के कारण राष्ट्रीय आंदोलन से जुड़े रहते भी गांधीजी के दर्शन कभी नहीं कर सका विद्यार्थी संगठन की ओर से विद्यार्थियों की छोटी-मोटी समस्याओं के लिये लड़ते थे, विद्यार्थियों पर उस समय सुराभ्यन्द बोस का भी काफी प्रभाव था द्वितीय महायुद्ध के समय उन्होंने ब्रिटिश सेना में से लोगों को लेकर दक्षिण पूर्व एशिया में आजाद हिन्द फौज का संगठन किया जापान पर अमरीका ने अनुबल डालकर युद्ध जीत लिया और आजाद हिन्द फौज के कई सैनिक युद्ध अपराधों के रूप में पकड़े गये, उन पर दिल्ली के लाल किले में फौजी अदालत में युद्ध अपराधों का मुकदमा चला जिसमें भूतनाभाई देसाई व जवाहर लाल नेहरू ने भी पदवी

१५ अगस्त १९४७

होलकर कॉलेज के सामने बगीचे में झाड़वाहन

प्रिंसिपल एन. पद्मनाभन झाड़ा फहराते हुए उनके बायीं ओर खड़े लेखक (के.एल. इंग्रवाल)







१९४६-४८  
लॉ कॉलेज के प्रोफेसर - (बायें से) -  
प्रो जी आर. शर्मा, प्रो अय्यर (प्रिंसिपल)  
प्रो संवत्सर.  
(खड़े) - प्रो. सरदार बलवंत सिंह, प्रो. कर्जीकर

की हस्ते भी आजाद हिन्द फौज की सहायता के लिये करीब तीन हजार रुपये इन्दौर शहर से इकट्ठा किये

उस समय इन्दौर बहुत बढ़िया शहर था. सायकल ही मुख्य सवारी थी कुछ अमीरों, जमींदारों और महाकाजों आदि के पास चंद कारें और मोटरसायकलें थी द्वितीय महायुद्ध के बाद जीपें, कारें, स्कूटर मोपेड आये, सिनेमा बहुत सस्ते थे शहर बहुत सुंदर था सस्ता भी था द्वितीय महायुद्ध का प्रभाव बाद में आया था

मैं १९४५ में बी.एससी में गणित में फेल हो गया फिर सन् ४६ में प्रायवेट बैठा और पास हो गया तृतीय श्रेणी में पास होने पर भी जशन मना और बधाईयाँ मिली क्योंकि, क्षेत्र में बहुत कम पढ़े-लिखे लोग थे और गीव में तो मैं पहला रैंकबुट हुआ था बाद में १९४६-४८ में मैंने होलकर कॉलेज से ही कानून की शिक्षा प्राप्त कर एल.एल.बी की डिग्री प्राप्त की

१५ अगस्त सन् १९४७ को देश आजाद हुआ कॉलेज में प्रिंसिपल पदमनाभन ने झंडा ध्वज किया

उस समय कक्षाओं से प्रतिनिधि चुनकर विद्यार्थी परिषद बनती थी और वहाँ अपने में से अध्यक्ष, मंत्री चुनती थी जो साल भर की गतिविधियाँ और स्नेह सम्मेलन आदि का आयोजन करती थी

मेरे समय देश के बहुत बड़े-बड़े लोग कॉलेज में भाषण देने और स्नेह सम्मेलन में आये डॉ. सी. बी. रमण, सी. राजगोपालाचारी, माखनलाल चतुर्वेदी, राहुल सांकृत्यायन, पृथ्वीराज कपूर, एन. सी. मेहता, इत्यादि, जिनके भाषणों और जीवन का प्रभाव आज भी है

स्नेह सम्मेलन, खेलकूद, स्वीमिंग पूल जिम्नैस्टिक, संगीत, नृत्य व अच्छे पढ़ने वाले सभी प्रकार के लोग कॉलेज में थे. लॉ कॉलेज में शासकी कक्षाएँ लगती थी जो. अय्यर एक ऐसे व्यक्ति थे जिनकी स्मृति बहुत तेज थी उन्हें बरसों पुराने पढ़े हुए विद्यार्थियों को नाम लेकर पुकारने में कोई दिक्कत नहीं होती थी उनका साथ इन्दौर के महाहू बकील सर्व श्री

संवत्सर, पी.आर. शर्मा, कर्जीकर, सरदार बलवंतसिंह प्रोफेसर थे, कानून की पढ़ाई के साथ-साथ अक्सर लोग नौकरी या व्यवसाय भी करते थे

विद्यार्थी परिषद के चुनावों में खर्च प्रायः कुछ नहीं होता था कुछ विद्यार्थी कमी कोई छपा लेते थे या कुछ चायपान पर खर्च करते थे. सन् ४७-४८ के चुनाव में डी.पी. शर्मा अध्यक्ष और मैं सचिव चुने गये थे बाद में हमने संसदीय प्रणाली के आधार पर कॉलेज का विधान बनाया था जो मजूर हुआ था. पार्टी सिस्टम पर चुनाव भी हुए थे जिन्हें बाद में झगड़े होने पर समाप्त कर दिया गया कॉलेज में जब मैं भर्ती हुआ था श्री राजू प्रिंसिपल थे उसके बाद प्रो. देशपांडे फिर श्री एन. पदमनाभन प्रिंसिपल रहे कॉलेज में सब विषयों के ख्याति नाम प्रोफेसर थे. प्रो. बोरगाँकर का अंग्रेजी में बहुत नाम था. बी.एससी. में अंग्रेजी ऐच्छिक होते हुए भी मैं उनके पास अंग्रेजी पढ़ने जाता था पढ़ने में भी कई विद्यार्थी काफी तेज होते थे उस समय अजमेर और नागपुर के बीच इतना बड़ा कॉलेज इन्दौर में ही था कभी देशी विद्यार्थी आते-पास थीं. इस कारण दूर दूर से विद्यार्थी यहाँ आते थे. ३० जनवरी, १९४८ को शाम करीब ६ बजे हम लोग कानून की कक्षाओं में पढ़ रहे थे और प्रिंसिपल साहब ने आकर सूचना दी कि, महात्मा गाँधी को दिल्ली में प्रार्थना सभा में जाते समय नाथूराम गोडसे ने गोली मार दी और उनका देहान्त हो गया तत्कार कॉलेज बंद हो गया इन्दौर में साप्ताहिकता विरोधी दिवस मनाया गया विद्यार्थी कांग्रेस और फेडरेशन ने संयुक्त कार्यक्रम बनाकर सभी कॉलेज स्कूलों में हड़ताल करवाई और करीब १० हजार विद्यार्थियों का जुलूस निकाला और घंटाघर प्रांगण में जोरदार सभा की उस वर्ष कॉलेज का मेगजीन भी हमने 'गांधी अंक' के रूप में निकाला था

इस प्रकार विद्यार्थी जीवन में विद्या अध्ययन के साथ-साथ स्वतंत्रता आंदोलन में भी होलकर कॉलेज के विद्यार्थियों ने ओगे बढ़कर भाग लिया था और जीवन के हर क्षेत्र में यहाँ के विद्यार्थियों ने सफलता प्राप्त की आज भी उस समय की स्मृतियाँ से मन आनंदित हो जाता है



## Scientist-savant Extraordinary

-Dr. S.K. Gupta

Formerly Professor of Chemistry  
Holkar Science College, Indore.

One of the foremost writers of the twentieth Century E.M. Forster of "The Passage to India" fame was for sometime private secretary to H.H. the Maharaja Tukoji Rao Puar of Dewas Senior during 1921. Many years after Maharaja's death he wrote a book entitled, "The Hill of Devi" in which he remembers the H.H. in the following words:

"One of the puzzling things about the dead is that it is impossible to think about them evenly. They all go out of sight and are forgotten, they all go into silence, yet we can not help assigning some of them a tune. Most of those whom I have known leave no sound behind them, I can not evoke them though I would like to. He has the rare quality of evoking himself and I do not believe that he is here doing it for the last time".

I am a fan of E.M. Forster and an admirer of Dr. S.S. Deshpande although as regards their personalities and sphere of work both are poles apart. But why I mention E.M. Forster here is that his remarks about H.H. Dewas Senior aptly describe my mood when reminiscing about Dr. Deshpande. Many of my friends and acquaintances have left this world for their heavenly abode and have totally vanished from my memory. I can not remember their faces or their demeanour. Such is not the case with Dr. Deshpande, I can still draw a vivid mental picture of his personality, his actions, his way of thinking and doing things. And I know most of those who have known him intimately totally agree with me. They all remember him as part and parcel of their intellectual attainments and academic atmosphere of Holkar Science College spanning over a number of years

What was it that attracted people to him? What were the attributes due to which he is still remembered and will be remembered for a long time to come?

For the sake of record, he was born in 1891 the very year Holkar College was founded at Sanawad a small town, about 80 Km from Indore. He passed his B.Sc. in first division from Holkar College, and did his M.Sc., in 1915 from Murl Central College, Allahabad. In 1916 he joined Holkar College as a demonstrator and after a brief stint of four years was promoted

as Professor of Chemistry in 1920. For his Ph.D. which he received in 1922 he went to England and worked with Nobel Laureate Dr. J.F. Thorpe. He returned to Holkar College and when Principal P. Basu, brushing aside administrative obstacle permitted him to start M.Sc., classes in Chemistry in July 1931 he worked hard to make the College a reputed Centre of teaching & research in Chemistry in the whole of Country. He became the College Vice-Principal in 1934 and Principal in 1944. He again went to Europe in 1937 and worked with another Nobel Scientist Prof. Ruziska. After his retirement he joined Agra College, Agra as Professor of Chemistry and after that for a brief period served as Director, Jiwaji Rao Defence Laboratory, Gwalior. In 1957, he returned to Holkar College as Professor Emeritus in which Capacity he served the institution till he breathed his last on September 6, 1975

Coming from a somewhat rural background Dr. Deshpande retained something of the countryside throughout his life. He believed in simple living and high thinking and was frugal in his habits. He was a vegetarian and abstained from drinking or smoking. He loved fruits like the guavas and expressed his pleasure on being offered a good tasty variety. Modern science now advocates a vegetarian diet with high fibre content for healthy living and somehow Dr. Deshpande instinctively knew it. He derived his strength from his daily 'Pooja' and went about his chores in the spirit of 'work is worship'. In fact, he valued science as his religion and agreed with eminent world renowned Professor T.R. Seshadri that in a country like ours, religion has all along provided the basic inspiration for all worthwhile progress, revolution and renaissance and if science should make a marked impact, it should derive its strength from religion and should be associated with it in every way

My association with Dr. Deshpande dates back to 1959 when I joined the staff of Holkar College. Fair coloured, proportionately built, immaculately dressed in his almond coloured shark-skin suit with a buttoned-up shirt collar and without a tie in his later years he could be seen regularly in rain or sunshine walking briskly from the college gate to the organic chemistry lab at a fixed hour in the morning. Those



Dr. S. S. Deshpande in his eightieth birthday. Photo taken by the author. Taken at the college campus itself

who saw or met him casually remember him for his cheerful disposition, genial smile and good health even in an advanced age

A hushed silence fell as he entered the portals of the post-graduate cum research laboratory, although he hardly scolded any one or uttered a harsh word. It was a sort of a silent tribute to his scholarship, wisdom and sagacity by his students and compatriots

At work he was a hard task master and would expect his students to give their best. Prof. M. M. Mhale a reputed teacher whom Professor Ingold judged as one of the best Indian students to come to him in twenty five years worked under Prof. Deshpande in an underground cellar for almost seven years with extremely poisonous phosgene gas for his Ph. D. Degree, before going to England for his second Ph. D. under Prof. Ingold. Instead of quantity Dr. Deshpande believed in the quality of work

One thing that certainly endeared him to people from all walks of life was his easy accessibility. Students and teachers, young and old, research workers, men of industry, whenever they had a problem in their respective fields turned to doctor sahib for solutions and he was always willing to help. Instead of direct answers he discussed the problem from the grass-roots and then suggested going to the library for references so that solutions suggested themselves. Whenever anyone entered the Professor's room he came out a wiser man. Members from diverse disciplines of physics, mathematics, biology or earth-sciences would look upon him as their guiding star

It was not all serious business everytime, however, Wit and humour had their place in the scheme of things. Staff members of the Chemistry department from all branches were eager to join him during the tea-break when mirth and laughter freely flowed and all sorts of subjects under the sun were discussed over a cup of tea. The tea-time would often liven up with ideas and anecdotes when Dr. W. V. Bhagwat Principal, Holkar Science College would join the assemblage

Professor Deshpande considered fundamental research as society's soundest investment for the future. He decried the importance given to technological innovations of commercial value at the cost of fundamental research. According to him such an approach was like building a magnificent edifice without laying a strong foundation. Hence, he laid great stress on funds for scientific research being diverted to Colleges and universities where dedicated youth could put in real effort for the progress of science in this country and bring a fresh approach to the solution of problems facing society

Professor Deshpande had in him the synthesis of Western Science and eastern humanism. Besides being an erudite scholar and scientist he was a humanist. This reminds me

of Robert Oppenheimer who headed the secret military project that developed the atomic bomb. The film "The day after Trinity" presents Oppenheimer's life as a tragic conflict between science and humanism. Oppenheimer besides being a brilliant scientist was a humanist. When at 5.30 on the morning of July 16, 1945 man exploded the first test nuclear device he recited a Sanskrit-Shloka from Bhagwat Gita,

विधि मूर्धन्यसहस्रं भवेद्युगपदधिनः

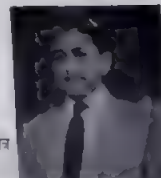
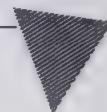
यदि मां सत्पृथी सा स्यादयासस्तस्य महात्मनः॥

'If a thousand suns were to burst forth in the sky their radiance would hardly match the splendour of the mighty one'.

Appalled by the tragedy of the atomic bomb Oppie spent the rest of his life trying to undo or atone what the scientist had done. He tried to stop the development of hydrogen bomb but failed. It is ironic of our times that Oppenheimer's science was such a success, his humanism such a failure. Highly honoured scientist, advisor to the Presidents, when he tried to be humanist Oppie was accused of disloyalty, tried in secret before AEC, stripped of all his honours and left to die in disgrace. It was only after a long time that his memory was rehabilitated by the world community

In India we are fortunate that scientists like Dr. Deshpande who have in them a humanist streak fit into our pattern of thinking. We revere them not only for their science but also for their humanism. In fact, for the survival of humanity we must evolve a synthesis of science and humanism.

Scientist-Savants like Professor Deshpande are a beacon-light to guide us on the path of true science and humanism. During this centenary year of his birth and that of his alma mater, he is evoking himself in the minds of all of us as a servant of science who was also the custodian of moral values. My only hope is that he continues to do so in the times to come. □□



महाविद्यालय के पूर्व छात्र

लेक श्री हरिश्चन्द्र

पाठक आदवी सिंह इन्फेन्ट्री से सम्बद्ध थे आपका

फज्जब सेक्टर में भारत-पाक युद्ध के दौरान १९७१

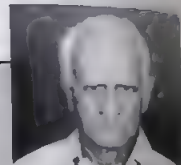
में अद्भुत शौर्य एवं वीरता के लिए "महावीर चक्र"

से सम्मानित किया गया।



# Reminiscences

Shri L.C. Gupta is an 'old' student of this college. He passed his B.Sc. in the year 1933 and won the Agra University's Krishna Kumari Devi Gold Medal. He was also awarded the prestigious Maharaja Shiva Rao Holkar Gold Medal of the college. After doing M.Sc. in physics, he joined state civil services. He was Education Secretary for the M.P. Govt. and was also Vice-Chancellor of Jabalpur University.



- L.C. Gupta

While writing this article in connection with the centenary celebrations of my Alma Mater, Holkar College, the narration of events should ordinarily be confined to my student life in the college. But for fuller appreciation of the educational system and academic life of that time, I may be desirable to make a brief mention of events in school life as well.

I studied upto Vth class in a village primary school. Teachers were simple but devoted to their duty. Class teaching was so complete and thorough that no extra work at home was required. Most of the work was done on slate and only three small books of Hindi, Arithmetic and Geography were required. Expenses on school education were negligible. A major part of our time was spent in playing, swimming and roaming about in fields and orchards round about. Teaching was not restricted to text books only and the teachers entertained us by telling some useful and instructive anecdotes and stories which had a very wholesome impression on our young minds.

In contrast, the life of the present day school child is far from being enjoyable and educative. It is a common sight these days, particularly in urban areas, that we see a child of 4 or 5 years of age, trudging along with a heavy load of books and copies on his back. Although he is smartly dressed in school uniform, he presents a pitiable sight. Expenses for books and copies alone are forbidding, leave alone the tuition fees and expenses for uniform and transport. As regards teaching, emphasis is more on quantity than quality. The young brain is stuffed with all sorts of information - relevant and irrelevant much beyond its capacity to absorb. This retards proper development of his basic faculties. The poor child, after returning from school sits down to do heavy homework with the help of parents or tutor. He has little time for play or to relax himself. This is how he enjoys his blessed childhood.

After passing out of primary school, I took 5th, 6th and 7th class examinations privately, as there was no middle school where I stayed. From 8th class onwards, I studied in Maharaja Shivaji Rao High School, Indore for 3 years. It was here that a sound academic and sports foundation was laid, and I enjoyed my student life to full extent in all respects. Teachers were all good and sincere. However, one of them known to all as Panditji, taught us Hindi all the three years.

He was more like the ancient Gurus in his personality, learning and behaviour. While explaining couplets from 'Ayodhya Kand' of Ramayana, he not only gave the meaning and sense of the couplet, but explained mythological stories associated with the references made therein. The whole class used to be spell bound and looked to him with great reverence. His teaching and personality instilled all the good values of life in our young minds. Besides teaching, he also encouraged us for wrestling and personally coached us in the evening after school hours. Since there was no 'Akshara' (wrestling ground) in the school, he made us prepare one through Sriramam.

Regarding sports, all the three fields, Hockey, Football and Cricket, used to be full in the evening. Our games teacher Shri Newsarkar used to coach us and play with us. There used to be a Central India 'Athletics and Games' Meet every year in December holidays where all high schools of Central India used to take part. It was a great event which everybody looked forward to. Our games teachers used to coach those who showed interest in taking part in various events, right from the beginning of the session. Selection trials were held sometime in September and intensive training was given to those who were selected to represent the school in various events. Our squad did very well all round and brought laurels to the institution.

Transition from school to college was a sort of landmark

in one's life, because seats were limited and everybody could not afford higher education. In this region, there were only two colleges - Holkar College for Science and Arts and Christian College for Arts only. I was lucky to be able to join Holkar College as a science student mainly because I got merit scholarship. Holkar College with its impressive building and extensive playgrounds, located well outside the city limits, impressed the newcomer as an ideal education centre where he will live the most important part of his career.

Regular classes started in a business like manner from the very first day without any disturbance or fanfare. Our teachers were Prof. Dr. S.S. Deshpande (Chy), Prof. N. Padmanabhan (Physics), Prof. I.J. Cornelius and Prof. Gole (Maths) and Prof. S. Charles A. Dobson, H. Ghosh and D.M. Borgeonkar (English). All of them had brilliant academic career and were outstanding teachers. They took all the classes right from Intermediate to B.Sc. and in English upto M.A.

During the course of our career as we came in closer contact with our teachers, we realised that they were not only good teachers but men of high moral character. Integrity, punctuality, simple living and devotion to duty were their hallmark which necessarily left indelible impression on us. All of them used to be University examiners also. But no one, even their nearest relation or associate, could get slightest inkling of the paper, they taught the subject so thoroughly and covered the entire course so well in time, that there was no need to point out what was important for the examination.

In English, Prof. Borgeonkar used to take down notes from Encyclopaedia Britannica for difficult words and expressions before coming to the class. It was such a pleasure to hear him explain a particular poem or a Shakespeare's play with all the references with his characteristic lucidity and clarity.

Prof. Dobson was tall and stocky in build with thick grey flowing moustaches. As he filled the chair, he looked an embodiment of a saintly preacher. His sombre and clear voice whistled through his moustaches and fell upon our ears like nectar. We felt as if we were hearing a sermon from the sacred mount. In his slow and measured tone, he explained the main features of English language, giving quotations from various well known authors.

Prof. N. Padmanabhan and Cornelius were impressive for precision, brevity and logical exposition of various theories in their subjects. Prof. Cornelius was known for his witty but pungent remarks even in normal conversation. Once while returning checked answerbooks of terminal examination, he addressed a student sitting high up in the back row, "You Mr. X: there in the House of Lords, you get zero in the paper. You know why? (pause) Because you could not get less."

Now I come to the person who was the very soul of the

institution - I mean Prof. P.C. Basu M.A. Ph.D. (London). He remained Principal of the College for 14 years and also held the office of Vice-Chancellor of Agra University for 6 years along with his Principalship. He was not only an able teacher of Economics but a strict disciplinarian and an efficient administrator. He used to take classes right from Intermediate to M.A. to keep in touch with the students. He was extremely punctual in coming to the class for lecture and other engagements and expected the same from others.

Despite his stern exterior, he was very kind hearted and would do anything in his power for the wellbeing of the students and his colleagues. For instance, when he learnt that I was in difficulty to continue my studies after Intermediate, where I had done very well, due to my father's retirement on a meagre pension, he approached the Prime Minister and got me special scholarship from the state. He also helped another poor student by keeping him in his bungalow. He again helped me financially, to enable me to go to Allahabad to study under Dr. Meghnad Saha F.R.S., after I had passed B.Sc., standing first in the order of merit in Agra University.

He never tolerated any indiscipline or misbehaviour on part of any student irrespective of his merit. Once he imposed a fine of Rs. 400/- on a meritorious student who was in his good books, because he refused to divulge the name of a mischievous student who set fire to a shamiana put up in connection with annual day celebrations.

Dr. Basu very much encouraged sports activities also. In the evening 5 tennis courts and 3 football, hockey and cricket fields used to be humming with activity. He used to send games teams to play against other colleges outside Indore during Diwali holidays and would reward those who performed well on the tour. In tennis the best four players were allotted a separate court and were given new balls everyday. This improved the standard and our players did very well in various tournaments at national level. Outstanding performance was that of so called Kaul Brother - J.K. Kaul and M.K. Kaul who won several trophies. Mr. J.K. Kaul was ranked 6th in All India Tennis ranking list and later won Men's doubles event in national championships. He was first appointed to Holkar Civil Service and later entered Indian Administrative Service and became Secretary to Govt. Of Madhya Bharat. Mr. M.K. Kaul entered Judicial Service and retired as Distt-Judge in M.P.

In University examinations also, our students did very well, passing various examinations in Merit. 1932-33 batch was exceptionally good. Miss Sumati Bhandarkar topped in M.A. (English). Other toppers were - Mr. Dinganker M.Sc. (Chy), Mr. Bedekar M.Sc. (Prev. Chy), Mr. Desai M.A. (Prev. Eng.), Mr. L.C. Gupta B.Sc., Mr. Balwant Singh LLB, Mr. L.O. Joshi Inter (Arts), Mr. Durga Prasad Inter (Sc).

Hostel life also was very happy and enjoyable. There were four hostel blocks accommodating nearly 100 boys. Prof. Sagr

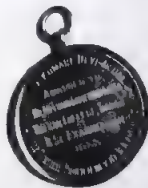
Ali (Urdu, Persian) was our Dean (Supdt) and Mr Akolekar was Physical Instructor and Mess Supervisor. Dean Sahib was very strict in maintaining Hostel discipline, but otherwise very kind and affectionate. He used to visit every block at 8pm and call every student by name to ensure none was absent. If anyone was found absent he had to appear before him next morning to get admonition. Mr Akolekar used to take all the hostellers for jogging for a mile in the morning at 6am. Since I used to study late at night, I was exempted from jogging and used to do gymnastics later for half an hour. Mr Akolekar was an amiable and conscientious person. He looked after maintenance of tennis courts, games fields and college garden very efficiently.

Our Annual Day celebration was a memorable event and we looked forward to it very eagerly. Besides games and athletics competitions, cultural items like debates, plays (Hindi & English) and music etc. were performed efficiently after good preparation under the guidance of various teachers. The most important item was the prize distribution after the speech by the Principal. Closing address was given by the Chief guest H.H. Maharaja Yeshwant Rao Holkar who adorned the dais along with his Maharani Her Highness Sanyogita Bai a very lovely and dignified lady. Principal's speech was a treat to hear. It reviewed all the main activities of the college during the year and its requirements for further development which needed State Govt's cooperation. Dr. Basu's speech was prepared in advance and rehearsed before a mirror to ensure proper gestures and intonations.

My proudest moments were when I was given by the Maharani Holkar the Maharaja Shivaji Rao Medal for being the Best Student of the college for outstanding achievements both in studies and sports and later when I was awarded the Krishna Kumari Devi gold medal at the 1933 Agra

University convocation for general proficiency at B.A. and B.Sc. examinations.

This brings to an end my sweet memories of life in Holkar



College. A critical reader of this article might wonder how is it that I did not notice any dark spot anywhere in my school or college career. Was it that everything was ideal and to perfection? No, some dark spots were there, but they were so few and insignificant that they were eclipsed by the dazzle of the bright ones. One is also likely to observe the contrast between the life in educational institutions then and now. Why is there deterioration all around? Reasons are not far to seek. In a nutshell, the conditions then reflected the state of society and administration prevailing then and the conditions at present do so the state of affairs now.

My memories of Holkar College go back to 1927 when I joined the College as a First Year student. It was then perhaps the only post-graduate college in the whole of Central India and Rajputana Agencies besides the Indore Christian College, run by Christian missionaries. There was also the Daly College, but it was a college only in name - it had no degree or post-graduate classes. It was a kind of public school for the sons of princes and jagirdars belonging to Central India and Rajputana Agencies. Students from all over the Rajputana Agencies viz. Jaipur, Jodhpur, Udaipur, Bikaner and Kota as well in Central India Agencies, came primarily to Holkar College, though some students from outside joined the Indore Christian College also.

I was impressed by the faculty that Holkar College possessed. It had some excellent teachers, Professor Ghosh and Professor Borganker in English, Professor S.N. Dhar in History, Professor Shrinivas Chaturvedi in Hindi and Sanskrit, Professor Shrikhande in Logic and Philosophy, besides having Professor Padmanabhan, Professor Deshpande, Heads of the Departments respectively of Physics and Chemistry. Dr. P. Basu, a distinguished scholar of Economics, was Principal of the College and Professor Charles A. Dobson, an extremely good natured and kind hearted Englishman, an excellent teacher of English was the Vice-Principal and the Head of the Department of English. The Christian College, Indore had a large number of Christian teachers from various parts of India as well as several teachers from abroad, who impressed me by their closer, more informal - relations with the students. I was impressed not only by the quality of the teachers but the interest that they took in the students.

My memories go back particularly to late July 1927 when we were given a monthly test, consisting of one question, by our teacher of History, Professor S.N. Dhar. It was within a fortnight of the start of College. I thought that I had written a very foolish answer when I found Professor Dhar calling me at the time of the distribution of the answer papers. "Who is this Lord Krishna?" he asked. I knew that it was my answer and I also knew that it must have been a very foolish answer. I had started the answer with "What Lord Krishna says in Bhagvad Gita". I was surprised to find that I had got the highest marks in the class - 4 1/2 out of 5 and Professor Dhar asking me to meet him after the class was over in the staff room. As students of the High School we had been used to have a great deal of fear of our teachers. I went to meet him outside the faculty room. Professor Dhar met me in a very informal, casual way. I still remember it though 64 years - nearly two-thirds of the century has passed since then. He gave me a couple of books, which he had borrowed from the College library in his own name. I still remember the names of the two books - one was Havell's History of Aryan Race in India and the other Radha Kumud Mookerji's Fundamental Unity of India. He quietly asked me to read them and give him my impressions. I am sure from the names of the two books, that Professor Dhar might have seen some instinct in me for a certain orientation for a cultural bias of History, which, I

## REMINISCENCES

- S.P. Varma D. Litt., Jaipur

think, he had appreciated. I read both the books very carefully and was deeply impressed by their contents. In fact, it was as a result of the study of these books that I developed a cultural bias towards my understanding of history. I had started taking interest in the extra-curricular activities of the College by the time I came to the Third Year class. I also took some interest in organising the elections which were taking place to the students' bodies and proposed the name of one of my friends for the editorship of the College Magazine and another for the Chief Secretaryship of the annual celebrations in the College with the result that the responsibility of not only editing the Magazine but seeing it through the press ultimately came to me. I remember that we had got it printed at the Sardar Printing Press at Indore - A great deal of responsibility of both, the publication of the College Magazine and the organization of the Annual Function of the College for 1928, thus, fell on my shoulders. I am sure they proved good training grounds for me for developing journalistic instincts and administrative skill.

Among the students of the Final Class who had impressed me at the time of elections in 1929 were Pratap Singh Bapna and Kalyan Mal Bapna, both of them later distinguished themselves in the administrative Services, one of Indore State and the other, first at Udaipur, and later as Chief Secretary in greater Rajasthan. While in the First Year Class, I had also come in contact with Kashinath Narain Trivedi, and ardent Gandhite who wore khadi habitually, which I could appreciate but could not do on account of family circumstances.

Holkar College in those days was full of students' activities, though they were all of a constructive type and strictly in accordance with the constitution of the Students' Union as framed by Dr. P. Basu, the strong man who dominated the College as its Principal. By 1930 when the Civil Disobedience Movement was at its height in national politics, there was some reflection of it in the activities of the College, though it was not with any active support from Dr. Basu, and was often in the absence of Dr. Basu.



'महावीर' पी. गौतम

होल्कर महाविद्यालय के भूतपूर्व छात्र, जिन्हें पाकिस्तानी आक्रमण के विरुद्ध वीरता के लिए 'महावीर-बहादुर' प्राप्त हुआ. उन्होंने यह सम्मान दो बार (वर्ष 1948, 1950) अर्जित किया.



On October 2, 1932, some of us thought of organizing a Gandhi Jayanti programme, and since Dr. P. Basu, who was a strict disciplinarian, happened to be away from Indore and Professor Charles A. Dobson was acting as the Principal of the College. We approached him to preside over the function. Professor Dobson accepted gladly, and, rather innocently, remember, delivered a strong speech on the occasion, which was greatly appreciated by Professor Dobson and the audience. I also read out a long prose-poem in English which I understand was sent out of some activists in Bombay by a friend who was in touch with them and some ten thousand copies of it were printed and distributed all over the City there. It came to my attention that Professor Dobson had been put to some trouble on account of his innocently agreeing to our proposal to preside over the Gandhi Jayanti celebrations. The Holkar State Government had taken objection to it and Professor Dobson, an innocent Englishman that he was, was asked to offer an explanation. We had also collected a good deal of self-spun Khadi and self-woven cloth, which we sent on to some local organization dealing with Khadi.

During my student days at Holkar College in the B.A. Arts classes, I remember, I was quite actively associated with several general activities of the College. We used to have a number of cultural activities, like short-length plays or comics, in which I also participated. Dr. P. Basu, the Principal, had taught us British History when we were in the Intermediate class, but he had known me personally mainly through such activities, and recommended me to the State Government in 1934 when the chance of my appointment as a Lecturer in History came up.

A number of my teachers at the College still remembered me when I had joined the Allahabad University for my M.A. course in History and later, as a research scholar for a year. Whenever I came to Indore, my home town, and it was fairly often, I always met a number of them. I had excellent memories of the Indore Christian College also and my impression was that the teachers there were more sociable than the teachers in the Holkar College. While we had some difficulty in trying to rope in judges for our debates from teachers among Holkar college, I remember, we could persuade some of the teachers at the Christian College, Indore to preside over, or participate in some of those functions.

In October 1934, after I had done my M.A. in History from Allahabad University and was involved in my research work under the guidance of Sir Shafiq Ahmed Khan, I was appointed a lecturer in History at Holkar College. It was a rare opportunity during those days to find a teaching career in any post-graduate college, much more in a University, the number of which was limited in those days. I was, therefore, happy to obtain an appointment in Holkar College, Indore, and everybody congratulated me. This gave me an opportunity of coming even closer to the Holkar college and remaining in close contact with all its social and literary activities for

the next nine years from 1934 till 1943. In the meantime, I had developed contacts with some of the most outstanding literary men in Hindi literature and built up a position of my own. That enabled me to play an active role in the literary activities of the College. I had also developed a great interest in dramatics, and could help in organizing a number of plays. It was therefore, with some pain that I shifted to Meerut College in July 1943 in the capacity of an Assistant Professor in Political Science. Further openings appeared to be blocked for me at Holkar College. I had, in the meantime, done my M.A. in political science, standing First class first in the University, with First class marks in each individual paper - a rare academic distinction, and was immediately appointed there. But I badly missed my years at Holkar College.

I had, thus, remained in close contact with Holkar College from 1927-31 as a student and again from 1934-43 as a member of the faculty. This, particularly the one from 1934 onwards, was also the period when I was very deeply involved with the social, particularly literary, activities of Indore. In 1934, I was elected the Sahitya Mantri (literary secretary) of the Hindi Sahitya Samiti, Indore, a well-known public institution of the city, which had the honour of inviting - Mahatma Gandhi to Indore to preside over the annual session of the All India Hindi Sahitya Samiti in 1918. The Samiti was then under the guardianship of the late Pandit Saryu Prasad Tiwari, then one of the leading physicians and public figures of Indore. Indore again had the privilege of inviting Gandhiji, then working for the propagation of Hindi as the link language in India, to preside over annual session. I was also elected as the literary secretary of the All India Hindi Sahitya Sammelan. I had hardly realized at that time that it would enable me to come in close personal contact with Gandhiji at least for the time being. But that is a different story and has hardly anything to do with Holkar College.

In my early years as a teacher at Holkar College, I had set up, with the help of some colleagues, an institution called the Saturday Club, which consisted of 25 or 30 best students of the College who were selected by some of us with great care. We called it the Saturday Club and used to have weekly meetings almost on all the Saturdays, in which we discussed on major topics in History, or politics, national as well international, or literature or science to which we invited members of the faculty from Holkar College as well as from the Christian College. The Saturday Club continued for years and the students selected as its members every year, distinguishing themselves in later life. Those years from 1934 to 1943 were really highly active years in the life of the College. Holkar College, with Dr. P. Basu as the Principal, (1934-40) I remember distinctly was a highly organised and a well disciplined college. Games used to be compulsory for student in those days and every member of the teaching staff was assigned some responsibilities of supervising the games. Dr. Basu had also introduced the system of weekly seminars which were generally conducted with extreme care. Games were compulsory. In 1935 Dr. Basu returned from a trip to

Europe bubbling with enthusiasm for the discipline that Mussolini had introduced in Italy. We organised a talk by Dr. P. Basu under the auspices of the Saturday Club in which he spoke with great admiration for Mussolini. We could see how deeply the personality of Mussolini had influenced Dr. Basu. Dr. Basu was known for his imposition of dictator like discipline in Holkar College. No teacher was expected to differ from the attitude that Dr. Basu took in matters of the college or in the University of Agra of which he was the Dean of Arts and then the Vice-Chancellor.

I distinctly remember an incident in 1934 which took place immediately after I had joined its faculty. Elections to the University Council from all over the University were held, and fourteen members were to be elected for it. Outstanding citizens of the nation stood for the vacancies in the registered graduates constituency elections had been scrupulously organized and nobody was expected, or perhaps could even have the courage to deviate from the line of action that Dr. Basu expected him to take. There were outstanding names on the one side - Hridayanath Kunzru, Dr. Ishwari Prasad, Dr. Mohan Sinha Mehta and other. But, in the meantime, graduates of the Agra University were rapidly being registered as members by the group which was organising elections on behalf of the group controlled by Dr. P. Basu. Membership forms were sent to hundreds of graduates of the University with their membership fees paid by the group 'organising' the elections and they were asked just to sign the form and send it on. So far as members of the teaching faculty at Holkar College was concerned, nobody was expected to deviate from the list of names he was asked to sign a group of 14 chosen by Dr. Basu and his close circle - more or less, unknown and incompetent persons. My teacher, Dr. Ishwari Prasad, one of the most well known teachers in Northern India, known also for his stinginess, used to write post-cards to me at the College address in which he was asking me to secure as many votes for him as possible. When I tried to move about in the matter, I was warned that if I did anything of the type, Dr. Basu would never excuse me. Mr. K.L. Bordia, my teacher and colleague in Holkar College, who had been practically Dr. Mohan Sinha Mehta's creation, told me that he could not ask anybody to vote for Dr. Mohan Sinha Mehta and that if anybody on the faculty of the College did so, he would not be excused for it. I played a rather surreptitious but highly moralistic role in the whole affair. I wrote a long and confidential letter to Dr. Ishwari Prasad, making everything clear to him. It was a shock to me that while men like Pandit Hridayanath Dr. M.S. Mehta, Dr. Ishwari Prasad and other were not elected, one of the sub-post-masters at an obscure post office in Indore was elected. I later knew what use Dr. Ishwari Prasad made of my letter. He placed the entire conspiracy before the Governor, and the elections were declared null and void. But Dr. Basu's control over the Holkar College administration and, through his colleagues in the University over the Agra University was almost complete and remained in later years too.

Then a sudden change took place in 1940. Letters began to be received at the address of the Holkar College in the name of H.B. Richardson who had replaced Dr. P. Basu in the wake of large scale changes in the administrative set up of the Indore state subsequent to the supercession of Maharaj Tukoji Rao, Col. Dinanath, and unknown person from Punjab had replaced sir sirey Mal Bapna, who as Prime Minister of the state since 1924 was in fact responsible for modernising the city of Indore, and who had established a first rate hospital and college in the city. H.B. Richardson a lecturer in some Lahore College, was Col. Dinanath's protégé, and when Dr. P. Basu's services were dispensed with, Col. Dinanath brought Richardson as the Principal of Holkar College. It came almost as a shock for the College. People did not actually love Dr. P. Basu but they were full of admiration for the excellent administration and discipline that he had maintained in the College and unless one went against Dr. Basu's wishes in the matter of College or University administration, one could quietly carry on his teaching work and other extra-curricular activities. In short, as long as one did not come in the way of Dr. Basu, one could treat himself completely free to carry on his College work.

Indore had two late night trains, each leaving at 2 or 3 A.M., one in the direction of Ratlam from where one could either proceed straight in the direction of Almor or any major town in Rajasthan or undertake, through a B.B. & C.I. train a journey in the direction of Delhi or Bombay or in the direction of Khandwa where one could get on in the various directions to any place in Central Provinces, U.P., Bihar, Bengal, Madras or Bombay Being a Bengali, Dr. Basu had his roots in Calcutta. After his dismissal from the post of Principalship he took a night train for Calcutta, and was given a grand farewell by the students and the members of the staff of the College. H.B. Richardson, however, proved to be a well-meaning Englishman and we, the younger members of the faculty, who were almost of the same age as Richardson felt ourselves elevated in our stature. Richardson was quite respectful towards members of the Faculty, even when they were young and we could discuss matters freely and frankly with him, Richardson seemed to exercise considerable influence in the state's administration, and this explains his sudden elevation to the post of Education Minister within one year of his principalship of the College.

H.B. Richardson's place in the College was taken over by P.T. Raju, a powerful orator, who had been invited, by Richardson, to preside over the preceding year's annual function of the College.

Raju as the Principal of the College found it difficult to take decisions, and soon became known for his crude behaviour. While he himself was an elderly person he seemed incapable of showing respect to the senior members of the staff. On the other hand, he was quite intimate in his contacts with the younger members of the staff. I remember that a messe-



nger from a local Church had brought a letter for Raju. He was admitted by Raju to the Principal's room and was asked to take a chair, which greatly surprised him and, as he came out of the Principal's office and was passing by the Head Clerks' table, he was heard saying "What a fool! He seemed to have no idea of administration at all." I remember an interesting incident. A conference of patais was called at Indore, in which the young Maharaja was to preside. He talked with Professor Dhar, the head of the History Department and asked him to suggest what could be done by his department to be brought into prominence on the occasion.

In October 1942 some of us thought that we might celebrate the four hundredth anniversary of Emperor Akbar in the College and since Shri Tej Bahadur Sapru one of the two most outstanding advocates of the country, the other being Jayakar, and they often formed a team and a great scholar of Persian happened to be at Indore, we decided to invite him to address us on the occasion. Mr. Rashid, who was the Education Minister of Indore State at that time, was invited to preside over the function. The College was going through a great controversy at that time regarding the use of "Vande Matram" the famous song from Bankim Chandra Chatterji's famous novel Anandmath. The song was regarded as an expression of Hindu religion, tradition and culture by a section of Muslim community, and hence whenever a function started with this song in the College, the Muslim students used to walk out of the hall, thus creating an atmosphere of communal tension. It happened on this occasion also, and while the audience started dispersing, Sir Tej Bahadur Sapru collected his papers and quietly walked out, with Rashid Sahib walking behind him. Principal Raju was sitting at that time on a bench lying at the front gate of the hall, reading a letter and when I tried to draw his attention to what had happened, he instead of being concerned about the event, appeared to be deeply engrossed in the letter and resented my attempt to disturb him.

I left Holkar College a few months later to join Meerut College in the capacity of an Assistant Professor in Political Science (in the July of 1943). While at Meerut I generally stayed away from the general activities of the College or the city, confining myself to the writing of critical books in both English and Hindi, on vital national problem - Problem of Democracy in India, in English, and that a foreword was contributed by Dr. Tara Chand, and Hamari Rajnatik Samasyayen in Hindi, being my major works of the period, besides academic papers produced in the faculty club of the Meerut College, and various meetings of army men staying at Meerut. Meerut being a big centre of the military. From Meerut College I moved in 1946 to M.B. College, Udaipur to take up the position of the Head of the Department of History and Political Science and stayed there till 1957, when I left for Jaipur and spent a number of years, first, in building up the Rajasthan College as one of the most exemplary colleges organised, more or less, on the lines of a public school, set up by Mohanlal Sukhadia, the Chief Minister, and Bhagwant

Singh Mehta, the Chief Secretary of Rajasthan, where the teachers were given higher salaries and students were admitted on the basis of a higher percentage of marks in their preceding examinations, and after 1957 in building up the Department of Political Science in the University of Rajasthan. While at Meerut in 1943-46 and at Udaipur in 1946-57, I was invited again and again to Holkar College for presiding over functions or participating in various discussions, and thus, I continued to take a great deal of interest in Holkar College and its activities for a number of years to come. My absorption in the work of the University of Rajasthan after 1957, however, did not leave me with enough time to keep up my contacts with the Holkar College.

For a number of years I had been looking forward to the building up of a University at Indore - my idea being that when a University was built up at Indore, as at Allahabad, it would be in a position to build up a great academic atmosphere in the city, little realizing that the entire conception of a University, had been fast changing - perhaps since a university had been set up at Agra in 1927. In 1947, when Kashinath Narain Trivedi had invited me, in his capacity as the new Education Minister in the Praja Mandal ministry in Indore State, to accept a position of the Directorship of Education in Holkar State, I had expressed my inability to accept it, on the plea that as I was waiting for the day when a University would be set up at Indore and I would be called upon to play a role there. My impression had been that Allahabad had become a distinguished academic town on account of two factors: the establishment of a High Court there and that of a first-rate University. I was expecting that in the same manner the establishment of a University at Indore would be a great help in the intellectual development of the city.

It took a long time for a University to be set up at Indore and by that time the entire concept of associating the intellectual eminence of a city with that of its University had vanished. When Manohar Singh Mehta, who later became the Education Minister of Madhya Bharat, reminded me of my earlier promise and invited me to join the University of Indore, I told him that I had not expected that a University which would be more on the lines of the Agra University would be set up at Indore. I had at that time a great deal of faith in the future of the University of Rajasthan which had been set up, with three eminent Vice-Chancellors each for two terms of three years, viz., Dr. G.S. Mahajani, G.C. Chatterji and Mohan Sita Mehta (1947-66). The University of Rajasthan had been developing at a rapid speed and my interest had completely shifted to whatever role I could play in the building up of the University of Rajasthan, in general, and the discipline of Political Science in the University, in particular. I, however, did not anticipate that the University of Rajasthan too, in the way of the other Universities, including the University at Allahabad, would also soon be on the road to disaster, the causes of which are now clear to everybody.

## My Four years in Holkar College

- G.L. Ojha

It was July 1944, when I came to Indore for my admission in B.Sc. (Part I) in the Holkar College. I had already filled in my form and at my place Ujain. I was informed that the list of persons to be admitted is going to be notified soon. Therefore, I reached here and to my misfortune, I found that I was not one of those candidates who were admitted. On inquiries, I had learnt that after the local candidates (residents of Holkar State) are over, then only outsiders could be considered. But I was told that if I was interested in arts, I could get admission immediately. This compelled me to go to Gwalior as our Madhava College in Ujain was only intermediate college, and having passed intermediate from there, I had to take admission somewhere. I went to Gwalior and also to Agra. In the meantime, I received information that there are some vacancies in Holkar College and the persons in the waiting list may be called for interview. I rushed back to Indore, as I was in the waiting list.

The Principal of the College then Dr. Deshpande, Vice Principal N. Padmanabhan Shastri and Prof. Gangrade constituted the committee to interview us. Amongst the candidates in the waiting list, I was one who had the highest percentage of marks although second class. I was therefore, called for interview. After a few questions, the Principal Dr. Deshpande, told me that although I can be admitted on the basis of merits, but my disadvantage is that I am a foreigner. When he called me a foreigner, I could not resist my temper and I immediately said "Sir you may admit me or not, but please don't abuse me." I am not in the habit of hearing abuses. Dr. Deshpande said that he was not abusing me. But I told him that if in my own country, when you call me a foreigner, it is nothing short than abuse. I also told him that under the rules, if I will have to pay double tuition fees, I am prepared to pay. Thereupon, Shri N. Padmanabhan intervened and told the principal that this boy must be admitted as he has the best percentage of marks amongst the candidates in the waiting list. Not only this, but he went on insisting till he got me a chair for admission then and there and so I came to Holkar College, Indore.

In the first year i.e. 1944-45, I got in touch with the college activities in the back ground of my political associations with the Students' Congress, the nationalist organization of All India Students, I was elected as vice president of Indore branch. 1945 started an Era of transition when the Britishers

*From his college student days Shri Ojha is known for his commitment towards social and political reforms. He was an outstanding lawyer and later on retired as the judge of the Supreme Court of India. At present, he is associated with the college in the capacity of the President of 'Old Holkarana Association'. He studied in this college from 1944 to 1948 - a period of great turmoil and political transformations. He vividly recalls some of the activities of that period.*

were preparing to withdraw and ultimate success of our freedom struggle was insight accomplished. I started campaigning for a democratically elected students' body which could look after extra curricular and cultural activities of the students in. The college negotiations were on and the year ended. Having passed B.Sc. (Part I) we entered the year 1945-46, where I was a student of B.Sc. (Part II). At about the end of the session Dr. Deshpande retired and Shri Padmanabhan became the principal of the college. In March 1946, near about the time, when our examinations were in the offing, under the chairmanship of Pandit Nehru, an interim Government took over in Delhi as the first step towards transfer of power.

After passing my B.Sc. examination not very well as pre-occupied with my political activities, I had very little time for studies. I joined L.L.B. previous in the year 1946-47. Shri Padmanabhan accepted our demand for a democratically elected students' body and asked me to prepare constitution for the same, and it was my first experiment that I prepared a constitution for college parliament where members of parliament were elected from various classes on the basis of number of students in the class, and this parliament had a president, vice president and various secretaries, who were incharge of different extra curricular and cultural activities. The parliament members were elected directly from the classes. The president and various secretaries viz. literary secretary, celebration secretary, sports secretary etc. were elected by the members of the parliament. The first parliament of the college was elected in July 1947. When the date for our declaration of independence was fixed as midnight of 14th August 1947.

On July 1947, I joined L.L.B. final and I was elected as one of the members of the college parliament, but it was interesting that inspite of the fact that I was supposed to be popular in the college in the election for the presidency of the parliament, I was defeated by one vote by the person, who immediately after the declaration of the result became a great friend and continue to be a friend even today - Dr. Shri P.D. Sharma.

Holkar State was one of the native states of India. British Rulers who had decided to walk out of India, had declared that on their withdrawal from India, the native states will be



free states and it will be for them to choose as to whether they will or will not join the Indian Union. It will also be open to them to have their own independent states. At this time, Sardar Patel, who was one of the ministers of the interim government, was trying to handle these native states. Most of the states had declared their intention to join the Indian Union but Nizam of Hyderabad, Navab of Bhopal and unfortunately the Maharaja of Indore had declared their intention not to join the Indian Union. A document was prepared by the Government of India which was to be signed by the Ruler of the State, who was to join the Indian Union. It was described as an instrument of accession. When Maharaja Holkar declared his intention to remain free, I as the president of the students Congress, launched an agitation against Maharaja. I tabled a resolution before the college parliament as if Maharaja Holkar does not join the Indian Union, this college will sever its connection with the Holkar State and will be a part of the Indian Union. It was also stated in the resolution that members of the staff including the principal, if want to continue in the college, they must tender their resignation from the Holkar State service, to be effective from the midnight of August 14, 1947, but if they want to continue with the Holkar States service, their service shall stand terminated from the college on the midnight of August 14, 1947. The parliament had a lengthy debate on the resolution and ultimately at about 9 p.m. in the first week of August 1947, the resolution was passed, and a copy of the resolution was sent to the principal. I went back to my hostel room (New hostel where I was residing). At about 10 p.m. an old peon of the college came and asked me that the Principal wants me. So I left for the Principal's residence apprehending hot reception as the principal must have received the resolution by then. Smt. Matrai Padmanabhan, the wife of the Principal, was very kind to me and treated me always with affection. I therefore, told the peon to take me first to Smt. Padmanabhan and I thought that I will take her with me to the Principal as she will act as my protector. Our principal Shri Padmanabhan was known to be a very strict disciplinarian and a very logical talker. But when I reached his residence, I found him walking in the veranda outside and had no opportunity to seek the protection which I had thought of. He immediately asked me as to what I have done and I told him that he must have received the copy of the resolution. He told me that you have terminated my services also, and I told him 'choice is yours', but then he asked me that if the Holkar State remains independent, what the boys will do in the college to make it a part of the Indian Union? I told him that the first step on the midnight of August 14 will be that our national flag will be hoisted on the building and gates will be closed. Holkar State employees will be asked to get out of the college. Gates will be closed for the authorities of the Holkar State, Hearing this the principal said that the Holkar State Police will walk in the college, tear of your national flag and throw it in the dust. Hearing this I became serious and told the principal 'Sir there is sufficient blood in the veins of the young boys of the college and so long as the last drop of blood is not shed and the whole ground

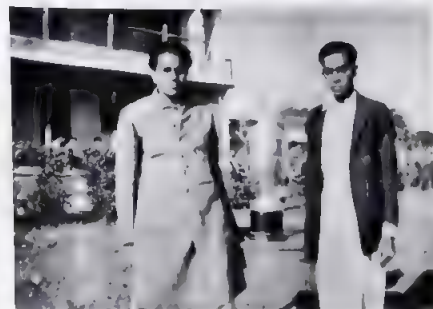
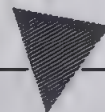
is not red, no one will be permitted to touch our national flag.' On this, the principal embarrassed me petting on my back said, 'My boy, I will be with you, and before the blood of my boys flow, mine will flow first.' With these blessings, I came back to the Hostel and went on with my agitation against the ruler demanding his accession to the Indian Union. We surrounded Yeshwant Niwas palace where the ruler resided, declaring that we will not permit anyone to go out and no one to get in. It was a historical march of young people of more than about 10,000 boys and girls from the age group of 6-7 years to 20 to 21 years. We remained around the palace from morning to evening. Ultimately, the Maharaja acceded to our demand; may be because of the atmosphere all over and the good sense which he had.

On 14th August 1947, we became free but unfortunately, the country was partitioned into two and with this the blood shed started resulting in virtual transfer of population from the parts of India which became part of Pakistan and from India to Pakistan. The blood shed and the disaster which the country faced was never expected. This went on in the month of August 1947, and in September 1947. Our college used to have our celebrations (social gatherings with all cultural and sports activities) normally in November or December. Every student along with his tuition fee used to pay part of the money as celebration fees and this amount separately collected from all the students, was earmarked for the expenses of the social gathering. This amount in those days used to be to the tune of 20 to 25 thousand rupees. Most of the expenses were in refreshment, dinner and for payment to some professional artists for cultural activities. I felt if all this money is sent to the national relief fund, which was being collected, it will be a part of the expense of lakhs on the refugees who had come from North West of the country. I therefore, tabled a resolution not to have any celebration where money is spent, and all this money be sent to the National Relief Fund. When notice of this resolution was circulated to all the members of the parliament, it aroused all round excitement. Because for some who were interested in cultural activities and shows, it was a great set back as they may or they may not get any opportunity to have all that enjoyments because some of them may pass out of the college before next opportunity arises. I was also one of them who was the student of LL.B. Final. On this, lot of debate outside went on and virtually the members of the parliament looked divided. A group of people mostly coming from distinguished families of Indore - Officers, High class people in our terminology then, who were described as 12 oaks of the college, were canvassing against the resolution and ultimately when we were walking into the parliament (Yeshwant Hall), the leader of this group showed me a paper having signatures of more than 60 to 70 persons claiming to be the members of the parliament against the resolution and he told me that the resolution will be defeated. But if I want a compromise, he may agree to give at the most 25% of the fund for the National

Relief Fund. I told him plainly that I am not a beggar nor I was seeking any favour for me personally and I also told him that if you defeat the resolution, you will put a black page in the history of the college that the boys here want to enjoy when the nation is bleeding with the loss of thousands of brothers and sisters. With this, we entered into parliament hall and the celebration started. After my putting the resolution, it was vigorously and strongly opposed, and also was supported by number of speakers, and every one was in a fix as to what may happen and ultimately I rose to reply to the debate.

I still feel that I could never speak in my life as on that day - sentimental and appealing. I could notice when I was turning to describe as to what was happening in Panjab and frontier, tears were dropping from the eyes of my friends in opposition

□□

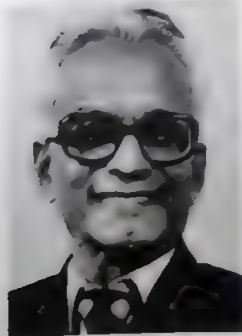


1947 : Inter Collegiate debate of colleges affiliated to Agra University held at Meerut.

Winners - Shri G.L. Ojha and P.D. Shastri - of Holkar College, Indore.

# BACK TO HOLKAR COLLEGE

- Satya Vrata Ghosh



A revolutionary from his early student days and a student of this college Prof. Ghosh was also on the staff here in the years 1951-54. Reminiscences of his student life appear elsewhere in this issue. In the following pages he remembers the period when he was a Professor in the Department of the Political Science. Prof. Ghosh is a prolific writer and has several articles and books to his credit. Two of his books 'Indian Struggle for Freedom' and 'Decades of Daring Deeds' deal with the freedom movement and the role of the revolutionaries in the struggle.

When the admission impediment over, I entered the university in a spirit of almost a triumph. But an unforeseen obstacle came in the way of a life of peaceful existence. I had to get a shelter over my head and bachelors were not given any accommodation. When I was searching desperately for some arduous man, chewing pan in his toothless mouth, accused me and asked about my problem of house hunting. I told him the story of woo. He offered me a small room in his single man's household. He was a widower. But I told him also about the police constable in plain clothes who would watch my movements day and night. But he was not afraid. Being a retired railway employee who had drawn his provident fund, he had nothing to fear from the government. This was his patriotism. I forever remember it with reverence and gratitude.

The University opened its door to me in July 1934. I took up Arts course with English, Bengali, Political Science and Economics as my subjects. I also got busy in a wider field with students from all corners of the country assembling there. My potentially found an all-round expression. I continued with my career and tennis and cultivated writing and speaking, which sustain me even today at the age of 77 years.

I also became a sort of a student leader, thanks to my political past. What was a liability at Indore became an asset at Banaras, a centre of nationalist activities. Some of my juniors became all India name in politics. Two of them were Raj Narayan Singh and Govind Narayan Singh. Dwarikanath Kachru was not active during my student days but ultimately became the General Secretary of All India States People's Conference. Ultimately, he was the secretary for Kashmir affairs to Pandit Nehru. He died a premature death in a plane crash when he was returning from Kashmir with U.N. Observers.

I came out of the university with flying colours, topped the list at M.A., but could not get a job even of Rs. 30/- a month. It was such an India when I tried to enter the world of practical life. But the Great War brought a boon of a sort to us, the job seekers. I got one with the government of India but soon lost it owing to earlier political activities and the police report that pursued me. I was on the streets of Delhi. It was at this time that some stalwarts among central M.L.A.s (present day M.P.s) got me a job as a political secretary to Lala Ram Ratan Gupta, a Kanpur industrialist and a member of the Assembly. I had to prepare his speeches and look after his political activities. It was a sort of a liaison officer. I lost my work as such.

But I came in close contact with another aspect of our socio-political life which almost made me a cynic. There was an unseen transfer of power into the hands of the rich class, made richer due to the war and also the neo-rich class born of war-contracts. Well-known nationalist leaders were mostly behind bars. Those outside like Gandhiji, Bhulabhai Deora and Sarojini Naidu were the important witnesses to the process which had culminated over years to today's condition.

politics has come to be really the last resort of the scoundrels.

In disgust I joined my family profession of teaching. Starting with Rohtak Jail College and Meerut College, I could come to Holkar college again now as a professor of political science. My sub-conscious desire was fulfilled. For, I had always a feeling that I was wrongly treated by the police earlier when did not really take any active part in politics. It was like the return of the prodigal.

I started with a redoubled energy and devotion. The first reception I received was an invitation from the Police Training Institution, Brahma Swrup Bhattacharya, who once saw me out of Indore, called me to his college to address the cadets on the duties of police under the new set-up (independent India). I was simply thrilled. In summary I said, "The police should never bother as to who rules the country. They should only carry out the orders of the government." Administration should not be politicised, a cry often heard today from many quarters.

I joined the college on 1st July 1951. Prof. Padmanabhan who had once taught me physics in early thirties received me with a wide and affectionate smile, adding that my return to Indore from where I was once exiled shows that India had really achieved independence. L.C. Gupta was my host. Coincidentally, he was staying as a tenant in the house of Brahma Swrup Bhattacharya. I was almost in 'lion's own den', with the lion staying at the police training centre where he was the principal. As a Prof. of Political Science I immediately became the incharge of the student's union.

On the college reopening after Diwali holidays I was one day called to the principal's room. An order of the government was shown to me. I was to represent Madhya Bharat at the All India Political Science Conference at Hyderabad during the coming Christmas. I was elated. I had to read an academic paper which I did with proper preparation. Incidentally, I had an oral battle with a lady delegate from the host university. By a queer coincidence she and I both attended the American Seminar at Darjeeling in the summer vacations that followed. For the succeeding two years also I attended the All India Political Science Conference as the government nominee. It was at Muzaffarpur and Aligarh universities. These were occasions when I made many academic friends. Our mental horizon also widened. Pure academic gain, if any, can hardly be measured.

In summer 1952 I was deputed for a month to attend a U.S. Education Foundation Seminar at Darjeeling. There were 27 Indian professors, men and women, and 8 American professors who spoke on various aspects of American life. Each would speak for 60 minutes and we would ask questions for 120 minutes. Lunch, a sumptuous one, catering to a variety of Indian tastes, would be served. Thereafter we would be free to loiter about in the town and its neighbourhood. One day I went near the cottage of Ten Zingh Norkay, the first Indian

to conquer the Everest. Some of us became a little boastful. Some imitated the American professors thereby misguiding in their favour for a Full Bright Scholarship. Those days it was offered and not applied for.

On the other hand I always spoke critically about the various aspects of American life, particularly its foreign policy. Much to the surprise of the 'imitating monkeys', I was the only professor from India who was asked to speak on American foreign policy as 'average Indian' viewed it. I accepted the offer with a pun on the word average, adding that I considered myself above the average. It was conceded and I did pour out my mind and heart and was appreciated the most so by Dr. M.D. Palmer. I was offered the scholarship. Unfortunately, I could not avail myself of the opportunity because of some domestic problem. Another friend, meagrely acknowledged, Bina Prasad, presently our ambassador in Nepal, went to America and spent his years at the Jawahar Education University at Delhi on return.

By this time I had become quite active on the students' front and organised meetings of well-known guest speakers. There were some interesting experiences also. One day an M.Sc. Chemistry student, Pathak an RSS activist, came almost in a fighting mood. I asked him the cause of his excitement. Dr. Shyama Prasad Mukherji, with his Jana Sangh just established, had come to Indore. RSS boys had approached the principal for arranging a talk but found Prof. Padmanabhan a little hesitant. That was the cause of their ire, more so because a trade union leader, S.S. Minhas, and some not much educated congressmen had also come to the college to address the students.

I took up their cause and went to the principal, whose affection enjoyed right from my student days, explained and emphasized that the college union was an open forum for various points of view. Though convinced of my logic, he was still hesitant. As a compromise, he wanted me to preside over the function. I said that it would not look decent, more so because Dr. Mukherji was a close friend of my elder brother. We could not berate a great personality who would come to the college as a guest.

At long last he agreed and suggested a way out, so that Jana Sangh politics would not be the theme of the speech and the principal's position would not be embarrassed. He was to introduce the honoured guest as a great educationist and the son of a greater educationist. Dr. Asnutos Mukherji, Shyama Prasad Babu, a top lawyer by profession, began thus: "Mr. Prasad, have been introduced as a great educationist which I am not but my father certainly was. But take the hint all the same. I am expected to speak on education, not politics, shall certainly do so. But shall add only a small word before education and make it Indian Education." He began his harangue in an inimitable style with appropriate ups and downs of voice to make it very dramatic. And his



voice as always was thunder like. With the speech over we met for tea where the Chief Justice of M.B., P.K. Kaul made a significant remark: "Dr. Mukherji, you come of a family which has produced many legal luminaries. My only request is that you give up politics and enter the world of law. You will be a matchless lawyer. With every word that one could speak on RSS ideology uttered, I, as the Chief Justice, could not object to anyone."

The speech created such a sensation that other students became enthusiastic to invite well known personalities. Suresh Seth, the celebration secretary for the year, had many ideas. One of them was to install a bust of Gurudev Tagore and invite Dr. Radha Krishnan to unveil it. Also to invite some well known singers from Bombay to sing Tagore songs on the occasion. Radha Krishnan's response was ready and warm. Overjoyed, I conveyed it to Suresh from Delhi through a telegram. Over-excited the young secretary rushed to the press and got the news published in Indore Samachar.

This led to a very unexpected and unhappy development. One of those days had a gentleman who used to run a philosophic-cum-cultural organisation. He claimed to be monopolist of such activities. His ego was hurt when he found that Dr. Radha Krishnan would come to the college which would steal the lime-light. His mind started working in a dubious way. He approached the government and pointed out the impropriety, from the protocol point of view, of the Vice-President of accepting the invitation of a private individual, may be from a govt. college and for a noble purpose. His negative efforts succeeded. When everything was ready and the Bombay party almost starting, I received a telegram from the philosopher statesman of India that his programme to Indore was cancelled.

Singers, Anil Biswas, Hemant Kumar and others, came and sang Tagore's songs near the bust still not unveiled. The gathering was unprecedented and went wild with joy. The Bombay party came, sang and went away like Caesar's Veni, Vidi, Vici but my heart remained hurt for ever. Even now when I look at the uncared for bust in the garden in front of the Yeshwant Hall, I am reminded of the ugly incident and the intriguing minds behind it. I took a silent but determined decision, to get it unveiled by none close, may be after a lapse of time.

As a professor of politics I knew the rules of diplomacy and the demands of protocol. I extended a fresh invitation to the Vice President of India and routed it through the official channel. The government could not stop it. I sent a copy to Dr. Radha Krishnan. The government could not stop it either. On a visit to Delhi I orally explained to him the whole episode of the sabotage. He was visibly pained and agreed to perform the unveiling during the next visit to Indore. The bust remained 'veiled' till then. Months rolled by. And finally, Dr. Radha Krishnan did unveil the statue of a man whom he regarded

as his Guru. The book entitled 'Philosophy of Tagore' bears testimony to his profound knowledge of and respects for Rabindranath Tagore.

Leaders are not necessarily a misfortune. But, like misfortune, they come in a battalion. Dr. Mukherji, Dr. Radha Krishnan were followed by Vijaya Laxmi Pandit and Shaikh Abdullah. We almost got Pandit Nehru also but for a little misunderstanding. He of his time table at Indore which read: '7 to 7.30 p.m. Principal Holkar College' we thought that the time was at our disposal while he thought that the principal would meet him and he told me so.

Mrs. Pandit and the Sher-e-Kashmir drew a great gathering. The latter went on speaking impulsively, oblivious of the time. Our principal, Harijeewan Ghosh, was presiding. It was getting 7 and I was getting worried about his meeting with the Prime Minister. I asked to lady-in-white who knew her brother's temper well. She said, "meeting or no meeting, he must meet Bhaiya on time." One Ghosh left the chair under cover of darkness and the younger Ghosh, me, took it over. None observed the change. The meeting was over and my principal was on time with Panditji to discuss English literature, particularly Shakespeare. The Prime Minister was quite a match for the professor of English.

Let me turn to a different topic. I have always felt that our students should be better equipped in current affairs and general knowledge. An idea came to my mind that we should have some regular lectures on them. If made interesting, students will listen and will be benefited. Once a week, on Saturdays, we would assemble in the Yeshwant Hall, and four of us, all professors, would speak on some topics of current interest. It was soon discovered that we fell short of professor-speakers. We borrowed student talents. Ram Krishna Iyer (presently a top officer in I.L.C.) and Satish Kansal, (just retired as an IAS officer) were two of them. The programme was known as News and Views. Many told me later that it had helped them immensely at the time of P.S.C. interviews.

Very soon Prof. Padmanabhat became a member of the M.P. Public Service Commission (the present Chairman, S.L. Sharma, incidentally, was my student at Meerut College) was rewarded for my interest in general knowledge and was asked to set a paper on the subject at the P.S.C. Exam for the State Administrative Service. Some of those who passed through it reached the highest rung of the administrative level. R.C. Saxena (retired as Divl. Commissioner at Bhopal), S.C. Kansal, retired as the head of many all M.P. bodies, and Ranjit Singh Parmar (retired as the D.I.G. of Police, Sagor), R.K. Sharma, shifted to the I.A.S. soon.

I also had other types of activities in Indore. They were Study Circles and Symposia, mostly conducted at the Christian College and Y.M.C.A. I was always among the participants, though it became somewhat hackneyed. Others were

Mrs. Bryce, the then Principal of Christian College, Prof. Emberey and his wife of the same college, Dr. Rangam of Medical college, Rev. Grant of Y.M.C.A., Homi Daji, the communist leader. At times, G.L. Ojha, then an advocate, used to be with us. Recently (9th March) I met him in the Principal's room of the college. He has just retired as a judge of Supreme Court. Busy days, about three years in all, passed quickly. I can reasonably claim to have created a new spirit which many concede. At least, I think so and feel proud and happy.

At individual level also I had earned a name. When the All India Radio opened its Indore Station, I was consulted every stage. In English talk I was the first person to go on the AIR. I also arranged for many other talkers, including the world famous cricketer, C.K. Naydu.

The principal Medical College did me the unique honour of hoisting the national flag on the Independence Day. So did the principal of Daly college, Mr. Jack, on the Republic Day. The Rotary Club also used to invite me for occasional talks. I was remembered by almost all cultural organisations. I thought so and felt happy.

But happy days suddenly were cut short in a somewhat unhappy manner. It was the outcome of an ugly 'interlude'. I heard it from the 'mouth' of the concerned 'horse'. It was early July 1954. I had just returned that day from two months' vacation in Bombay. There was a big list of transfers. Prof. Chitale of Physics met me at the college gate and told me about it. I saw the list and was shocked. It was a bolt from the blue. I met the then Secy. of Education who personally knew me well. He assured that the transfer was purely temporary to accommodate some persons. One of them was his colleague. I could not be consulted because I was in Bombay. I was assured that it was only for 2-3 months. I came back somewhat consoled. 3 months passed almost unnoticed. Three months became a life long exile.

I kept my family at Indore and used to daily commute by bus to Ujjain and back, a distance of 84 miles. Tongues began to wag and I came to know many unpalatable things behind the apparently innocuous routine transfer. There were persons not happy with me and my activities and the position I had earned in a short span of time. They tried and succeeded in getting me displaced from Indore. But my contact with the city continued. I used to go to Ujjain only for my class lectures. For other activities Indore was still my home. To put it differently though Ujjain was my official home for a few hours on a working day, my mind and heart were still at a place which I wanted to make my late life home. I had built a house with borrowed money. But destiny willed it otherwise. I am permanently in Bombay. Out of evil came a good. English is still the language of the elitist society there. I am easily accepted every where.



Flight Lieutenant (Later on Squadron Leader) - Parminder Paul Singh, Kwatra, was a student of our college in sixties. During operations against Pakistan in Dec' 1971 he was awarded 'Veer chakra' for displaying gallantry, professional skill and devotion to duty of a high order.







उनकी बाणी में फिर धार आई और एक बार फिर शेरशाह सूरी का साम्राज्य बना में छा गया मिस शास्त्री की आवाज के अतिरिक्त केवल भा और पतित की सरसराहट ही सुनाई दे रही थी बाकी सब कुछ शांत

कीर्ति और शेफाली के पेन भी चल रहे थे, पर उनके नोट्स में शेरशाह का नाम कहीं भी नहीं था वे पास-पास बैठी दोनों लिखित बार्तालाप कर रही थी जिसका रूप कुछ इस प्रकार का था

“तुम्हारे नोट्स तो भ्रम देखा है?”  
“रोज देखती है”  
“काले कौए के मुकाबले में उसकी आवाज कैसी लगती है?”  
“काला की आवाज तो फिर भी सुर में कौए-कौए करता है”  
“दस्तर की पड़ी को क्या हो गया! कहीं हाटफेल तो नहीं हो गया उसका?”

नहीं, वह टीपू सुल्तान की मय्यत में गई है”

अपनी धुन में इतनी मगन थी दोनों कि पता ही नहीं चला कब लेक्चर समाप्त हुआ जब लड़कियों ने अपनी कॉपिया बंद कर दी, उन दोनों के पेन सर्राटे से चल रहे थे बड़ी देर बाद उन्हें होस आया, देखा, सारी कक्षा की आँखें उन्हीं पर केंद्रित हैं हड़-बड़ाहट के साथ उन्होंने अपनी कॉपिया बंद की और आँख उठाकर देखा, सामने अपनी कुर्सी पर बैठी मिस शास्त्री मुस्कुरा रही थी

“सुनो भाई, मैं जरा देखना चाहती हूँ, तुम लोग नोट्स कैसे लेती हो?” आज काथियाँ ले जाऊँगी कल लेती आऊँगी कल तो पीरियड है ही बचना, जरा इकट्ठा करना भाई” और वे उसी तरह मुस्कुराते हुए कक्षा से बाहर निकल गई घंटे की प्रतीक्षा नहीं की

दूसरे दिन इतिहास के पीरियड में दोनों बहुत शान से दाखिल हुई मिस शास्त्री का उन्होंने खूब फकाया था शेफाली ने कापी में से कागज फाड़ दिया और कीर्ति ने तो कापी दी ही नहीं थी, अपनी शरारत का लिखित प्रमाण देने में तुक ही क्या थी

मिस शास्त्री ने आते ही सारी काथियाँ वदना को समलवा दी रोलकोल लिया और फिर सहज भाव से परी खोलने लगी बोली “पता है न भाई कल गाय कैसी आधी आई थी मैं उस समय तुम लोगों की काथियाँ देख रही थी सारे कमरे में काथियाँ बिखर गईं उन्हें तो किसी तरह समेट लिया, पर ये अलम-गलम सामान जो निकला, उनके नालिकों को पहचानना मुश्किल हो गया वह रहा ए एक स्वेटर का नमूना जिस किसी का हो हा, मैं इसे उठाकर ही लौटाऊँगी ये लड़की की रसीद-दिमला सुकला की है व पोस्टकार्ड-सुरक्षा, तुम्हारा है? याद से पोस्ट कर देना यह एक नाम लिखा हुआ है” भाई मैं भी कासे कर्तु पीर अपने जिया की”

रीता सबसेना ने उठकर हाथ बढ़ा दिया गाने का कागज उसे बगलें हुए वह बोली “बहुत प्यारा गीत है ठीक से याद करके आना तो एक दिन, सुनेंगे और यह खत फिरका है भाई! जन्मदिन की बधाई है शास्त्री”  
एक नीला नोट पेपर उनकी अग्रिमियों में झूल रहा था सारी कक्षा में हँसी हुई थी

“अरे, इराका यात्रिस कोई नहीं है! देखो इस पर नाम तो नहीं है, पर यह इस तरह शुरू होता है”

एकएक शेफाली उठ खड़ी हुई “मिस, यह मेरी चिट्ठी है”  
“तुम्हारी? किसने लिखी है तुम्हें?”

शेफाली कानों तक लाल हो आई, पर कीर्ति ने उसे उबार लिया वह हमेशा की तरह लनकर खड़ी हो गई और बोली “यह खत मैंने लिखा है मिस! कोई एतराज?”

उसका स्वर आक्रामक था, पर मिस शास्त्री उसी स्वाभाविक शांत स्वर में बोली, “अगर तुमने लिखा है, तब तो कोई एतराज नहीं है, मैं तो यही सोचकर परेशान हो रही थी कि यह चवथी छाप शायर किसके पल्ले पड़ गया है रियली आय वंडर! कीर्ति, ये कोटेशन कहीं से बटोर लाई तुम?”

“मिस, शायद आपको किसी ने अब तक यह नहीं सिखाया कि दूसरों के पत्र पढ़ना असम्भ्यता है एटीकेट्स के विरुद्ध है” कीर्ति की इस स्पष्टीक्ति से सारी क्लास स्तब्ध रह गई, पर मिस शास्त्री जरा भी विचलित नहीं हुई बोली “जो कुछ बचपन में नहीं सीख पाई अब तुम लोगों से सीख लूँगी चिंता मत करो, पर एक बारत याद रखो, तुम लोगों के, अपनी छात्राओं के, पत्र पढ़ने का मुझे पूरा अधिकार है जतना ही जितना तुम्हारी मम्मी को है तुम्हारे माता-पिता तुम्हें यहाँ सिर्फ पढ़ने के लिये नहीं भेजते यह काम तो घर पर भी हो सकता है ये लोग इतना खर्च उठाकर तुम्हें और भी कुछ सीखने-समझने के लिए, भेजते हैं तुम्हारी मानसिक गठन के लिये, आधार-व्यवहार के लिए, संस्कारों के लिए हम लोग भी अपने ही उत्तरदायी हैं - इसीलिए औपचारिकताओं के ये नियम हमारे साथ लाए नहीं होते”

उनके इस स्पष्ट और निर्भीक उत्तर से कक्षा एकदम शांत हो गई थी कीर्ति भी फूला हुआ मुँह लेकर नीचे बैठ गई थी मिस शास्त्री ने शांत स्वर में आगे कहा “देखो कीर्ति, हम जो पढ़ते हैं, जो लिखते हैं, जो बोलते हैं, उसने हमारे संस्कार परिलक्षित होते हैं इस बात को कभी मत भूलना”

घंटे की कर्कश आवाज में उनकी बाकी बात दूब गई उनके चले जाने के बाद भी उनकी मुक-गंभीर दायी छात्राओं के कानों में गूँज रही थी केवल कीर्ति गुप्ते से उफन रही थी “चवथी छाप” शायद का खिताब उसे बहुत अपमानित कर गया था अपने अपमान की आज शांत करने के लिए उसने मेज पर पड़ी चिट्ठी के क्लास में उछाल दी “ले पढ़ो इसे बताओ तो जरा इसमें तुम्हारा आंक-कानिबानन क्या है?”

टीपू सुल्तान को कभी-कभी ताव आ ही जाता है” सरिता बोली

मैं बताऊँ यह शेर-शास्त्री उनके पल्ले नहीं पड़ी होगी गई मुँद उखाड़ने का धधा है बेचारी का” बीना ने सहजभूति प्रकट की

अरे, ये तो समझी होगी, किसी बाँध - फ्रेड का खत है बेचारी डाँटने में तुम्हारा क्या भी भौंती ने सरस मजा फेंककरा कर दिया” यह आवाज यासमोन की थी

प्रश्ना होता जो मैं कह देती कि बदर के दोस्त का पत्र है” शेफाली

बोली

“अब आपकी जवान खुली है उस समय तो ताले पड़ गये थे सब कह देती तो बड़ा मजा आता” कीर्ति ने हस्रत भरे अंदाज में कहा

“ये लोग जो मिस रह जाती हैं न, धैर्य के नाम से ही चिढ़ने लगती हैं मेरी कुछ बुआ हैं, उनका भी यही हाल है” शिमला ने जानकारी दी

“इन बेचारी को कोई मिला ही न होगा” चिंता को करुणा हो आई

अरे मिन भी जगता तो दूसरे ही दिन भागता नजर भाता इस मोटार गन के सामने कोई टिक सकता है भला?” कीर्ति बोली

“नहीं रे, यह बात नहीं है” वदना के सहजभूतिपूर्ण तार नेराबको चीका दिया, “पता है, अपने माँ-बाप की अकेली लड़की है भाई भी नहीं है परेंट्स इतने बूढ़े हैं पिताजी के तो एक हाथ भी भी नहीं है इसी से शायद शादी नहीं की है अभी तक”

तभी तो अपनी परिस्थिति का गुबार हम पर उतारती है” शेफाली ने अनुस्वर कहा

अगले हफ्ते जब शास्त्री का पीरियड आया, तब लड़कियों ने बोर्ड पर यह जुमला देखा

हाथ सम्बरका! नूने पी ली नहीं  
दूरार दिन  
“घोषी पढ़-पढ़ जग मुआ, पंडित मया न कोय,  
दाई अक्षर पैम का, पढ़े सो पंडित होय”  
फिर एक दिन  
“काजीजी दुबले क्यों? शहर के अंदरों से”  
अगली बार  
“इस भरी दुनिया में, कोई भी हमारा न हुआ”

मतलब यह कि शेफाली हर बार कुछ अच्छा-सा सोचकर आती और कीर्ति अपने खूबसूरत अक्षरों में उसे बोर्ड पर उतार देती साथ वाली लड़कियों को भी इसमें मजा आने लगा हर बार उत्सुकता बनी रहती कि इस बार क्या लिखा जायेगा ये स्वयं भी कोई अच्छा-सा शेर सुझाय के तौर पर त आती

फिन्तु फिर भी खल जम नहीं रहा था जिनके लिए इतनी माया-पक्वों की जा रही थी उन पर इराका जई प्रभाव नहीं पड़ रहा था वे उसी सहज भाव से कक्षा में आती, रोलकोल लेतीं और लेक्चर शुरू कर देतीं अगर कोई मानसिक बाना होता तो डस्टर उठाकर निर्लिस भाव से बोर्ड साफ कर देती और शुरू हो जाती उनके घेरे की रेखाओं में कोई परिवर्तन नहीं आता

धीरे-धीरे इस गाररती जोड़ी का जोश ठंडा पड़ घला एकपक्षीय नोक-झोंक भला कहीं तक चलती! फिर जैसे-तैसे परीक्षाएँ निकट आती जा रही थी वातावरण अपने-आप गंभीर हो चला था पढ़ाई का मूल सबके लिए पर





[illegible][illegible]

在...  
...  
...

1. The first part of the document discusses the importance of maintaining accurate records of all transactions, both incoming and outgoing, to ensure transparency and accountability. It emphasizes the need for regular audits and the implementation of robust internal controls to prevent fraud and mismanagement.

संख्या १०८३ दिनांक २७/५/६९ को संलग्न है।

यहाँ हम भारत के ले लिया है। अभी तो उसका पक्ष यहाँ से निकल

आपकी तो बहुत परेशानी होती होगी फिर

है, थोड़ी-बहुत तो होती है पर इतना भी न किया तो दोस्ती किस काम की दरअसल उसने जो त्याग किया है, कर रही है उसकी तुलना मे इनारे परशुराम की ही किन्ती बस, प्रपू के लिए थोड़ी थिता होती है उसे कभी छोड़ा नहीं है मैं और यह उल्टे-कहते गिसेज वर्मा का स्वयं दोहा कविप रागया

मैडम: 'सबने देखा - किसी हमेशा की तरह तनकर खड़ी हो गई है 'मैडम, घर पर तो मेरे दादाजी हैं, उनका सारा काम मैं करती हूँ। तुम लोगों की सेवा टाहल का मुझे अच्छा अनुभव है। आप आइए तो मैं आपका हाथ बँटाने आ जाऊँ कहीं?'

“तुम!” विस्मय से मिसोज वहां बंने आंखें फैल गई

“जहाँ हज़ी है मेड़म! तब आप पच्चीस को भी साथ रख सकेंगी और काम भी आसानी से होता रहेगा। प्लीज मेड़म-लेट मी दू दिग नथ” उसने स्वर की आदतों से तब बयित था।

और शंकाही अपने-आप पर भुलभुला रही थी कि ऐन वक्त पर उस सौध क्यों सूँप जाता है जब भी कोई कहने लायक बात होती है, केशि माजी नार लै जाती है।

साहबों - स्मरण है कि हमारे अनुभवों को उन्होंने कबूतरी हार धोखा  
माफ़ीरी जोशी ने अपना मे मोत र्मे भेजा जिसे हमने १९२५-२५  
कोषिक के कवि सम्मेलन में चुनाव था. यह डॉ शिवमन्त सिंह 'मुमुक्षु'  
ने उन्हें माफ़ा था कि कथा का लम्पन २० वर्ष पुरानी कथा को  
रामको वे सहस्रो हार माफ़ीरी जी ने लिखा. "हम बीरा तो इतिहास  
की बीज बन गयीं और पीता हाजिर है. मैंने जानबूझ कर इसे अपने पु  
नाम के अन्तर्गत छपा है. क्योंकि बीरा जी - सम्पदा तो माफ़ीरी  
को ही है हाजि. माफ़ीरी जोशी सिर्फ़ मद्यकार है"]

मैं भीरा मरवाली सी हूँ,  
तुम मेरे मनमोहन, पियातम

विश्व ही सत्य वास्तवों ने  
मेरे पास बुलावे भेजे  
मैं अपना ही पथ चलती हूँ  
मन में भोली प्रीत साहजे

इस अचहेत्या से सब लठे  
साथी और सनेही छुटे

पर मैं आकर द्वार तुम्हारे  
तुं अब कौन निमन्त्रण प्रियतमा

मेरे हित इस निर्भय जग में  
नित शूलों की सेंज बिछाई  
शत शत पापों में छनकोई हूँ  
मेरे भावों की अरुणाई

पीर लियो भी हिसाती हूँ मैं  
अलबेली दुक नस्ती हूँ मैं

म गीतों की रानी गुलामपर  
कैसा सीले निजबन धियराम।

बीमा स्वयंभू के नूपुर ललक  
नाथ रही मन के मंदिर में  
माताओं का घर, माताओं के  
दिया जग में मेरे कर में

मैंने यह शिक्षण-न किया है  
 फिर भी अमल मान किया है

छोड़ जागर की लाज बनी है  
 धन की ही नीयत दिखता  
 हमारे मनोबल

## SOME REMEMBRANCES

ARUN DATE

think my great grandfather who went to Indore from Konkan while he was 7 to 8 years' old because of extreme poverty in Konkan and after he had heard about the then Indore Maharaja's goodness in sheltering young boys, looking after them and providing for their education, this period should be somewhere near 1875. My great grandfather after educating himself and entering the legal department of the Holkar State, finally became the High Court Judge. I am sure he must have completed the final years of his education in the recently started Holkar College at that time. After that, my grandfather and father were educated in the same Holkar College and then it was me in the year 1952. So, four generations of my family have spent their youth at this beautiful and wonderful college. I, therefore, do not have only my single attachment to this college but in my case, an ancestral attachment.

I remember the day I entered the college for the first time a little nervous and expecting some rigging from the older students but actually nothing happened. The college was quite modern as compared to today's standard. It had a tennis court, badminton hall, cricket, football and hockey grounds, gymnasium and also a swimming pool, apart from different buildings for the Science, Arts and Commerce students in the same compound. There was also a good canteen giving excellent *macha bathi* and *samosas*. Even the Sindh owner of the canteen had almost become a collegian and a friend to everybody and allowed to take things on credit to most of us.

Of course, the atmosphere in the college was very much disciplined and we all had respect and regard for our teachers, who were also very worthy of the same. Principal Padmanaban, Principal Ghosh and Principal Bhagwat were the three principals who changed hands at that time.

Apart from being the Badminton Captain of the College, I was included in the Cricket and Table Tennis teams. We had to cycle down to the College from our respective homes which were about 8 to 10 kms away during the days of exams, sports or annual functions, we had to make two trips to the college but these were extremely enjoyable as a lot of friends used to pedal down together and the roads were open and free of traffic jams, etc. There was almost no possibility of coming or going back with the girls as the stern, watchful eyes of the principal and professors were on the move all the time. Looking to today's college days, I feel I should have been born 25 to 30 years later to enjoy this freedom.



Anun Date is the most popular Marathi light music singer of our time. He sings Hindi ghazals and Urdu ghazals with equal ease. He has several musical cassettes to his credit. A textile technocrat turned into singer, Anun Date vividly recalls his student days at Mohlar College where he represented the fourth generation of his family.

My educational and musical foundations were built at this College. I used to sing at some of the college functions and my music practices started in one of the small tutorial classes where my friends used to encourage me and also used the benches as drums to give me support. I cannot forget how big a role this college had played for my future and I will always be indebted to the time, spirit and togetherness of all, for what I am today. Though after having gone for further education and furthering my music career to Bombay, the memories of Indore and Holkar College are all the time there and therefore, unless I visit Indore twice a year atleast, I feel completely lost. Even after so many years when I have spent much more time in Bombay than Indore, coming to Indore and Holkar College, is like coming back home.





भूख लग रही थी' वह धिल्लाया  
'मेरे बाप का माल था'

वह चुप खड़ा था। पड़े उसकी लात-पूँसों से पूजा करने लगे, यह जोर-जोर से चीख रहा और घुंटे सिर का छोटा-सा लड़का आश्चर्य से इस मार-पीट की ओर देख रहा था।

ई सोचने लगा कि आखिर ये घरम के देवदार, पड़े और पुजारी मनुष्य की भूख से बड़ा नदी के पानी को क्यों समझते हैं? कि वे जहाँ अन्न को बहा सकते हैं, मिखारी धिल्लाते रहें और नदी की राह में तन तोड़ दें और झर मनों की आवाज निकलती रहें।

मैंने धूना से मुँह फेर लिया। पचरीले घाटों के रास्ते को मैं पार करने लगा। एक पड़े ने मुझे आवाज देकर कहा - 'बाबूजी, नाना नहीं करोगे?'

परा नहीं है। मैंने पलट कर कहा  
अपरे परो की क्या बात है?'

'उसके बिना पुण्य बोधे ही लगता है।' मैं हँसकर बोला और आगे बढ़ गया।

घाट खाली हो रहे थे। सूरज काकी ऊपर चढ़ चुका था। उजाले में हर चीज साफ नजर आ रही थी - पानी की काँई, घाट के पड़ों के घुंटे सिर और घरम के पेटों में टपी हुंतानिया और पाप का नंगा रूप। इसी नदी में नालता हुआ - इन्हीं लहरों में उछलता हुआ इसी घाट पर चढ़न लगाये नजर आ रहा था।

दाहिने हाथ की ओर नदी की लहरें उठ गिर रही थीं। बाएँ हाथ की धर्मशालाओं का सफेद पीला रंग किसी रंग की तरह मयानक नजर आ रहा था। इस को घेरता मैं तेजी से चल रहा था। घरम में दूधे घाट पीछे छूट गये थे। अब माछक टका पन और पवित्र मीन सब और खिंचा हुआ था। खोखरे के हरे गोल पत्ते पड़े जैसे हिल रहे थे और घाँस के साथ नन्हें फूल भी झूम रहे थे। सामने कोलार की तरह काले और गठे हुए बटन के युवक और युवतियों का समूह नजर आ रहा था। जो भी उनकी तीखी-मीठी

विधि बोलती समझ में नहीं आती थी पर बड़ी प्यारी लगती थी, उनके हाथों में और पास धरती पर मछली से मरी टोकरियाँ नजर आ रही थीं। किनारे पर पड़ी मछलियों को छोटे बच्चे उठा कर लाते जा रहे थे और टोकरियों में जमा कर रहे थे। मुझ अजनबी को आते देख वे सब चुप हो गये, 'मछली मीनता बाबूजी।' एक युवती ने पूछा, 'नहीं मछली नहीं मीनता।' मैंने कहा।

मैं चढ़ान पर बैठ गया। नाव पर जाल लेकर खड़ा मछुआ सूरती आवाज में गा रहा था, नदी की लहरें उसके साथ गा रही थीं और उसकी आवाज पीपल के पत्तों की तालियों में खी जाती थी।

मुझे यह सब बड़ा अच्छा लग रहा था। न यहाँ धिलाओं के पास का मीन स्वास्थ था और न घाटों जैसी पण्डों की लूट थी। यहाँ इन खुशनुमा लहरों के पास वाले वातावरण में केवल ज़िंदगी की मुस्कुराहट और एसीसे से सीधे गीत थे। उनके बदन की चमक में मनुष्यता चमकती थी। यह और घाट के पड़ों - मैं सोच रहा था - वे पानी में इंसान के जुबकी मरने पर पीसा कमाते हैं और नगवान का नाम लेते हैं और वे मौजनु देते हैं नदियों की लहरों पर मुस्कुराते हुए।

एक सौलवा जवान लड़का मेरे पास आया, 'बाबू दो आने लगे, नम पर संर करोगे?'

'तू बलायगा नाव?' मैंने पूछा 'हाँ' - वह गर्व से बोला।

वह जानता था कि उसके गर्व में इस युग की कमजोर व्यवस्था फिर सुकाये खड़ी थी।

'घल' मैंने उसके कंधे पर हाथ रख दिया और हम उठती-गिरती लहरों की ओर चल दिये। इकरी मेरे बदन को छेने लगी।

पेरेशूत से बहल अब सूरज के निकट आ गये थे और आकाश मल्लखों की नीली यदी-सा था। नदी के इस तीसरे टुकड़े की लहरें हमारी नाव के कटती चली जा रही थीं - और कटती चली जा रही थीं। □□

## एक सर्वमंगल क्षिप्रा

- हरी विष्णु मोटे

१९२९ साली भी होकर काँलेज्वा दुसरा वर्षी प्रवेश केला। या कॉलेज्वा मुद्र परिसर, लखनौ देवी जालहले मित्र, कॉलेज्वा वॉकिंग मॉडलिंग व डिक्ट या भावा कॉलेज्वा भी कॉलेज्वा बाजलाच स्पति

डिक्ट या होट भी हावरकुनवर् अमलापाम्ज अंकेत होले या अंकेत माझी प्रवाही बरी होली कॉलेज्वा अमलापाम्ज भी डिक्टपर अणिक लक्ष केंद्रित केले व बरीव मेकलत ही केली माझा बंठ बराह सुधारला मला काँलेज्वा टोपमर् प्रवेश ही विद्याला कॉलेज्वा के भी काँले वीरसमपरी अंकेत।

माझा अंकेतन तभी कपटकी कलली माझी भावा डिक्टपरमर्मा द भी प्रायोजित बंदसामन मण्जुल संकलनमात्र जाई डिक्टसमीर टोप तास बेलुजही माझा एवा टरा-परापेशा अणिक होत बसता माझा अंकेतनी ही विक्ट वृत्ती अंकेतना तलेच सरकायला परंत होली त्वासंबी त्वाजी तंकार अलली

काँलेज्वापील एकुण संर वातावरण प्रसन्न होत काँलेज्वा कललीट व तैवील शिक्षण वातावरणता माझी काँलेज्वापील वल्ले वही वांगला वागमूनीन जियुन जेने भी वीन प्रमोनीन मुद्रवा कपटकी हुंकावज पाह लावला

## डॉ. वासुदेव अनन्त सुखटनकर - 'अण्णा'

'अण्णा' सुखटनकर का जन्म १८७३ में कोल्हापुर के एक गाँव में हुआ था। उनकी प्रारंभिक शिक्षा वहीं गाँव के स्कूलों में हुई। उच्च शिक्षा उन्होंने कोल्हापुर और पूना में प्राप्त की। यहीं वे गोपाल कृष्ण गोखले, रानाडे तथा रामकृष्ण भण्डारकर से प्रभावित हुए और लगभग इसी समय वे ब्रह्म समाज के प्रति भी आकर्षित हुए - जिससे वे जीवन भर समर्पित भाव से जुड़े रहे, उन्होंने ऑक्सफोर्ड के मेनचेस्टर कॉलेज में Comparative Religion का उच्च अध्ययन किया और जर्मनी के बोन विश्वविद्यालय से रामानुजाचार्य के विशिष्टाद्वैत धर्म पर लिखे हुए अपने शोध-प्रबंध पर पी एच डी की उपाधि प्राप्त की। स्वदेश लौटने पर उन्होंने ब्रह्म-धर्म प्रचारक के रूप में कार्य किया। प्रारंभ से ही वे सामाजिक पुनरुत्थान के कार्यों के प्रति प्रतिबद्ध थे, कुछ समय तक लाहौर के दयालसिंह कॉलेज में अध्यापन कार्य करने के उपरान्त वे महाराजा तुकोजीराव के आश्रम पर इन्दौर आये स्त्री-शिक्षा के लिये प्रारंभ हुए चन्द्रावती विद्यालय और अहिल्याश्रम की पूरी जिम्मेदारी उन्होंने संभाल ली-

पण पुढे इंदूर येथे अहल्याश्रमाची स्थापना झाली तेव्हा ते आश्रमाचे प्रमुख म्हणून आले आणि त्यांनी आश्रमात पक्का पाया घातून दिला.

- साठवणी रा मि जोशी

यहीं से वे होलकर कॉलेज में प्राचार्य के रूप में आये यद्यपि कॉलेज में उन्होंने केवल १६ २ १९२२ से १९०१-१९२४ तक की अवधि में ही कार्य



किया परंतु उनकी साप्ताहिक उपस्थिति आज भी इस परिसर को अनुप्राणित किये हुए है। अपनी आध्यात्मिक रुचियों, तात्त्विक ज्ञान एवं सामाजिक उत्थान के लिये अपनी प्रतिबद्धता के कारण वे आज भी हम सबके लिये स्मरणीय हैं, क्यों कि-

चंदन वगैरे वाणि उष्यल अथ वाइरशी  
पेटों गंधजावाळं सील गंधो मधुपरो

- धम्मपद

अर्थात् - चंदन, तगर, उत्पल या वार्षिकी अर्थात् बेला, चमेली सुगंधित हैं, परंतु इनकी गंध से भी बढ़कर अनुत्तर गंध है सील की।

१९२४ में वे Director of Schools नियुक्त किये गये। इस पद पर उन्होंने लगभग ६ वर्षों तक कार्य किया। इस अवधि में ग्रामीण क्षेत्रों में स्कूलों की स्थापना के अपने मुख्य-लक्ष्य की पूर्ति के लिये उन्होंने अथक परिश्रम किया। बैलागुडी से यात्रा करते हुए, गाँव के मंदिरों में रात्रि-विश्राम के समय या गाँव-वासियों से अपनी लम्बी वार्त्ताओं का साथ-ग्रामीण परिस्थितियों से उनका परिचय बढ़ता गया। १९३० में सेवा निवृत्ति के बाद वे पाताल पानी स्थित अपने शांति कुंज से गाँव वालों के लिये (विशेषकर मीलों के लिये), ब्रह्म समाज के लिये तथा इन्दौर में सहकारी आंदोलन के लिये कार्य करते रहे।

धर्मानन्द कोशाम्बी से उनकी अंतरंग मित्रता थी और उनके साथ अण्णा ने बौद्ध धर्म का गहन अध्ययन किया था। १९४९ के लगभग वे इन्दौर





[illegible]

And in my opinion, a sine qua non of improvement in our Hostels is not merely in providing more buildings, but in enabling the students and professors to live together. Only thus can there be made possible once again the real personal influence of the teacher upon the pupil which was a unique feature of the Indian Universities of older times. Whatever else may have been lost, this is a feature of the old system which we cannot and must not lose, and if lost, we must restore it in our present system, else it is not worthy the name of education.

- College Annual Report - 1924

北

"If we can enlarge the Hostels and more particularly if we can erect the extended Hostels according to the plans I have submitted on what I have called the "ashrama" system, in which one or more members of the staff lives in a bungalow with not more than fifteen or twenty students in his care, I am convinced from experience of this system in other parts of India and Ceylon, that we shall soon see very striking results."

- College Annual Report - 1925

वे बहुत कम समय के हिस्से कॉलेज में थे, यदि वे कुछ अधिक वर्षों तक वहीं रहने से निवृत्ति हो। अपने पिताजी और योजनाओं को पूर्ण करने पर तो फर्क पड़ने का समय में भी उन्होंने कॉलेज के विकास की जो सुझाव प्रस्तुत की है - उसने खाने वाले कई वर्षों तक - हमारी शैक्षिक यात्रा को प्रभावित किया।

डॉ. प्रफुल्लचन्द्र बसु

डॉ. प्रमोदचन्द बसु - का जन्म २१ जून, १८९० को हुआ था उनके पिता श्री अश्विनी कुमार बसु मन्त्रालय (बंगाल - बंगला देश) में बकायत

[illegible][illegible]

*(Faint handwritten notes at the bottom of the page)*

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥  
 ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥  
 ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥  
 ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥  
 ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥  
 ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

1. *Chlorophyll* is the green pigment found in plants which helps in the process of photosynthesis. It is located in the chloroplasts of plant cells.

[illegible]

A handwritten musical score for the song 'The Rose Tree'. The score is written on four staves. The first staff is the melody, and the subsequent three staves are for accompaniment. The notation is in a cursive, handwritten style. The lyrics 'The Rose Tree' are written below the first staff. The score is a single system, meaning it is intended to be played continuously without a break. The handwriting is in dark ink on aged, slightly yellowed paper. The staves are hand-drawn, and the notes are clearly visible. The overall appearance is that of a personal or working manuscript.

*[The page contains faint, illegible horizontal lines, likely bleed-through from the reverse side.]*

7. The 200 Asian Post

1. 在 1945 年 10 月 25 日，日本投降後，中華民國政府接收台灣，開始了對台灣的教育改革。

此項工程，係由本局委託設計，現已設計完竣，即將開工，其工程費，由本局撥充，不在此項經費內。



प्रो. एच.बी. रिचर्डसन

[illegible]

हैं। कबु कि कब के मतलब है। होकर कौन के छान उन्हें विपुल  
जगत् में छानने के उनके तबान का एक तबान जोड़ने की विपुल सामाजिक  
काम से जहाँ। इस पक्ष की की वही दुनियाँ अपने जीवन कार्यक्रम  
का प्रथम कदम उठाए की विपुल। जो अपने को सामाजिक काम  
में लगे हैं - वे एक प्रथम कदम उठाए सामाजिक में लगे हैं।  
की दुनियाँ आज के युग में जहाँ की तबान में लगे हैं।

[illegible][illegible]

A musical score for the song 'The Rose Tree'. It features a vocal line and a piano accompaniment. The vocal line is written in a single staff with a treble clef and a key signature of one flat (B-flat). The piano accompaniment consists of two staves: the right hand in a treble clef and the left hand in a bass clef. The music is in 4/4 time. The lyrics are written below the vocal line.

一、二、三、四、五、六、七、八、九、十、十一、十二、十三、十四、十五、十六、十七、十八、十九、二十、二十一、二十二、二十三、二十四、二十五、二十六、二十七、二十八、二十九、三十、三十一、三十二、三十三、三十四、三十五、三十六、三十七、三十八、三十九、四十、四十一、四十二、四十三、四十四、四十五、四十六、四十七、四十八、四十九、五十、五十一、五十二、五十三、五十四、五十五、五十六、五十七、五十八、五十九、六十、六十一、六十二、六十三、六十四、六十五、六十六、六十七、六十八、六十九、七十、七十一、七十二、七十三、七十四、七十五、七十六、七十七、七十八、七十九、八十、八十一、八十二、八十三、八十四、八十五、八十六、八十七、八十八、八十九、九十、九十一、九十二、九十三、九十四、九十五、九十六、九十七、九十八、九十九、一百。

*[Faint handwritten notes or bleed-through from the reverse side of the page.]*

प्रभाकर ऊजवले - सोबत - ११.३

$\frac{1}{2} \times \frac{1}{2} = \frac{1}{4}$

[illegible][illegible]
$$1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 10, 11, 12, 13, 14, 15, 16, 17, 18, 19, 20, 21, 22, 23, 24, 25, 26, 27, 28, 29, 30, 31, 32, 33, 34, 35, 36, 37, 38, 39, 40, 41, 42, 43, 44, 45, 46, 47, 48, 49, 50, 51, 52, 53, 54, 55, 56, 57, 58, 59, 60, 61, 62, 63, 64, 65, 66, 67, 68, 69, 70, 71, 72, 73, 74, 75, 76, 77, 78, 79, 80, 81, 82, 83, 84, 85, 86, 87, 88, 89, 90, 91, 92, 93, 94, 95, 96, 97, 98, 99, 100$$

प्रो. जे.बी. राजू

1. The first part of the text discusses the importance of the
 2. second part of the text discusses the importance of the
 3. third part of the text discusses the importance of the
 4. fourth part of the text discusses the importance of the
 5. fifth part of the text discusses the importance of the

[illegible]

१९९९ से १९३५ तक वे भारतीय शिक्षा सेवा (आई डी एस) में थे और उन्होंने तत्कालीन सेण्ट्रल प्राविन्स के कई स्थानों पर महत्वपूर्ण पदों पर कार्य किया। अपने कार्यों की सफल व्यवस्था के बावजूद भी वे मौलिक लेखन के लिये समय निकाल लेते थे। उनकी कुछ प्रसिद्ध पुस्तकों के नाम हैं -

- The Ethics of Punishment
- A Critical Review of the Philosophy of Rabindra Nath Tagore
- A Critical Study of Non co-operative Movement in India.
- Graded Autonomy for India

सेवा-निवृत्ति के बाद वे दिल्ली के सेंट स्टीफेंस कॉलेज में दर्शनशास्त्र के विभागाध्यक्ष के रूप में कार्य करने के लिये आमंत्रित किये गये। H.B Richardson उस समय वहीं अंग्रेजी के व्याख्याता के रूप में कार्य कर रहे थे। शीघ्र ही श्री रिचर्डसन-होलकर कॉलेज के प्राचार्य बने और उसके दो वर्ष बाद ही उनके उत्तराधिकारी के रूप में प्रो. राजू इन्द्री आये।

भारत की सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक, एवं राजनीतिक समस्याओं के प्रति श्री राजू की गहरी रुचि थी। अनेक वैचारिक सणों के माध्यम से वे उन्हें उठाया करते थे। श्री रिचर्डसन के साथ मिलकर उन्होंने 'Delhi Adult Education Society' की स्थापना की जो बाद में 'Indian Adult Education Society' के नाम से प्रसिद्ध हुई। प्रो. राजू ने प्रौढ शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया और भारत में प्रौढ शिक्षा के आंदोलन का प्राणमण्डल इतिहास 'Indian Adult Education Handbook' के माध्यम से उपलब्ध कराया। १९३८ में प्रकाशित इस पुस्तक के सम्पादक रिचर्डसन थे।

१९३९ में उन्हें बम्बई के खालसा कॉलेज को पुनर्व्यवस्थित करने के लिये विशेष रूप से आमंत्रित किया गया। उनके प्रयत्नों से दो ही वर्षों में इस संस्था में अपने पुराने गौरव को प्राप्त कर लिया। १९४१ में होलकर कॉलेज के जुबली-समारोह में श्री राजू विशेष वक्ता थे। उसके एक वर्ष पश्चात् ही वे इस कॉलेज में प्राचार्य के रूप में आये। कॉलेज से अपनी सेवा-निवृत्ति के बाद कुछ समय तक वे इन्दौर में ही रहे। इसके बाद उनके बारे में कोई जानकारी उपलब्ध नहीं हो सकी। इन्दौर से जाने के बाद उन्होंने मोपल के नवाब और फिर हैदराबाद के निजाम के सलाहकार के रूप में भी कार्य किया। वे जब इस कॉलेज में आये उस समय उनकी आयु लगभग ६० वर्ष की थी। जीवन की विस्मयितो एवं पारिवारिक त्रासदियों ने उन्हें शिथिल कर दिया था। उनमें पहले जैसी प्रखरता नहीं थी। अपनी श्रान्त स्मृतियों के अतीत में वे, यहाँ आने के पहले ही कभी गुम हो चुके थे। कॉलेज में उन दिनों 'वंदेमातरम्' का प्रकरण पूरा हो रहा था। श्री राजू ने उसे और उलझा दिया था। यहाँ तक कि सर तेज बहादुर सखु को भी एक कार्यक्रम में बिना बोले जाना पड़ा था। विद्यार्थियों द्वारा कॉलेज सदन पर अनेकों बार हिरणा फहराये जाने की घटनाएँ हो चुकी थीं। परंतु श्री राजू इन सबसे निर्लिप्त थे। उनकी इसी निर्लिप्तता ने उन्हें अप्रासंगिक और बुद्धिहीन वाक-पटुता ने उन्हें अभ्रम बना दिया था। अधिकांश उन्हें सनकी समझते थे। निर्णय न लेने की अपनी आदत से भी उन्होंने अपने लिये आलोचनाएँ ही अर्जित की। यद्यपि वे कभी भी राष्ट्रीय गतिविधियों के पक्षधर नहीं रहे - परंतु फिर भी उन्होंने इससे सक्रिय रूप से जुड़े विद्यार्थियों पर कोई कठोर कार्यवाही कभी भी नहीं की। कई बार तो अपने छात्र-छात्राओं के इस उद्दण्ड आचरण के लिये उन्होंने स्वयं ही प्रशासन से क्षमा मांगी थी। लगता है ऐसा विद्यार्थियों

के लिये उनके मन के किसी कोने में अदृश्य मोह अवश्य था और इसी के लिये उनकी प्रशंसा की जाना चाहिये। उनका कार्यकाल किसी विशिष्ट उपलब्धि के लिये स्मरणीय नहीं रहेगा - हाँ, कॉलेज के जीवन के वे दो वर्ष हमेशा उनके नाम के साथ जुड़े रहेंगे और उनकी याद दिलाते रहेंगे अपनी असफलताओं और लगातार आलोचनाओं के बीच, ऐसा लगता है कि प्रो. राजू धीरे-धीरे जर्मन कवि म्यूटर आइच की निम्न पंक्तियों को हुंदा रहे हैं -

व्याकुल मैं सुखवा हूँ  
रंदिश बैराश्य के  
रंदिश दारिद्र्य के  
व रंदिश भटलता के  
मुझे दुःख है कि दुर्लभ मेरी ओर भेजा गया है  
वर्तमान में स्वयं को दोषमूलक पाता हूँ;  
मैं ऊँचे स्तर में कहता हूँ  
ब वषा का भय है, ब उसके उपासक का  
उसका भी नहीं, तो दुर्लभ मेरे काम भेजा था है  
कि, उचित समय पर मैं  
बाहर खिंकल कर उतर दूँगा।

- Botschaften des Regers का हिन्दी अनुवाद - 'वर्षा के संदेश' से।

\* प्रो. राजू के बाद क्रमशः प्रो. देशपांडे एवं प्रो. पद्मनाभन ने प्राचार्य के पद पर कार्य किया। दोनों के संबंध में स्वतंत्र आलेखों में वर्षा की गयी है।

\*\* प्रो. पद्मनाभन के पश्चात् प्रो. हरिजीवन घोष कॉलेज के प्राचार्य नियुक्त किये गये, उनके बाद डॉ. भागवत इस पद पर आसीन हुए। डॉ. भागवत से संबंधित विस्तृत जानकारी अन्यत्र दी गयी है।

## प्रो. हरिजीवन घोष

हरिजीवन घोष का जन्म १८९९ में बारीसाल (अब बांग्ला देश) में हुआ था। वहीं उनकी प्राथमिक शिक्षा हुई। उनके पिता श्री मुबनेश्वर घोष अपने समय के प्रख्यात शिक्षक थे। हरिजीवन के कलकत्ता के प्रेसीडेंसी कॉलेज से अंग्रेजी में बी ए (ऑनर्स) की परीक्षा उत्तीर्ण की और कलकत्ता विश्वविद्यालय से सरास्वत आजी-साहित्य में एम ए किया। वे अत्यंत मेधावी छात्र थे। प्रारंभ में उन्होंने प्रेसीडेंसी कॉलेज में अध्यापन कार्य किया। १९२० में वे होलकर कॉलेज में अंग्रेजी के सहायक प्राध्यापक नियुक्त हुए। लगभग २४-२८ वर्षों तक प्राध्यापक, विभागाध्यक्ष एवं प्राचार्य के पदों पर सफलता पूर्वक कार्य करने के उपरान्त वे १९५४ में यहाँ से सेवा-निवृत्ति हुए।

१९५४ के पश्चात् उन्होंने कुछ वर्षों तक - शिकोहाबाद और रामकृष्ण मिशन-नरेंद्रपुर तथा जाधपुर विश्वविद्यालय में पढ़ाया और फिर स्थायी रूप से कलकत्ता में बस गये जहाँ १४ जनवरी १९६५ को हृदयाघात से ६५ वर्ष की आयु में उनका निधन हुआ। वे सहृदय और उदार व्यक्ति थे। उनके व्यक्तित्व में काव्यात्मक लासित्य था - जो उनके अध्यापन का प्रमादी बनाता था। होलकर कॉलेज में उनके साथ बैठे हुए दिनों की याद करते हुए, श्रीमती हेमापूर्ता घोष लिखती हैं -

"I keep remembering the days at Holkar College, patiently waiting on bedside my husband as he painstakingly made his lecture notes. Playing bridge with the Late Maharaja or having a brisk game of tennis in the evening were things I reminisce now. Cricketing grinds of the likes of Late C.K. Naydu and Mustaqe Ali graced the fields of Indore. The parties hosted by the Late Maharaja bore eloquent testimony of the culinary expertise of the 'bowarchis' and chefs. I was not a academic at Holkar College but I honestly feel that the College was my 'Alma Mater'."

- श्रीमती घोष का २८ अगस्त १९९१ का पत्र

सांस्कृतिक और शालीन रुचियों के घोष दम्पति - कॉलेज के विद्यार्थियों से प्रबल स्नेह करते थे। उन्हें संगीत, नाटक, रसमंच और साहित्य में रुचि थी और वे दोनों इन विधाओं में साधिकार दखल रखते थे।

वे अत्यंत लोकप्रिय प्राध्यापक थे, सेवा-निवृत्ति पर उनके सेवा-काल में वृद्धि की माँग को लेकर जो छात्र-आंदोलन होलकर कॉलेज में हुआ था उसकी स्मृति आज भी बहनों को है। यह आंदोलन इतना उग्र हो गया था कि इसकी परिणिति गोलीकांड और कथंयुं में हुई, जस्टिस वावू की अध्यक्षता में बने एक कमीशन ने इस घटना की न्यायिक जाँच भी की थी।

प्रो. घोष को उत्तराधिकार में एक सुव्यवस्थित कॉलेज मिला था, जिसकी प्रतिष्ठा को स्थापित होते उन्होंने देखा था। वे इसकी कीर्ति के सक्षी और संभाली थे। अपने सहयोगियों से तन्त्रे परिचय और आत्मीयता के कारण उन्हें अपने कार्यकाल में भरपूर सहयोग मिला। उन्होंने कॉलेज को सफल नेतृत्व दिया।

अंग्रेजी के वे सफल लेखक थे। सम-सामयिक एवं साहित्यिक विषयों पर लिखे हुए उनके लेख The Statesman, Hindustan Standard आदि प्रतिष्ठित पत्रों में प्रकाशित होते थे। अंग्रेजी के कुछ कवियों पर लिखी उनकी समीक्षात्मक पुस्तकें आज भी पढ़ी जाती हैं। उन्होंने रवीन्द्रनाथ टैगोर की 'कणिका' में संकलित कविताओं का व अनेकों बंगाली कहानियों का अंग्रेजी अनुवाद किया था।

आज वे हमारे बीच नहीं हैं - परंतु इस कॉलेज में उनकी स्मृतियाँ हमेशा विद्यमान रहेंगी, प्रो. घोष के प्रति हम सबकी भावनाओं को सम्मेलित स्वर देते हुए ही, श्रीमती घोष ने लिखा -

"My husband was very dear to me loving affectionate and understanding - though his physical presence is absent, his thoughts are always with me to cherish."

- ३०.९.९१ का पत्र



कॉलेज में डॉ. राधाकृष्णन के साथ प्रो. घोष

निस्संदेह वे अपने विचारों में - हमारी स्मृतियों में - संपूर्णता के साथ जीवित हैं।

गौरव एवं आभार -

- (१) श्री अमल कर्ती घोष - कलकत्ता
- (२) श्री अरविन्द घोष हरनिलवर - कलकत्ता
- (३) श्रीमती हेमापूर्ता घोष - कलकत्ता

## संगीत क्षेत्र में जीत

गत २३ नवम्बर को ब्यालियर में विक्टोरिया महाविद्यालय के तत्वावधान में 'सिन्धिया कल्चरल कान्टेस्ट' आयोजित की गई। वर्षों के साथ हम सुचित करते हैं कि हमारे महाविद्यालय के छात्र रवि दास को तबला वादन में प्रथम स्थान, एवं शशिकान्त तान्त्रे को सफल संगीत तथा शास्त्रीय संगीत में द्वितीय स्थान प्राप्त हुआ।

गत १४ दिसम्बर को उज्जैन में माधव महाविद्यालय की ओर से 'मध्यप्रदेशीय संगीत प्रतियोगिता' सम्पन्न हुई। उसमें हमारा विद्यार्थी शीतलदेवी तान्त्रे, सफल संगीत में हमारे विद्यालय की छात्रा कुमारी कुंद बोकील प्रथम, तथा शास्त्रीय संगीत में शशिकान्त तान्त्रे प्रथम रहे।

- होलकर कॉलेज टाइम्स (१० जून, १९७४ से)



कॉलेज में

०३ नवम्बर १९५८

अब एक दोखराज नाम का डंग है - वह एक दो बातों एक मैदान में और दूसरे लाखों आदमियों के साथ वजन करने का डंग है। डंग बदलता जाता है, जमाना बदलता है हिन्दुस्तान का। तुम सोच गये हैं तो तुम दूसरे जमाने के लोग हो। नौरे जमाने के नहीं उसके बाद के जमाने के हो।

तो ऐसी हालत में, मैं तुम्हें रातों रात दू तो क्या दू? एक तो खैर मामूली बातें हैं, लेकिन मामूली बातें भी बड़ी जरूरी होती हैं। मामूली बातें हर जगह में चलती हैं, यह नहीं बदलती, कुछ उम्मीदों की सिद्धांतों की मैं कहूँ तुमसे कि तुम अपने दिमाग को तेज करो, जाहिर है कि कोई भी जमाना हो तेज दिमाग की जरूरत है मैं कहूँ तबसे कि तब अपने शरीर को मजबूत करो



बड़े बड़े इंग्लिशियन हो बड़े बड़े जो इराक़ कब्ज़ा करती है वो लोग और बक्को लोग इन्होंने उन्ही ने वारा फिर भी कुछ न कुछ अकसर कमजोर लालीको तो धूम्रपाय के सवाल आ जाता है, कि हमारे देश में कहीं शिवा होनी है इस पर बड़ी बहसे होती है और हल्के-हल्के बहस करके कुछ न कुछ तस्वीर निकलती आती है और आपली उनके निम्नवर्ती में वही कहता लेकिन आप लोगो को याद दिलाता है कि तुम समझो कि तुम कैसे जानते में हो, कि बड़े बड़े कांसिकारी जमाने में हो दुनिया, हमारा जमाना, मेरे जमाने के मेरे नस्ते के, जन्मदेशन के लोगों का, जमाना एक बा बहुत कुछ यह खतम हुआ कुछ सिलसिला थोड़ा सा जारी है जो कुछ हमसे बिल्दा बड़ा जमाने में, दुरा या भता, वह करीब करीब भारत के इतिहास का हिस्सा हो गया है, और बाद में लोग पढ़ेंगे उसे, कुछ रास कायम करेंगे, पास से तो रास कायम नहीं हो सकती लेकिन जो भी कुछ हमने किया, कबे बाते हमारे हाथ से हुईं एक ही कि चीर एक ऐसे जमाने में हम रहे जबकि भारत में इतना कुछ हुआ, इतनी काति हुई और भारत गुलाबी से फिक्कलम आजाद हुआ बड़ी बात हुई, खुश नसीबी की हमारी दूसरे, हम ऐसे जमाने में रहे जबकि हमारे घर मामूली दूध आदारी हमारे देश का ठोका था, गीर्डी जो कि भारत के इतिहास के अध्यायों में महत्त्वपूर्ण में शामिल होना चाहिए

हमने उन्हें देखा हुआ सुना उनके नीचे कम किया और कुछ हम छोटे अदमियों के ऊपर भी उनकी झलक पड़ी उनका साथ पड़ा तो हमारा भी पंज बड़ गया तो यह बात हुई और पचास गलतियाँ हुई होगी हमसे इस जमाने में मैं समझता हूँ, हम कह सकते हैं एक गलती नहीं हुई, अभी हमने भारत की शान के खिलाफ कोई बात नहीं की (तुलसी) उसकी इज्जत रखी, हिन्दुस्तान की अजादी की मशाल जो ऊँचा रखा अब हमारी बाई कम हो रही है तुम्हारे हाथ और बाहों को उस मशाल को उठाना है तैयार हो उसके लिये? तमारे हैं तुम्हारे बाजू? बलाओ कहा हाथ से आवाज से उठाना कहा, आवाज तैयार है क्या खाली लड़कों ही के बाजू उठे हैं लड़कियाँ के नहीं? क्या बात है? मैं लड़कियों से पूछता हूँ, बच्ची मजबूत है तुम्हारे बाजू? (आवाज, तैयार है) अच्छी बात है तो मुबारक हो तुम्हें

जयहिन्द

- होलकर कॉलेज टाइम्स, १९५८ से



१९६३-६४ स्नेह सम्मेलन में डॉ. जाकिर हुसैन की शिरकत

## □ आगरा विश्वविद्यालय कार्य समिति □



बायाँ से - शिरो हुर - (बीथे) डॉ. बसु, (छठे) सर सी.वी. रमन  
खड़े हुर - (छठे) प्रो. धारीवाल  
पित्र में श्री विद्यावतअली को भी पहचाना जा सकता है



◆ श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित और प्रो. घोष



◆ डॉ. राधाकृष्णन - टैगोर प्रतिभा के अनावरण के अवसर पर

श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित और शेख अब्दुल्ला

Sep 22, 1952

जनरल करिअप्पा कॉलेज में



Nov. 17, 1953



September 12  
1952



A black and white photograph of a group of eleven people, likely a family, posed outdoors. The group includes men, women, and children of various ages. They are dressed in early 20th-century attire. The background shows foliage and a building.

190

□ अ. दयाशंकर जोशी

पी पद्मनाभन का परिवार बड़ा था, उनके तीन भाई तथा चार बहनें थीं उनके जेठ भाता एन भीरम एक महान धियासोफिस्ट के रूप में विश्वविख्यात थे वे मूलतः शिक्षक एवं पत्रकार थे श्रीमती एनी बेसेन्ट ज

[illegible]

अतः इण्टरमीजिएट की परीक्षा उत्तीर्ण करने पर उन्होंने जीव विज्ञान छोड़ना उचित समझा वे बी.ए. आनर्स में उसके स्थान पर गणित लेना चाहते थे। इसके लिए वे भौतिकशास्त्र के प्रोफेसर जोन्स से मिले, तब वे बहुत बुद्धि हो चले थे, एक समय उन्होंने जो सी.बी. रमन को भी पढ़ाया था। जोन्स ने उनके द्वारा इण्टरमीजिएट में गणित न लेने के कारण आनर्स कोर्स में प्रवेश देने से इन्कार कर दिया। इस पर प्रो. पद्मनाभन ने अनुनय करते हुए कहा "यह सब है कि मैंने परीक्षा के लिए गणित विषय नहीं लिया था, किन्तु मैंने स्नातक सुखाय अपने घर में स्वयं गणित पढ़ रहा है। मैंने डायनामिक्स और क्लैक्युलस का जितना अध्ययन किया, उससे मेरा काम चल जाएगा।" प्रो. जोन्स इससे सन्तुष्ट तो न हो पाए, किन्तु उनके भौतिकशास्त्र में लगभग ८०% प्राणकों को देख कुछ पिछले अवश्य उन्होंने कहा, "देखो, मैं तुम्हें आनर्स कोर्स में एक शर्त पर प्रवेश दे सकता हूँ कि यदि अगली परीक्षा में गणित में अनुत्तीर्ण रहे, तो तुम्हारा प्रवेश निरस्त कर दूँगा।" प्रो. पद्मनाभन ने इस चुनौती को सार्व स्वीकार किया अंत में हुआ यह कि अगली परीक्षा में उन्हें गणित विषय में बहुत उच्च अंक मिले, भौतिक शास्त्र के अंकों से भी कहीं अधिक, इस प्रकार उन्होंने सन् १९१९ में बी.ए. आनर्स की परीक्षा ससम्मान उत्तीर्ण की। इस परीक्षा का पाठ्यक्रम सामान्य बी.ए. से कहीं उच्चतर था, उसमें बैठने वालों को एम.ए. के चार पाँच पेपर लेने पड़ते थे, एम.ए. तथा बी.ए. आनर्स के लिए वे ही पर्व बाँटे जाते थे अतः उन्हें स्नातकोत्तर की डिग्री इसके पश्चात स्वयमेव मिल गई। परिस्थितियों पर आत्मविश्वास की विजय हुई।

अपनी पढ़ाई पूरी करने पर उन्होंने कलकत्ता जाकर ड्रिडिंग्टन असोसिएशन फॉर कंस्ट्रिक्शन ऑफ सायंस में भरती ली, ताकि वे सर सी.बी. रमन के साथ शोधकार्य कर सकें करने की आवश्यकता नहीं है कि उस समय देश में इस असोसिएशन का बहुत मान था, तथा श्रेष्ठतम शोधार्थियों का वह आकर्षण किन्तु था। यही पर काम करते हुए प्रो. रमन को नोबेल पुरस्कार मिला था, तथा प्रो. रामदास तथा सर के.एस. कृष्णन एक आर.एस. उसी की उपज थे। प्रो. पद्मनाभन के शोध का विषय था, "Polarisation of light diffracted at the edges of metallic substances." वे वहाँ लगभग एक वर्ष रहे, पर शोधकार्य ठीक से चल न पाया। इसका मुख्य कारण परिवार की बढ़ती हुई परेशानियाँ थीं, जिनके कारण बारबार अपना काम छोड़कर उन्हें मद्रास जाना पड़ा। उनके लम्प पिता की वे तीन-चार महीने सेवा करते रहे, पर उन्हें बचाया न जा सका। पिता के देहान्त से घर की आर्थिक स्थिति शोचनीय हो गई, लगभग इसी समय उनकी बहिन लक्ष्मिणी ने एक अंजित, जार्ज एस. अरुण्डेल से विवाह कर लिया, जो बाद में थियोसॉफिकल सोसायटी का प्रेसिडेंट निर्वाचित हुए, हालाँकि लक्ष्मिणी अपने अतृप्ततम से अत्यंत आस्थावान धार्मिक महिला थीं, परंपरा के विरुद्ध किए गए इस विद्रोह के कारण समाज में भूचाल सा आ गया, उसके विरोध में आन्दोलन हुए और अंततः रुढ़िवादियों ने उनके परिवार को समाज से बहिष्कृत कर दिया। प्रो. पद्मनाभन उन दिनों की याद करते हुए कहते हैं, "इतने मुझे घोर मानसिक उद्वेग झेलना पड़ा।" यह बात सन् १९२० की है।

उच्च ब्रिटिश सरकार द्वारा पोषित ड्रिडिंग मुन्त्रेय कक्षम की ब्राह्मण विरोधी नीति के कारण ब्राह्मणों पर लगातार अत्याचार बढ़ते जा रहे थे। प्रो. पद्मनाभन बोलते हैं, "हमारा परिवार सस्कृत के विद्वानों का परिवार था, हम जन्म से ब्राह्मण थे, अतः हम लोगों के लिए रोजगार की संभावनाएँ अत्यंत बीघ थी, क्योंकि अधिकांश नौकरियाँ अब्राह्मणों को दी जाती थीं।" इन्हीं कारणों

से उनके भाई-बहन उत्तराभिमुख हुए, दक्षिण भारत का दुर्भाग्य उत्तर भारत के लिए वरदान बना।

कलकत्ता में अपने शोध-कार्य को छोड़ प्रो. पद्मनाभन लाहौर के डी.ए.बी. कॉलेज में भौतिक शास्त्र के विभागाध्यक्ष पद पर आसीन हुए, इसके लिए उन्होंने कोई आवेदन-पत्र नहीं भेजा, संभवतः प्रो. रमन ने उनकी सहायता की हो। उक्त पद पर प्रो. गोवर्धनलाल दत्ता के पुष्टी पर जाने के कारण रिक्त हुआ था, जो बाद में विक्रम विश्वविद्यालय के कुलपति हुए, लगभग एक वर्ष के बाद जब प्रो. दत्ता अपनी पुष्टी से वापिस आए, तो प्रो. पद्मनाभन की नौकरी समाप्त हो गई।

इसके बाद लगभग २० दिन वे बेरोजगार रहे, तभी ग्यालियर के विन्टोरिया कॉलेज के भौतिकशास्त्र के विभागाध्यक्ष प्रो. ताजुमल हुसैन का देहान्त हुआ, इस रिक्त पद पर प्रो. पद्मनाभन की नियुक्ति सन् १९२१ में हुई, इसके लगभग एक वर्ष पश्चात ही प्रो. डी.बी. देवधर होलकर कॉलेज छोड़, लखनऊ विश्वविद्यालय के लिए प्रस्थान कर गए, प्रो. पद्मनाभन ने अपना आवेदन-पत्र भेजा और इस प्रकार वे इन्दौर आ गए, उस समय उनकी आयु २५ वर्ष थी, तथा डॉ. सुखदत्तकर होलकर कॉलेज के प्राचार्य थे, कॉलेज के शांत, सुखद एवं मैत्रीपूर्ण वातावरण को देख उन्होंने अपना शेष जीवन उसे समर्पित किया वे २२ वर्षों तक प्रोफेसर रहने के बाद सन् १९४४ में वाइस प्रिंसिपल और उसके एक साल बाद प्रिंसिपल बने तथा सन् १९५२ में कॉलेज की सेवा से निवृत्त हुए।

प्रो. पद्मनाभन एक अपूर्व शिक्षक सिद्ध हुए उनकी ख्याति दूर-दूर तक फैली वे अपने असंख्य छात्रों की श्रद्धा के विनृत बने, क्लिष्ट से क्लिष्ट विषय वस्तु का सरलतम रूप में अभिव्यक्त करने की उनकी अपार क्षमता तथा उनकी धारावाहिक, निर्दोष व सटीक भाषा विद्यार्थियों के मन को मोहती थी, वे कक्षा में कभी कोई किताब या नोट्स नहीं लाए और न कभी पढ़ते-पढ़ाते रुकें ही, उनसे कहीं अधिक ज्ञानवान् शिक्षकों का विद्यार्थी होने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ। इलाहाबाद विश्वविद्यालय में मेरे प्रोफेसर और बाद में मेरे गुरु-गुरु डॉ. सर के.एस. कृष्णन, एक बार एस. अलौत प्रतिभाशाली शिक्षक थे, पर जब मैं शिक्षक के रूप में ज्ञान संप्रेषण की दृष्टि से उनकी तुलना करने लगता हूँ, तो प्रो. पद्मनाभन उनसे बीसे ही बढ़ते हैं।

पर प्रो. पद्मनाभन की महिमा उनके श्रेष्ठ शिक्षक होने मात्र में समेदी नहीं जा सकती, अध्यापन क्षमता तो एक कला है, जिसका विकास समस्त विद्या जा सकता है। उनका सर्वकालिक प्रभाव उनकी वैज्ञानिक चिंतन-शैली तथा आचरण के कारण है और इसी चिंतन का परिणाम है, उनकी नपी-तुली, अकाट्य तर्कयुक्त, संयत, धीमी तथा मृदुवाणी और तटस्थ जीवन-शैली, जो उनकी स्थायी पहचान बन गई है। वे कभी अधीरता से प्रस्त नहीं हुए, क्रोध करते या ऊँची आवाज में बोलते उन्हें किसी ने देखा नहीं वे सदा शांत रहे और इसीलिए उनका नैतिक प्रभाव सर्वव्यापी था, फिजिक्स डिपार्टमेंट से जब वे नये-तुले कदमों से ऑफिस की ओर जाते, तो बीच में बाँट जा मस्ती करते हुए छात्र उन्हें देख कर एकदम अपने आप सहम कर शांत हो खड़े हो जाते, आर्ट्स के छात्र, उनसे कभी विद्यार्थी न रहे, भी अपने किसी गलत आचरण के कारण उनकी निगाह से गिरना नहीं चाहते थे,

होलकर कॉलेज के यशवंत हॉल में एल.एल.बी. की परीक्षा चल रही थी, पर्व बटने को ही थे परीक्षार्थी आपस में बातें भी कर रहे थे तब प्रो. पद्मनाभन प्राचार्य थे, उन्हें विश्वविद्यालय से प्राप्त कोई सूचना देनी थी, उन्होंने परीक्षार्थियों को शांत होने का इशारा किया और नोटिस पढ़ दिया, इस पर हॉल के पिछले हिस्से से आवाज आई, "Loudly please", उसे सुन प्रो. पद्मनाभन किञ्चित् मुस्कुड़ाएँ और बोले, "If you are quiet, you will be able to hear me." और इसके पश्चात ठीक पहिले ही जैसे स्वर में, ताकि आवाज आखिरी सिरे तक पहुँच जाए, उस नोटिस को फिर से पढ़ा।

फिजिक्स लेक्चर थिएटर में जब प्रो. पद्मनाभन प्रवेश करते, कक्षा पूर्णतः शांत हो जाती, कभी उन्हें "Silence please" कहने की आवश्यकता नहीं पड़ी। हाजिरी लेते समय यदि कोई फुर्लुसाहट भी होती, तो वे अपनी पें के निचले सिरे से टेबल पर हल्की सी टक-टक आवाज करते, जिसे सुना जा सकता था। इस पर फुर्लुसाहट करने वाले छात्र का उस ओर ध्यान जाता, तथा वह भी पूर्णतः शांत हो जाता। इस प्रकार की स्थिति की कल्पना आज शायद बहुत से लोग न कर पाएँ।

प्रो. पद्मनाभन कभी अकरण बात करते नहीं और बिना मलौमिती सोचे-विचारे कभी बोलते नहीं वे किसी की स्वतंत्रता में बाधक नहीं बनते, और न वे चाहते हैं कि कोई अन्य उनके काम में अनावश्यक हस्तक्षेप ही करे, उनका सोचना, विचारना, बोलना, काम करना सब किसी सुविचारित व्यवस्था के अंग प्रतीत होते हैं वे अवगति वाले मकान में रहते थे, वहाँ जाकर देखा कि हॉल के बीचोंबीच लगे पखे से एक लम्बी तुलती बैठी हुई है, जिसके निचले सिरे पर गुलमोहर के फूलों वाली एक भरी सी टहनी

लटकी थी। मैं इस नजारे को आश्चर्य से देख ही रहा था कि प्रो. पद्मनाभन बोले, "My son has done it. I know, it does not look aesthetic, but he thinks otherwise. This hall also belongs to him, and he has a right to decorate it, as he thinks it fit." अपने बच्चों के प्रति इतना लोकतांत्रिक व तटस्थ चिंतन दुर्लभ है, बच्चों का उनसे अपने काम के लिए कभी पैसे मंगाने नहीं पड़ते, अलमारी में सफर रखे रहते, बच्चे स्वयं उसमें से आवश्यकताएँ सार पैसे निकाल लेते, उन्हें विद्यालय केवल यही थी कि यदि कोई दस रूपयों से अधिक निकाले, तो उसे कहीं रबी डायरी में इसका उल्लेख करना पड़ता था। प्रो. पद्मनाभन ने अपने बच्चों की आदर्श परवरिश की, और यही कारण है कि उनका समुचित विकास हुआ और वे अनेक उपलब्धियों के हकदार बने।

जीवन में बहुत कम लोग तार्किक और तटस्थ रह पाते हैं वे बहुधा अपने मन और भावना के उद्वेगों से प्रस्त रहते हैं, अतः ऐसे व्यक्ति प्रो. पद्मनाभन जैसे निःसंग व्यक्तियों से भयभीत से रहते हैं, छात्र के रूप में हम लोग भी उन से काफी डरते थे, किन्तु इस डर में सम्मिश्र आदर का अंश ही अधिक था।

और इसी डर की भावना के कारण बहुत से लोग उन्हें निराशर कक्षा व्यक्ति समझते हैं। मैं जब इण्टरमीजिएट कक्षा में था, मेरा विश्वास था कि उन जैसा आत्मवेन्दित और भावना मूल्य व्यक्ति शायद कहीं मिलेगा नहीं मैं उनके लिए बहुधा कविवर रवीन्द्रनाथ का वाक्य दुहराता रहता था, "A mind all logic is a knife all blade, it bleeds the hand of one, who uses it." पर अब लगता है कि प्रो. पद्मनाभन का जीवन तर्क पर आधारित अवश्य है, किन्तु वे मानवीय भावनाओं से आच्छेद कदापि नहीं

प्रो. पद्मनाभन  
प्राचार्य पद से  
सेवा निवृत्ति के दिन  
(८ सित १९५२)





है। हृय सभी मनुष्य हैं। हमें अपने जीवन-दर्शन का विकास करना है। इसके लिए तदर्थता आवश्यक है, ताकि हमारा तर्क सुगुह्रित एवं संकीर्ण रहे। वह कहते हैं, “जिस समय मैं संगीत का श्रवण करता हूँ उस समय मैं मैं इस बात को भूलता नहीं।” *The observer of the observed should remain awake*। “यह ही एक चर्चा के दौरान मैं मुझसे बोले, “यह सच है कि तुझमें भावनात्मकता की अपेक्षा बौद्धिकता है, किन्तु भावनाओं की कमी मुझमें है। अतः बौद्धिक होने हेतु मैं मनुष्य का भावना पर सबल हो सकना चाहता हूँ। भावना बहुत तर्क के प्रयोग से प्रतिपादित नहीं करती। हमारे अपने बच्चों या पत्नी के साथ के भावनात्मक सम्बन्ध कभी तर्क से टकराए नहीं लेते।”

फिर भी प्रो. पदमानाम अपनी यावनाओं की अभिव्यक्ति में संकोच करते प्रतीत होते हैं, सम्भवतः इस प्रकार की अभिव्यक्ति की निरन्तरता के कारण जो बार महोदय चर्चा से सम्मानित उनके उक्त पत्र तथा फिर कान्पाड़ जी यौन की पत्र में वायु-उत्पन्ना से अवकाश मृत्यु होने पर, वायुसेना के अधिकारी इसकी सूचना उन्हें देना चाहते थे उन्हें पता लगा कि इस समय प्रो. पदमानाम इंडिरा प्रतीक विश्वविद्यालय, चेन्नई की किसी बैठक में भाग लेने के लिए गये हुए थे उन्होंने वायुपुत्र विश्वविद्यालय के तत्कालीन कुलपति जे.सी. दीक्षित को यहाँ से जमा कर सूचित किया कि वे इस जानकारी को प्रो. पदमानाम तक पहुँचा दें उन्होंने तत्काल पता तो लगा दिया कि उस समय प्रो. पदमानाम रामपुर के भारतीय विभामुह में ठहरे हुए हैं, किन्तु इना प्राप्तकर सूचना को देना, उनके लिए बहुत भारी पड़ रहा था वे सँ के श्रीराम संगीत महाविद्यालय के तत्कालीन प्राचार्य डॉ. अरुण कुमार सेन के घर पहुँचे तथा उन्हें अवसर देते उन्हें अपने रास्ते में निराले वे इस विभामुह पहुँचे तो प्रातः ५ - ५.३० के समय हो चुका था उन्हें प्रो. पदमानाम काफ़ी में बैठे मिले उन्होंने घुमा-फिन्नकर कहा कि उन्हें सुचना प्राप्त हुई है कि गौतम की तैय्यत (कालक) उज्ज्वल हो गई है, और उन्हें तुरंत पूजा जाना है इस हेतु माना हवाई छड़ी पर वायुसेना का विमान उड़ा है प्रो. पदमानाम ने कहा कि 'विश्वसेन स लगे' उन्होंने लूनी का लिसा उनकी मुर्ती में निच घा किया वे अपनी मानस यावनाओं को नियंत्रित कर बैठे, "I know what has happened. Come on let us go" - उससे वाय प्रो. पदमानाम ने अग्रतः पद दे बोलें 'नहीं' तथा वैसे ही जाने के लिए उठ खड़े हुए (सा) आचार्य जी की तत्पश्चात् के पश्चात् ही समय होता है।

एक अवश्यक दृष्टि रखते हुए वे छात्रों से घुममिलते रहते थे, उन पर पुनश्च वन्दे कन्त ध्वज होम्स्टल के डीन के रूप में वे बह्मू में पेश्वे का नाज चलाते, रात्रि क समय भवन लुनाते तथा बच्चों के खेल से समझाते छात्रों के मन में उनके लिए अग्रज आदर्श था और इस कारण वे उनकी बातों को आत्मनसत कर्त्ते वे छात्रों के साथ पाठानुयायी की संघ पर जाने और साथ सत्य सन्त, विमल कन्त, छात्रों का वे सदा हितचिन्त कर्त्ते न्यू होम्स्टल के एक शिक्षार्थी भीरलाल महापात्र जो बाद में अधिक सन्दर्भ प्राप्त, एकाग्र बह्मू बीमार हुए उनका उपसनन १०४ में अस्थित था तथा वे सन्मयायी की स्थिति में थे इस बात की खबर दान उनके एक साथी, गोवर्धनलाल आझा जो कुछ ही वर्ष पूर्व उनका न्यायाधीश के न्यायाधीश के पद से सेवानिवृत्त हुए ही पो पयनमनस के घर गए पात्र पद रहा था और रात के लगभग १० बजे उन्हें श्री पयनमनस ने सारी बाते सुनी तथा उनसे कहा कि "अपने मन में जा कर मौलै कपड़े बदल लो, तथा मेरा स्वागत करें" इसको कुछ ही देर बाद वे अपनी नील से न्यू होम्स्टल आए तथा बीमार छात्र को माराजाजी तुम्कजीरात स्थित करने

पा. वहीं पहुँचने पर देखा कि कई सैक्टर उसकी राह देख रहे थे इन  
 सैक्टरों में से एक पर गुरुजी की धीरे से आँखें गड़ी उसकी ही महत्त्वता  
 वहीं पहुँचते थे रणनीति का समर्थन पर उसकी गहरी दृष्टि देखते नहीं थे वहीं की  
 पर दलान्तर्गत में खगोल होने का पूरा दूरगम पर छत्र की सीमाएँ की सीमा  
 विश्वास की तब स्मरण मने की वे ही थे तथा उनमें समुचित की सीमा  
 का अन्तर्गत था दूरगम प्रगति का अन्तर्गत वस्तुओं से सम्यक् होकर  
 संस्कार के प्राचाय की प्रगतिनायक नैमा रूपता का होकर करके  
 एक विमान नैमा ही मण ज्ञाता था और उसमें प्राचाय का पर प्रगति  
 या विश्वास विमान का सत्त्वनायक के सम्यक्ता का प्राचाय काही तक पर प्रगति  
 थे और आज उसी द्वाली में जीने के लिए बाध्य नहीं थे।

किन्ती के फटे में धार्य ही पाँव न होने की अपनी स्थायी दुर्गति के बचकूट यदि कभी अपनी अधिकारों के लिए संघर्ष करना होता, तो वे उससे डिफ्रेंडते नहीं थे। एक बार प्रतापगढ़ी में वापसी के अवसर पर प्रो. पदमानगढ़ गाड़ी १२-१५ छात्रों के लिए स्टैंड पर रेलगाड़ी में बैठना असमर्थ हो गया। गाड़ी में बैठे हुए गौड जी, हिलि रखने को जगह नहीं थी, इस स्थिति में प्रो. पदमानगढ़ ने एक हट्टेदार विचारार्थ की कला कि वह कैसे भी कब्जे डिब्बे में चढ़ जाए और वन लौटें। ऐसा ही कहने पर गाड़ी रुक गई। गाड़ ने पूछा, “रेलगाड़ी किन्तने ठेकी?” प्रो. पदमानगढ़ ने उत्तर दिया, “अरे ठेकी प्रेम जगो ने इसे टेकिट दिया। अब हमें गाड़ी में बैठने की जगह लो।” गाड़ बोला, “हमारे पास आरिखि डिब्बे नहीं है, आप से बने तो गाड़ी में घुस जाओ।” इस पर प्रो. पदमानगढ़ ने कहा, “हम लोग गाड़ी में चढ़ने में असमर्थ हैं, क्योंकि मोटो इन्जनी अधिक है। अब जब रुक आए हमारा चढ़ने की व्यवस्था नहीं करते। गाड़ी अने नहीं चढ़ेगी। हम जगो के लगानार खींचते रहें।” यह बहस अन्तिम चरटे से एक चरटे तक चली। अन्तिम कर एक नू डिब्बे की व्यवस्था की गई। उस समय की “होकरन दायन” में इस घटना का विवरण छाया था, तथा यह बात एक लम्बे समय तक लोगों के जवान पर रही।

इन्हीं गुणों के कारण प्रो. पद्मनाभन जहाँ भी रहे, प्रगढ़ा के पात्र रहे उनकी वैराग्यता के समान ही उनकी विवेक छवि रही ऐसे में उनसे किसी प्रकार के भ्रष्ट काम को करने के लिए कहने का साहस किसी को न होता था। प्रायः पद से निवृत्त हो, वे पाँच वर्ष तक लोक सेवा आयोग के सदस्य रहे यहाँ भी उनकी तटस्थ जीवन शैली उनके कार्य-सम्पादन में सहायक रही।

पा पदसनयम का संगीत रो सदा लगाव रहा उनके परिवार में स्त्रीत के संस्कार थे उनके एक शिष्याओं थे, पृथ्वीराज नर्तन, जो कानपुर में उच्च न्यायालय के न्यायाधीश बने उनकी संगीत में विशेष गति थी, तथा थे उस जमाने के प्रसिद्ध भुवद गाथा उस्ताद नरसिंहजी हॉल के सगीत थे उनके माध्यम से पा पदसनयम नरसिंहजी हॉल के सगीत के सम्पर्क में आए थे उनके गायन से अत्यंत प्रभावित हुए उन्होंने उस्ताद नरसिंहजी हॉल से कहा, "भुवदो श्री आपसे संगीत सीखने की इच्छा है संगीत का अन्तर्ज्ञान प्राप्त करने में मुझे कितना समय लगेगा?" इस पर उस्ताद बोले, "देखिए, संगीत में सदा स्वर होते हैं इसमें कम से कम दोहरे ही हों तो लगेही हों।"

इस प्रकार ए' पद्मनाभन की संगीत-शिक्षा पारंगत हुई पर बीच ही  
उस्ताद नविसुद्दीन खाँ दुनिया से छुट करके उसके बाद देवास के प्रसिद्ध

परमपूज्य राजशेखरी जी ने मुझे भीक पानुं व मुहूर्त वदि मय मक  
 क प्रस दिये मुझो से भरो ही वी सोनीय मे जसुई जसुव्याया हसितिय वर  
 पाया, मुझे अरुण्य जसुया खासा दान ताका जसुई जसुव्याया भित्त वर  
 ती बसुव्याया अरुण्य जसुई जसुई का विमान भवति मे एही जसुया का  
 कि मे जसुई जसुई सेनीये की अरुण्य जसुई ताका एहसुव्याया जसुई  
 के जसुई जसुई से अधिक समय तक समाननीय सदस्य रहे, जब कि समान्यतः  
 मे समान्यतः केवल दो वदि के निरु होय की मुझो समीप दिरदिष्टावतः,  
 परमपूज्य की विमान समीपियो मे मे लक्षण वीस जसुई

प्रो. पदमनाभन की कविता से सदा सहजमुखी रही, हिंदी अक्षरी सारकिय  
रचना का अनुसंधान उनके लिए अनुसृत व वा अपने सुधी के प्रमाण  
पर तत्काली उनके घर उनके सन् १९४२ के "बसत छोडे" आलेखन के  
समय की एक प्रमाण, जो कविता के प्रमाणित भाग व सुवर्ण है प्रमाण  
मसी बने, प्रमाणित थे, तथा उनके घर पर "हिनारना" के प्रमाण व  
से ही दिन रहे तो केसव की समीत से प्रमाणित रहि की वर प्रमाणित  
से विमान रातो तथा संपन्न-संपत्ति पर बर्दा करते थे

तब और आज के समय की तुलना करते हुए व्यक्तित्व का से हो पतनावन  
वहो है. "अब सार्वजनिक जीवन में शिष्ट आ कल है उस समय के  
नेता अलग अलग थे, हमारे जीवन में समस्तता ही पर आकृति के  
नकलियाँ बढती हैं सारे राज के साथ बिना भी भी अलोकी के  
--- हम अपने अन्तरों को सारी घडने से परावर्तित नहीं कर रहे हैं उनके  
कई आदर्श नहीं हैं, और ये घडने में भी रुचि नहीं रखते साथ ही यह

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

[illegible]

大德、至德、貞元、元和中，  
 其間雖有武宗、宣宗、懿宗、  
 僖宗、昭宗、哀帝、  
 而皆不足為唐也。

कुरु संवत्स पर ज्ञान, तस्यै श्री गुरुभ्यो नमः

श्रीमती हेमापूर्वा घोष का सन्देश

১৫৫৫ খ্রিঃ  
 যোগেশ্বর সিংহাণ্ডের মানসিকতা, মহাপ্রভু জ্ঞান  
 সত্যের দ্বারা প্রাপ্ত হইয়াছেন এবং যখন  
 সত্যের অন্বেষণে গিয়াছেন।  
 অসীমের দ্বারা  
 সত্যের দ্বারা  
 সত্যের দ্বারা



Dr. D.K. Mansharamani

Holkar College has been as good as my almahmater. though, I was never a student in the real sense I was associated with this college for full 17 years and during this long period, I always felt myself as a student, a learner, a seeker being benefitted every day in the company of learned teachers and experienced Principals. I feel indebted to this institution and feel myself as an integral part of it.

It all started in 1948 I was then only a graduate from Karachi-Bombay University, but I took a chance with an advertisement that appeared in the Holkar State Gazette for the post of a Lecturer in Biology. I was interviewed by Principal Padamnanbhan and then by Prof. Gogate and Prof. Khirsagar. I had Micro-biology as my special subject and assured the Principal that I shall be able to take Zoology theory and practicals in Botany. Prof. Padamnanbhan put a blunt question to me - "Will you be able to control the class?" I replied - "Sir, I don't want to blow my own trumpet, but given the opportunity, you will come to know how I do it." After a month I was asked to join immediately. This is how I came to Holkar College.

I was to work from 8 a.m. to 11.30 a.m. College was far away from my residence so I started using my father's car Austin. This was when the petrol was sold at Rs. 1.50 a gallon (not litre).

In 1949 I left the job to complete my post graduation at Almer. Prof. Padamnanbhan was very kind to me. Affectionately he passed few good teaching hints to me to which I replied "Sir, this you should have told me when I had joined and not now, when I am leaving." He said, "When I appointed you I had a little fear, but when I got good reports about you from professors and students I was happy. I asked him "Sir, do you get reports from students also?" He said "Since you could scold my son Gautam who was in tears

at home, I felt satisfied that I have not made any mistake in appointing you" and then in voice choked with emotion he told me - to pass my M.Sc. and promised an appointment in the college. He kept his words. In 1951 he appointed me again this time in Zoology department. I was given intermediate classes to teach. Prof. Gogate asked Prof. Raghwar to sit in the anti room and keep an eye to my first day performance.

As I was not well versed with Marathi, Gujarati, Muslim and Sikh names so students started enjoying my improper way of calling their names while taking the attendance. After the attendance was over, one Mr. Sapre asked me to introduce myself. I said "I shall be glad to give my introduction provided I have yours. While taking attendance, I could not catch your names. So now each one of you should get up and tell me his or her name or surname and keep standing till the whole class has done that." It was time for my introduction to them. I said, "I am Mansharamani. I was here two years back. The world is facing a great crisis. This includes food and economic crises. We in India are facing a great cultural crisis. This is nothing but a challenge to our national identity and existence of our infant Republic. It is for you, young men and women to accept this challenge and strive to mould the destiny of this ancient land, so that it has honoured place in the community of the nations of the world. But this cannot happen, if we are ourselves undisciplined. Indiscipline is the root cause of many of our present day evils. So long as this is not eradicated from our social and political life, our future as an independent nation is in danger. Now a bright future is before us. We have our own constitution, our own President. Who knows one of you may become the Prime Minister of India." Pointing to one sardar student I said "He may become the Defence Minister (Sardar Baldeo Singh was defence minister then)" and pointing to the girls, I said "One may become the Health Minister (Rajkumari Amrit Kaur was the

Health Minister). This is my introduction. There was a pandeep silence. My voice was choked with emotion and there were tears in the eyes of the students. This was my first day in college in 1951. Prof. Gogate got the news from Prof. Raghwar and happily said, "You have broken the ice to-day and I know that you have broken it well."

After Prof. Padamnanbhan, Prof. H. Ghosh took over as Principal. He was a capable person and a literary scholar. Mrs. Ghosh was a versatile Bharata player and used to join us sometimes in Yashwanth club. In 1954 Dr. Bhagwat became the Principal.

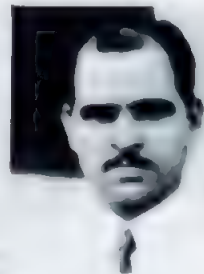
Dr. Bhagwat was a strict disciplinarian and a very good teacher. He cared very little about his dress and personal appearances.

In 1960 I was promoted as Asst. Prof. to Durg. After an year I was again posted to Holkar Science College.

Holkar College with all its different blocks, extensive play grounds, lawns and swimming pool looked like a complete education complex. I was then in charge of Backminton and Table Tennis. I used to play after the teaching hours. Students respected all the teachers, irrespective of their faculties. Students of this college have occupied exalted positions in various fields and have dominated the provincial and national sciences. Some of them have earned a name at international level also. Many have settled abroad. But I know certainly that all of them are proud of their Almahmater. Martin Luther, once said "Prosperity of the country does not depend on the abundance of its revenue, nor on the strength of its fortifications nor on the beauty of the Public buildings but it consists in the number of cultivated citizens, in the men of Education, enlightenment and character. Here are to be found its true interest, its chief strength, its real power." Holkar college has made a small contribution to this end, and is a humble Partner in India Ltd.

The war between India and china in 1962 brought turmoil in the country. An appeal by Pt. Nehru for donation had an immediate response. Dr. Bhagwat fixed the target of Rs. 1 lakh. He called a meeting of all the students teachers and other employees of the college. It was addressed by several speakers. A very touching speech by Late Mr. Mehta of B.Sc. final brought tears to the assembled. A cheque of Rs. 1 lakh was sent to war fund. This was gratefully acknowledged by the P.M. office through a letter, which was put up on the Notice Board for information to all. Such was the Unity of purpose in 1962.

Dr. Bhagwat very hard out and soft inside like a coconut, had a row with me on several occasions. He sportingly reversed his decisions after I explained to him the real position. He had great regard for merit and was true to his words. Once he got me elected to Vikram University senate brushing aside opposition from some quarters. At another time I requested



Dr. D.A. Mansharamani

him to relieve me from the charge of Backminton and Table Tennis. He did not listen to me saying that "There was complaints against you from students, and I thought that you are the proper person to look after these indoor games."

Dr. Bhagwat was succeeded by Prof. Narayan Singh. He was a man of great learning, a good teacher and an efficient administrator. He was very punctual. While returning from my B.Sc. final classes, I often used to meet him. Once he said "I feel so good when I see chalk dust on your pant, with hands stretched."

Dr. Ravi Prakash, the next Principal was my teacher at Almer. By this time I had completed my Ph.D. and was promoted as Professor at Durg. Thus came an end to my 17 years association with this college. But these years are alive in my memory.

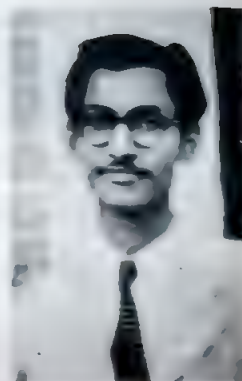
The century provides us an opportunity to think and strive to bring all Holkarnians to a common platform. Holkar teachers should also be involved in various activities of the college cementing the bonds between old and new. The old teachers must be invited in the college to share their experiences with the present generation. This will inspire them to contribute for all round development of this great institution which has completed 100 years of its life.

The buildings, the play ground, library and lawns are all there but the spirit of dedication of Dr. Basu, Prof. Borgekar and Dr. Bhagwat and devotion to duty and discipline of Dr. Deshpande, Prof. Gogate and Prof. Padamnanbhan is fast dwindling. There has been degradation of moral standards and the virtuous virtues have been fossilized. There is a wide gap between teacher and taught resulting in indiscipline. "The Saraswati, the Goddess of learning has gone on vacation and Laxmi rules the roost."

Let us hope that the magic of centenary celebrations will pick the conscious of all concerned and restore it to the pristine glory. This is my prayer.



## कुछ दृश्य



[ ३३ ] टिप्पणी-संग्रह विज्ञान-संग्रह

सन १९५१ समाप्त हो रहा है। हल्ककर बर्लेनज की हीरक-जयन्ती मन

कालों पर इतना बुरा असर हो, जाने की एक रात टाइम जब मे मु  
ने उसकी टेंकर सीटी बजाई फिर वहां का घोंब साहब ने उसे सिधु  
तक कब्जे पकड़कर उखाड़ा और खिड़की से बाहर फेंक दिया और  
सीधे प्रार्थी फर्मागन के पास नि घोंब नाउ यू मिल हो वो टुक  
इन प्योर जलता इन फायर

दिनांक ११/११ : मुजरा धान के लाने पर आज से एक दिन  
 अग्रेजों के विरुद्ध 'हुरी' की योजनाओं के अन्तर्गत 'मजदूरों के  
 सम्मेलन' की स्फूर्ति (प्राचार्य के सम्मेलन) की आज (कल) के  
 सम्मेलन, तथा विप्लव के कार्य, जो कि आज तक (पुनर्जाति) के  
 जो कि लाने (अभियान) के कार्य, जो कि आज तक (पुनर्जाति) के  
 कार्य के सम्बन्ध में आज के कार्य के सम्बन्ध में आज के कार्य के सम्बन्ध में

[illegible]

## एक परिचय

प्रो. महेश दवे

जीवन सैत् सैत् माधवराव पगडी

महोदय प्रभावत बने जन्म १० अक्टूबर १९०६ को हाटौट में हुआ। उनके पिता श्री विठ्ठल महापात्र रेवेन्यू विभाग में तत्काल को उनकी प्राथमिक शिक्षा मानवसूत्र में १९२३ में उन्होंने मध्यम विद्यालयी छात्रवृत्ति से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की और होलकर कॉलेज में प्रवेश लिया। यहाँ से भी एस्सी करने के उपरान्त उन्होंने श्री छात्रवृत्ति पर से इत्याहाद बंद - जहाँ उन्होंने १९२९ में बी.ए. एस्सी की उत्तीर्ण प्राप्त की। कुछ समय तक आगरा में अध्यापन करने के उपरान्त २० नवम्बर १९३३ में होलकर कॉलेज में आये जहाँ उनकी सेवा प्रथम का लगन पूरा मात्र व्यतीत हुआ १९३६ में उन्होंने 'म. प्र. प्रो. वि. सेवा' को के अपने सक्रिय और यशस्वी सेवा-काल के बाद, २० नवम्बर १९६४ में होलकर विज्ञान महाविद्यालय के प्राचार्य के पद से निवृत्ति प्राप्त की। तब तक उनकी सेवा में जहाँ वे अपने वैचारिक साधना, का अत्यन्त अग्रजकर्म, स्वयंशिक्षा, निर्भीकता और बुद्धिमान तन्मयता प्रदर्शित के करत विद्यार्थ्यपत्र बने वहीं अपने छठ दसौपन, सेवा-कर्म, का अपने स्वयं के छौती तत्परता की लक्ष्मी सतीर्ण की दृष्टि से के जिस महान् अर्थ अर्थवृत्ति के करत बहसति में भी रहे

अपने सेव-कर्म में है। एह किंवदन्ती के रूप में प्रचलित हुए डा भागत एह सम्प्रति-विपत्ति स्थितिमें भिन्नक के साथ-साथ अपने फलकल स्वभाव दिव्य-विपत्ति सम्बन्ध मित्राजी और अनुशासन प्रियता के लिये ही जम जम रहे हैं उनमें बल वक्त का अर्थ है एह पुर के पुर युग से सम्बन्ध इत्यादि उत्तरीन न केवल बल पूरा युग अपने साथ जिया अर्थात् उस प्रयोग सम्बन्ध किन्तु और उस पुरी सम्भावनाओं के साथ जिलाये रखा जिसमें वक्राङ्क के लक्ष्य में कहा जा सकता है -

[illegible]

इस जगह की परम्परा विराधी प्रवृत्तियाँ विमर्शिताओं, जटिलताओं, संवेदों, शक्तियों और मूल्यों के प्रति आस्थाओं का समवेत प्रतीक है - इस वास्तव्य भागवत का पूरा का पूरा जीवन जीवन के इस राध्याकाल

मं भी उनकी सक्रियता, सृजनात्मक लगन और हिन्दी में विज्ञान लेखन के प्रति उनका उत्साह देखकर लगता है मानों पश्चिम सितार्ज पर अस्त होते हुए सूर्य से आकाश के वक्ष पर जो सिन्दरी अक्षर उकेर दिये हैं, वे डा भागवत के ८५ वसन्तों की कीर्ति पताकाएँ हैं.

‘मेघाचे करि भूर्जपत्र धरुनी अस्ताचल ही प्रत्यही  
प्रेमाचे जवलेख कुकुमरसे ही साध्य देवी लिही’

उनका परिवार सामान्य आर्थिक स्थिति का पारम्परिक रूप से आस्तिक हिन्दू परिवार था। बचपन से ही धार्मिक संस्कारों के अनुशासन में पसे वास्तुओं को रामायण, महाभारत, गीता और तुकाराम के अंगों के प्रति लुचि दिवसत में मिली थे प्रमाणित परिवेश और परिवारिक भाव्यताओं का ही प्रभाव था कि बचपन में वास्तुदेव ठोपी में पीपल का पत्ता रखा करता था खेलकूद, में उसकी लुचि आरम्भ से ही थी कुश्ती, तेराकी, कबड्डी और लोतन-पठौती वास्तुदेव के फिय शीर्ष के, लोतन-पावों के तो वास्तुदेव ने अखिर भारतीय संस्थाओं से ही भाग लिया था, ठुठ देसी आदमी, देसी लुचियाँ, देवी ही देशज-नागम उज्जड़ सी भाषा और देसी सरकारों के साथ वास्तुदेव भागवान ने १९४३ में हंसलोक कॉलेज के नागरिक परिवेश में प्रवेश किया था, प्रभुल देव देवी की अभिजात्य प्रशरता, प्र पेल्लनाम शास्त्री की सम्प्रदायिक गरिमा, डा. हरिजीवन घोष के शास्त्रीय संस्कारों और श्री शैलेन्द्रनाथ धर की शैक्षणिक सोम्यता के बीच - डॉ. भागवत की मौलिक उपस्थिति को कभी भी खारिज नहीं किया जा सका - देव श्रोत्र वर्ण के मध्य उनकी उपस्थिति प्राप्य-गीतलता के सुखद एहवास के रूप में मौजूद थी -

समारे ताप - उत्ताप बड़ो एकटा कम जय,  
मेइ ताप - उत्तापे काम-जीबनेर एकट् शीतलता लगानो दरकार ”  
- श्यामल कांति दास

अपनी आजी के साथ बालक वासुदेव - नन्दलालपुरा स्थित दत्त मंदिर में निगमित रूप से कीर्तन सुनने जाता था, अत्यन्त श्रद्धा से वासुदेव की रत्नकला को प्रणाम करता, आज, डा. भागवत बड़े विनोद से कहते हैं कि "कीर्तनिया को मैं इसलिए प्रणाम करता था कि इस बहाने, देर से पहुँचने के बाद भी मुझे हस्तों पास ही आगे बैठने की जगह मिल जाती थी." धार्मिक ग्रन्थों के अध्ययन के साथ-साथ उनकी रुचि मराठी साहित्य में भी बढ़ती

नई राहों, तरीकों और सामग्री की खोजें जारी हैं। इनका मत  
है कि -

[illegible]

छोटे है जूटिंग लहरे, लहर-लहर निकल के लहराएँ

संसार को उन्होंने अपने मित्र मुनेर के साथ - इन्द्रावत के होलमर कदों की चित्पति की लस में गढ़ा है। वहीं नर्मद की चतुर्ध्रुव जलधर जलिन पर उन्होंने एक सप्तम जलजन्मक तैरा की लिखि है, जो उन जलन काकी चर्चित हुआ था। मानव की एक विशेषता यह है की वे उन जलन मित्रों को भी साहित्य और काव्य के जलमय से चर्चित करते हैं। सुमनसि इन्द्रास-सरोजक सेतुनाचर रात पानी, मछली के जलमय में अपने स्निह की प्रथमिक प्रेरणा का श्रेय ज्ञा मानव को दे देते हैं। कवि ने

“पुढे हैदराबादेत असतांना मी मराठी वाङ्मयातील कवींच्या कवितेचे स्वरूप करून ‘मराठी वाङ्मयातील आधुनिक कविता’ हे पुस्तक लिहिले. त्या लेखन भाषेने भाववताचे लेखन ही प्रथम प्रेरणा होती.”

• ਭੀਖ ਨਹੀਂ

लेखन में डा. गणवत की रुचि १९२७ से विकसित हुई - वे प्रा. तत्काल सतत और सक्रिय हैं। इनका ध्यान है कि छात्रों को न केवल 'कवि' में 'सायनशास्त्राधीन मूर्ति' के रूप में एक लेखक के रूप में विकसित की जाय। यही वे डा. सत्यप्रकाश के सम्पर्क में आते और ही ही में उनके 'सायनशास्त्र' लेखन प्राप्त हो रहा।

इलाहाबाद विध्वंसितालय में वह नीला स्तन पर के लाल-पीले के लुंगी  
अपना मोच-प्रांच पूरा किया उनके प्रकटित शोच-पाँव की परतीर कुल  
लम्बी है अपने मुँह का शंकर देखाते और वह जो की शोच मरना  
को डर भागवत ने आगे बढ़ाया होकर कौनके क सत्य शेष के  
उन्होंने एक संसाधित रूप देकर अक्षित भारतीय स्तन पर लम्बी की

अपने विद्यार्थी जीवन के अनेकों किस्से उन्हें याद हैं और आज भी ये उन किस्सों को पूरी तन्मया और नाकीसूर से सुनाते हैं जिनसे उन संस्मरणों का सुना अनेक अनेक बार एक सुनकर अनुभव है कि तब कुछ नवीयान उमरकर के दूर जाने पर डा मेमबरास तास की ओर काते हूँ जहाँने ही एस कोठारी के नाम का बरब के रूप में उज्जाने किता और इसके पूर्व कि डा. ताहा - 'हेट आउट' रूप बल्ले से डिप्टी से दूने का भाग निकले - या १९३० के एल सेमिनार का किस्सा सुनाने सुनाने उनकी आंवां में हँस पड़ने के लो से बजलता और दुस्तरास सुनाने लगता है - जब उन्होंने श्री तथा में अपने 'अनकलता' किन्तु जलजल जलर से डा. साहा को निग्रम और तन्मन निगरर ता ही कर दिख का सेमिनार में धारावा अथवा एक जेध-पस प्रस्ताव का रहे में कोठारी

१. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥  
 २. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥  
 ३. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ३ ॥  
 ४. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ४ ॥  
 ५. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ५ ॥  
 ६. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ६ ॥  
 ७. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ७ ॥  
 ८. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ८ ॥  
 ९. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ९ ॥  
 १०. ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १० ॥

[illegible]

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

[illegible]

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ १ ॥  
 श्रीकृष्णाय नमः ॥ २ ॥  
 श्रीगुरुभ्यो नमः ॥ ३ ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥ ४ ॥  
 श्रीविष्णवे नमः ॥ ५ ॥  
 श्रीशिवाय नमः ॥ ६ ॥  
 श्रीब्रह्माय नमः ॥ ७ ॥  
 श्रीमहेश्वराय नमः ॥ ८ ॥  
 श्रीनारायणाय नमः ॥ ९ ॥  
 श्रीरामाय नमः ॥ १० ॥  
 श्रीकृष्णाय नमः ॥ ११ ॥  
 श्रीगुरुभ्यो नमः ॥ १२ ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥ १३ ॥  
 श्रीविष्णवे नमः ॥ १४ ॥  
 श्रीशिवाय नमः ॥ १५ ॥  
 श्रीब्रह्माय नमः ॥ १६ ॥  
 श्रीमहेश्वराय नमः ॥ १७ ॥  
 श्रीनारायणाय नमः ॥ १८ ॥  
 श्रीरामाय नमः ॥ १९ ॥  
 श्रीकृष्णाय नमः ॥ २० ॥

有...  
 有...  
 續...  
 通...  
 海...





## बीच

205



- किसानलय पंचायती

तुम यहाँ कैसे?"

मे गहरी ऑफिस-स्टॉफ में है पूरा दिन हो गया आज तो शताब्दी समारोह जो हो रहा है पता नहीं क्यों इतना लम्बा चौड़ा प्रोग्राम बना रखा है "

मैं समझ गई यह जो भी हो इसकी मन-सूमि में भावुकता की नभी नहीं किसी गरथा में अपनापे की आर्द्रता उससे निकला हर विद्यार्थी अपनी पलकों में सहेंगे यह जलरी नहीं वैसे भी आज की तेज रफ्तार ज़िन्दगी में ऐसी बातों का आँखिच्य घटता जा रहा है.

'तुम्हारा क्लिनिक कहाँ है? मुझे कुछ प्राथम्य है, दिखाना चाहती हूँ'  
पहचान लिए जाने पर मतलब की बात पर वह आ गई थी.

मैंने अपने पर्स में से तुरंत विजिटिंग-कार्ड निकाल कर उसे धमाया और कहा - "कभी भी आ जाना पर आने के पहले रिंग जरूर कर लेना."

अच्छा फिर मिलेगा "

परिसर में मौसम की ठण्डक की दिन में मूसलाधार बारिश जो हुई थी ठंड साफ़ पेड़ मानो नहा लिए थे तबसरा रहे थे जैसे हर आगबुक का स्वागत करने हों। लतावटी समावेष्ट के मूक साक्षी कई कार लम्बा है भगवान ने बोलने की शक्ति पेड़-पौधों को क्यों नहीं दी? शायद समर्पण व त्याग अबोल ही रह जाते हैं।

काफी लोग आए हुए थे हर लग का प्रतिनिधित्व करते हुए कई चेहरे पहचानने से लग रहे थे तभी किसी ने मुझे रोका

“तुम्हें पहचाना? तुम स्मिता व्यास की ना! अब डॉ. स्मिता अग्रहारी  
महाश्वर गाइडिन्स सीरिज खाद आया? अपन दोनों क्लास-मेट थे  
फर्स्ट ईयर की - २ सप्ताह नम्बर ४ में क्लास लगती थी तुम्हें हरपूर रेवडी  
खाना बाल पकड़ थी और ....”

उसकी तमाम हिट के बावजूद मुझे उसका नाम याद नहीं आया अलबत्ता बाकी सभी बातें याद हो आईं ऐसा अक्सर मेरे साथ होता है फिर भी उसका उत्साह -बैंगन हो इसलिए मैंने दुबल किया कि मैं उसे पहचान पाई

वह कभी काउण्टर प्रश्न न कर दे मुझे टेस्ट करने के लिए सो मन ही पछा -

मात्र एक सप्त ती विद्याया था मीने यहाँ चौदह साल पहले पापा का ट्रासल खान्दवा से इन्दौर हो गया था तभी इस कॉलेज में एडमिशन लिया बहा नाम व क्रेज था इस महाविद्यालय का, वीसा ही पाया था मेरे पी एम टी में शिलेवरन का श्रेय कुछ इत तक इस कॉलेज को भी जाता है, तबक यह स्वयन्य तथ्य ही मुझ में सुबह से कुलबुलाहट पैदा कर रहा था आज यहाँ आगे के लिए तमी तो इसकी छाँव तले मैं अपने आप को धन्य मरसुत कर रही हूँ। एम जी एम में इसके काँही ज्यादा समय बिताया है अपने शहासि जीवन का, किन्तु मेरी दायता काभी तमके लिए नहीं उपजो

यशवत हॉल में एक कुर्सी पर झुप-चाप जा कर बैठ जाती हैं। शासकीय महाविद्यालय का पुरातन हॉल अपने समस्त दारिद्र्य के बावजूद जग-मग रहा है चमक उठा है समय की सापेक्षता अनश्वरता का उजास समेटे

"तुम यहाँ क्यों छिपी बैठी हो डॉ स्मिता चलो आगे गेस्ट वेयरिंग बैटो" प्रोफेसर राव मुझे फौरन कर रहे थे

“नहीं मैं यहीं ठीक हूँ सर!” सैने जत कर अभिवादन करते हुए कहा।

मुख्य अतिथि वाले यश की तलाश मुझे यहाँ नहीं लाई मैं तो मेरे अर्थ के भूले हुए विद्यार्थीत्व को पुनः स्मृत करने आई हूँ रोज की मागम भाग

प्रीतिराम अस्पताल से घर, घर से प्रायःद्वे तीसरी छेपे पकने अनाइन्ट  
ऊपर से मिससे दों स्थिता अतिहानी गेटिशन होने के गतो उसकी पीठिया  
इतना सोचने की पुनरावृत्ति है। कहीं मिलती है कि हम कभी नहीं पड़ते व  
मैथिल में किसी विशेष बार पर अपनी उपस्थिति कहीं लोगों को बद  
कवचाना शुभ लगता है। वैसी ही आज हस्टर में होते हुए इस कावच  
आना मुझे काम लख रहा है। वैसी ही आज हस्टर में होते हुए इस कावच

अब कार्यक्रम शुरू हो गया था, एक अति मधुर स्वर की धनी सवालिक की उद्घोषणा के साथ, हिन्दी व अंग्रेजी का खूबसूरत प्रयोग दोनों सचालक कर रहे थे फिर प्रचारक सरस्वती बेंदना हुई कार्यक्रम की अन्य औपचारिकताओं के साथ पूर्ण प्राचार्य के सम्मान व संबोधन की श्रृंखला चल रही रही थी कि पास की खाली कुर्सी पर सजना आ कर बैठ गई सजना मेरी फास्टर फ्रेंड थी, होन्सबल कैलेज में उसके साथ जुड़ी सभी यादें निजी थीं,

तब लगता था हम भिन्नता की मिसाल बनाएंगे पता नहीं ऐसा क्यों होता है कि लड़कियाँ की भिन्नता सवाल नहीं रह पाती ऐसा ही सज्जन व मेरे साथ भी हुआ शायद सामाजिक व्यवस्था या प्रोफेशनल डायवर्सिटी इसके कारण रहे हों

“हाय स्मिता तुम!” आश्चर्य व खुशी से दोहरी होती वह बस मुझसे गले ही नहीं मिली कदाचित हॉल की मर्यादा का उल्लंघन न कर पाने की मजबूरी वश

सजना इसी कॉलेज से पूरी पढ़ाई कर पहले दूर-दूर के महाविद्यालयों में सहायक प्राध्यापक रही सालों मिलना नहीं हुआ पिछले साल अचानक मिली थी तो बताया था उसने होलकर ज्वाइन कर लिया है

“मुझे उम्मीद थी कि शायद तुम मिलो।” शायद तुम्हारा मोह ही मेरे लिए उपरोक्त बना मैंने कहा - निश्चिता मैं चाहती तो आज भी आती। हमारी बेकेशन बतल रही है और मेरा नाम देखे हुए लोगों में नहीं है। मुझे भी नहीं क्या है? इस मातृ संस्था में, जो मैं पर पर रुक ही नहीं सकी मुझे लगा क्या हमारी जिंदगी इतनी कागजी तो नहीं कि तास्त बर्कित की साइड मुझसे मेरे मन से बड़ी हो जाए? अगर आज कोई टुकुटी होती तो क्या मैं नहीं आती? मुझे अफसोस इस बात का कि मैं रैली में शामिल न हो पाई। कच घरेलू मजदूरों की थी”

मुझे लगा सजना ने मेरे मुँह की बात छीन ली है उससे मिल कर मेरे जेहन में यह बात और पुख्ता हो गई कि वह भिन्नता जिसका जन्म समान विचार धारा से होता है कभी खत्म नहीं होती उसकी झंकार कितने ही अंतराल के बाद भी जतनी ही सही हई होती है

फिर हम दोनों पूरे कार्यक्रम भर साथ रहे. उसने कुछ लोगों से मुझ  
मिलवाया

कुल मिलाकर ये तीन-चार घण्टे जो मैंने १० जून, १९९१ को होलकर कॉलेज में बिताए मुझे इतनी मानसिक ऊर्जा दे गए जो अगर मैं वहाँ नहीं जाती तो कदापि दुनिया का कोई भी नर्सिंग होम, हॉस्पिटल, या मेरा अपना घर भी मुझे नहीं दे सकता था।

धन्यवाद होलकर कॉलेज! मुझे बुलाने और मेरे यहाँ आ पाने के लिए

The most utterly lost of all days is that in which you have not once laughed.

- Chamfort

A laugh, to be joyous, must flow from a joyous heart, for without kindness there can be no true joy.

- Carides

How inevitably does an immoderate laughter end  
in a sigh?

- Solen

A good laugh is sunshine in a house.

- Thackeray

I like the laughter that opens the lips and the heart,  
that shows at the same time pearls and the soul.  
- Victor Hugo

## IN LIGHTER VEIN

**Change anyway!**

A successful business man, visiting his former college, came to see his old Economics Professor. In the course of the talk he was shown some current question papers in the subject. Seeing them, he observed - "Why, these are the same old questions!"

"Yes," agreed the Professor, "we do not change them."

"But," objected the old student, "don't you know the students will pass the questions on from class to class?"

"But," came the reply "in Economics, we are constantly changing the answers."

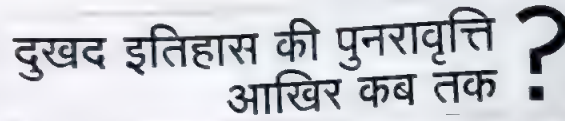
### Dignity of office!

"I haven't a pencil or paper" exclaimed the U.T.C. cadet who arrived for his test in a hurry.

"What would you think of a soldier who goes to the battle field without his gun?" asked his instructor.

"I'd think he was an officer."

*From the Holkar College Times, 1st March, 1956.*



208



□  
प्रो. महेश दुबे  
□

# होलकर विज्ञान महाविद्यालय के प्रचारार्थ

(१) डॉ. वासुदेव विट्ठल भागवत	-	१९६१-६४
(२) प्रो. नारायण सिंह	-	१९६४-६८
(३) डॉ. रविप्रकाश	-	१९६८-७२
(४) डॉ. भीमर गोविन्द हरमलकर	-	१९७२-७५
(५) डॉ. दयाशंकर जोशी	-	१९७५-७८
(६) प्रो. सुरेन्द्र मिश्र	-	१९७८-७९
(७) डॉ. धर्मवीर शर्मा	-	१९७९-८१
(८) डॉ. माधव गणेश नेने	-	१९८१-८४
(९) प्रो. बाबूकृष्ण निलोसे	-	१९८४-८८
(१०) डॉ. ओमनारायण माधुर	-	१९८८-९०
(११) प्रो. प्रभाकर काले (वर्तमान प्रचारार्थ)	-	१९९०

१९६१ में कॉलेज के विभाजन के बाद का डॉ. भागवत का समय उनके सेवा-काल का उत्तरार्ध था। उनका कुछ समय विभाजन की औपचारिकताओं में तथा उसके बाद की व्यवस्थाओं में बीता। इस अवधि में महाविद्यालय को डॉ. जाकिर हुसैन, कृष्ण मेनन, जनरल धिमेया और सारंगेश्वर सिन्हा का स्वागत करने का अवसर मिला। १९६२ में ही भारत-चीन युद्ध हुआ। सुशा कोष में कॉलेज की ओर से जिमखाना कोष से १ लाख रुपये दिये गये। इसी समय डॉ. भागवत ने सभी प्राध्यापकों और विद्यार्थियों के हितों अनिवार्य सैनिक प्रशिक्षण की व्यवस्था की और फायरिंग का अभ्यास करवाया। इस प्रशिक्षण में डॉ. हरमलकर और डॉ. कैमकर ने सक्रिय सहयोग दिया।

डॉ. भागवत के पश्चात आये प्रो. नारायण सिंह, वे गणित के प्राध्यापक थे। उत्कृष्ट शिक्षक के रूप में विख्यात डॉ. नारायण सिंह सरल और सात्विक प्रकृति के धार्मिक व्यक्ति थे। वे अपने सिद्धांतों, मान्यताओं और आदर्शों पर दृढ़ रहने वाले व्यक्ति थे। और अपने निजी जीवन में भी अपनी मान्यताओं के साथ जीते थे। अस्मिन् उनमें दूर तक नहीं गया था। कक्षा में उनसे पढ़ना - अपने आप में एक सुखद अनुभव होता था। उनके अक्षर स्पष्ट थे। भाषा पर उनका असाधारण अधिकार था। क्लस्सरूप उनके व्याख्यान अपने आप में सम्पूर्ण होते थे। वे स्वरही और प्रासंगिक पाठ्य-पुस्तकें का ही उपयोग करते थे। हाँबस और विटेकर वाटरसन के गणितीय विश्लेषण पर तथा हाडी की कालजयी कृति *Pure Mathematics* उन्हें विशेष शिवा यी प्रायः वे पढ़ते-पढ़ते विद्यार्थियों से जीवन में नैतिक मूल्यों के महत्त्व पर भी चर्चा करते थे। उनके सोच में, दिनचर्या में और व्यापक रूप से उनके जीवन में एक प्रकार का गणितीय अनुशासन था। निस्संदेह वे इस गुण में हमारी प्राचीन ऋषि परम्परा के सर्वोत्कृष्ट प्रतिनिधि थे। इन्हीं से जाने के बाद वे सैदा विश्वविद्यालय के कुलपति भी रहे। डॉ. बाबु के बाद इस शैक्षणिक ऊँचाई तक पहुँचने वाले वे इस कॉलेज के दूसरे प्रचारार्थ थे। महाविद्यालय में चार वर्ष का उनका कार्यकाल शांत और गरिमापूर्ण था।

आज, उनका स्मरण, ज्ञातक ही इन पंक्तियों को दोहराने जैसा है।

अमरवसुध चित्तरथ अमरवाहल वेतरा,  
पुत्राय पापपाहीनस्य नन्त्या जायतमी यया।

१९६८-१९७२ तक का डॉ. रविप्रकाश का कार्यकाल शैक्षणिक विज्ञान के संदर्भ में उल्लेखनीय है। इस अवधि में डॉ. रविप्रकाश के प्रयत्नों से स्नातकोत्तर स्तर पर जीव विज्ञान, जीव रसायन तथा समाजिक स्तर पर भौतिकी एवं औषधि विज्ञान के पाठ्यक्रम प्रारंभ हुए। विश्वविद्यालय अनुसंधान

आयोग की स्थापना से विद्यार्थी भवन, और भौतिकी तथा प्राणिकी के स्नातकोत्तर स्तरों का निर्माण सम्पन्न हुआ। डॉ. रवि प्रकाश स्नातकोत्तर स्तर वाले उदात्तमना और कल्पनाशील व्यक्ति थे। भविष्य की आवश्यकताओं के अनुकूल महाविद्यालय के विकास की योजनाओं और उनके क्रियान्वयन के लिये सार्थक पहल का क्षेत्र डॉ. रवि प्रकाश को है। मूलतः वे प्राणिकी के प्राध्यापक थे। उनके समय में भौतिकी, रसायन और दवाओं में वे एक से अधिक बार सेमीनार आयोजित किये गये। हिन्दी में वैज्ञानिक-सम्बन्धी को विकसित करने सम्बन्धी उमेदाशय भी उनके प्रयासों से महाविद्यालय में सम्पन्न हुई। महाविद्यालय परिवार से उनके सम्बंध अनिवार्य और आत्मीय रहे। शुरु-दश के अवसरों पर शासकीय विद्यार्थी से अन्तर्देश कर मानवीय स्तर पर सहयोग एवं सहयोग के लिये वे सदैव तत्पर रहते थे। गंभीर करण है कि वे आज भी महाविद्यालय परिवार द्वारा याद किये जाते हैं।

I remember with great pride my tenure as Principal of the prestigious Holkar Science College Indore. Though I went as an outsider but people of Indore in general and the students community in particular accepted me as one very near and dear to them. Due to the mutual goodwill and cooperation I was successful in starting the college graduate classes in Pharmacy and post-graduate classes in Biochemistry. The biggest achievement of the college had been its recognition as nucleus to develop Indore University teaching departments. The University teaching department of Life Sciences started under my headship in the college. The college received handsome grants from U.G.C. under COSIP. The past glory, high traditions and maintenance of institutional dignity and prestige made a deep impression on the then Chancellor and Rayapal Shri S.N. Sinha who selected me as Vice-Chancellor of Bhopal University. I owe a great deal to this great college which can not be expressed in words. The college has a great future and so its students and teachers

- Ravi Prakash

डॉ. रविप्रकाश के समय में महाविद्यालय सांस्कृतिक और खेल-कूद की गतिविधियों में सक्रिय था। अंतरासाधारणतया शतरंज और जलबीड़ा परियोजनाओं में कॉलेज ने विजय प्राप्त की थी। शुरुआत किने शतरंज के अच्छे खिलाड़ी थे जलबीड़ा में कलगीकर और गान्धिवे का नाम था। टेबल टेनिस में रंजन अग्रवाल, प्रदीप वर्मा, विमलेंद्र वाजपेयी, यशवत मिश्र, सुरेश शिन्धे, राशि देशपांडे एवं शोभना पांडे ने कॉलेज का प्रतिनिधित्व किया था। बैडमिंटन में - सक्सेना, जनपदी जोहर, यू.सी. अग्रवाल, मन्नाम, कुमार गोपा, राखीना शोभा पांडे ने नाम कमाया था। गोदी, खुशीरसिंह, इन्द्रीशजल जेराजल खुशीरसिंह मल्ला, एम.बाल के अच्छे खिलाड़ी थे। बास्केट बॉल में चेतन आनन्द और अविनाश आनन्द प्रसिद्ध थे। कबड्डी में विश्वास खरे का नाम था। (भी खरे के प्रतिभाशाली और सम्माननाओं वाले जीवन का दृख अंत १९७१ में हुई। उनके असाधारण निधन में हुआ कॉलेज से एक एल.सी.सी. करने के उपरांत वे बंगलोर में शोधकार्य कर रहे थे।) रवींद्रसिंह ने एथलेटिक्स गोदी, बास्केटबॉल और कबड्डी में कॉलेज का प्रतिनिधित्व किया था।



डॉ. रविप्रकाश एल.सी.सी. के कार्यकाल में

डॉ. रवि प्रकाश के कार्यकाल में संस्कृत की विद्वती श्रीमती कल्पना रत्नम्, प्राच्य इतिहास तथा पुरातत्त्वशास्त्र डॉ. मनमथ रत्नम् उपाध्याय, डॉ. ओ.एस. केशरी और डॉ. बाबूराव सक्सेना ने कॉलेज में आकर छात्र छात्राओं को सम्बोधित किया। औपचारिक के अतिरिक्त के अंग्रेजी के एक अवधि - अपनी भारता यात्रा में टोक्यो महाविद्यालय भी भारत और अमरीका के बीच परस्पर सम्बन्ध और सहयोग स्थापना की कोश में आये हुए हैं। आज से एक सप्ताह पहले डॉ. महाविद्यालय में आकर यहाँ के प्राध्यापकों और विद्यार्थियों से बर्चा है।

डॉ. रवि प्रकाश होलकर विज्ञान महाविद्यालय से भोजाल विश्वविद्यालय के कुलपति के पद पर नियुक्त कर मंगे गये। इन दिनों वे प्रोफेसर में रह रहे हैं।

भीमर गोविन्द हरमलकर इसी कॉलेज के छात्र हैं। १ जनवरी १९९७ को जन्मे डॉ. हरमलकर ने १९९४ में इस कॉलेज में प्रवेश किया और १९९४ में रसायन शास्त्र में एल.एस्सी की उपाधि प्राप्त की। व्यापक सांस्कृतिक अभिरुचियों वाले - डॉ. हरमलकर की खेल-कूद में भी गहरी दिलचस्पी रही है। हॉकी के वे अच्छे खिलाड़ी थे। उन्होंने एल.सी.सी. का प्रशिक्षण लिया था और अनेक वर्ष तक कॉलेज में एल.सी.सी. को सुचारु रूप से संचालित करने में सहयोग दिया था। वे महाराष्ट्र साहित्य सम्भा, परस्पर किने गवेश विज्ञान मंडल तथा बायोमेडिकल जैसी अनेक सामाजिक एवं शैक्षणिक संस्थाओं से सम्बद्ध हैं। सभी से उनके सम्बन्ध अनिवार्य और मधुर होने के कारण उनके सामाजिक परिचय का दायरा अत्यंत विस्तृत है। फलस्वरूप प्राचार्य के पद पर जाने करते हुए उन्हें अपने सहयोगियों के साथ-साथ गौर के पण्डित वर्ग का भी पूरा सहयोग मिला। उनके परिवार में सांस्कृतिक अभिरुचियों की परम्परा को बनाये रखने का ध्येय निश्चित ही स्व. भीमर गोविन्द हरमलकर के शालीन व्यक्तित्व को है। डॉ. हरमलकर स्नातकोत्तर स्तर की गतिविधियों से भी जुड़े हुए थे।

उनके समय में ले जनरल जनजीत सिंह अरोरा कॉलेज के रंगत सम्मेलन के मुख्य अतिथि होकर आये थे। अपने प्राचय में उन्होंने

भारत देश के युद्ध में भारतीय सेना की रणनीति, युद्ध घातुर्य और मोर्चा-बंदी तथा पाकिस्तानी सेना के शस्त्र-सम्पन्न सम्बन्धी विश्लेषणात्मक और रणिक जानकारी दी। एक लम्बे समय तक यह कार्यक्रम श्रीताओ को याद रहा।

राष्ट्रीय विचार धारा से प्रभावित, निष्ठावान - डॉ. हरमलकर का कार्यकाल निर्बाध और आत्मीय रहा। अपने घरवासी जीवन के ७५ वर्ष में आज भी वे तरुण - स्फूर्ति से सामाजिक क्षेत्र में सक्रिय हैं।

डॉ. दयाशंकर जोशी प्रारम्भ से ही प्रभावी छात्र थे। १९४० में उन्होंने महाराष्ट्र शिवाजीराव हाई स्कूल से मैट्रिक की परीक्षा प्रथम श्रेणी में प्रावीण्य सूची में नाम सहित उत्तीर्ण कर - अमलेंद्र स्वर्ण-पदक और कॉलेज स्मृति पुरस्कार प्राप्त किया। १९४० से १९४४ तक वे वर्षों में वे हॉलकर कॉलेज के छात्र रहे। १९४२ में इण्टरमीडियेट में उन्हें कॉलेज का चमत्ते पुरस्कार मिला। उन्होंने इलाहाबाद से १९४६ में भौतिकी में एनएससी की परीक्षा उत्तीर्ण कर सी एस आई आर में दो वर्षों तक कार्य किया और नई दिल्ली स्थित राष्ट्रीय भौतिकी प्रयोगशाला में डॉ. कृष्णन के साथ शोध कार्य किया। वे इस कॉलेज में संहा. प्राध्यापक नियुक्त होकर आये - और यहीं उन्हें विभागाध्यक्ष के रूप में कार्य करने का अवसर भी मिला। वे एक कुशल शिक्षक थे। विद्यार्थियों में वे आदर के साथ देखे जाते थे। वे एक स्पष्ट वक्ता, दृढ़ निश्चयी और अपनी मान्यताओं पर अडिग रहने वाले प्राचार्य थे। अच्छे शिक्षकों को वे सम्मान देते थे। अपने कार्यकाल में, विशेष रूप से आपातकाल के हटने के बाद छात्रों की बढ़ती हुई अनुशासनहीनता को न तो उन्होंने चुपचाप सहा और न ही उससे टकराव को टाला। अग्रिम बुद्धता से उसे चुनौती दी।

भाषा पर उनका असाधारण अधिकार है। वे अच्छी स्त्रियों वाले, अध्ययनशील और प्रखर शिक्षक एवं छात्रों के रूप में वाद किये जायेंगे।

दृढ़ इच्छा में अपने, मात्र एक सत्र के कार्यकाल में ही प्रो. सुरेन्द्र देव मिश्र ने महाविद्यालय के पूरे परिवार का सम्मान और स्नेह अर्जित कर लिया था। उनके व्यक्तित्व में गणितीय अनुशासन का तालिन्व और सैनिक सरकारों की दृढ़ता का अमूलपूर्ण सम्मिश्रण है।



प्रो. सुरेन्द्र देव मिश्र

उनका जन्म १३ मार्च, १९२१ को एक सामान्य और कुलीन ब्राह्मण परिवार में हुआ था। १९४२ में उन्होंने आगरा के साथ गणित में स्नातकोत्तर प्राप्त की। दूसरे विश्वयुद्ध के समय उन्होंने रॉयल इंडियन एयर फोर्स में कमीशन

लेकर दो वर्ष तक फ्लाईंग ऑफिसर के रूप में कार्य किया। युद्ध की समाप्ति पर वे सेवा सेवानिवृत्त होकर राज्य शिक्षा सेवा के लिये चुने गये और नागपुर के सॉल्डर कॉलेज से उन्होंने अपने शिक्षक जीवन की शुरुआत की और बाद में रायपुर के महाविद्यालय में उनका अधिकांश समय व्यतीत हुआ। सतना, दमोह, ब्यालियर के महाविद्यालयों में प्राचार्य के रूप में कार्य करने के उपरांत १९७८ में वे इस महाविद्यालय में पदस्थ हुए।

लगभग १६ वर्षों तक वे एन सी सी से सक्रियता के साथ जुड़े थे। इन्फेन्ट्री में सिगनल ऑफिसर के रूप में कैप्टन के पद पर और एयरबोर्न में स्क्वैड्रन लीडर के पद पर उन्होंने कार्य किया। वे नवनिर्मित गोपाल विश्वविद्यालय के कुल सचिव भी थे। हेलनकर विज्ञान महाविद्यालय से सेवानिवृत्ति के उपरांत उन्होंने इन्दौर विश्वविद्यालय की महाविद्यालयीन विकास परिषद के निदेशक और म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी के संचालक के रूप में भी सफलता पूर्वक कार्य किया।

दबंग और प्रभावी व्यक्तित्व के प्रो. मिश्र ने कॉलेज में व्यवस्था और अनुशासन के मानदण्ड स्थापित किये और नयी कार्य-शैली विकसित की। कॉलेज स्नेह सम्मेलन के राबॉथिक मीड पर कार्यक्रम संगीत परियोजना में बाहर के कुछ उपद्रवी और 'दादा' किस्म के छात्रों को भीड़ में घुसकर, गलत फहल कर खींचकर बाहर लाते हुए इन सबने उन्हें देखा है।

उन्होंने कॉलेज के जीवन को एक नयी प्रफुल्लता और ताजगी दी।

इन दिनों वे स्थायी रूप से भोपाल में रह रहे हैं।

डॉ. धर्मवीर शर्मा एक ख्यातिप्राप्त प्राणि-विज्ञानी थे। 'Anatomy of the Indian insects, suncus murinus' पर किया गया उनका कार्य विदेशों में भी सराहा गया था। 'Genetic code and Protein Biosynthesis' पर १९७० में प्रकाशित उनका शोध-पर अपने वैज्ञानिक अनुमान के लिये प्रसिद्ध हुआ था, जिससे उन्होंने लिखा था - "Some of the top scientists are now engaged in intensive work to synthesise genes. It is only a matter of time, their success seems guaranteed. What Next? Genetic Control of hereditary diseases may appear today to be a remote possibility. The problem surely is overwhelmingly difficult but its solution is not beyond the reach of the bands of dedicated and competent scientists spread all over the world." और कुछ समय पश्चात् डॉ. सुरेन्द्र के कार्यों ने इन अनुमानों की सत्यता की पुष्टि की। 'Nature' जैसी अंतर्राष्ट्रीय स्थापित पत्रिका शोध पत्रिका में उनके लेख प्रकाशित हुए हैं।

अवग्रहण की तकनीकें लक्ष्मी महान् व्यापक हैं। भोजन के इतिहास धर्म और विज्ञान भौतिकी को फलानत शोध प्रयोगों के साथ संस्कृत गीतों एवं दार्शनिकों की गहरी लक्ष्य है। अवग्रहण के साथ उनमें वैज्ञानिक विवेचन की शक्त का प्रभाव को है। उन्होंने प्रयोग - अवलोकन सामाजिकों में मान लिया था और वे अन्तर्गत भौतिक विज्ञान सेक्टर (जेनोम) के अग्रिम प्रायोगिक शोध में न केवल होकर भोजन मापदण्डिता से रोग निवृत्त हुए बाद में उन्होंने विज्ञान महाविद्यालय, उज्जैन के कुलपति के रूप में भी कार्य किया।

राष्ट्रीय और रनेहिल डॉ. शर्मा - लॉन टैमिस और टैबल टैमिस के अग्रिम विद्यार्थी हैं।



बायें से दायें - डॉ. ओ.एन. माधु, डॉ. बी.के. भैरवें, डॉ. डी.एस. जोशी, डॉ. एस.जी. हर्यलकर, एवं डॉ. डी.आर. शर्मा

आग्रहण के अपने व्यापक आयामों और गहरी शैक्षणिक परिपक्वता के साथ उन्होंने इस महाविद्यालय को आधुनिक नेतृत्व प्रदान किया।

उनके बाद आये डॉ. माधव गणेश नेने भौतिकी के प्राध्यापक थे। वे इसके पूर्व भी ६० के दशक में यहाँ कार्य कर चुके थे। डॉ. नेने भौतिकी के प्राध्यापक शिक्षक थे। लोहा और कुसम डॉ. नेने गम्भीर अवग्रहण प्रयोगों में साथ-साथ खेल-युद्ध में समान स्थिति को है। और टैमिस के अग्रिम विद्यार्थी हैं। आरम्भिक सांख्यिकी अवलोकन सांख्यिकी समग्रता सांख्यिकी और दृढ़ निश्चयी हैं। शिक्षण से प्रयोग से प्रयोग तक उनके कार्यकाल में हुआ था। उन्होंने लक्ष्य - कानपुर और लखनऊ में शिक्षा प्राप्त की। दो एक एक जोशी (जोशी प्रमाण) और डॉ. प्रदीपकर के मापदण्ड में उन्होंने 'The Effect of Nuclear Radiation on Electrical Discharge' विज्ञान पर भी एक डी. प्रमाण की। उनके १० शोध-पत्र प्रकाशित हो चुके हैं। शैक्षणिक नवागमियों के प्रति उनका विकास रहा है। यही नजर है कि व्यवस्था का प्रखर होतें हुए भी उनका मन समाकलित परिवर्तनों में प्रतिक्रिया और सांख्यिकी विवेकी स्वरो की ओर आकर्षित होता रहा है।

संगोल विज्ञान के एक प्रगत में और लक्ष्य आकाश में प्रगत कर रहे समाचार दावों, नक्षत्रों और यहाँ को प्रकाशने तथा प्रदीपित से उन को प्रकटने में उनकी गहरी लक्ष्य थी।

उनके समय में वे भी लक्ष्य में वैज्ञानिकता का प्रखर आकाश में प्रगत कर रहे समाचार दावों, नक्षत्रों और यहाँ को प्रकाशने तथा प्रदीपित से उन को प्रकटने में उनकी गहरी लक्ष्य थी।



डॉ. डी.आर. शर्मा









# Science & Religion

Dr. P. Krishna

I am indeed very thankful to the organisers of this function for inviting me to my own college and making it possible for me to study my alma mater. It is always a great pleasure for a student to return to the portals of the institute where he acquired knowledge and learned so many things. It is doubly so for me because almost all of my childhood was spent playing in this campus. I therefore feel grateful not only to the people who built this college, maintained it and made it possible for me to learn here, but also to all the trees in this campus which provided me with the fruit and the shade under which I grew in my childhood. I owe a debt of gratitude not only to my teachers, but also to this place as a whole.

I have chosen to speak on the topic of science and religion which though it may sound like an old topic, is in my opinion much misunderstood. It is commonly believed that science is antagonistic to religion and that we are now living in a scientific age and therefore that religion needs to be relegated into the background. I would like in this lecture to examine whether that is really so or if it is a feeling that comes because we give in the words science and religion a rather superficial interpretation. It is true that we are now living in the scientific age in the sense that our life is very much affected and changed from the life of the past on account of the development of science and all the technological discoveries which have followed the development of science. In that sense it is true that we are living in a scientific age. It is also true

that science has progressed dramatically; modern science as we know it is only about 500 or at most 400 years old. Hence that there was not much distinction between religion, science, mathematics, astronomy or philosophy. A learned man was one who was learned in all these areas. The differentiation arose after the seventeenth century. Because in the seventeenth century with the advent of Galileo and Newton there took place the development of modern science and its methodology, which have completely revolutionised our life. It did not start for that reason. They were not enquiring or doing science in order to develop technology. They did not know at that time that there is such a thing as technology. Indeed, I have read that when Faraday discovered the laws of electromagnetism and he demonstrated it in a lecture hall, showing that a magnet moving through a conducting coil can cause an electric current to flow through it. It looked at that time like something that was a magical phenomenon. And at the end of the lecture, somebody in the audience got up and said, "All this is very well but of what use is it?" And Faraday's reply, which has become a classic in the history of science was "Sir, it is a newborn child. Of what use is a new born child?"

We know now that small little discovery of electromagnetism has developed into all these fans and fridges and so many other gadgets which have completely revolutionised our way of living. But that was not the reason why Faraday was investigating electromagnetism. I am telling you this story because I want us to be clear that the pursuit of science is the pursuit of truth about the order that exists in the external universe around us. Its aim and purpose is not technology or the application, that is a by-product of science. Science in itself is man's enquiry into the order that pervades in nature all around him. Whether it is the laws of physics, or the laws of chemistry, or the laws of biology, the fact that things follow a law, they don't occur at random, tells us that there is a tremendous order which governs the universe, of which we ourselves are also a part. It is precisely for this reason that science has succeeded. If there was not an order, if things happened randomly, if the law of gravitation was different on the earth and on the moon and out there in the universe, it would have very little significance. But that is not so. The laws which govern the outer universe are universal. That is the importance of the laws. And one of the questions which scientists have been asking, which is almost a religious question, is "why should these be laws at all?" It is a question to which the scientist has no answer. He says when I observe around me, I find that there exists this tremendous order in Nature and these laws which I am formulating are merely revealed by my experiments and observations. I find that they always hold. I cannot prove it, otherwise it would not remain a law. It is a description of the order which I see around me in the universe. The discovery of that order is the development of science. It is not only so in the inanimate world. There is also tremendous order in the animate world. The pursuit too gives rise to a pursuit. It does not give rise to any other kind of tree. All life

starts as a single cell whether it is a yeast cell or that dog against the corner of that big oak tree. It all starts as a single cell with a programme. And it lives by and large according to that programme which is in the seed. That seed contains the order along which that entity will develop. In the case of a human being that seed contains the fact that this seed will live for 70, 80 or at the most about a 100 years. If it is not unfortunate enough to die earlier in an accident, that's what happens in nature. But if you ask why 100 years, we do not really know. We don't know why an elephant should live longer and a dog should live less. Why at the age of 13 or 14 we should develop sexual characteristics, why the moustache should grow. But that is what happens in the case of all the boys. All that is contained in the seed, the single cell, and if that single cell happens to be that of a human being then that is the order which is dictated. And all living things have a similar order contained within the seed according to which they develop. Therefore, there is tremendous order also in the animate world as there is in the inanimate world. And the study of that order is biological science. The discovery of the laws of genetics is all part of biological science. So science is the quest for order in the outer world.

Similarly, another enquiry, which mankind has conducted over a much longer period of time, over thousands of years, if not a million years, is in the field of religious enquiry. Scientists now believe that man has been around for something like 80 million years and some form of religious enquiry must have gone on at least in the later part of his existence. Man's history for only the last three thousand years or so is definitely known to us in some detail. In this period there have been great religious persecutions who have excelled at this enquiry, which is the enquiry into the inner world of man's consciousness through which he relates with the outer world. People like Buddha, Christ, Mohammed, Novalis, Plato and nearer to our times people like Aurobindo, Ramana Maharshi, Krishnamurti, Tagore and Gandhi are all people who have deeply enquired into religious questions and tried to arrive at an order in their inner consciousness. So I would say that there are two great quests for truth which mankind has been engaged in and the reason why man engages himself in any quest is simply that it is his nature to do so. There is no reason, you cannot give a reason why the scientific enquiry began. Whenever there is a mystery, it is man's nature to enquire and find out about that mystery. It is not that he does so in order to get the fruits. The fruits of that effort are by-products. They are not the justifications of it. No justification is needed. He has this innate curiosity with which the whole of mankind has lived. That curiosity in the outer world manifests itself as the scientific enquiry and in the inner world of our consciousness it manifests itself as the religious quest. Just as, there have been great scientists like Galileo, Newton, Darwin and others there have been great religious personalities who have deeply delved into themselves and arrived at an extraordinary measure of self-knowledge, discovered deep truths in their



Dr. P. Krishna is a former student of Presidency College, Madras, who has been a student of the Sri Aurobindo Centre, Pondicherry, for many years. He has written several books on the subject of the human mind and the human body.

consciousness and they spoken and tried to communicate those truths to humanity at large the same way as scientists try to communicate the truths which they discover out of their efforts. So there have been these two parallel streams of investigation by mankind.

The scientific stream has gone on and developed very considerably and man has progressed greatly in that field of enquiry, but in the field of religious enquiry, we have hardly progressed. This has created a significant development of the human being. We have now at our disposal tremendous power, tremendous ability, all of which has been clustered in our hands by the development of the scientific enquiry and the consequent development of technology. But internally, in our psyche, man has not changed very much from what the primitive man was. We may now be able to talk more intelligently, we may have built ourselves, written millions of books which are put in the libraries in the form of knowledge, but these are all acquisitions. Like money, like property, like houses, bridges and buildings, these are the knowledge which is all documented and kept in the library. It is also an acquisition. But if you step a human being from the modern man of his acquisitions and look at his consciousness, you will not find much difference between his consciousness today and the consciousness of the primitive man. He still finds it difficult to love his neighbour. He is still worried, he is and has been, he will continue to talk about peace but he is not peaceful. That human, that inner being of forming himself in order to dominate over other groups which the primitive man had to still there in modern man. I truly those groups now are national or religious groups instead of being tribal groups. But basically that urge to dominate and exploit others is still there and he has not been able to conquer the violence within



himself with the result that this violence has brought him to a stage where we are very near annihilating ourselves from the face of the earth completely. It is really doubtful, and I want you to think of this carefully, whether we can really claim that evolution went in the right direction when man evolved out of the ape. No doubt, the individual has tremendous capacity compared to the animal. He can think, he has tremendous imagination, he has memory. So we have got capacity. But do we have the intelligence to use that capacity? Have we used that capacity rightly? Has man been kinder, gentler, more compassionate, more loving and friendly than the beasts whom he hunts? How will you prove that Sir? With a million years of history of war? No other animal kills his own kind the way human beings kill their own kind. No other species has tortured members of its own species and other living things to the extent to which human beings have created torture and suffering in the world. So I really ask you seriously, whether we have a right to say that it was progress in evolutionary terms when man evolved out of the ape. There have been other animals which have lived on the surface of this earth for a longer period than man has been around. We have been around only 50 million years. And if we decimate ourselves, we will go for precisely the reason that Darwin mentioned "Survival of the fittest." How do you know you are the fittest, when we have through this lopsided development brought ourselves to the point of annihilation? So one must sit and consider whether this direction in which we are going, which we have called progress, which we so greatly admire, whether it is the right direction to go. Whether we really need more progress, more ability, more cleverness. If so then that is the direction to go. But one sees that that is the direction of annihilation unless it is coupled with love, with wisdom, with humanity-what in Sanskrit is known as *prajna*. The word intelligence in English has a double meaning: the intelligence of thought is cleverness, the intelligence of wisdom is *prajna*. The religious quest is the quest for *prajna* not the quest for knowledge but the quest for wisdom.

So we must examine where we have failed as human beings. And there is not too much time left to do that examination. It is not simply a philosophical exercise. The whole world needs to take stock of it because we are at the brink of disaster. You cannot afford to postpone this problem any more. So that is what I want to inquire into in this talk today. To analyze why we are so intelligent, so capable so progressive when it comes to science and so stupid, so disabled when it comes to the religious quest, although the religious quest is much older than the scientific quest. Let us examine the scientific quest first. How has the scientist gone about it and why has it progressed? Then we will examine how we have gone about the religious quest. Man sees this tremendous mystery of the universe around him, the tremendous order that permeates the universe, and he has wanted to investigate that and to find out about that. To do this what is the method which the modern scientist follows? To understand any phenomenon he gives great importance to observation, he begins it with a very careful, faithful

observation-recording what you observe truly, honestly exactly as you see it. If a biologist looking at a fish and trying to describe the behaviour of that fish, introduces his desires into it and writes what he thinks the fish ought to be and not what he sees then he is not a scientist, we don't respect him for that. So to record what you see as it is, is the first step in scientific analysis. Then to arrive at empirical relationships, if there are any, which you then call as laws. Those laws are not held as something that is never to be questioned, which are never to be doubted. It is something that you have discovered exists, applies within constraints, within limits, within boundaries, and you are willing to question it, find out where it is valid and where it is not valid. The next step in physics, for instance, taking that as an example, is to develop a model, to make an intelligent guess of the reality underlying this phenomenon. It is only a guess. It is a model which needs to be tested, examined, and if it is wrong thrown out, if it is approximate refined and so on, but always dealing with a model. So you have Bohr's model of the atom, then Sommerfeld's model of the atom (which is a refinement of Bohr's model) you have the molecular model of a gas, you have the model of the universe and so on. A physicist is always dealing with models, never directly with reality. Those models are conjectures, and he applies to those conjectures the known laws of physics, reason, logic and mathematics. Mathematics is a symbolic form of logic, a highly cultivated form of logic which is known to work and has been tested out. From this he develops what is called a theory. From this theory he makes predictions about more things which have not yet been observed. Then he comes back to observation, to find out whether that is really so or not. The extent to which his observations tally with the prediction tells him the extent to which his model approximates to reality. Then he decides whether to discard that model, to refine that model or to hold it for the time being as a good approximation to reality.

So it begins with observation and it ends with observation. The scientist holds to theories like opinions. Opinions are themselves are not important; they are only used to lead to facts which reveal the truth. And truth is posited as the unknown. We don't know what the truth is. I make a model which I think is an approximation to the truth and I test it through observation. Through experiment. That is how science has progressed. Those of you who have been science students know that there used to be 50 different laws in Physics—Joules Law, Ohm's law, laws of elasticity, laws of friction and so on. Later they discovered that many of these laws can be proved from other laws, so you don't have to assume them as laws any more. Similarly, there were a score of different types of forces which were postulated to begin with, but as our understanding has become deeper we now have only four different types of forces-laws which we need to assume in physics in order to explain all the physical phenomena that take place in the inanimate world, in the universe. They are now trying to evolve a single unified field theory which may explain the origin of all these forces—the force of electromagnetism, the force of gravitation, the nuclear force

and another called weak interaction. If you ask, why does the earth attract a stone the scientist does not really have an answer. He has some speculative answers in terms of the general theory of relativity, but he does not have an exact answer as to how this action takes place at a distance. Why does the earth attract the sun? The gravitational field is still a postulate for him. The Newton's law of gravitation which was given 300 years ago is still very much a postulate. But he finds that it works and therefore he describes it as the order which exists in nature. So that is how the scientific quest has gone on and there have been many great scientists like Newton, Galileo Faraday and others who are highly respected. The scientist respects their work, but does not accept it on authority. He does not accept something as true on authority. He needs proof, reason, evidence. Einstein may have been the greatest scientist, but what he said is not accepted as the absolute truth. He himself would not accept it as such because it needs to be tested. Is a theory which he has given and it needs to be tested whether that is a fact or not. Therefore you respect what you know and still you doubt what you know. It is very important, that element of doubt. If Einstein was completely taken up with classical physics and accepted all that Newton had said and did not have a doubt, he could not have come upon the theory of relativity. The personal element has to be removed from the quest. Whether what was observed or stated is true is more important than who the observer or the scientist was.

In the religious quest the interaction between the observer and the observed is much greater than in the scientific quest though, even in the scientific quest, when it comes to atomic phenomena and looking at elementary particles and so on it becomes important. The very process of observation disturbs what you are observing and therefore there is a limit to which you can determine the truth. And one has to respect that law, which is called Heisenberg's law of uncertainty. It tells us that nature is willing to reveal itself to you only up to a point, and then it says "My dear chap, no more." And you have to respect Nature because that is the way it is. That is the law. Thus when it comes to the study of optics, man would like that light should behave either as a particle or as a wave because then it would all fit with our concepts, models and so on, but Nature does not oblige. It says "No Sir, its not that way. Sometimes it behaves like a wave and sometimes like a particle." And when you say it must be only one way Nature says, "That is the limitation of your thinking. I am not going to oblige just because you think so." The fact is that it behaves both ways. Either you take it or leave it. So the scientist says, "Alright, I will use two sets of equations, sometimes I will treat it as a particle and sometimes as a wave." That is its intrinsic nature. We may not like it but we have to accept that. But the quest is not given up, it goes on. So science has progressed in that. The knowledge of science is an additive process. We now learn what Newton a lifetime to discover, in three or four years and then you can work on it and build further, discover new things and so on. It is an additive process.

When it comes to the religious quest, it is not an additive process. Buddha found out something in his consciousness and he wrote, "Ignorance is the cause of sorrow." I know this, but it does not eliminate my sorrow. It does not take away my ignorance. That is just a statement for me. Unless I discover the truth of this for myself, it does not become the truth for me. I merely repeat Buddha's words. Buddha came upon a consciousness in which he eliminated personal sorrow from his consciousness. I have not eliminated that. I am merely repeating the words of the Buddha. It is like repeating Newton's laws without knowing what they mean. We don't allow that, do we? We teach Newton's laws and the boy has to do experiments and he has to actually verify for himself that it works so that he really begins to see that they are true. If he merely defines it, he may pass the examination but he has not understood Newton's laws. In the religious field we have not been very intelligent, we have been very very glib. Let us examine what we have done. When we had a great teacher like Christ, and he spoke out of what he had discovered within his own consciousness he was trying to convey to us what he had discovered, through the Sermon on the Mount, which contains more or less the gist of Christianity. But what did his followers do? The followers did not try to come upon the truth or the consciousness of Christ. They formed a church, and they said, this man was our great leader and we will worship him. They said you must join this church and they demanded certain beliefs. They said he was the son of God and this is not to be questioned. Sir, it is the same story with the Hindu religion or any other religion. I am not denigrating Christianity here I am just taking an example. It is exactly the same with every other religion. Around each great man, they developed a church. That church is not trying to come upon the truth which that great man discovered and expounded. Instead they started propagating words. And the words don't carry the truth as I have just pointed out. I know the words that "Ignorance is the cause of sorrow." That does not make me the Buddha. But if you discover the truth of that for yourself then you may come upon what Buddha actually meant. You cannot come upon that without going through the process of enquiry, which the Buddha went through. Otherwise it is held only as knowledge or words and does not mean anything. You also have the opposite proverb saying, "Ignorance is bliss." So you can choose! Sometimes you can say ignorance is bliss and sometimes you can say ignorance is the cause of sorrow. Two great opposite statements made by two great people. Which one are you going to accept and on what basis? If you go by a great man who pleads for vegetarianism, there is an equally intelligent man and authority who pleads for non-vegetarianism. And there is the person who gives the communist philosophy and there is the one who gives the capitalist philosophy. One who speaks in favour of marriage, and the other who speaks in favour of free love, and so on, endlessly. For every thing which you quote on one authority I can quote an equally intelligent authority on the opposite side. So what we find is, that instead of carrying on with the enquiry and discovering what the great man had expounded, his followers took the easier course.



The easier course was to build a church, start worshipping that individual, say that this worship is religion, that you must not question, you must accept, give 'dos' and 'dents' which they must follow, build a group around this, and say this is our leader, our group, our religion and this the greatest. And that kills all enquiry, at least limits the enquiry tremendously because you are not willing to question everything. And you have substituted hero-worship and knowledge for enquiry and wisdom. If the scientists had done the same, if people who believed in Newton's laws had grouped around Newton and started worshipping Newton and made a temple to Newton would we have called them scientists? No, science would not have accepted them as scientists. You have to go through and understand what Newton has said and build further, then you are a scientist. Then why do we accept a man as a religious man if he merely repeats the gospel or puts on certain clothes or sits and worships in a particular way? I am not condemning worship, I am saying, that in itself is not the religious quest. So we have substituted the religious quest, which is what religion is supposed to be, with these by-products of the religious quest. They are by-products. If you were to worship the motor car as science, it would be at the same level of absurdity. Worship or prayer when done not in order to feel religious, but because they do what they do, namely they give you a certain experience, may have a place; but when you think that is being religious, it is an illusion. Like the illusion that if I bathe in the Ganges it washes away my sins—that is just superstition, that is not religion.

Therefore what I want to say to you is that science is not basically antagonistic to religion at all. But there are three aspects to religion as it is practiced today. One is belief which means I will not question I will not inquire because to do so is heresy. Science would not accept that. And we must see the reason why we must not accept that. Because if you have your belief and you are not willing to question it, and the other man comes up with his own belief and he is not willing to question it; then you fight with each other and kill each other which is completely contrary to being religious. Even within the same religion it happens. The Catholics and the Protestants in Ireland have formed churches and groups and are killing each other. Neither of them is Christian according to me. You are a Christian if you live by the sermon on the mount. The sermon on the mount says, love thy neighbour. It does not say go and kill the man who does something contrary to your opinion. It does not say that. But we have reduced religion to membership of a church. I can tomorrow become a Christian or a Buddhist by paying Twenty Rupees a month to some organisation and putting on a different dress. What will that change? Would I have acquired a greater depth of understanding, greater self-knowledge? Without coming upon that how is one a religious being? The mistake is not in going to the church, the mistake is not in the worship, the mistake is when you substitute that for the religious quest.

The second aspect of religion is worship, prayer and rituals. Science is not antagonistic to that so long as it does not forbid

enquiry. It is a purely personal activity, like the form of exercise you choose to do or the way you bathe or clean your teeth. The third and in my opinion the essential aspect of religion is the process of enquiry with which you have to go on. It is the process of enquiry with which you have to go on. If you are a religious being. Even if you are not caught in worship and prayer and do not substitute them for religion, you still have to ask many many fundamental questions. For example, what is God? Posit that as the unknown, something to be discovered. Not accept the opinion of this group or that group. Then you align yourself with one group and then for the rest of your life live like an advocate who pleads for that group. That is not being religious, that is being an advocate for a particular point of view. That would be like a scientist who pleads only for one theory, who is not in quest of truth, he is not a scientist. If we will not accept a scientist as a scientist unless he is pursuing the truth, why should we accept a religious man as a religious man, if he is not pursuing the truth, trying to discover the truth? If he is only pleading for his particular belief, it is like one particular theory at best and could also be superstition. We really do not know. We must have the humility and the intelligence to say, "I do not know." I don't know what the purpose of life is. I don't know whether there is a soul or not, whether there is reincarnation. I want to discover whether it is true or not. They are valid questions and we must live with the question in order to discover the truth. But when you say this is so because, my Guru said so, you cease to be religious. So long as you are asking that question and living with that question, you are religious, because that enquiry is still going on and you are yourself exploring, instead of sticking to a conclusion.

So I want to put it to you, for your consideration, that the scientific quest and the religious quest are really complementary to each other. Because the whole universe is made up of matter as well as consciousness. The existence of consciousness is as much a fact as the existence of matter. The understanding of matter and the biological development of the living things according to a certain order are all parts of the scientific investigation. In the consciousness of man, discovering what virtue is, not positing first what virtue is and then following what is posited, but asking that question is a fundamental sense and exploring what really virtue means. Whether nonviolence is something positive that can be really practiced, or there is only such a thing as the ending of violence? Whether the pursuit of happiness is the same thing as the pursuit of pleasure or it is different? These are all religious questions which must be explored. If you have not come upon that order in your consciousness, if you have not come upon that happiness, you only have words. Until then, one is not truly a religious being. If we posit that as true religion, then the quest can go on. But because we have accepted belief and the different religious groups and so on, to mean being religious, we have eliminated religious enquiry altogether from the field of education. Because we say we are a secular state and if we have to educate the child in religion, then in which religion will we educate him? So we say, because I must not speak about any one religion

therefore I cannot teach him religion at all. So we teach him only science and leave this. Which means an important area of living is ignored completely. Thereby we have ensured the lopsided development of man, which is what we find in the world today which we said has brought us to the point of disaster and annihilation. But if we respect the different religions as historical by-products of the religious inquiry, then we can continue with the religious inquiry for ourselves and treat Hinduism, Buddhism, Christianity, Islam etc as different by-products. But we have to go on with the enquiry ourselves. Then you can inculcate religious enquiry and self-knowledge as an essential part of Education. Real virtue is only a by-product of self-knowledge, otherwise it is not virtue. We have not done that. And therefore, we find this dichotomy and we think science is antagonistic to religion, when they are really two complementary quests. One is the quest for truth and order in the outer world, the other is the quest for truth and order in the inner world of our consciousness. How can there be contradiction between two quests for truth? Truth is universal. Is it not? If something is true, it must be true for the Buddhists, and the Christians and the Hindus; just as the law of gravitation, if it is true, is true everywhere and for everybody. Otherwise it is not the truth, it is just your particular view, and you group around that view and you fight with people of the other view.

So I think the important thing is not to look upon science and religion as two antagonistic activities. It is as important to have a religious mind, in this sense of an enquiring mind which is asking fundamental questions in the field of religion, as it is to have a scientific mind which is precise, which is enquiring, which is critical and sharp in the scientific realm. Indeed the greatest scientist of this century, Einstein, has said that "the truly religious mind is also the truly scientific mind"—one which is engaged in discovering the mystery of existence itself. Don't divide that as the mystery of the outer world and mystery of the inner world of our consciousness. It is all one great mystery. We divide it for the purpose of description, as the outer world and the inner world. But that whole thing is the world in which we live and we are also part of that world. In that spirit if you enquire, you don't say this is antagonistic to that. You enquire at both the places. You observe and reflect to arrive at the truth. You also say, I don't know, because the really intelligent man is the one who knows that he knows very little. I am like Einstein says, "All my knowledge is like one pebble on all the sea-shores of the world." But the young scientist who has just done his M.Sc. and got good marks in the paper on relativity thinks he knows everything about relativity. That certainty from which he speaks is born of ignorance. The man who says I know, is almost invariably the man who does not know. And the man who really says I do not know, probably knows quite a lot and therefore knows that he does not know.

# गन्दी बरती

एक सकरी गली में  
फैली हुई दुर्गन्ध,  
भौकते सज्जेते  
कुत्तों की पतलन  
सड़ता हुआ नाला  
और लोहते सुअर,  
बिलबिलाते कीड़े  
गौर के कत्ते घर  
जैसे काल कोठरी,  
खाली कटोरा लिये  
बिलखते बच्चे  
भूखे घर

उस होटल में उछलते बूँदें  
लुढ़का हुआ  
बाव का प्याला और  
रेशुमार प्रक्सिवा  
मीठी के थुप में  
फैली हुई कुंदन  
जलरागा हुआ बैरा  
और बाव पीते लोग

चिथड़ों में लिपरी  
लड़ती औरते  
माली गलीज़ में  
उड़ता हुआ  
झूड़ा करकर  
काव काव करते कौड़े  
और घूमती हुई  
'जिन्दा लातो'  
उस बरती में

- सुर्वकान्त जोशी

(ए ए एस सी वीओएस इन्सपेरी प्रेज़न्ट)

होल्कर सायन अँडिज क्लेब १९८८-८९ ई



# शताब्दी वर्ष : एक झलक

## आरम्भ - ९१

२६ जनवरी १९९१ को आयोजित 'आरम्भ - ९१' से महाविद्यालय के शताब्दी स्मारक कार्यक्रमों का शुभारंभ हुआ। महाविद्यालय में आयोजित इस कार्यक्रम में परिवार के बरिष्ठतम प्राध्यापक एवं प्राचार्य जी नीलकण्ठ पद्मनाभन का स्वागत किया गया। एक लम्बे अंतराल के बाद महाविद्यालय परिसर में पद्मनाभन दर्शकों की आत्मीय और अनीपचारिक उपस्थिति सबके लिये सुखद और पुरानी स्मृतियों को सजीव सी करती हुई थी। उपस्थित सभी की ओर से डॉ. भागवत ने डॉ. पद्मनाभन का स्वागत किया। महाविद्यालय परिवार ने अपनी कुलजता के प्रतीक स्वरूप उन्हें गाल और श्रीकृत भेंट किया। डॉ. शशि ताम्बे ने अपना गायन प्रस्तुत कर कार्यक्रम को आत्मीय मधुरता दी। डॉ. पद्मनाभन ने अपने संक्षिप्त उद्बोधन में महाविद्यालय से अपने लम्बे सम्बंधों की याद करते हुए - इसके सुखद भविष्य की कामना दी।

महाविद्यालय के प्राध्यापकों द्वारा स्व. महाराजा तुलसीदास होलकर प्रीतिय और स्व. महाराजा शिवाजी राव होलकर की प्रतिमाओं पर पुष्पजली अर्पित की गयी। नव शृंगारित छात्रियों के गलियारों में डॉ. शशि ताम्बे ने अपने



ही गयी। परम में महारानी गणिका देवी होलकर प्राचार्य प्रभाकर काले एवं 'जीता' के प्रसिद्धि ज्योति द्वारा स्व. महाराजा तुलसीदास होलकर प्रीतिय और स्व. महाराजा शिवाजी राव होलकर की प्रतिमाओं पर पुष्पजली अर्पित की गयी। नव शृंगारित छात्रियों के गलियारों में डॉ. शशि ताम्बे ने अपने

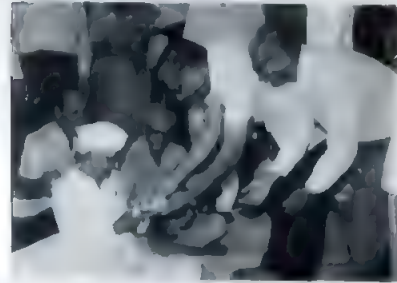


## 'स्मरण - होलकर कॉलेज'

१० जून, १९९१ आज से सौ वर्ष पूर्व आज ही के दिन इस महाविद्यालय की स्थापना हुई थी 'ओहा' और महाविद्यालय के सद्यत तत्पावधान में १० जून १९९१ को 'स्मरण होलकर कॉलेज' कार्यक्रम आयोजित किया गया। छह ९ बजे राजबाई एवं ओहन्ना प्रसिमा पर मान्यवर्षण के साथ महाविद्यालय से (पूर्व तथा वर्तमान में) सम्बद्ध प्राध्यापकों, छात्रों वर्गोपस्थित एवं नगर के प्रमुख नागरिकों की एक बड़ी विभक्ती, जो कुष्माण्डा स्थित होलकर जी परमस्वामी जी की प्रतिमा पर प्रार्थना के बाद नगर में प्रार्थना



गायन से कार्यक्रम की औपचारिक शुरुआत की। गायनमूर्ति श्री गोकर्ण लाल ओझा और श्री रातीश करन ने अपने भार जीवन के शीतल सस्मरण प्रस्तुत किये। होलकर घराने को प्रीतिमिति न देते हुए मातासनी गणिका देवी होलकर ने महाविद्यालय के यशस्वी जीवन की कामना की। इस अवसर पर डाक-तार विभाग के सहयोग से 'प्रथम दिवस आवरण' जारी किया गया। महाविद्यालय के दिनेश प्रकाश दिवस आवरण का विवरण करते हुए पीटर मारुटर जनरल श्री विजय धितले ने इसे आदरणीय बीजनाथ महोदय को भेंट किया - जो



इस अवसर पर विशेष रूप से आमंत्रित थे श्री गणेश्वर और श्री धितले दोनों ही होलकर कॉलेज के विद्यार्थी रह चुके हैं। श्री बीजनाथ महोदय ने १९२१ में बी. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। मालवा अंचल के तपोनिष्ठ एवं परिश्रम व्यक्तित्व के रूप में परिचित महोदय जी अपनी दोनो सामाजिक एवं राजनीतिक यात्रा में मकजीवन, सस्ता साहित्य मण्डल, गंधी सेवा दल और प्रजागन्धल से सक्रिय रूप से सम्बद्ध रहे थे। लोकसभा के (१९५२-५७) सदस्य भी थे ११ मई, १८९७ को जन्मे श्री गणेश्वर आज भी तन्मूर्ति की स्फूर्ति के साथ अपनी सम्पूर्ण वैचारिक निष्ठा से सामाजिक धेतना के कार्यक्रमों से जुड़े हुए हैं। इस अवसर पर पीटर अधिकारी के निदेशक श्री रेड्डी सहित अनेक अधिकारी और कर्मचारी भी उपस्थित थे। उपस्थित जन-समुदाय ने कॉलेज की स्मृति को अपने पास सुरक्षित रखने तथा अपने अन्य मित्रों तक इसे पहुँचाने के लिये प्रथम दिवस आवरणों का क्रय किया। कार्यक्रम पुरानी स्मृतियों को ताज़ा करने और आत्मीय वातावरण की सृष्टि करने की दृष्टि से प्रारंभिक और सार्थक रहा।



सायकान महाविद्यालय के यशवान्त लाल में आयोजित कार्यक्रम कि- श्री के सुप्रसिद्ध कवि डॉ. शिवभानु सिंह 'सुमन' तथा श्री दिनेश्वर साहू की उपस्थिति में सम्पन्न हुआ। श्री लाल ५० के दशक में इस कॉलेज के हिन्दी विभाग से सम्बद्ध थे ४० के दशक में गंधी के छात्र रह चुके श्री साहू आई सी एस



में उत्तीर्ण हुए थे। महाराष्ट्र के मुख्य सचिव और विप्लवा सारथान के निदेशक भी थे कार्यक्रम में महाविद्यालय के पूर्व प्राचार्य का सम्मान किया गया। डॉ. भागवत और डॉ. दयाशंकर जोशी ने अपने संस्मरण प्रस्तुत किये।

२६ जनवरी, १९९१ को 'आरंभ' से प्रारंभ हुए शताब्दी कार्यक्रमों की श्रृंखला में 'स्मरण होलकर कॉलेज' एक लम्बे समय तक याद किया जायेगा।

शताब्दी स्मारक के अत्यंत बड़ी क्रम में महाविद्यालय के विभागों में शैक्षणिक कार्यक्रम समीक्षा समीक्षाओं और व्याख्यान भी आयोजित किये गये। शीतलकुंडे और डॉ. जी. वृष्णा के व्याख्यानों के अतिरिक्त श्री दत्तोत्तम ठेंगडी का बाबा साहब अम्बेडकर पर तथा डॉ. मोहन बांडे का बीरबल साहनी पर व्याख्यान हुआ। श्री जे.जी. अम्बेडकर के साथ प्रार्थना करी से जुड़े थे और एक विख्यात सामाजिक चिंतक हैं। श्री मोहन बांडे इसी महाविद्यालय के १४ म रह चुके हैं और सधार्थी बीरबल साहनी सायकान में कार्यरत हैं।

प्रस्तुति : डा. कु. भाषिक लाल







# शताब्दी समारोह

## ७ से १० दिसम्बर - १९९१

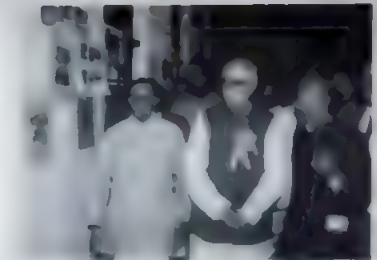
आनन्द, उत्साह और गौरव की ऐतिहासिक स्मृतियों को साक्षर करते हुए, महाविद्यालय ने अपना शताब्दी समारोह आयोजित किया। इस चार दिवसीय - मध्य एवं पूर्वोत्तर क्षेत्र के विद्यार्थियों के उपस्थिति में महामहिम डॉ. अकबरुल्लाह जी शर्मा ने किया। डॉ. शर्मा का इस महाविद्यालय



से परिसर आरम्भ रूप से घनिष्ठ और लगभग तीन दशक पूर्व की स्मृतियों से जुड़ा हुआ है। अपने उद्बोधन में डॉ. शर्मा ने औद्योगिक व आर्थिक विकास के द्वितीय नैतिक मूल्यों की आवश्यकता पर जोर दिया। उन्होंने सत्य की खोज में विज्ञान और दर्शन की समन्वयपूर्ण भूमिका को स्पष्ट करते हुए भारतीय उपलब्धियों का उल्लेख किया। उन्होंने आशा व्यक्त की कि महाविद्यालय परम्परागत शिक्षण के साथ-साथ गीत के क्षेत्र में भी सक्रिय भूमिका निभायेगा। अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में प्रेस के शिक्षामंत्री माननीय श्री विक्रम वर्मा ने हालंकर कॉलेज के गौरवशाली इतिहास और कीर्तिमानों का उल्लेख किया। उन्होंने राष्ट्रीय स्तर पर हो रहे शैक्षणिक परिवर्तनों की चर्चा करते हुए प्रदेश में इस क्षेत्र में किये जा रहे प्रयासों की भी जानकारी दी।



कार्यक्रम में महामहिम उपराष्ट्रपति महोदय ने शिक्षा, विज्ञान, न्यायिक, खेलकूद, साहित्य, पुरातत्व आदि क्षेत्रों से जुड़ी महाविद्यालय की प्रतिभाओं को उनकी उपलब्धियों के लिये सम्मानित किया। जिन प्रतिभाओं का सम्मान किया गया वे हैं - डॉ. भागवत, हरिहर त्रिवेदी, अश्वय कुमार जैन, एन.बी.







प्राथम में मैंने महाविद्यालय के जीवन के इन सौ वर्षों को सुविधानुसार चार काल खण्डों में विभाजित किया था -

१. १९०१ - १९२१ आरम्भ  
१९२२ - १९४६ विकास  
१९४७ - १९६१ स्वतंत्र विकास  
१९६२ - १९८१ ज्ञान विज्ञान

परंतु फिर लगा कि सौ वर्षों के इतिहास को एक स्थान पर समेट लेना न तो सम्भव है, फिर न ही आवश्यक। यह भी स्पष्ट हुआ कि प्राथमिक वर्षों की जानकारी देने वाले लेखों में कुछ एक तो बहुत ही कम शेष हैं, दूसरे जो हैं वे भी दूर होते जा रहे हैं और तीसरे सम्पर्कों में निरंतरता के अभाव में उन तक पहुँच पाना भी सरल नहीं है। आने वाले कुछ वर्षों के बाद उस समय की जानकारी प्राप्त करना लगभग असम्भव होगा - इतिहासियों के इन प्राथमिक वर्षों के बारे में अधिक से अधिक विवरण एकत्र करने का निश्चय किया। इसी प्रकार ४० के दशक तक की जानकारी देने वाले स्वतः भी कम ही थे। इतिहासी महाविद्यालय के विकास की यात्रा को रेखांकित करते हुए, मेरी दूसरी प्रणयिका इस कालखण्ड पर केन्द्रित थी। १९४७ से महाविद्यालय के जीवन में एक बहुत बड़ा परिवर्तन यह आया कि यह अब एक 'शासकीय' संस्था हो गई, फलस्वरूप 'गवर्नर' (बदली) द्वारा प्रोफेसर अध्यक्षता में अध्यापिकों के स्थानांतरण से सम्बंधित और सम्पर्कों की अब तक बली आ रही निरंतरता भंग होने लगी। फलस्वरूप इस कालखण्ड के विवरण इतने थिरके हुए हैं कि उन्हें सूक्ष्म रूप से एक सूत्र में प्रस्तुत करना सम्भव नहीं था। हाँ, संस्मरणों के माध्यम से मैंने इस अवधि को 'स्मारिका' में प्रस्तुत किया है। इसलिए १९४७ से ६१ तक की गतिविधियों को विस्तार नहीं मिल सका है। फिर, हमारे क्षेत्रीय साधन भी सीमित थे। इसलिए पृष्ठ संख्या भी अधिक नहीं बढ़ाई जा सकती थी। होनहार विज्ञान महाविद्यालय के रूप में हमारी आयु अभी मात्र ३०-३१ वर्ष की ही है। इस अवधान को अतीत की स्मृतियों में ले जाने के लिये, अभी कुछ और वर्षों तक प्रतीक्षा की जा सकती है। एक प्रकार से यह स्मारिका महाविद्यालय के सौ वर्षों के पूरा होने पर केन्द्रित अतीत का पुनरावलोकन है। आप सब, इसे इसी भावना से स्वीकार करें - ऐसा विश्वास है।

विद्यमान ९१० वर्षों से, मैं इन पृष्ठों में वर्णित व्यक्तियों की उपस्थिति, अपने आस-पास अनुभव करता रहा हूँ। इस सम्मोहन से बचने का मेरे पास, सिवाय इसके अन्य कोई उपाय नहीं था, कि निश्चय की इस श्रृंखला को आप सब तक भी पहुँचाया जाय। इन पृष्ठों में यदि एक क्षण के लिये आप देख सकें तो मैंने जो दबंग व्यक्तित्व, इन्हें पलटने की फलकलाट में सुगई दे सकें, आपकी गाँउर गाँउन की हुंकार, अनुभव कर सकें। यहाँ इसमें जो फलकलाट या जो घाटे की सांकेतिक उपस्थिति और एक पल को ही सही, साक्षात्कार कर सकें आप गोले, कानोलापरा, सागिर अली, डाबरसन, चतुर्वेदी, घोष और बोरसोकर से तो हमारा यह श्रम सांकेतिक हुआ, समझिये। पर इसके लिये आपको चलना होगा हमारे साथ। उस संस्मरण सड़क पर और गजरना होगा उस दूटे पुल से जो जोड़ता है इस शताब्दी को उस शताब्दी से और मुझे ही नहीं हम सबको आप सबकी गांव-पड़ोस पर पूरा विश्वास है। इन पृष्ठों में जितना कहा गया है, उससे कहीं अधिक फूट गया है।

फिर कभी, किसी अन्य अवसर पर किसी अन्य द्वारा यह शेष गाथा प्रस्तुत की जा सकती। यह विश्वास बनाये रखिये स्मारिका में हुई त्रुटियाँ एवं खामियाँ के लिये हम आपसे क्षमा चाहते हैं। कुछ चित्र जो हमें मिले थे वे बहुत अस्पष्ट और क्षीणस्त थे। तकनीकी दृष्टि से उनकी ठीक अनुकूल प्रस्तुत करना सम्भव नहीं था। फिर भी ऐतिहासिक महत्व के कारण हमने उन्हें प्रकाशित किया है।

मैं, डॉ. माधवत, डॉ. हरमलकर, डॉ. आर.एन. जैन, मोहन लालजी ओझा और प्रो. प्रभाकर काले के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ। इन सभी ने घंटों धैर्य-पूर्वक मेरे साथ बैठकर इस सामग्री को देखा है। उनकी प्रसन्न सहमति ने मुझे सम्बल दिया है। मैं, आदरणीय मनोहरसिंह जी मेहता, आनन्दसिंह जी मेहता और डॉ. हरिहर त्रिवेदी का आभारी हूँ - जिन्होंने आंशिक रूप में इस सामग्री को देखा है, अनेक अवसरों पर मेरी मदद की और मेरा उत्साह बढ़ाया है। स्मारिका और शताब्दी समारोह की प्रांशिक तैयारियाँ डॉ. माधव गणेश ने के साथ प्रारंभ की गयी थीं। बाद के वर्षों में प्रो. निलोसे और डॉ. ओ.एन. माथुर के कार्यकाल में इन प्रयासों में गति आयी और उनका एक स्पष्ट स्वरूप तैयार किया जा सका। इन सब के प्रति मेरे विनम्र आभार स्मारिका की प्रस्तुति में सभी आत्मीय स्वजनों से मिले सहयोग को कृतज्ञता पूर्वक स्वीकार करता हूँ। मैं उन सबके प्रति अपने प्रणाम निवेदित करता हूँ। सदस्य सहयोगियों (साबर, दुबे और जोशी) के अथक श्रम और रुचि से ही स्मारिका को बेहतर रूप में प्रस्तुत किया जाना सम्भव हुआ। मैं स्नेहपूर्वक उनके योगदान को स्वीकार करता हूँ। उनका यह ऋण मुझ पर सदा ही बना रहेगा।

आइये! हम सब मिलकर इतिहास को बार-बार पढ़ें! अपने पितृ-पुरुषों का स्मरण करें और उन बीते वर्षों को एक बार फिर जियें। संस्कारों का जो अश्वत्थ हमें विरासत में मिला है, उस सुरक्षित रखने के अपने सक्त्यों को दोहराये।

ज्येष्ठ शुक्ल १०, सम्बत् २०४९.  
१० जून, १९९२.

(कौशिक)







## शताब्दी वर्ष में प्राध्यापक परिवार

प्राचार्य - प्रो. प्रभाकर काले

### रसायन विभाग

- १ प्रो श्रीमती लीला नाईक
- २ प्रो एम जी फडके
- ३ डॉ एच जी असावा
- ४ डॉ बी के माहेश्वरी
- ५ डॉ सी के खुराना
- ६ डॉ के के चतुर्वेदी
- ७ श्रीमती एस डोबले
- ८ प्रो के डी वर्मा
- ९ प्रो एस टी मुशी
- १० प्रो एस एल जोशी
- ११ डॉ आर टी श्रीवास्तव
- १२ डॉ एन सी दुबे
- १३ डॉ सी पी. सक्सेना
- १४ डॉ व्ही एन. भटनगर
- १५ डॉ ए.जी. फडनीस
- १६ डॉ ए.एस. कोठारी
- १७ डॉ. डी पी दुबे
- १८ डॉ आर सी दग्धी
- १९ श्रीमती एन जैन
- २० श्रीमती के जैन
- २१ प्रो एस के बडजात्या
- २२ प्रो एस एस छाबड़ा
- २३ प्रो के सी चौधरी
- २४ डॉ जी पी शर्मा
- २५ प्रो श्रीमती एम मडलीई
- २६ प्रो आर के वद
- २७ डॉ (कुमारी) वदना शर्मा
- २८ प्रो ए के शिलावट
- २९ डॉ श्रीमती वृषाली चौधरी
- ३० प्रो श्रीमती ए सक्सेना
- ३१ प्रो (कुमारी) एस हार्डिया

### भौतिकी विभाग

- १ डॉ श्रीमती ऊषा गुप्ता
- २ डॉ एस बी घारपुरे
- ३ प्रो आर जी केकरे
- ४ डॉ एस एस अम्यकर
- ५ डॉ के एन सक्सेना
- ६ डॉ एन आर भारतीय
- ७ डॉ एस डी पाडे
- ८ डॉ आर एस श्रीवास्तव
- ९ डॉ एम के लालन
- १० डॉ एस सी मेहता
- ११ डॉ के एन चतुर्वेदी
- १२ डॉ एस जी येलनकर
- १३ डॉ पी सी गुप्ता
- १४ डॉ एस के राठीर
- १५ प्रो एम एम मुशी
- १६ प्रो डी पी दीक्षित
- १७ प्रो ए ए दीक्षित
- १८ प्रो एस एल शर्मा
- १९ प्रो एस जी घाटपाडे
- २० प्रो एस एस सेंगर
- २१ प्रो के के जैन
- २२ प्रो श्रीमती एस गुप्ते
- २३ प्रो श्रीमती एस पेडारकर
- २४ डॉ कु एस वैद्य
- २५ प्रो कु रागिनी सिंह

### वानस्पतिकी विभाग

- १ प्रो ए बी सीरवानी
- २ प्रो पी पी रिह
- ३ प्रो एस सी गुप्ता



- ४ प्रो श्रीमती के गजीवाल
- ५ प्रो एस के मिश्रा
- ६ डॉ एस पी नागर
- ७ प्रो श्रीमती एस विवरकर
- ८ प्रो श्रीमती के पचोली
- ९ डॉ भोलेश्वर दुबे
- १० प्रो. श्रीमती प्रीति चतुर्वेदी
- ११ प्रो. (कुमारी) स्मिता सत्या
- १२ प्रो श्रीमती मनोषा टण्डवले
- १३ प्रो श्रीमती सधिता श्रीवास्तव

### प्राणिकी विभाग

- १ डॉ. आर पी सिंह
- २ डॉ आर एस पुरवार
- ३ डॉ डी एस ठकार
- ४ डॉ जी के दुबे
- ५ डॉ ए.के दीक्षित
- ६ डॉ अशोक शर्मा
- ७ डॉ एन के मुद्गल
- ८ डॉ श्रीमती एच कुर्डे
- ९ डॉ श्रीमती पी कारखेडीकर
- १० प्रो श्री के सी अग्रवाल
- ११ प्रो. श्रीमती के मिश्रा
- १२ डॉ श्रीमती रेखा पुण्डीर

- १३ डॉ श्रीमती मीनाक्षी शर्मा
- १४ डॉ श्रीमती आशा पान

### गणित एवम् सांख्यिकी विभाग

- १ डॉ सी के दुबे
- २ डॉ डी जी जोशी
- ३ प्रो जे सी मिश्रा
- ४ प्रो जी डी पाजीवाल
- ५ डॉ सी एस परिवार
- ६ प्रो एस पी नेमा
- ७ प्रो डी के बेनजी
- ८ प्रो एस के बडो
- ९ प्रो एन के दुबे
- १० प्रो के बी राजवले
- ११ प्रो पी एस मूल्हा
- १२ प्रो श्रीमती पी खाबिया
- १३ प्रो श्रीमती मधु तिवारी
- १४ प्रो श्रीमती ममला बोरगडे
- १५ प्रो (कुमारी) अमिता सिंह

### जीव रसायन विभाग

- १ प्रो आर के नागर
- २ प्रो आर एस माहेश्वरी
- ३ प्रो अनिल राय बाभम
- ४ प्रो बबलू सातनकर

### भौमिकी विभाग

- १ डॉ. बी.सी. जेठ
- २ पी. ए. जय अशरदेवीकर
- ३ प्रो. जे.पी. सक्सेना
- ४ प्रो. आर.डी. तायी
- ५ प्रो. श्रीमती विनीता कुलश्रेष्ठ
- ६ डॉ. नरेन्द्र जोशी

### अंग्रेजी/हिन्दी विभाग

- १ प्रो. एन.एन. गुप्ता
- २ प्रो. श्रीमती बी. गुजराल

### ३ प्रो. एन.जी. काले

- ४ डॉ. आर.सी. मित्तलारे
- ५ डॉ. (कुमारी) एन. सांभर
- ६ डॉ. आर.पी. राजगुरु (हिन्दी)
- ७ प्रो. श्रीमती पी. श्रीवासदाय
- ८ प्रो. श्रीमती रजनी मिश्रा
- ९ डॉ. (कुमारी) रेखा ओझा

### अन्य सदस्य

- १ श्रीमती पी. कवीश्वर - रजिस्ट्रार
- २ श्री आर.के. लंगर - ग्रीडा अधिकारी

## कर्मचारी परिवार

### (अ)

- १ श्री अर.सी. मार्गव
- २ श्री डी.एन. शर्मा
- ३ श्री एन.पी. डंगार
- ४ श्रीमती टी. जैन

- ५ श्री एन.के. व्यास
- ६ श्री टी.एच. वर्मा
- ७ श्री एन.एल. परिहार
- ८ श्री शरद जोशी
- ९ श्री एस.एन. यादव
- १० श्री डी.एन. गडक



- ११ श्री गणपत सिंह
- १२ श्री व्ही.जी. गेलकर
- १३ श्री पी.एम. उपरसनी
- १४ श्री आर.एस. बंगलावाला
- १५ श्री जी.डी. पारिख
- १६ श्री बी.डी. सुरवाड़े
- १७ श्री नाथुलाल वर्मा
- १८ श्री एन.एल. वर्मा
- १९ श्री ए.के. जैन
- २० श्री एन.बी. तारे
- २१ श्री आर.एस. चतुर्वेदी
- २२ श्री जे.सी. भारतीय
- २३ श्री सी.आर. धर्माधिकारी
- २४ श्री जे.एल. जैन
- २५ श्री धनश्याम चतुर्वेदी
- २६ श्री एस.डी. गुडला
- २७ श्री एस.एन. अग्रवाल
- २८ श्री आर.सी. जायसवाल
- २९ श्री सतीश तारे
- ३० श्री राजेश कछवाह
- ३१ श्री ए.के. याबले
- ३२ श्री पी.डी. शर्मा
- ३३ श्री एन.के. चौहान
- ३४ श्री प्रहलाद वर्मा
- ३५ श्री गोविन्द दुबेलिया
- ३६ श्री ए.के. वाजपेई
- ३७ श्री गोपाल सुर्यदाय
- ३८ श्री लोकेन्द्र सौलकी
- ३९ श्री सी.एस. सकरगये
- ४० श्री गणपत राणे
- ४१ श्री मोहनलाल शर्मा
- ४२ श्री मोहनलाल चौहान
- ४३ श्री समदर सिंह भण्डारी
- ४४ कुमारी पुष्पा चौहान
- ४५ श्री मशाराम मार्गव
- ४६ कुमारी मीना दीक्षित
- ४७ कुमारी ज्योति चौहान
- ४८ श्री रमेश लालचन्द
- ४९ श्री ओ.पी. कारपेटर
- ५० श्री नरेन्द्र सिंह नागर

### (ब)

- १ श्री रामेश्वर बेरागी
- २ श्री दुर्गेश कोशल
- ३ श्री सुरेश केशव
- ४ श्री ओ.पी. नागर
- ५ श्री जी.एन. कुन्हारे

- ६ श्री रामदास
- ७ श्री लालाराम
- ८ श्री मेकलाल
- ९ राजाराम भावव
- १० श्री किशोर
- ११ श्री काशीराम चौहान
- १२ श्री बट्टीलाल
- १३ श्री राहु छेदी
- १४ श्री मोतीलाल
- १५ श्री गंगाराम जाधव
- १६ श्री जयराज
- १७ श्री रामसिंह
- १८ श्री छगनलाल पंचवाल
- १९ श्री रामचन्द्र मोहन
- २० श्री उमाकांत
- २१ श्री हेमंत जनार्दन
- २२ श्री दिनेश सूरजदीन
- २३ श्री विजय नागर
- २४ श्री ओ.पी. यादव
- २५ श्री एस.एन. वर्मा
- २६ श्री कमल जैन
- २७ श्री प्रकाश मावदे
- २८ श्री रामचरण
- २९ श्री शांतवत
- ३० श्री रमेश अमरसिंह
- ३१ श्रीमती देवीबाई बोराडे
- ३२ श्रीमती बेबीबाई कदम
- ३३ श्री ईशरलाल
- ३४ श्री गोविन्द सिंह
- ३५ श्री राजेश लिखार
- ३६ श्री संजय जायसवाल
- ३७ श्री दिल्या डाबर
- ३८ श्री केसरसिंह बघेल
- ३९ श्री राजेन्द्र शर्मा
- ४० श्री सतीश सारवान
- ४१ श्री पी.एस. मुनी
- ४२ श्री किशनलाल रेडवाल
- ४३ श्री खेमचन्द जाटव
- ४४ श्री मदनलाल
- ४५ श्री के.डी. शर्मा
- ४६ श्री यादवराव
- ४७ श्री लालसिंह पटेल
- ४८ श्री जे.बी. आठले
- ४९ श्री डी.जी. पोफस्तकर
- ५० श्री रामभाऊ
- ५१ श्री मुन्नारल
- ५२ श्री तुलसीराम
- ५३ श्री मोहनलाल





१. श्री सुकुमार
२. श्री लालचंद
३. श्री लालचंद
४. श्री लालचंद
५. श्री लालचंद
६. श्री लालचंद
७. श्री लालचंद
८. श्री लालचंद
९. श्री लालचंद
१०. श्री लालचंद
११. श्री लालचंद
१२. श्री लालचंद
१३. श्री लालचंद
१४. श्री लालचंद
१५. श्री लालचंद
१६. श्री लालचंद
१७. श्री लालचंद
१८. श्री लालचंद
१९. श्री लालचंद
२०. श्री लालचंद

२१. श्री लालचंद
२२. श्री लालचंद
२३. श्री लालचंद
२४. श्री लालचंद
२५. श्री लालचंद
२६. श्री लालचंद
२७. श्री लालचंद
२८. श्री लालचंद
२९. श्री लालचंद
३०. श्री लालचंद
३१. श्री लालचंद
३२. श्री लालचंद
३३. श्री लालचंद
३४. श्री लालचंद
३५. श्री लालचंद
३६. श्री लालचंद
३७. श्री लालचंद
३८. श्री लालचंद
३९. श्री लालचंद
४०. श्री लालचंद

## पं. राहुल सांकृत्यायन होलकर महाविद्यालय में - १९४७-४८



पं. राहुल सांकृत्यायन होलकर महाविद्यालय में -  
१९४७-४८

## होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर एवं ओल्ड होलकरियन्स एसोसिएशन

मान्यवर,

यह महाविद्यालय अपने जीवन के सौ वर्ष पूरे करने जा रहा है अपनी इस दीर्घ शैक्षणिक यात्रा में महाविद्यालय ने अनेकों कीर्तिमान स्थापित किये हैं और अपनी उपलब्धियों से अपनी एक विशेष पहचान बनायी है शैक्षणिक गतिविधियों के साथ-साथ सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनीतिक, प्रशासकीय एव क्रीड़ा के क्षेत्रों में इस महाविद्यालय के विद्यार्थियों ने उल्लेखनीय सफलताएँ अर्जित कर संस्था के और नगर के गौरव को बढ़ाया है व्यापक रूप से नगर की अस्मिता से तादात्म्य रखते हुए महाविद्यालय ने राष्ट्रीय स्तर की ख्याति अर्जित की है

आज जब चारों ओर मूल्यों का तेजी से पतन हो रहा है, तब ऐसे संक्रमण काल में भी होलकर विज्ञान महाविद्यालय स्थापित मूल्यों पर चलने का लिए वृत्त-संकल्प है इसकी यह नई यात्रा आस्थाओं की दृढ़ता और सकल्यों की परिवर्तता की यात्रा है जिसमें यशस्वी भविष्य के सुखद संकेत हैं

महाविद्यालय के शैक्षणिक आयामों को नये स्वरूप देने के लिए उसकी भौतिक सुविधाओं का विस्तार और परिवेश की भव्यता प्राथमिक रूप से महत्वपूर्ण है इसीलिए महाविद्यालय के भावी विकास की यात्रा में आप सबकी सक्रिय सहभागिता को रेखांकित करते हुए हम इस पत्र के माध्यम से आप तक पहुँच रहे हैं

महाविद्यालय परिवार और पूर्व विद्यार्थियों ने सम्मिलित रूप से इस दिशा में ठोस कार्य करने हेतु कुछ सकल्प लिये हैं, जिनमें मुख्य हैं:-

**महाविद्यालय में एक सुसज्जित सभागृह का निर्माण :**

इस कार्य के लिये सम्भावित 25 लाख की धनराशि आप सबके सहयोग से एकत्रित किये जाने का निश्चय किया गया है इस पुनीत कार्य में नगर के सभी प्रबुद्ध नागरिकों और महाविद्यालय के पूर्व विद्यार्थियों के सहयोग का हमें पूर्ण विश्वास है

\* यदि आप महाविद्यालय के पूर्व विद्यार्थी हैं तो Old Holkanans Association के सरक्षक/आजीवन या वार्षिक सदस्य बन सकते हैं इनके लिये क्रमशः 5000 रुपये, 500 रुपये या 50 रुपये (25 रुपये प्रवेश शुल्क, 25 रुपये वार्षिक सदस्यता शुल्क) भेजे

\* महाविद्यालय में भौतिक सुविधाओं के विस्तार के लिये अपनी सहयोग राशि यथाशक्ति भेजे ये राशि आप क्रॉसडचेक अथवा डिमांड-ड्राफ्ट से निम्नांकित पते पर भेजे -

**अध्यक्ष - ओल्ड होलकरियन्स एसोसिएशन, डा.स - प्राचार्य, होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर, म.प्र.**

आइये हम सब इन ऐतिहासिक क्षणों के साक्षी बने महाविद्यालय की इस नयी यात्रा के मंगलाचरण को अपने समवेत स्वर दे और इसके सकल्यों को अपनी शक्ति दे

एस.के. पंडित

प्रभाकर काले

गोवर्धनलाल ओझा

ओल्ड होलकरियन्स एसोसिएशन का खाता स्टेट बैंक ऑफ इन्दौर होलकर विज्ञान महाविद्यालय एक्सटेंशन काउन्टर में Ex-8-52 है राशि क्रॉस चेक द्वारा जमा कराई जा सकती है

With Best Compliments From :



**Power Batteries  
Power Electricals and Electronics.**

■ Manufacturers of Batteries and Transformers ■



296-Tilak Nagar, Indore

Phone : 492374 (Resi.) 491326 (Off.) 411932, 412586 (Fac.)



With Best Compliments From :



**SYNPRO INDUSTRIES**

*(Prop. Synpro Surface Coatings P Ltd.)*  
50-51, 60-61, Industrial Estate, Pologround,  
INDORE - 462 003  
Phone : 36451, 3 Lines  
Telex : 0735-266 Synpro Ind

With Best Compliments From :



**Ruchi**  
Strips & Alloys Ltd.

**(Manufacturers of Cold Rolled Coils and Sheets)**

501 - Mahakosh House  
75-South Tukoganj  
INDORE - 462 001

With Best Compliments From :



**SCHOLAR'S BOOK CENTRE**

■ Scientific Book Distributors & Libraries Suppliers ■  
200 Khajuri Bazar  
PATNA

With Best Compliments From

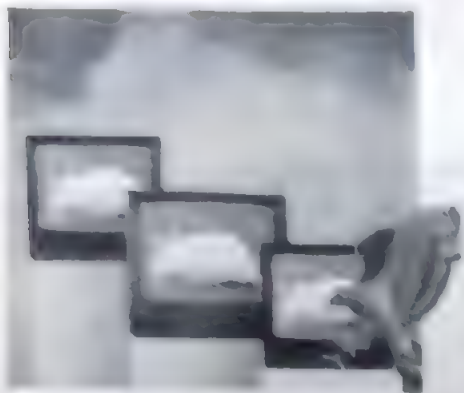


**ST. MARY GIRLS COLLEGE**

■ Patna Nagar, Patna ■  
CHANDRA CHANDRA NAGAR  
PATNA

CHINMAY SHARMA  
PATNA





**BPL-TV**  
Always the best!

Authorised Dealer :  
**PALACE  
ELECTRONICS**

29, MAHARANI ROAD, INDORE  
Ph 430429

With Best Compliments From



**MUKESH RADIOS**

Authorised Dealer

- OPTONICA T.V. & V.C.R
- CROWN T.V. & V.C.R
- PHILIPS T.V. & V.C.R




9 MAHARANI ROAD, INDORE 462 001  
Tel 32723

# MBBS, MBA or Software Engineering?

There's an exciting career opening up for students today - Software Engineering.

Our new Software Engineering course propels you into the class of the computer elite.

What's more, its semi-ster format means that you can learn to earn your way to success. Interested? Fill this coupon for details.



Here's the new computer course for graduates who want to begin working in the computer world today for free counselling.

Name \_\_\_\_\_

Address \_\_\_\_\_

Age \_\_\_\_\_ Sex \_\_\_\_\_

Phone Number \_\_\_\_\_

Start life with an advantage

At  
Harihara  
when the birds  
nest in the factory  
the fishes breed  
in the effluent streams  
and the lush greenery  
looks inviting  
it is not by  
accident.

It's the result of our commitment  
to a clean environment.

## GRASIM INDUSTRIES LIMITED

UNITS:  
HARIHAR POLYFIBERS  
GRASILENE DIVISION

WORKS: KUMARAPATNAM 581 123 NEAR HARIHAR - KARNATAKA  
TEL: (08197) 2171-75 TELEX: (0834) 221/224 FAX: (08197) 2875

We practise pollution-prevention and pollution-control together.



## IGNOU

Management + more with the times

the editor beginning from January 1992

- 1. Master of Business Administration (MBA)
- 2. Diploma in Management (DM)
- 3. Diploma in Management (ADM)
- 4. Diploma in Management (SDM)
- 5. Diploma in Human Resource Management (DHM)
- 6. Diploma in Financial Management (DFM)
- 7. Diploma in Operations Management (DOM)
- 8. Diploma in Marketing Management (DMM)

MANAGEMENT PROGRAMME MBA DM ADM SDM

Students may apply for admission to any of the above programmes. The application form and prospectus may be obtained from the Regional Director, Regional Centre, Indore Gandhi National Open University, B-10, 25, Indore, M.P. 462 008.

If a student does not wish to or cannot complete all the 24 courses to earn a Master of Business Administration (MBA) degree, she can opt for a diploma in Management (DM) or a diploma in Management (ADM) or a diploma in Management (SDM).

Students may also opt for admission to any of the above programmes. The application form and prospectus may be obtained from the Regional Director, Regional Centre, Indore Gandhi National Open University, B-10, 25, Indore, M.P. 462 008.

### PREPARATION DIPLOMA (PDI) ENTRY

Students may also opt for admission to any of the above programmes. The application form and prospectus may be obtained from the Regional Director, Regional Centre, Indore Gandhi National Open University, B-10, 25, Indore, M.P. 462 008.

Students may also opt for admission to any of the above programmes. The application form and prospectus may be obtained from the Regional Director, Regional Centre, Indore Gandhi National Open University, B-10, 25, Indore, M.P. 462 008.

- 9. Courses
- 10. Courses
- 11. Courses

- 12. Courses
- 13. Courses
- 14. Courses
- 15. Courses

The above mentioned courses are offered through Open Distance Education in Management. The application form and prospectus may be obtained from the Regional Director, Regional Centre, Indore Gandhi National Open University, B-10, 25, Indore, M.P. 462 008.

Application form and Guide for applicants can be had from the following: GNOU, study centres or the Regional Director, Regional Centre, Indore Gandhi National Open University, B-10, 25, Indore, M.P. 462 008.

1. M + M College
2. B-OPAL, 462 008
3. B-OPAL, 462 008
4. B-OPAL, 462 008
5. B-OPAL, 462 008
6. B-OPAL, 462 008
7. B-OPAL, 462 008
8. B-OPAL, 462 008
9. B-OPAL, 462 008
10. B-OPAL, 462 008
11. B-OPAL, 462 008
12. B-OPAL, 462 008
13. B-OPAL, 462 008
14. B-OPAL, 462 008
15. B-OPAL, 462 008

## With Best Compliments From ARYA MACHINERY STORES

140, Telgali, Siyaganj, INDORE - 452 007  
Phone : Off. 32679 • Fact. 34025 • Res. 61605

SISTER CONCERNS

### ARYA PLASTIC INDUSTRIES

POLOGROUND, INDORE  
Sale Office : 14, Imli Bazar, Indore  
Phone : Fact. 34025 • Off. 32679 • Res. 61605

### ARYA-O-PLAST

Opp. Coca Cola Factory, A.B. Road, INDORE  
Phone : Fact. 62978 • Off. 32679 • Res. 61605

### ARYA INTERPRISES

Opp. Coca Cola Factory, A.B. Road, Indore

With Best Compliments From :



## PANJWANI PACKAGINGS LTD.

Admn. Off. : 35-36, Rambali Nagar, Kila Madan, Indore

Dr. D.D. Kaurshla  
Director  
GNOU

With Best Compliments From :

### CASH CHEMISTS AGENCIES

2/2 - Siyaganj  
INDORE - 452 007.  
Phone : 35098.

*Insist  
On  
Nirma Products*

For Milky Whiteness : Nirma Powder & Cake.

- RADHA MOHAN AGENCIES  
34, Ware House Road,  
INDORE (M.P.)

#### ALWAYS USE

- ▶ Nirma Beauty Soap
- ▶ Nirma Bath Soap



With Best Compliments From .

- **STEEL PALACE**
- **M.K. STEELS**
- **MANSAGAR CONSTRUCTIONS PVT. LTD.**

44-Hathipala Road,  
Indore - 452 007

☎ (O) 65774, 60805 (R) 492470, 491557

With Best Compliments From :

### AGRAWAL AGENCIES

Dealers in

CHEMICALS : E. Merck, BDH, GLAXO, HIMEDIA.

GLASS WARE : VYLINE, VENSIL

INSTRUMENTS : KUMAR, FOCUS.

PLASTIC WARE : LAXBRO.

Branch : 37-Jaora Compound, Opp. M.Y. Hospital, Indore - 452 001  
H.O. : 2-3, Sindhi Market, Bhopal. (M.P.) ☎ 72573.



With Best Compliments From :

## ELECTRONIC APPLIANCES

254, Dhar Road, Indore - 452 002.  
Tel. No. 61634 & 62996

### Authorised Dealers For :

- |                            |                                   |
|----------------------------|-----------------------------------|
| 1. Siemens Ltd.            | : Starters, Switchgears & Motors. |
| 2. C.C.I. Limited.         | : Cables & Accessories.           |
| 3. Kaycee Limited.         | : Switches, Meters & Counters.    |
| 4. Universal Transformers. | : Transformers & Panels.          |
| 5. Bharat Bijlee Ltd.      | : Transformers & Motors.          |

With Best Compliments From :



## NARAYAN IRON WORKS

■ G.C., G.P., C.R. SHEETS STOCKISTS ■

Dealers :

- Nippon Denro Ispat Ltd. ● Usha Ispat Ltd. ●  
17-South Hathipala, Indore - 452 007  
☎ 65320 (Off.) 463604, 463589 (Resi.)  
----- Other Concerns -----

SHREE NARAYANJI STEELS  
SHREE SHANKAR STEEL TRADERS

With Best Compliments From :

## BOMBAY PHARMA PRODUCTS

222-223, Palsikar Colony,  
Indore - 452 004.  
Phone : 62549, 63298.

With Best Compliments From :

## METAL EQUIP ENTERPRISERS

Opp. Coca-Cola, Factory, Agra-Bombay Road.  
Indore - 452 001.  
Phone : 60843.



### REMI INSTRUMENTS

14, Shah Industrial Estate  
 Veera Desai Road, Andheri (W)  
 BOMBAY - 4000 58  
 Phone : 6267736/ 6267419/ 6267424.

#### Our Range of Products :

- \* Laboratory stirrers/ Magnetic stirrers.
- \* Laboratory Centrifuges/ Refrigerated Centrifuges.
- \* Laboratory Blenders/ Cyclo Mixers.
- \* Rotary Shakers.
- \* B.O.D. Incubators.
- \* Environmental Test Chambers.
- \* Humidity Controlled Oven.
- \* Orbital Shaking Incubators.

#### Authorised Dealers :

KASLIWAL BROTHERS.  
 32, Jaora Compound  
 Opp. M.Y. Hospital  
 INDORE - M.P.

# LABO<sup>®</sup>

### LABORATORY EQUIPMENT TRADERS

AMBALA - CANTT

133-001

Telex : 392-205 Fax : 171-43018. Phone : 21140

The Only Microscope with 'ISI' Mark Since 1969.

#### Our Range of Products :

- \* Student Microscopes.
- \* Dissecting Microscopes.
- \* Pathological Microscopes.
- \* Binocular Inclined Research Microscope.
- \* Trinocular Research Microscope.
- \* Phase Contrast Microscope.
- \* Universal Research Microscope with Advanced Microphotography Equipment.
- \* Binocular Stereoscopic Microscope.

#### Authorised Dealers :

KASLIWAL BROTHERS  
 32, Jaora Compound  
 Opp. M.Y. Hospital  
 INDORE - M.P.

ॐ ॐ

शुभकामनाओं सहित

ॐ ॐ

आबू सीमेंट वर्क्स  
 इन्दौर.

With Best Compliments From .



**prakash solvek**

31/F-12, Vatsalaya Chamber,  
 Sneha Nagar - Main Road  
 Indore (MP)

Phone : Indore : 464411-12-13, Pithampur : 5295-96.

**MANUFACTURER OF SOYA DOC AND OIL**



**DHONA INSTRUMENTS PVT. LTD.,**

8, Bendish Street,  
Taher Mansion, West Block  
CALCUTTA - 700 001

For

***Dhona***

Single Pan Analytical Balances.

**Authorised Dealers :**  
**ALLIED ENTERPRISES**  
19/2, New Palasia  
INDORE - (MP)

With Best Compliments From :

**MEDICARE**

4/5 Old Palasia, Ravindra Nagar  
INDORE - 452 001 (M.P.)  
Phone : 490577, 492621

**U - LAB**

**DIRECTOR:**

**Pradeep Apte**

M.Sc. (Biochemistry)

- (1) Member American Association for Clinical Chemistry
- (2) Member New York Academy of Sciences

**MEDICARE** Stands for Diagnosis Treatment, Research and Education



**LOBA CHEMIE PVT. LTD.**

B-12, Sea Lord, Cuffe Parade  
Post Box No. 8136  
BOMBAY - 400 005  
Phone : 311145, 312632 - Telex : 1154990 LOBA IN

**Manufacturers Of :**

LOBA Brand Laboratory Chemicals, Solvents, Acids

**Authorised Dealers :**  
**KASUWAL BROTHERS**  
32, Jodha Compound  
Opp. M. V. Hospital  
INDORE - MP

With Best Compliments From :



**Pharmaceuticals**

9/3, North Raychalla, Indore - 452 002  
Phone : 412124, 411138

■ Proprietor : ANIL BHATIA ■

## ELICO PRIVATE LIMITED

B-17, Sanathnagar I.E.  
Hyderabad - 500 018

### Our Range of Products :

- pH Meters - Digital & Analogue
- Photo Electric Colorimeter
- Spectrophotometer UV & Visible
- Flame Photometers
- Conductivity meter
- Water Quality Analyser
- Digital Dissolved Oxygen Analyser
- Turbidity meter



Authorised Dealers :  
KASLIWAL BROTHERS.  
32, Jaora Compound  
Opp. M.Y. Hospital  
INDORE - M.P.

With Best Compliments From :

**Sanjay Gorani**

Ex-Jt. Secretary, Holkar Science College, Indore

**SUPER STEEL MFG. CO. PVT. LTD.,**

B/15- Pologround, Indore.

With Best Compliments From

*Khaitan (India) Ltd..*

Abhilasha Apartment,  
585/2-B, M.G. Road, Indore - 452 001  
☎ 22834.

With Best Compliments From :

**TULIKA INTERNATIONAL LTD.**

12/1, North Hathipala, Indore  
Tel. : 36365, 432433, 430475  
Telex : 0735-499 SHAH IN

**Mfrs. & Dealers : Basic Drugs.**



With Best Compliments From :  
● Avinash Sobji ● Kuldeep Singh Parwana ●

## **NEW BOMBAY ROAD LINES**

10-Shivam Chambers, New Loha Mandi, Indore.

Daily & Direct Parcel Service from Indore to All Madhya Pradesh.

With Best Compliments From :

## **SCIENTIFIC LITERATURE CO.**

Barjatya Chambers, 44-Jaora Compound, Opp. M.Y. Hospital,  
INDORE - 452 001  
Phone : 462141

Medical, Dental, Veterinary, Pharmaceutical,  
Ayurvedic, Homoeopathic, Agricultural  
Book Sellers.

With Best Compliments From



## **PRASHANT SCIENTIFIC**

565 - Sudama Nagar, Indore.

With Best Compliments From

## **KALPANA INDUSTRIES PVT. LTD.**

Industrial Area No. 3, A.B. Road,  
DEWAS - 455 001



शुभकामनाओं सहित



**एक्यूरेट सेल्स एजेंट्रीज**

शक्कर बाजार  
इन्दौर



**JAI DEEP GLASS WORKS PRIVATE LIMITED**

(SPINNING DIVISION)

16-B, BUILDERS COLONY, INDORE - 452 001

☎ 30038, 36144

**"MANUFACTURERS AND EXPORTERS  
OF SYNTHETIC AND BLENDED YARN"**

**REGD. OFFICE :**

134/136 Zaveri Bazar

1st Floor (Near L.K. Market)

Bombay 400 002

Phone : (022) 296372, 315487

**FACTORY :**

418/419 Sector - III

Pithampur, Distt. Dhar (M.P.)

Phone : (072934) 5124, 5347

With Best Compliments From :

**NILNITA SOAPS AND DETERGENT**

Pithampur, Dist. Dhar,  
(Madhya Pradesh)

With Best Compliments From

**BAJARANG SOLVENT**

Pithampur, Dist. Dhar,  
(Madhya Pradesh)





**BPL-TV**  
*Always the best!*

*Authorised Dealer :*

**PALACE  
ELECTRONICS**

29, MAHARANI ROAD, INDORE  
Ph 430429

With Best Compliments From :



**MUKESH RADIOS**

*Authorised Dealer*

- OPTONICA T.V. & V.C.R.
- CROWN T.V. & V.C.R.
- PHILIPS T.V. & V.C.R.



9-MAHARANI ROAD, INDORE-452 007  
☎ 32723.

With Best Compliments From

**PRATAP STEEL**

Pithampur Dist Dhar  
Madhya Pradesh

With Best Compliments From

**Jyoti Laxmi Cectex Pvt. Ltd.**

Pithampur Dist Dhar  
Madhya Pradesh

श्रीलंका विद्यालय महाविद्यालय के छात्रों  
वर्ष पर हार्दिक शुभकामनाएँ

**योगेन्द्र कुमार खुराना**

३ बीएल एलएल यूके

श्रीलंका विद्यालय महाविद्यालय के छात्रों  
वर्ष पर हार्दिक शुभकामनाएँ

**मे. बी.जे. कम्पनी प्रा.लि.,**

कलकत्ता-२२

श्रीलंका विद्यालय महाविद्यालय के छात्रों  
वर्ष पर हार्दिक शुभकामनाएँ

मे. नेशनल ब्रिक्स, इन्दौर  
प्रो. गुरु मुखदास आहूजा

श्रीलंका विद्यालय महाविद्यालय के छात्रों  
वर्ष पर हार्दिक शुभकामनाएँ

अध्यक्ष, हरिजन श्रमिक कामगार  
व कारीगरों की सह. समिति, इन्दौर.



With Best Compliments From :

**AMITABH SHARMA**

OMNI INFORMATION  
ENGINEERING DEALERS

PANASONIC FAX MACHINES  
ELENT CVT'S & COMPACT UPS  
20-B/C MEERA PATH, DHENU MARKET  
INDORE - 452 003  
PHONE - 38226

With Best Compliments From :

**SANJEEV SHARMA**

OMNI COMPUTERS  
DEALER

WIPRO RANGE COMPUTERS  
20-B/C MEERA PATH,  
DHENU MARKET  
INDORE - 452 003  
PHONE - 38226

With Best Compliments From :



**LOBA CHEMIE PVT. LTD.**

78/80 - Babu Genu Road,  
Bombay - 400 002.

## पुरातत्व एवं संग्रहालय, म.प्र.

### हमारे प्रकाशन -

पुस्तक का नाम	लेखक	कीमत	पुस्तक का नाम	लेखक	कीमत
आर्ट ऑफ इंडिया - ओरछा	के के चक्रवर्ती	450 00	उज्जयिनी	व कोन रायनाथ	250 00
मासियर पर्वत	के के चक्रवर्ती	200 00	मालवा के जैनपीठ स्थित	श्रीमती भद्राभागे	250 00
रौक आर्ट ऑफ इंडिया	स के के चक्रवर्ती	450 00	संसार देव - देवी प्रतिमाएँ	विभागीय प्रकाशन	180 00
आर्ट ऑफ इंडिया खजुराहो	के के चक्रवर्ती	300 00	जैन एवं बौद्ध प्रतिमाएँ	विभागीय प्रकाशन	180 00
शिव केटलिंग	विभागीय प्रकाशन	125 00	कैथन प्रतिमाएँ	विभागीय प्रकाशन	125 00
म्यूजियम एंड मान्युएल्स	विभागीय प्रकाशन	4 00	रत्नों का शृंग मंदिर	श्री एल रायनाथ	120 00
ऑफ माय प्रदेश			बौद्ध मूर्तमय मेनारी	ममल प्रकाशन	44 00
तृतीया उत्खनन (रिपोर्ट)	के डी बाजपेयी एवं एस के पांडे	35 00	पुरातन अंक - 1	श्रीमती बाजपेयी	25 00
आर्ट ऑफ कलचुरि	विभागीय प्रकाशन	180 00	पुरातन अंक - 2-3	श्रीमती बाजपेयी	25 00
शिव प्रतिमाएँ	आर एस गणे	84 00	पुरातन अंक - 4	श्रीमती बाजपेयी	25 00
शिव प्रतिमाएँ	आर एस गणे	87 00	पुरातन अंक - 5	श्रीमती बाजपेयी	25 00
दमनाडा उत्खनन (रिपोर्ट)	के के चक्रवर्ती	387 00	पुरातन अंक - 6	श्रीमती बाजपेयी	25 00
	श्री एस बाजपेयी एवं एस के गणे		पुरातन अंक - 7	श्रीमती बाजपेयी	25 00
			पुरातन अंक - 8	श्रीमती बाजपेयी	25 00

आयुक्त, पुरातन एवं संग्रहालय, म.प्र.



आयुक्त, पुरातन एवं संग्रहालय, म.प्र.



जैसे वृक्ष धरती से लवण और जल,  
वातावरण से वायु और सूर्य से ऊर्जा  
ग्रहण करता हुआ अपने शरीर को स्वस्थ  
रखता है, वैसे ही हे प्रभो! विश्व का  
प्रत्येक प्राणी प्रकृति से आवश्यक तत्वों  
का संवय करता हुआ अपने-आपको  
स्वस्थ रखे!

- श्रुति -



**रसोमा**

रसोमा सेबोरेटरीज प्रा.लि.

149, फ्लोरी, मुम्बई-आगरा राजमार्ग,  
फोस्ट बंग नं. 9, इन्डोर-452 008

ग्राम राखोग पोस्ट- 7834, 22691, 5092, 21525



रसोमा Logo चमिर 00000000 rasoma

Share the blessings of millions.



**SURLUX** Because We Care

Surlux. A name synonymous with health care in India is providing Free and Concessional treatment to poor and needy patients. SURLUX, dedicated to provide better health care not only to those who can afford it, but also to those who are unfortunate and needy, through its various schemes.



This act of charity provides the share holders of the Surlux group the blessings of millions of people who have benefited from these schemes. Besides paying a regular dividend, Surlux has also provided share holders a 20% discount to all services rendered.



SURLUX is all set to make the national dream of "HEALTH for all by 2000 AD" a reality. It is bringing to India the state of art equipment viz; CT Scanners and MRI systems from Hitachi Japan, and is setting up a chain of medical centres in collaboration with an international giant in medical care.

The potential is immense The benefits many The need is vast. The time is here to join Surlux for Socio-Economic upliftment

**S**  
**SURLUX**

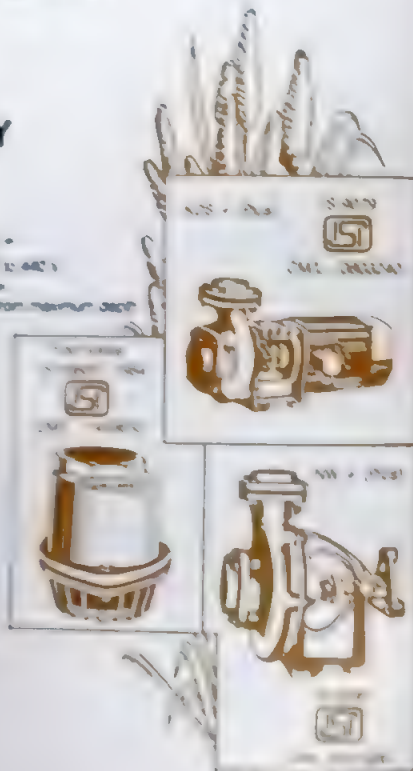
111, Maker Chambers V Nariman Point, Bombay-400 021



**ENERGY SAVED IS  
ENERGY PRODUCED**

## KIRLOSKAR SHOWS THE WAY

- Kirloskar Monoblock Pump type KDS -
  - eliminates wide voltage fluctuations - 300 V to 440 V
  - Higher efficiency resulting in savings in power
  - Better suction characteristics - lifts water from maximum depth
- Kirloskar Minus Friction Foot Valve
  - First foot valve in India to get ISI
  - Increase in discharge rate upto 20% when compared to existing pumpsets
  - Also saves energy upto 10%
- Kirloskar End Suction Pump Type NW -
  - Saves energy upto 20%
  - Very high efficiency
  - Higher suction lift - Can suck water from depth as low as 9 mtrs.



**KIRLOSKAR  
BROTHERS LIMITED,  
DEWAS (M.P.)**

Marketing Division: 15, Mahatma Road, Indore-452 001  
Regional Office: Udyog Bhawan, Tatan Road, Pune-411 003

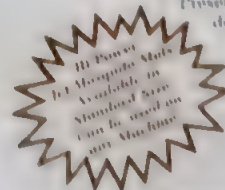
**Jet**  
**MOSQUITO  
MATS**

**The  
Hi-Power Mats**



**FROM SUNSET TO SUNRISE  
TOTAL PROTECTION FROM  
MOSQUITO BITE**

Jet Mosquito Mats Perfectly formulated for Indian conditions. With world class Japanese technology. Fully tested, stringently checked in the latest equipped laboratory. And every Mat Packed in Aluminium Foil Preserving 100% power despite storage.



**SONIC ELECTROCHEM PVT. LTD.**

101, New Market, Kharadi, Pune-411 004

• New Delhi • Jaipur • Lucknow • Hyderabad • Madras • Tirunelveli • Coimbatore



**PRESTIGE**

INDUSTRIAL &  
ENTERTAINMENT ELECTRONICS

**एटलस रेडियोज़**  
**Atlas Radios**

42-41, MAHARAJA ROAD, INDORE-462 001, M.P., INDIA

AUTHORISED STOCKISTS



नई राह पर नया कदम

# पंचधारा

गरीबी के मायाजिक - अदृष्टिक दबाने सबसे ज़्यादा प्रभावकारी है लेकिन ये हम सबको को कम करने की नयी राह पर एक नया कदम उठा है - "पंचधारा"। मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री श्री मन्मथलाल खट्वा ने एक सन्देश (1991) को इस नयी योजना का शुभारम्भ किया है, जिसके अन्तर्गत गरीबों को पहिलानों के लिये पांच कार्यक्रमों पर अग्रण शुरू हो रहा है।

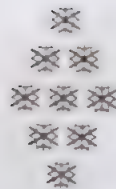


- **आवास** - गरीबों को निवास स्थानों को मिलाने का काम शुरू किया गया है।
- **आयुर्वेद** - गरीबों को निवास स्थानों को मिलाने का काम शुरू किया गया है।
- **आयुर्वेद** - गरीबों को निवास स्थानों को मिलाने का काम शुरू किया गया है।
- **आयुर्वेद** - गरीबों को निवास स्थानों को मिलाने का काम शुरू किया गया है।
- **आयुर्वेद** - गरीबों को निवास स्थानों को मिलाने का काम शुरू किया गया है।
- **आयुर्वेद** - गरीबों को निवास स्थानों को मिलाने का काम शुरू किया गया है।
- **आयुर्वेद** - गरीबों को निवास स्थानों को मिलाने का काम शुरू किया गया है।

शोषणमुक्त-समतायुक्त समाज की दिशा में  
मध्यप्रदेश सरकार का नया कदम



With Best Compliments From



M/s. S.K. ENTERPRISES

BARJATYA CHAMBERS  
44 - JAORA COMPOUND  
INDORE - 452 001.



1, 2, 5 व 15 किलोग्राम पैक में उपलब्ध.



**प्रेस्टीज**  
शुद्ध सुपर रिफाईन्ड कुकिंग ऑइल

स्वाद, स्वास्थ्य, बचत की सीगात.



## MADHYA PRADESH FINANCIAL CORPORATION

- If you are an **ENTREPRENEUR**
- If you want to have your own business in **MADHYA PRADESH**
- If you are looking for **TERM FINANCE ON EASY TERMS**
- If you desire to have **PERSONAL ATTENTION**

**THEN  
Just Come to**

**MADHYA PRADESH FINANCIAL CORPORATION**  
Because Term Finance is What We Specialise in

**We are at your service at our Offices at**

Central Branch: Indore, Jabalpur, Raipur, Dewas, Ujjain, Khandwa,  
Ratlam, Durgam, Bilaspur, Amarkantak, Jagdalpur, Guna, Tikona  
Jharkhand

Head Office at Finance House,

Agra Bombay Road, Indore - 452 001.

Tel: 364/1-72-73 Telex: 0735-368 MPFC IN



## KASIM BROTHERS

Bhatia Complex  
(Opp. Raj Kumar College)  
RAIPUR  
Phone: 23635/23645

32 Jyoti Compound  
(Opp. M. C. Hospital)  
INDORE  
Phone: 461548/461754

36 Mahatma Prasad Nagar  
(Opp. Panchsheel Hospital)  
BHOPAL  
Phone: 22547

Dealers in Laboratory Glassware, Chemicals, Electricals, Filter Papers.

Also dealing in Scientific Instruments.

**BORGIS** Brand Laboratory Glassware

**WATMAN** England Filter Papers etc.

**REM** Lab Stirrer, Centrifuges, B.O. incubators, Shakers etc.

**TEMPO** LAB-HOSP Oven, incubators, Hot Plate, Water Bath etc.

**ELCO** pH-Meter, Spectrophotometer, Colorimeters, Conductivity meter

**JASCO** Monocular Binocular Microscopes

**DMOHA** Single Pan Electric Balance

**LOBA, GLAXO, BOH, EMERX** Laboratory Chemicals Reagents

**BLUE STAR** Microslides & Coverslips

**AD** POLYMER Polymers, Refractometer, Constant Temperature Bath etc.



With Best Compliments From :

## WESTERN CHEMICALS, INDORE

*Manufactures of Pharmaceutical Products*  
FACTORY : 16, GOPAL BAGH, INDORE - 452 004  
PHONE : 65343, 68553  
OFFICE : 147, SHASTRI MARKET, INDORE - 452 007  
PHONE : 21291 CABLE : 'WESTCHEM'  
TLX : 0735 : 410 WEST : IN  
FAX NO. C/O. 0731-492250

With Best Compliments From :



## WINSOME DRILL

MANUFACTURERS OF BISON, PANTHER, DHD-16, DHD-14,  
COP - 4 TYPE BUTTON BITS AND DTH HAMMERS  
41-42, B Sector Industrial Area, Mandideep, Dist : Raisen (M.P.) Pin : 462 046  
Phone : 2140 Cable : BAGROCAST Telex : 705-436 JALW IN

# MOTOROL

## HI-PERFORMANCE ENGINE OIL

RDE 20 W/40  
RIX 20 W/50  
AUTO GEAR  
80/90  
&  
85/140  
R 2T OIL

RIN-BF  
Hi COOL  
COOLANT  
SHOCK

ABSORBER OIL  
GREASES



Mark Transformer Oil  
&  
All kinds of Industrial Oils

- C. & F. Agent for M.P. -

## AMIT Industrial Oil

205 - LOHA MANDI - INDORE (M.P.)  
☎ 465143, 464270, 463314

## KALANI FINANCE SCHEME

### AVAILABLE ON LEASE

- ▶ Diesel Generating Sets
- ▶ Plant & Machinery
- ▶ Commercial Vehicles
- ▶ Passenger Cars, Vans, Jeeps, Tractors
- ▶ Office Equipments, Computers
- ▶ Mopeds, Scooters & Motorcycles
- ▶ TV Sets, VCRs & VCRs
- ▶ Refrigerators & Air Conditioners and anything you need.



Dealers/Distributors  
are requested to contact  
for tie-up business.

### KALANI FINANCE

(A Division of Kalani Industries Pvt. Ltd.)  
Kalani House, 11, M.C. Road,  
INDORE-452 001  
Ph : 25371-76, 35806, 21555

With Best Compliments From :



## Agrawal Construction Co.

20/B, MEERA PATH, DHENU MARKET,  
INDORE 452 003

With Best Compliments From :

**MALPANIS**

## SURESH MALPANI & COMPANY,

Sangam Motel Complex,  
KUMARAPATNAM - 581 123  
(Near Harihar)  
Dharwad Dist.,  
KARNATAKA.

CIVIL ENGINEERING CONTRACTORS  
Tel. No. Harihar - 2212  
Harihar - 2213

## MANAGE YOUR BUSINESS MORE EFFICIENTLY RAHUL LEASE FINANCING SCHEMES

CHANGE YOUR LIFE  
STYLE.

BRING MORE COMFORT TO  
YOUR LIFE.

We can deliver exactly what you and your business needs, through our lease financing schemes i.e.

- Mopeds, Scooters & Motorcycles.
- T.V. Sets, VCPS & VCRS.
- Refrigerators & Air Conditioners.
- Diesel Generating Sets.
- Plant & Machinery.
- Commercial Vehicles.
- Passenger Cars, Vans, Jeeps, Tractors.
- Office Equipments, Computers.

Please contact :

RAHUL TRADING & FINANCE LTD.,  
Kalani House,  
11, Tukoganj Main Road,  
INDORE - M.P. 452 001  
Phone : 23371-76, 39806, 21535.

## इंदूर परस्पर सहकारी बँक लिमिटेड, प्रशासकीय कार्यालय "सहकार भवन", ३/१, साऊथ तुकोगंज, इन्दौर प्रदेश की अग्रणी नागरिक सहकारी बँक

प्रगति एक नजर में :

शाखाएँ

दिनांक ८.०५.१९९२ को

रुपये लाखों में

उत्तर पूँजी	:	६८.१९
रक्षित निधि	:	४६.००
अन्य निधि	:	१०४.४३
अमानतें	:	३४१६.६८
कार्यशील पूँजी	:	३६३५.३०
बाण एवं अग्रिम	:	१५३२.४५
विनियोजन	:	१९५०.७५

१. तिलक पथ शाखा (मुख्य शाखा) - "सहकार भवन", ३/१, तिलक पथ, इन्दौर
२. खेल रोड शाखा - ५/१, खेल रोड शाखा, इन्दौर
३. मनोरमाबाई शाखा - नगर निगम कार्टेट, प्लासिदा, इन्दौर
४. ट्रांसपोर्ट नगर शाखा - ५, स्नेह नगर, इन्दौर
५. जवाहर नगर शाखा - १६/१७, सर तुकोगंज मार्ग, इन्दौर

म.प्र. विद्युत मंडल के नागरिक विभाग के मुख्यालय बँक की तिलक पथ शाखा, मनोरमाबाई शाखा तथा ट्रांसपोर्ट नगर शाखा में स्वीकृत विधे जाते हैं।

म.भा. विपट  
कार्य महासंयोजक

अरुण पु. सिन्हा  
मानसैवी सचिव

उपाध्यक्ष मा. निगमाधिकार  
अध्यक्ष



With Best Compliments From :



**Dhul Chand  
Vijay Kumar & Co.**

406, Apollo Tower,  
M.G. Road,  
INDORE.

With Best Compliments From :



**Basant Radio  
&  
Electronics**

101, Jail Road,  
Indore.  
Phone - 33755

With Best Compliments From :

**TIRUPATI STARCH & CHEMICALS LTD.**

Regd. Office : 'MADANMAHAL', 12-A, AGRAWAL NAGAR,  
INDORE - 452 001.  
Gram : 'TIRUSTARCH' Phone : Off. 461194

Manufacturers of  
MAIZE STARCH POWDER, DEXTRINE,  
GLUTEN, GRIT, MAIZE OIL, OIL CAKE  
& MODIFIED STARCHES.

Works : Village Sejways, Ghatablind,  
Dist. Dhar (M.P.) Phone : 320, 260

Dr. Damodar Modi  
Managing Director

श्री श्री शुभकमलाओं सहित श्री श्री

**अंकिता एजेंसी**

6/2- स्टार गार्डन, इंदौर

पेपर, पेपर, ब्लू

ए

सिने मॉडिफा

अंकिता एजेंसी

अंकिता एजेंसी

## मध्यप्रदेश विद्युत मण्डल

विद्युत मण्डल की वार्षिक यात्रा  
अप्रैल, 1957 से विद्युत उत्पादन, वितरण एवं पारेषण  
के क्षेत्र में  
फरवरी, 1992 तक अनेक मील के पथपर,

- ◆ विद्युत उत्पादन क्षमता 81.5 मेगावाट से बढ़कर 3,178.5 मेगावाट (39 गुना वृद्धि)
- ◆ विभिन्न ताप विद्युत केन्द्र अनेकों बार पुरस्कृत
- ◆ 221 सकिट किलोमीटर लम्बी डी.एच.टी. लाइनें बढ़कर 16,051 सकिट किलोमीटर (82 गुना वृद्धि)
- ◆ विद्युतीकृत 142 स्थानों की तुलना में 64,486 ग्राम विद्युतीकृत (454 गुना वृद्धि)
- ◆ ऊर्जित 265 घण्टों की तुलना में 9,27,920 कम्प ऊर्जित (3,502 गुना वृद्धि)
- ◆ प्रदेश की 22,365 हरिजन बस्तियाँ विद्युतीकृत
- ◆ ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों के दोहन कार्यक्रम के अंतर्गत 666 ग्राम सौर ऊर्जा द्वारा विद्युतीकृत.

— जनसम्पर्क विभाग, मध्यप्रदेश विद्युत मण्डल, जबलपुर द्वारा प्रकाशित —

दिल  
मिलाए  
स्वाद  
बढाए



बात है यदि आपके 'टेस्ट' की, तो बात है स्वाद के लाजवाब स्वाद की भी।

दोनों ही बेमिसाल।

स्वाद आवला एवम् स्वाद खजूर पाचक दानों का चटपटा स्वाद आपके

अन्दाज़ सा।

इनमें मिले बेहतरीन प्राकृतिक तत्व - आपके व्यक्तित्व से। जो बढ़ाए

आपकी पाचन क्षमता और दें आपको पौष्टिकता - आपसी विश्वास सी।

मनचाहे साथ के संग चाहें स्वाद का साथ

क्योंकि स्वाद बढ़ाए - मुलाकात का स्वाद !

